अशोकके अभिलेख

नास्ति हि कंमतरं सर्वलोक हितत्पा ।

[दूसरा बड़ा कर्म नहीं है सर्वलोकहितसे ।]

—गिरनार शिला अभिलेख, ६.१०

अशोकके अभिलेख

डॉ० राजबली पाण्डेय, एम. ए., डी. लिट्. विद्यारत्न

महामना मालवीय प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं
संस्कृति विभाग, जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर
तथा
भूतपूर्व प्रिन्सिपल, कॉलेज ऑफ इण्डोलॉजी (भारती महाविद्यालय)
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

वाराणसी
ज्ञानमण्डल लिमिटेड

आमुख

अशोकके अभिलेखोंके नये संस्करण और अध्ययनके लिए क्षमा-याचनाकी आवश्यकता नहीं। ये अभिलेख भारतीय इतिहास और संस्कृतिके महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। विषयगत महत्ताके साथ-साथ इनकी भाषा और शैलीगत अनिश्चयताके कारण इनकी गम्भीरता और बढ़ जाती है। इनके उत्तरोत्तर पुनर्पाठन, सम्पादन, स्पष्टीकरण और भाषान्तर आदिकी आवश्यकता बनी रहेगी। प्रस्तुत प्रयत्न इसी दिशामें एक और चरण है। यूरोपीय और भारतीय भाषाओंमें अशोकके अभिलेखोंके अनेक संस्करण और अध्ययन प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें कनिंगहम, सेना, ब्यूलर, हुल्त्ज, फ्लीट, टॉमस, कर्न, वेनिस, वुल्नर, टर्नर, ज्यूल्स ब्लाख, पं० रामावतार शर्मा, डॉ० भाण्डारकर, वेणीमाधव बरुआ, राधाकुमुद मुखर्जी, जनार्दन भट्ट आदिके ग्रन्थ विशेष उल्लेखनीय हैं। इन सबमें कनिंगहम और हुल्त्जकी कृतियाँ बहुत ही विस्तृत और महत्त्वपूर्ण हैं। इन विद्वानोंने अपने समयतक उपलब्ध अशोकके अभिलेखोंके संस्करणोंका संकलन और सम्पादन करके महाग्रन्थों (कॉरपस)का प्रणयन किया जो उच्च कोटिके अध्ययनके लिए अभीतक सन्दर्भ-ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थोंको प्रकाशित हुए बहुत समय व्यतीत हो गया। कनिंगहमके कॉरपसका अभी पुनर्मुद्रण (यथापूर्व) इण्डोलॉजिकल हाउस, वाराणसीके द्वारा हुआ है। दूसरा ग्रन्थ दुर्लभ और बड़े-बड़े ग्रन्थालयोंमें ही प्राप्य है। इसके अतिरिक्त हुल्त्जके कॉरपसके प्रकाशन (१९२५ ई०)के बाद उनतीस वर्ष बीत चुके हैं। इस बीचमें अशोकके कई अभिलेखोंका अनुसन्धान भी हुआ है। इसलिए इस बातकी आवश्यकता थी कि एक ऐसा ग्रन्थ प्रकाशित किया जाय जिसमें अद्यतन उपलब्ध अशोकके सभी अभिलेखोंका संकलन, सम्पादन और भाषान्तर हो। हिन्दीमें अशोकके अभिलेखोंके संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं, परन्तु अभीतक समस्त अभिलेखोंके सभी संस्करणोंका कोई सम्पादित संग्रह नहीं प्रकाशित हुआ है। हिन्दीके राष्ट्रभाषा-पदपर प्रतिष्ठित होनेके पश्चात् जगत्-प्रसिद्ध अशोकके अभिलेखोंके महाकाय ग्रन्थ (कॉरपस)का प्रस्तुत रूपमें हिन्दीमें प्रकाशित होना वांछनीय था।

इस ग्रन्थमें अभिलेखोंके सभी उपलब्ध संस्करणोंके मूलपाठ, संस्कृतच्छाया, हिन्दी भाषान्तर, पाठ-टिप्पणियाँ तथा भाषान्तर-टिप्पणियाँ दी गयी हैं। सुविधाके लिए संस्कृतच्छायामें सन्धियाँ प्रायः तोड़ दी गयी हैं। हिन्दी भाषान्तर यथासम्भव अविकल किया गया है, जिससे कि वह मूलके निकट रह सके। इसलिए कहीं-कहीं वाक्य रचना शिथिल पड़ गयी है। परन्तु ऐसा जान-बूझकर किया गया है, जिससे पंक्ति-क्रमसे अर्थ किया जा सके। इसके पश्चात् तुलनात्मक पाठ और शब्दानुक्रमणी प्रस्तुत की गयी है। इधर प्राप्त अभिलेखोंके पाठ असन्दिग्ध रूपसे निश्चित नहीं थे, अतः उनका समावेश शब्दानुक्रमणीमें नहीं किया गया है। यदि अवसर मिला तो द्वितीय संस्करणमें इनका समावेश हो जायगा। अन्तमें आधारभूत सहायक ग्रन्थोंकी विस्तृत सूची दी गयी है जिससे पाठक अभिलेखोंके सम्बन्धमें अपनी जानकारी विस्तृत कर सकें।

ग्रन्थकी भूमिकामें अभिलेखोंके अनुसन्धान और अध्ययन, लिपि और व्याकरणका निरूपण किया गया है। अशोकके अभिलेखोंके ऐतिहासिक अध्ययनपर विस्तृत साहित्य प्रकाशित हो चुका है। इसलिए प्रस्तुत ग्रन्थमें ऐतिहासिक भाग छोड़ दिया गया है। यदि सुविधा मिली तो इन अभिलेखोंके विस्तृत अध्ययनके आधार-पर अशोकके ऊपर स्वतंत्र ग्रन्थ लिखनेका प्रयास किया जायेगा, जो इसका पूरक ग्रन्थ होगा।

अभिलेखोंके महाकायका प्रणयन एक दुःसाध्य कार्य था और लेखक अपनी सीमाओं और परिस्थितियोंसे बद्ध था। परन्तु उसे पूर्व सूरियोंका सहारा था। इस दुर्भेद्य कार्यमें उसकी उसी प्रकार गति थी जिस प्रकार वज्रसे विद्ध मणिमें तागेका प्रवेश (मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येव मे गतिः)। लेखक सभी दिवंगत और जीवित विद्वानोंका अत्यन्त अनुगृहीत है। मित्रों और शिष्योंकी सहायताके बिना इस ग्रन्थका तैयार होना कठिन था। मेरे शिष्य और मित्र डॉ० चन्द्रभान पाण्डेयने अभिलेखोंकी प्रेस कॉपी तैयार करनेमें सहायता की। प्रो० लक्ष्मीनारायण तिवारीने बड़े गाढ़े समयमें अपने भाषाशास्त्रीय ज्ञान और प्रूफ संशोधन-कलासे महत्त्वपूर्ण सहयोग किया। श्री प्रशान्त कुमारने शब्दानुक्रमणी तैयार करनेमें बड़ा श्रम किया। श्री लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, श्री माहेश्वरीप्रसाद, श्री विष्णुसिंह ठाकुर आदिसे समय-समयपर सहायता मिलती रही। इन सभीके प्रति लेखक आभारी है।

लेखक भारत सरकारके पुरातत्त्व विभागका बहुत ही कृतज्ञ है, जिसने बड़ी प्रसन्नतासे इस ग्रन्थके समस्त अभिलेखोंकी प्रतिकृतियोंके प्रकाशनकी अनुमति प्रदान की। इन प्रतिकृतियोंका मूल स्वत्व पुरातत्त्व विभागके पास ही सुरक्षित है। चीफ एपिग्राफिस्ट फार इंडिया, श्री जी. एस. घाईने कुछ अभिलेखोंके फोटोग्राफ कृपा करके लेखकके पास भेजा। इसके लिए वह उनका आभारी है।

इस ग्रन्थके प्रणयन और प्रकाशनमें ज्ञानमण्डल काशीको मुख्य श्रेय है। ज्ञानमण्डल काशीसे सं० १९८० (१९२३ ई०)में श्री जनार्दन भट्ट द्वारा प्रणीत 'अशोकके धर्मलेख' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ था। पिछले कई वर्षोंसे वह अप्राप्य था। साथ ही उसमें केवल तुलनात्मक पाठ थे; सभी संस्करणोंके पाठ नहीं दिये गये थे। उसमें अभिलेखोंकी प्रतिकृतियाँ भी नहीं थीं। इधर अशोकके कई नये अभिलेखोंका अनुसन्धान हो चुका था। अतः ज्ञानमण्डलकी यह योजना थी कि अशोकके अभिलेखोंपर एक महाकाय ग्रन्थ तैयार किया जाय। ज्ञानमण्डल प्रकाशनके व्यवस्थापक श्री पं० देवनारायण द्विवेदीने लेखकसे सम्पर्क स्थापित किया। लेखकके पास यह ग्रन्थ अधूरा पड़ा हुआ था। श्री द्विवेदीजीकी प्रेरणासे पुनः इस ग्रन्थका काम प्रारम्भ हुआ, जो इस रूपमें प्रस्तुत है। अतः इस ग्रन्थके प्रकाशनके लिए लेखक ज्ञानमण्डल और व्यक्तिगत रूपसे श्री द्विवेदीजीका आभारी है। इस दुरूह ग्रन्थके मुद्रणमें ज्ञानमण्डल यंत्रालयने भी बड़ा श्रम किया जिसके लिए लेखक उसका आभार मानता है।

इस ग्रन्थमें जो अच्छाइयाँ हैं वे पथिकृत् विद्वानोंकी हैं; जो दोष हैं वे लेखकके निजी। बहुत प्रयत्न करनेपर भी छापेकी बहुत-सी अशुद्धियाँ इस ग्रन्थमें रह गयी हैं। इसके लिए सुधी-गण कृपया क्षमा करेंगे और उन्हें सुधार लेंगे।

वसुंधरा, दुर्गाकुंड
वाराणसी—५
वैशाखी पूर्णिमा सं० २०२२ वि०

राजबली पाण्डेय

विषय-सूची

भूमिका

अ. अभिलेखों का अनुसन्धान और अध्ययन

प्रथम खण्ड : शिला अभिलेख

१. गिरनार शिला

अशोकके चतुर्दश शिला अभिलेखोंका एक समूह सौराष्ट्रमें जूनागढ़ (गिरिनगर = गिरनारका मध्यकालीन नाम)से लगभग एक मीलकी दूरीपर गिरनारकी पहाड़ियोंपर स्थित हैं[1]। जिस शिलापर अभिलेख उत्कीर्ण हैं, उसका विस्तृत वर्णन ज० ए० सो० बं०, भाग ७ फलक ५४ में दिया गया है। यह शिला त्रिभुजाकार ग्रेनाइट पत्थरकी है जिसका क्षेत्रफल लगभग १०० वर्गफुट है। पृथ्वी-तलसे यह लगभग १२ फुट ऊँची है। पृथ्वी-तलपर इसका घेरा ७५ फुट है।[2] इस शिला-खण्डपर अशोकके अभिलेखोंके अतिरिक्त दो अन्य महत्त्वपूर्ण अभिलेख उत्कीर्ण हैं। एक तो उज्जयिनीके महाक्षत्रप रुद्रदामन् का अभिलेख है[3] जिसमें उसने चन्द्रगुप्त मौर्यके समयमें निर्मित और अपने समयमें अतिवर्षाके कारण भग्न सुदर्शन नामक झीलके पुनरुद्धारका उल्लेख किया है। दूसरा अभिलेख गुप्त सम्राट् स्कन्दगुप्तका है जिसमें सुदर्शनके पुनः जीर्णोद्धारका उल्लेख है।[4]

उपर्युक्त शिला-खण्डके उत्तर-पूर्वीय मुखपर अशोकके चतुर्दश शिला-अभिलेख दो स्तम्भोंमें विभाजित होकर उत्कीर्ण हैं। दोनों स्तम्भोंके बीचमें एक रेखा भी खिंची हुई है। बायीं ओरके स्तम्भमें प्रथम पाँच अभिलेख और दायीं ओरके स्तम्भमें छठवेंसे लेकर बारहवाँतक उत्कीर्ण हैं (द्रष्टव्य : ज० रा० ए० सो०, जिल्द १२, पृ० १५३ तथा आगे, तृतीय फलक)। त्रयोदश तथा चतुर्दश अभिलेख पंचम तथा द्वादशके नीचे खुदे हुए हैं।

आजकल अभिलेखोंमें सभी अंश पूर्णतः प्राप्त नहीं हैं। १८८२ ई० के दिसम्बरमें जिस समय मेजर जेम्स टाड उस स्थानपर पधारे थे उस समयतक अभिलेख समुचित दशामें[5] थे किन्तु बादमें एक पुण्यात्मा वैद्यके द्वारा जूनागढ़से गिरनारतक रास्ता बनानेमें पञ्चम तथा त्रयोदश अभिलेखोंके अंश बारूदके द्वारा उड़ा दिये गये।[6] स्वर्गीय डॉ० बर्गेसकी संस्तुतिके अनुसार उनकी रक्षाका प्रबन्ध किया गया।

इन अभिलेखों तथा इन्हींके कारण ब्राह्मी अक्षरोंको सर्वप्रथम पढ़नेका श्रेय जेम्स प्रिंसेपको है।[7] उनका अनुवाद तथा लिपिकरण कप्तान लॉगके द्वारा कपड़ेपर लिये छापेपर आधारित थे। यह छापा डॉ० विल्सन (बम्बई)के लिए लिये गये थे।[8] इन अभिलेखोंकी नयी प्रतिलिपि कप्तान लॉग तथा लेफ्टिनेण्ट पोस्टन्सके द्वारा १८३८ ई०में तैयार की गयी[9] थी। पुनः यह कप्तान ली ग्राण्ट जैकोब तथा प्रोफेसर पेस्टरगार्डके द्वारा १८४२ में तैयारकी गयी। इन सामग्रियोंका पूर्ण उपयोग मिस्टर नॉरिसने गिरनारके अभिलेखोंका बढ़िया फलक तैयार करनेके लिए किया था। इस फलकके आधारपर प्रो० विल्सनका अनुवाद तथा लिप्यन्तर ज० रा० ए० सो०, भाग १२ (१८५० में हुआ। जेम्स बर्गेसने १८७५ ई० में गिरनार अभिलेखोंका सर्वप्रथम लिप्यन्तर किया। इसीका अवतरण १८७६ में आ० स० वे० ई० २०६९८ तथा आगे और इण्डियन ऐण्टिक्वेरीमें हुआ जिसमें कर्नके द्वारा डच भाषामें अभिलेखोंका आंशिक अनुवाद भी किया गया।

गिरनारके सम्पूर्ण अभिलेखोंका संस्करण सेनाके 'इन्सक्रिप्शन्स दे प्रियदसि,' भाग १ में हुआ। इन अभिलेखोंका संक्षिप्त अनुवाद इण्डियन ऐण्टिक्वेरी भाग ९ तथा १० में प्रकाशित हुआ। बादमें सेनाने गिरनार शिलाका निरीक्षण किया और अपने निष्कर्षोंको (जरनल एशियाटिक (८) १२, पृ० ३११ तथा आगे)में प्रकाशित किया। ब्यूलरने त्रयोदश अभिलेखका पाठ तथा अनेक बार शुद्धियोंको प्रकाशित किया (द्रष्टव्य: बाइत्रायगे त्सुर एर क्लायरुङ्ग डेर अशोक इन्सक्रिफ्टेन, जेड० डी० एम० जी०, भाग० ३७–३८)। गिरनारके अभिलेखोंका बढ़िया तथा पूर्ण संस्करण एपिग्राफिया इण्डिका (भाग २. पृ० ४४७ तथा आगे)में प्रकाशित हुआ। भावनगरमें प्रकाशित 'ए कलेक्शन ऑफ प्राकृत एण्ड संस्कृत इन्सक्रिप्शन्स'में मूल पाठ, संस्कृत तथा आँग्ल भाषान्तर तथा लिप्यन्तर भी हैं।

त्रयोदश शिलालेखके खोए हुए भागके दो अंश बादमें उपलब्धकर लिये गये। उन्हें आजकल जूनागढ़के संग्रहालयमें सुरक्षित रखा गया है। दोनोंका सटिप्पण-उल्लेख सेनाने किया (ज० रा० ए० सो० १९००, पृ० ३३५ तथा आगे)। ब्यूलरने भी दूसरेका सटिप्पण-उल्लेख 'वियना ओरियण्टल जर्नल' (भाग ८, पृ० ३१८ तथा आगे)में किया।

२. कालसी शिला

अशोकके अभिलेखोंका यह समूह उत्तरप्रदेशके देहरादून जिलेमें चकराता तहसीलके अन्तर्गत काल्सी नामक स्थानपर पाया गया। काल्सी नामक स्थान मसूरीसे लगभग १५ मील पश्चिम टौंस तथा यमुना नदियोंके संगमपर स्थित है। वहाँ काल्सीसे लगभग १॥ मील उत्तर यमुनाके पश्चिमी तटपर क्वार्ट्ज़का एक विस्तृत शिलाखण्ड है, जिसकी लम्बाई १० तथा ऊँचाई १० फुट है। भूतलपर उस शिलाकी मोटाई लगभग ८ फुट है। अभिलेख, इस शिलाखण्डको ५ फुट ऊँचाईपर साफ करके उत्कीर्ण किया गया है। साफ किये गये स्थानकी चौड़ाई ऊपर ५॥ फुट तथा नीचे ७ फुट १०॥ इं० है। एक विशेष बात ध्यान देने योग्य यह है कि ऊपर ब्राह्मीके अक्षर कुछ छोटे है। दशम अभिलेखसे अक्षरोंके आकारका विस्तार आरम्भ हो जाता है। और नीचे आते-आते पहलेकी अपेक्षा अक्षरोंका आकार तिगुना हो गया है। इस कारण लिखनेके लिए स्थानकी कमी हो गयी है। फलतः साफ किये हुए स्थानके अतिरिक्त उसके बायीं ओर भी लिखा गया है।

---

१. आ० स० वे० ई०, भाग २, पृ० ९४।
२. वही, भाग २, पृ० ९७।
३. कील हार्न : एपि० इं०, जिल्द ८ पृ० ४२ तथा आगे।
४. फ्लीट : कार्पस० इं० इं, भाग ३, पृ० ५८ तथा आगे।
५. आ० स० वे० ई०, भाग २, ९५।
६. देखिये ज० ए० सो० बं०, भाग ७, पृ० ८७४।
७. ज० ए० सो० बं०, भाग ७ (१८३८)पृ० २१९ तथा आगे
८. वही० पृ० १५७. २२८, ३३४, ३३६।
९. वही पृ० ८७१ तथा आगे।
१०. ज० ब० ब्रा० रा० ए० सो०, भाग १, पृ० २५७।

१८६० ई० में श्री फॉरेस्टने जब इन अभिलेखोंका पता लगाया तो वे वर्षोंकी काईसे आच्छादित थे किन्तु बादमें साफ करनेके पश्चात् अभिलेख स्पष्ट हो गये।

कालसीके पाठका सम्पादन फ्रांसीसी विद्वान् सेनाने अपने "इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि" में कनिंगहमके लिप्यन्तरके आधारपर किया। ब्यूलरने उसका पाठ तथा अंग्रेजी भाषान्तर प्रकाशित किया (जेड० डी० एम० जी० भाग ३७ तथा ४०) तथा त्रयोदश शिलालेखका पुनः सम्पादन बर्गेसके लिप्यन्तरके आधारपर किया (वही भाग ४३, पृ० १६२ तथा आगे)। ब्यूलरने कालसीके अभिलेखोंको एपिग्राफिया इण्डिका (भाग २, पृ० ४४७ तथा आगे)में प्रकाशित किया जिसके साथ बर्गेसके द्वारा तैयार किया हुआ लिप्यन्तर भी था।

कालसीके अक्षरोंकी निम्नांकित विशेषतायें थीं। 'ख'के नीचे कुछ झुकाव है (द्रष्टव्य ब्यूलर इण्डि० पैलि० फलक २ नं० १०, स्तम्भ २ तथा ३)। 'ज'के मध्यमें भी इसी प्रकारकी बात पायी जाती है। (वही सं० १५ तृतीय स्तम्भ)। 'स'में भी यही बात दृष्टिगोचर होती है। एक चन्द्राकार प्रतीकसे अभिलेखोंका अन्त जान पड़ता है।

३. शहबाजगढ़ी शिला

अशोकके चतुर्दश शिलालेखोंका यह समूह खरोष्ठी लिपिमें उत्कीर्ण हुआ, जिसे पहले इण्डो-बैक्ट्रियन अथवा एरियानी-पाली कहते थे। शहबाजगढ़ीके खरोष्ठीके अक्षरोंके पाठ-निर्धारणका श्रेय प्रिन्सेप, लेसेन, नॉरिस, तथा कनिंगहमको है। पाठ निर्धारणमें सरलता हुई, क्योंकि इसके पूर्व ही इण्डो-बैक्ट्रियन तथा इण्डो-सिथियन सिक्कोंपर द्विभाषीय अभिलेखोंके खरोष्ठी संस्करणके कुछ अक्षर पढ़े जा चुके थे।

शहबाजगढ़ी पेशावर जिलेकी युसुफजई तहसीलमें मरदानसे ९ मील दूरीपर मकाम नदीपर एक गाँव है। अभिलेख इस गाँवसे लगभग आधा मील तथा कपुर्दगढ़ी नामक गाँवसे लगभग दो मीलकी दूरीपर स्थित है।

अभिलेख एक विस्तृत आकारहीन पहाड़ीपर स्थित है जिसका पश्चिमी भाग शहबाजगढ़ीकी ओर ढालू है। ढालसे लगभग ८० फुटकी ऊँचाईपर यह उत्कीर्ण है। प्रथमसे लेकर एकादशतक साफ की गयी शिलाके पूर्वी भागपर (सप्तम अभिलेख शिलाके बायीं ओर खुदा हुआ है) तथा त्रयोदश तथा चतुर्दश अभिलेख शिलाके पश्चिमी भागपर उत्कीर्ण हैं। द्वादश शिलालेख एक पृथक् शिलाखण्डपर उत्कीर्ण है।

सर्वप्रथम श्री कोर्ट साहबने, जो महाराजा रणजीतसिंहकी सेवामें थे, सन् १८३६ में शहबाजगढ़ीमें खरोष्ठी अभिलेखोंके अस्तित्वका पता लगाया तथा खरोष्ठीके कुछ अक्षरोंकी प्रतिलिपि भी तैयार की। १८३८ ई० में कप्तान बर्नेसने, पेशावरसे शहबाजगढ़ीके लिए एक कार्यकर्ता भेजा जो अपूर्ण छाप लेकर वापस लौटा। उसी वर्ष श्री मैसनने एक उत्साही नवयुवकके माध्यमसे अंशतः छाप प्राप्त कर लिया। किन्तु उन्होंने स्वयं स्थलपर जाकर अभिलेखोंका लिप्यन्तर करके सन्तोष किया।[१] ऐसे स्थानमें उनकी यात्रा, उनका लिप्यन्तर करनेका प्रयास, तथा यूरोपको उनका ज्ञान करानेके कारण वे सचमुच सराहनाके योग्य हैं। मैसनकी सारी सामग्रीको यूरोपमें लाया गया। उनको श्री नॉरिसने देखा तथा 'देवानंपियस' पढ़ा। इस खोजके कारण डाउसनको यह निर्धारित करनेमें बड़ी सहायता प्राप्त हुई कि इन अभिलेखोंमें कुछ अंश जिनकी प्रतिकृति ज. रा. ए. सो. ८. (१८४६) पृ० ३०३ में दी गयी है गिरनारके सप्तम अभिलेखके ही समान है।

४. मानसेहरा शिला

शहबाजगढ़ीकी ही भाँति मानसेहरामें भी प्राप्त अशोकके चतुर्दश शिलालेखोंकी लिपि खरोष्ठी है। मानसेहरा हजारा जिलेकी एक तहसील है। ये अभिलेख गाँवसे उत्तरकी ओर स्थित हैं और पृथक् तीन शिलाखण्डोंपर उत्कीर्ण हैं। प्रथम शिलाखण्डपर प्रथमसे लेकर अष्टम शिलालेखतक उत्कीर्ण हैं। नवमसे एकादशतक, द्वितीय शिलाके उत्तरी मुखपर तथा द्वादश दक्षिणी मुखपर उत्कीर्ण हैं। ऊपर त्रयोदश तथा चतुर्दश हैं। प्रथम तथा द्वितीय शिलाखण्डोंकी खोज कनिंगहमने की थी[२] तथा तृतीयकी खोज पंजाब आर्क्योलॉजिकल सर्वेके एक पञ्जाबी अधिकारीने की[३]।

सेनाने ही सर्वप्रथम द्वादश शिलालेखका लिप्यन्तर (जरनल, एशियाटिक ८. ११ (१८८९. ५११ तथा आगे) प्रकाशित किया तथा अपूर्ण सामग्रियोंके आधारपर प्रथमसे लेकर एकादश अभिलेखोंके अंशोंको भी (वही० १२ पृ० ३१९ तथा आगे) प्रकाशित किया। ब्यूलरने मानसेहराके सभी अभिलेखोंको जेड० डी० एम जी० ४३ पृ० २७३ तथा आगे तथा ४४ पृ० ७०२ तथा आगे)में, तथा एपिग्राफिया इण्डिकामें (भाग २, पृ० ४४७ तथा आगे) प्रकाशित किया। जरनल एशियाटिक (८) भाग १२ में कनिंगहम द्वारा बनाये गये तीन फलक दिये गये हैं। किन्तु अस्पष्ट होनेसे व्यर्थ हैं और उनकी इस समय कोई उपयोगिता नहीं है।

नॉरिसने बादमें सभी अभिलेखोंको क्रमशः पढ़नेमें सफलता प्राप्त की। सन् १८५० ई० में विल्सनने शहबाजगढ़ीकी शिलापर उत्कीर्ण अभिलेखोंका स्वयं लिप्यन्तर किया, तथा उसे नॉरिसके द्वारा बनाये गये फलकोंके साथ जिसे स्वयं नॉरिसने मैसनकी सामग्रीसे तैयार किया था, प्रकाशित किया (वही, १२ पृ० १५३ तथा आगे)। कनिंगहमने शहबाजगढ़ीके अभिलेखोंकी एक चाक्षुष-प्रतिकृति तैयार की। (इन्सक्रिप्शन्स ऑफ अशोक, पृ० १०)। पहले सेनाके द्वारा दिये गये शहबाजगढ़ी अभिलेखोंके ये लिप्यन्तर इन्हीं अपूर्ण सामग्रियोंपर आधृत थे (इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि, भाग १)। पं० भगवानलाल इन्द्रजीने शहबाजगढ़ी तथा अन्य स्थानोंके प्रथम अभिलेख (इण्डि० ऐण्टि० भाग १० पृ० १०७) तथा अष्टम अभिलेख (ज. ब. ब्रा. रा. ए. सो. भाग १५ पृ० २८४) के विभिन्न पाठोंको प्रकाशित किया। भारतसे लौटनेके पश्चात् सेनाने अपने निष्कर्षोंको जरनल एशियाटिक भाग (८) ११, पृ० ५२१ तथा आगे) में प्रकाशित कराया। द्वादश शिलालेखका पता कप्तान डीनेने लगाया।[४] इसका सम्पादन सेना (वही० पृ० ५११ तथा आगे) तथा ब्यूलर (एपि. इण्डिका० भाग १, पृ० १६ तथा आगे)। बादमें ब्यूलरने शहबाजगढ़ी के सभी अभिलेखोंको जेड० डी० एम० जी० (भाग ४३ पृ० १२८ तथा आगे)मे प्रकाशित किया। इसका आँग्ल भाषान्तर तथा लिप्यन्तर एपि० इण्डिका भाग २ पृ० ४४७ तथा आगेमें प्रकाशित हुआ।

५. धौली शिला

धौली, उड़ीसाके पुरी जिलेमें खुर्दा तहसीलमें एक गाँव है। धौली गाँव भुवनेश्वरसे लगभग ७ मील दक्षिण स्थित है। इस शिला अभिलेखका पता लेफ्टिनेण्ट श्री किटो महोदयने १८३७ ई० में लगाया। जिस पहाड़ीपर अभिलेख उत्कीर्ण है वह तीन पहाड़ियोंकी एक छोटी-सी पर्वत श्रृंखला है जिसकी स्थिति दयाह नदीके

१. कनिंगहम : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ अशोक, पृ० ८।
२. वही०, पृ० ९।
३. ज० रा० ए० सो० भाग ८, पृ० २९३।
४. जर्नल एशियाटिक, भाग ८, ११. ५०८।
५. जेड० डी० एम० जी० ४४. ७०२।

दक्षिणी ओर है। ये पहाड़ियाँ अन्य पहाड़ियोंसे बिलकुल अलग हैं। इनके निकट कोई ऐसी पहाड़ी नहीं है जो इनसे कम-से-कम आठ-दस मील दूर न हो। इन पहाड़ियोंकी रचना आग्नेय पत्थरोंसे हुई है, जिनमें क्वार्ट्ज नामक पत्थर भी मिले हुए हैं। उत्कीर्ण अभिलेखोंके ठीक ऊपर एक सीढ़ीनुमा चौरस स्थान है (१६×१४फु०)। उसके दाहिनी ओर लगभग ४ फुट ऊँची हाथीकी बहुत सुन्दर प्रतिमा बनी हुई है।[१]

श्री किटो महोदयके द्वारा तैयार किये गये लिप्यन्तरकी जब श्री प्रिंसेप महोदय परीक्षा कर रहे थे तो उन्हें अनुमान हुआ कि धौलीके अभिलेखोंका अधिकांश भाग गिरनारके अभिलेखोंसे मिलता-जुलता है।[२] उसके पश्चात् उन्होंने यह भी बताया कि धौलीके अभिलेखोंमें एकादश अभिलेखसे लेकर त्रयोदशतक नहीं है बल्कि उनके स्थानपर दो पृथक् शिलालेख जोड़े गये हैं।[३] इन दोनों पृथक् अभिलेखोंका सम्पादन करके उन्होंने प्रकाशित भी किया[४]। उसमें भी किटो महोदयका लिप्यन्तर भी साथ ही प्रकाशित किया।[५] अभिलेख तीन स्तम्भोंमें विभक्त हैं। मध्यके स्तम्भपर प्रथमसे छठवेंतक, दाहिनी ओरके स्तम्भपर सप्तमसे दशम तथा चतुर्दश है। तथा इनके नीचे सीधी रेखाओंके मध्यमें द्वितीय पृथक् शिलालेख है। प्रथम शिलालेख बायीं ओरके स्तम्भपर उत्कीर्ण है।

एक महत्त्वपूर्ण बातकी ओर श्री कनिंगहम महोदयने ध्यान दिलाया कि इन दोनों पृथक् शिलालेखोंका नाम परिवर्तित कर दिया जाय; वह पृथक् अभिलेख जो चतुर्दश अभिलेखके क्रममें उत्कीर्ण है उसको सं० १ की संज्ञा प्रदान करनी चाहिये। और जो पृथक् अभिलेख बायीं ओरके स्तम्भमें पृथक् रूपसे उत्कीर्ण है उसको सं० २ कहना चाहिये। इसी क्रमकी पुष्टि जौगढ़ शिलासे भी होती है, जिसपर श्री प्रिंसेप महोदयका सं० २ पृथक् अभिलेख उनके सं० १ पृथक् अभिलेखके ऊपर उत्कीर्ण है। किन्तु क्योंकि श्रीकर्न महोदयके अतिरिक्त आजतक अशोकके धर्मलेखके सभी सम्पादकोंने प्रिंसेपका ही क्रम स्वीकार किया है अतः उसके परिवर्तनमें गड़बड़ी होनेकी सम्भावना है।

इन दो पृथक् शिलालेखोंका सम्पादन श्री बर्नाफ महोदयने किया। उन्होंने उसका अनुवाद भी साथ ही प्रकाशित किया[६]। कर्नने भी इनका सम्पादन किया।[७] सेनाने श्री बर्गेस महोदयके लिप्यन्तरके आधारपर अपना संस्करण प्रकाशित किया।[८] ब्यूलरने भी ऐसा ही किया। उन्होंने इसे दो बार प्रकाशित किया। एक बार जर्मन भाषामें (जेड० डी० एम० जी० भाग ३९, पृ० ४८९ तथा आगे, तथा भाग ४१, पृ० १ तथा आगे) तथा एक बार अंग्रेजीमें (आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ् सदर्न इण्डिया, भाग १, पृ० ११४ तथा आगे)। ब्यूलरके दूसरे संस्करणमें प्रस्तर लिप्यन्तरके फोटो भी संलग्न हैं।

६. जौगढ़ शिला

आन्ध्रमें गंजाम जिलेके बरहमपुर नामक तालुकाके अन्तर्गत जौगढ़ नामक स्थानमें धौली शिलाके पृथक् अभिलेखोंकी प्रतिलिपि उत्कीर्ण है। जौगढ़ गंजामसे लगभग १८ मील उत्तर-पश्चिम ऋषिकुल्या नदीके उत्तरी तटपर स्थित है।

प्रतीत होता है कि उत्कीर्ण शिलाकी स्थिति एक सुविस्तृत नगरके अन्तर्गत है जिसके चारों ओर ऊँची प्राचीरोंके ईंट-पत्थरोंके टुकड़े मिलते हैं। अभिलेख शिलापर तीन पृथक् खण्डोंपर उत्कीर्ण है। प्रथमपर प्रथम अभिलेखसे लेकर पञ्चम अभिलेखतक उत्कीर्ण है। किन्तु दुर्भाग्यवश उनका लगभग आधा अंश प्राप्त नहीं होता। द्वितीय प्रस्तर-फलकपर ६वें अभिलेखसे लेकर १० वें तक अभिलेख उत्कीर्ण हैं। तृतीयपर धौलीमें पाये गये दोनों पृथक् शिलालेख हैं। इन दोनों अभिलेखोंको अन्य अभिलेखोंसे अलग करके उत्कीर्ण किया गया है।[९] इनकी पृथक्ता स्वस्तिकसे ऊपरी कोनोंपर की गयी है।

अभिलेखकी प्रतिलिपि सन् १८५० ई० में सर वाल्टर इलियटके द्वारा की गयी थी। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि ये अभिलेख अन्य स्थानोंपर प्राप्त (शाहबाजगढ़ी, गिरनार, तथा धौली) अशोकके अभिलेखोंकी ही भाँति हैं।[१०] उस समय मद्रास सरकारने उसे लोहेके छड़ों तथा छतसे इसकी रक्षाका समुचित प्रयत्न किया।

श्री कर्न महोदयने धौलीके ही साथ इन दोनों अभिलेखोंका भी सम्पादन किया। श्री जेम्स बर्गेस महोदयने सर्वप्रथम इस शिलाके अभिलेखोंका लिप्यन्तर किया। सेनाने इसीको आधार मानकर इन अभिलेखोंका सम्पादन किया। ब्यूलरने श्री मिनकिन महोदयके द्वारा लिये गये फोटोग्राफके आधारपर प्रथमसे लेकर दशम तथा चतुर्दश अभिलेखोंको सम्पादित करके प्रकाशित किया (द्रष्टव्य जेड० डी० एम० जी०, भाग ३७, तथा ४०)। दो पृथक् अभिलेखोंको उन्होंने श्री बर्गेस महोदयके लिप्यन्तरके आधारपर सम्पादित किया (वही भाग ४१, पृ० १ से आगे)। उन्होंने ही उसे दुबारा प्रकाशित किया (द्रष्टव्यः आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ् सदर्न इण्डिया, भाग १, पृ० ११४ तथा आगे)।

७. सोपारा शिलाखण्ड

सोपारा बम्बईके थाना जिलेके अन्तर्गत बसीन तालुकामें एक प्राचीन नगर है। वहाँ सन् १८८२ ई० में पं० भगवानलाल इन्द्रजीको एक भग्न शिलाखण्डका पता लगा, जिसपर अशोकके धर्मलेखोंके अष्टम अभिलेखका लगभग तिहाई अंश था। इस भग्न अंशसे यह पता चलता है कि इस स्थानपर अशोकके सम्पूर्ण अभिलेख रहे होंगे और जो किसीके ध्यानमें न आनेके कारण प्रस्तर शिलाओंके भग्न होनेसे लुप्त हो गये।[११]

यह प्रस्तर-खण्ड भातेला नामक कासारके पास नगरके पूर्व, प्राचीन बन्दरगाहके निकट, प्राप्त हुआ था। पं० भगवानलाल इन्द्रजीने इसका लिप्यन्तरके साथ प्रकाशित किया। उक्त प्रस्तर खण्ड अब बम्बईके एशियाटिक सोसाइटीके संग्रहालयमें सुरक्षित है।

---

१. ज० ए० सो० ब० भाग ७ (१८३८), पृ० ४३५-७।
२. वही. पृ० १५७।
३. वही. पृ० २१९।
४. वही पृ० ४३८।
५. वही फलक १०।
६. लोटस, पृ० ६७१ तथा आगे।
७. ज. रा. ए. सो. १८८० पृ० ३७९ तथा आगे।
८. इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि, २ पृ० १९५ तथा आगे।
९. कनिंगहम : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० १९ तथा आगे।
१०. कनिंगहम : वही, पृ० १८।
११. ज. ब. ब्रा. रा. ए. सो. १५ पृ० २८२।

८. एर्रगुडि शिला अभिलेख

एर्रगुडि कर्नूल जिले (आन्ध्र प्रदेश) में एक गाँव है जो दक्षिण रेलवेकी रायचूर-मद्रास शाखाके गूतीनामक रेलवे स्टेशनसे आठ मीलकी दूरीपर है। यह सिद्धपुरके पूर्वोत्तर अस्सी मीलकी दूरीपर स्थित है। इस गाँवके पास एक पहाड़ी है जिसको स्थानीय लोग 'येनकोण्डा' (हाथी-पहाड़ी) कहते हैं। इसके छः पत्थरके डोंकोंपर अशोकके लघु शिला अभिलेख और शिला अभिलेख उत्कीर्ण हैं।

सबसे पहले इस अभिलेखका पता श्री अनुघोष, एफ. सी. एस., एफ. जी. एस. (भूतत्त्ववेत्ता)को लगा था। परन्तु बहुत दिनोंतक इन्होंने इसको गुप्त रखा। फिर अन्तमें इसकी सूचना इन्होंने भारतीय पुरातत्त्व विभागको दी। उस विभागके एक अधीक्षक श्री दयाराम साहनीने पुरातत्त्व सर्वेक्षणके १९२८-२९ ई० के वार्षिक विवरण (पृष्ठ १६१-६७) में इन अभिलेखोंका प्रकाशन किया।

इसके चतुर्दश शिला अभिलेखका पाठ कालसीके पाठसे मिलता-जुलता है।

सुविधाके लिए एर्रगुडिमें उत्कीर्ण शिला अभिलेखके अंश एर्रगुडि लघु शिला अभिलेखके साथ ही मुद्रित हुए हैं।

द्वितीय खण्ड : लघु शिला अभिलेख

१. रूपनाथ लघु शिला अभिलेख

रूपनाथ एक धार्मिक स्थान है। मध्यप्रदेशमें जबलपुरसे कटनी जानेवाली रेलवे लाइनपर स्लीमनाबाद रेलवे स्टेशनसे लगभग १४ मील पश्चिम स्थित है। रूपनाथ केमूरकी शृंखलाओंसे बहुत दूर नहीं; अपितु उनकी तलहटीमें बहुरिबंदके उर्वर प्लेटोके ठीक निचले भागमें, चकमकी लाल पत्थरोंकी पहाड़ी है। यहाँ एक छोटा-सा झरना केमूर शृंखलाकी चोटीपर स्थित है और तीन छोटे-छोटे झरनोंके गिरनेसे एक छोटा-सा तालाब बन जाता है। इनमें प्रत्येक झरनाको लोग पवित्र मानते हैं। सबसे ऊपरवालेको 'राम'के नामपर पुकारते हैं। दूसरा लक्ष्मणके नामपर तथा सबसे निचला सीताके नामपर[१] पुकारा जाता है। इस स्थानका रूपनाथ ही नाम अधिक प्रसिद्ध है जो वर्तमान रूपनाथ शिव-मंदिरके नामपर पड़ा है।

एक स्वतंत्र शिलाखण्ड, जिसपर अशोकके अभिलेख उत्कीर्ण हैं, निचले तलके पश्चिमी ओर पड़ा है। अभिलेख इस शिलाके ऊपर है। यह शिलाखण्ड उन शिलाखण्डोंमेंसे है जो ऊपरसे कई बार गिर चुके हैं। अतः यह सम्भव है कि यह अभिलेख जिस समय उत्कीर्ण हुआ उसी समय यह गिर चुका होगा[२]। अभिलेख ४½ फुट लम्बा तथा १ फुट चोड़ा है। इसमें छः पंक्तियाँ हैं जिसमें पाँचवीं पंक्तिमें केवल ५ अक्षर ही सुरक्षित है।[३]

इस अभिलेखका लिप्यन्तर श्री कनिंगहम महोदयने १८७१-२ ई० में किया (आर्क० रिपोर्टस,भाग ७, पृ० ५०) और इसका सम्पादन करके सन् १८७७ ई०में प्रकाशित किया। इण्डि. एण्टि. भाग ६. १४९ तथा आगे)। इसके बाद पुनः उन्होंने दो बार प्रकाशित किया[४]। श्री सेना महोदयने अपने 'इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि' (भाग २. १६९ तथा आगे)। डा० ब्लाख महोदयने भी इसका लिप्यन्तर प्रकाशित किया[५]।

२. सहसराम लघु शिला अभिलेख

दक्षिणी बिहारके शाहाबाद जिलेमें सहसराम एक प्रसिद्ध कस्बा है। केवल दो ही मील नगरके पूर्वकी ओर चन्दनपीर नामक पहाड़ी केमूर-शृंखलाका एक भाग है। एक चन्दनपीर नामक मुसलमान फकीर था जिसने इस पहाड़ीकी चोटीपर अपनी कुटिया[६] बनायी थी। अशोकके अभिलेख कुछ नीचे एक खोहमें है जिसे आजकल चिरागदान अर्थात् 'पीर' का चिराग कहते हैं। पश्चिमको ओरका दरवाजा लगभग ४ फुट ऊँचा है जो बनी हुई दीवारोंके बीच पड़ता है। इन्हीं दीवारोंमेंसे एकमें छेद करके श्री बेगलर महोदयने अभिलेखोंका फोटोग्राफ[७] लिया था।

सहसरामके अभिलेखको श्री ब्यूलर महोदयने तीन बार तथा श्री सेना महोदयने दो बार प्रकाशित किया। तृतीय बार[८] सम्पादनके समय श्री ब्यूलर महोदयने यह देखा कि श्री बेगलरके फोटोग्राफमें कुछ ऐसे अक्षर पाये जाते हैं जो परवर्ती कालमें चट्टानके टूट जानेके कारण लुप्त हो गये हैं। तथा फ्लीट महोदयके लिप्यन्तरमें वे वैसे ही लुप्त हैं। (वही०) श्री हुल्त्श महोदयने अपने 'कॉर्पस' में सर जॉनके द्वारा दिये गये फोटोग्राफका उपयोग किया है।

३. बैराट लघु शिला अभिलेख

राजस्थानमें जयपुर राज्यके अन्तर्गत जयपुर नगरसे लगभग ४२ मील उत्तर-उत्तरपूर्वकी ओर बैराट नामक स्थानसे (आधुनिक बैराट)से लगभग एक मील उत्तर-पूर्वकी ओर श्री कार्लाइल महोदयने सन् १८७१-२ ई में, रूपनाथ और सहसरामकी ही भाँति टूटा-फूटा अभिलेख खोज निकाला।

अभिलेख एक स्वतंत्र शिलाखण्डपर उत्कीर्ण है, जो पहाड़ीके ठीक नीचे स्थित है तथा जिसको आसपासके लोग भीमकी डुंगरी कहते हैं।[९] यह अभिलेख शिलाखण्डके पूर्वी भागपर तथा शिलाके निचले भागपर उत्कीर्ण है।

शिलाखण्ड १० फुट × २४ फुट पश्चिम[१०]-पूर्वकी ओर स्थित है। दक्षिण-उत्तरकी तरफ यह १५ फुट मोटा है। रूपनाथ तथा सहसराम अभिलेखके साथ ही श्री ब्यूलर तथा श्री सेना महोदयने इसको प्रकाशित किया। केवल कनिंगहमके लिप्यन्तरको छोड़कर और कोई भी लिप्यन्तर प्रकाशित नहीं हुआ।

४. कलकत्ता-बैराट लघु शिला लेख

यह शिलाखण्ड, जिसपर अशोकका धर्मलेख उत्कीर्ण है, बंगालकी एशियाटिक सोसाइटी द्वारा कलकत्तामें सुरक्षित है। श्री बर्ट महोदयने सन् १८४० ई० में बैराटसे इस अभिलेखको प्राप्त किया जहाँसे श्री कारलाइल महोदयने बैराटका अभिलेख प्राप्त किया था। इस शिलाखण्डका पूरा विवरण उन्होंने प्रकाशित किया[११]। उनके

---

१. कनिंगहम, इन्सक्रिशन्स ऑफ अशोक पृ० २१।
२. कजेन्स. प्रोग्रेस रिपोर्ट, आर्क. सर्वे. वेस्ट. इण्डि. १९०३-४ पृ० ३५।
३. कनिंगहम. इन्सक्रिप्शन्स ऑफ अशोक, पृ० २२।
४. इण्डि एण्टि. भाग ७, पृ० १४१ तथा आगे; फ्लीटके लिप्यन्तरके साथ वही० भाग २२. पृ० २९९ तथा आगे।
५. ऐनुअल रिपोर्टस. (ईस्टर्नसर्किल १९०७-८ पृ० १९।
६. कनिंगहमः ऑर्क. रिपोर्ट, भाग ११. पृ० १३२ तथा आगे।
७. वहीः इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० २० तथा आगे।
८. इण्डि. एण्टि. भाग २२. पृ० २९९।
९. प्रोग्रेस रिपोर्ट, आर्क० सर्वे० वेस्ट० इण्डि० १९०९-१० पृ० ४५ तथा आगे। तुलना कीजिये कनिंगहम आर्क० भाग २३-पृ० २९।
१०. कनिंगहम, ऑर्क० रिपो० भाग ६. पृ० ९८।
११. ज. ए. सो. बं., भाग ९, पृ० ६१६।

अभिलेखकी प्रतिलिपिको कप्तान श्री किटो महोदयने प्रस्तर-मुद्रित किया। उन्होंने ही इसका लिप्यन्तर तथा भाषान्तर किया। इस कार्यमें उन्होंने प्रसिद्ध विद्वान् पण्डित कमलाकान्तसे सहायता ली।[१]

श्री बर्ट महोदयकी प्रतिलिपिके आधारपर श्री बर्नेफि महोदयने इस अभिलेखका सम्पादन किया[२] और इसीको श्री कर्न (फार्टेलिंग पृ० ३२ तथा आगे) तथा श्री विल्सन (ज० रा० ए० सो० भाग १६, पृ० ३५७ तथा आगे—प्रस्तर मुद्रण सहित) महोदयोंने भी उपयोग किया। श्री सेना महोदयने इसका सम्पादन अपने 'इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि' भाग २, पृ० १९७ तथा आगे में किया। उन्होंने इसका पुनः सम्पादन श्री बर्गेस द्वारा तैयार किये गये लिप्यन्तरके आधारपर किया। इण्डि० एण्टि० भाग २० पृ० १६५ तथा आगे)। श्री बर्गेसके लिप्यन्तरका फोटोग्राफ जरनल एशियाटिक (८) ९ पृ० ४९८)में प्रकाशित हुआ।

श्री बर्ट महोदयने बताया कि वस्तुतः बैराट भब्र नामक स्थानसे ६ मील दूरीपर स्थित है। अतः इसे भब्र अभिलेख ही कहना अधिक समीचीन होगा। किन्तु जैसा कि श्री हुल्त्ज महोदयने बताया स्थानका नाम 'भब्र' नहीं बल्कि भाब्रु है। फिर यह बैराट नामक स्थानसे ६ मील दूर नहीं बल्कि बारह मील है। कनिंगहम (आर्क. रिपोर्ट. भाग ६, ९८)। कनिंगहमके अनुसार (आर्क. रिपोर्ट. भाग २ पृ० २४७) जिस पहाड़ीपर यह अभिलेख उत्कीर्ण है वह बैराट शहरसे लगभग १ मील दूरीपर स्वतंत्र वस्तु ही प्रतीत होती है। यह लगभग दो सो फुट (२०० फु०) ऊँची है। इसे आज भी बीजक पहाड़ (अभिलेख का पर्वत) कहते हैं। इसपर कुछ भग्नावशेष पाये गये हैं जिसको श्री कनिंगहम महोदयने उसे बौद्ध विहारका नाम दिया है (वही. पृ० २४८)। श्री हुल्त्ज महोदयने बैराटके एक अभिलेखसे इसका नाम विभिन्न करनेके लिए ही इसे कलकत्ता-बैराट नाम दिया है।

५. गुजर्रा लघु शिला अभिलेख

गुजर्रा मध्य प्रदेशके दतिया जिलेमें जंगल-पहाड़ियोंके बीचमें एक गाँव है। यह दतिया और झाँसी (उ० प्र०) दोनोंसे लगभग ११ मीलकी दूरीपर है। भारतीय पुरातत्व विभागके सहायक सञ्चालक डॉ० बहादुर चन्द्र छाबराने दिसम्बर १९५४ में इसका पता लगाया था। अण्डाकार चट्टान, जिसके ऊपर यह अभिलेख उत्कीर्ण है, एक पहाड़ोकी तलहटीमें है जिसको स्थानीय लोग 'सिद्धोंकी टोरिया' (सिद्धोंकी पहाड़ी) कहते हैं। इस पहाड़ीमें कड़े पत्थरकी चट्टाने और विशाल शिला-खण्ड ऊपरकी ओर स्थित हैं, जिनके नीचे लोग धूप और वर्षासे शरण लेते है। पहाड़ीकी चोटीपर प्राचीन आवासके चिह्न हैं। डॉ० छाबराको ईंट और मिट्टीके बर्तनोंके कई टुकड़े मिले थे।

यह अभिलेख अशोकके लघु शिला अभिलेखका ही एक संस्करण है। इसके पूर्व निम्नांकित नवसंस्करण मिल चुके थे—(१) बैराट (२) सहसराम (३) रूपनाथ (४) एर्रगुडि (५) राजुल-मंडगिरि (६) मास्की (७) ब्रह्मगिरि (८) सिद्धपुर ओर (९) जटिंग-रामेश्वर। इस प्रकार गुजर्रा अभिलेख दशम संस्करण है।

इस अभिलेखमे ५ पंक्तियाँ हैं। इसकी विशेषता यह है कि इसमें अशोकका पूरा नाम (अशोक राज) ओर विरुद (देवानं पियदसिनो) पाया जाता है। इसके पूर्व केवल मास्की लघु शिला अभिलेखमें देवानं पियस 'अशोक' पाया गया था।

इस अभिलेखको सबसे पहले डॉ छाबराने इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेसके अहमदाबाद अधिवेशन (दिसम्बर १९५४)के कार्यवाही-विवरणमे प्रकाशित कराया था। डॉ. राधाकुमुद मुकर्जीने इसीके आधारपर अपने 'अशोक' द्वितीय संस्करणके परिशिष्ट (पृ० २६२-६३)में इस अभिलेखकी प्राप्ति ओर विषयका परिचय दिया।

६. मास्की लघु शिला अभिलेख

हैदराबादके रायचूर जिलेमें लिङ्गसुगुर तालुकाके एक मास्की नामक ग्राममें सोनेकी खानके इञ्जीनियर श्री बीडन महोदयने २७ जनवरी सन् १९१५ ई० में रूपनाथ, सहसराम तथा बैराट अभिलेखोंकी ही भाँति एक टूटा-फूटा-सा अभिलेख प्राप्त किया। हुल्त्ज महोदयने श्री राव बहादुर एच. के० शास्त्री द्वारा प्रस्तुत विवरणको अपने ग्रन्थमें दिया। उसीके आवश्यक अंशोंका अनुवाद यहाँ भी दिया जा रहा है!

"पता लगानेसे ज्ञात हुआ कि विभिन्न प्रकारके लोग इसे विभिन्न नामोंसे पुकारते हैं। अशिक्षित कृषक इसे मश्गि कहते हैं; कभी-कभी मशिगि भी कहते हैं। ब्राह्मण वर्ग इसे मास्की कहता है। मुसलमान उसे मस्गी कहते है। चालुक्य नरेश जगदेकमल्लके एक अभिलेख (शक सं० ८४९)में इसे मोसगी कहा गया है। इसी नरेशके एक अन्य अभिलेखमें भी इसे मोसगी कहा गया है। यादव नरेश सिंघण, जो तेरहवीं शताब्दीके नरेश हैं, इस स्थानको अपने अभिलेखमें 'मोसगी नामसे ही अभिहित करते हैं। अच्युतराय तथा सदाशिवरायके राज्यत्वकालमें भी इसका नाम 'मोसगे' अथवा 'मोसगे नाडु' है।"

श्री हुल्त्ज महोदयके अनुसार मास्कीका प्राचीन नाम मोसंगी मुशङ्गीका स्मरण दिलाता है जहाँपर तमिल अभिलेखोंके अनुसार चालुक्य नरेश द्वितीय जयसिंहको राजेन्द्र चोलने पराजित किया था[४]।

प्रथम महायुद्धके समय सन् १९१६ ई० मे श्री फ्लीट महोदयने इस नवीन अभिलेखकी ओर ध्यान दिलाया (ज. रा ए. सो. १९१६ पृ० ५७२ तथा आगे)। श्री सेना महोदयने जरनल एशियाटिक (११।७ पृ० ४५५ तथा आगे)मे इस अभिलेखका सुन्दर सम्पादन किया। श्री हुल्त्ज महोदयने अपने मित्र श्री कोनो महोदयसे श्रीकृष्ण शास्त्रीका लिप्यन्तर प्राप्त करके जेड. टी. एम. जी. (भाग ७० ६० पृ० ५३९ तथा आगे) में इसका सम्पादन करके इसे प्रकाशित किया।

इस अभिलेखकी विशेषता यह है कि इसमें 'अशोक' का नाम दिया हुआ है। वैसे यह नाम इस अभिलेखकी प्राप्तिके पूर्व केवल पुराणों तथा बौद्ध साहित्यमें ही मिलता था।

७. ब्रह्मगिरि लघु शिला अभिलेख

श्री बी. एल. राइसको १८८२ ई० में मैसूर राज्यमें तीन लघु शिला अभिलेख प्राप्त हुए थे।[१] ये चितल द्रुग जिलेकी जनगी-हल्ल अथवा चिन-हग्गारी नदीके तटपर स्थित पहाड़ियोंपर उत्कीर्ण हैं। ये सभी सिद्धपुरके पड़ोसमें १४-४७° तथा १४-५१° अक्षांशोंके बीच ७६-५१° देशान्तरपर हैं। इनमें सबसे अधिक सुरक्षित ब्रह्मगिरि-

---

१. वही, पृ० ९१७।

२. लोटस, पृ० ७१० तथा आगे।

१. द्रष्टव्य साउथ इण्डियन इन्सक्रिप्शन्स, भाग १ पृष्ठ ९५ तथा आगे;
एपिग्रा० इण्डिका० भाग ९ पृ० २३०।
फ्लीट, ज० रा० ए० सो० १९१६ पृ० ५७४।

४. हैदराबाद ऑर्क. सिरीज सं० १;
दि न्यू अशोकन एडिक्ट आफ मास्की १९१५।

का अभिलेख है। जिस चट्टानपर यह उत्कीर्ण है उसको स्थानीय लोग अक्षरगुण्डु (अक्षर-शिला) कहते हैं। यह एक खुरदरी चट्टानपर खुदा है जो दाहिनी ओर झुकी हुई है। इसमें टेढ़ी-मेढ़ी १३ पंक्तियाँ हैं। इसका माप १५' ६"×११' ६" है। छठवीं और सातवीं पंक्तियोंके प्रारम्भके लगभग आधे दर्जन अक्षर भग्न हैं।

८. सिद्धपुर लघु शिला अभिलेख

मैसूर राज्यके तीन लघु शिला अभिलेखोंमें दूसरा सिद्धपुरका अभिलेख है जो ब्रह्मगिरिके पश्चिम एक मीलकी दूरीपर स्थित पहाड़ीपर है। इस क्षेत्रके लोग इस पहाड़ीको येन मन तिम्मय्यन गुण्डलु (महिष-समूह-शिला) कहते है। इसका माप १३' ८"×८' ०" है। इसमें २२ पंक्तियाँ हैं। इस अभिलेखका अधिकांश घिस गया है।

९. जटिंग रामेश्वर लघु शिला अभिलेख

इस अभिलेख-समूहका तीसरा अभिलेख जटिंग रामेश्वर पहाड़ीकी पश्चिमी चोटीपर स्थित है। यह ब्रह्मगिरिके पश्चिमोत्तर लगभग तीन मीलकी दूरीपर है। यह ढालुआ आधारवत् चट्टानके तलपर उत्कीर्ण है, जिसका मुँह पूर्वोत्तरकी ओर है। यहींसे जटिंग रामेश्वर मन्दिरमे जानेकी सीढ़ियाँ ठीक सामनेकी ओरसे प्रारम्भ होती हैं। उत्सवके दिनोंमें इस शिलाकी छायामे बैठकर चूड़िहार चूड़ियाँ बेंचते हैं। इसलिए स्थानीय लोग इसे बळेगार-गुण्डु, (चूड़िहार-शिला) कहते हैं। बराबरकी रगड़से यह अभिलेख इतना घिस गया है कि यह बतलाना कठिन है कि यह कहाँसे प्रारम्भ होता है और कहाँ समाप्त होता है। फिर भी जहाँतक देखना सम्भव है इसमें २८ पंक्तियाँ दिखायी पड़ती हैं जिनका विस्तार १७' ६"× ६' ६" है। बायें हाशियामे एक पंक्ति उत्कीर्ण है जो पंक्तियोंकी दिशाको ओर संकेत करती है। पंक्तियाँ समानान्तर न होकर टेढ़ी-मेढ़ी हैं।

मैसूरके तीनों लघु शिला अभिलेखोंका प्रस्तर-मुद्रण श्री राइस महोदयने १८८२ ई० में तैयार किया था और इसके आधारपर इसका सम्पादन किया। इसके पश्चात् श्री सेनाने इनका लिप्यन्तर और भाषान्तर किया (ज. ए. सो. ८. १९. पृ० ४७२-)। तदन्तर डॉ० ब्यूलरने कुछ विस्तारके साथ उनका सम्पादन किया (वियना ओरियण्टल जरनल, भाग ७ पृ० ५७ एपि० इण्डिका भाग ३ पृ० १३४-)। एपिग्राफिया कर्नाटिका भाग २ में इनका जो प्रतिचित्र और लिप्यन्तर प्रकाशित हुआ उसका आधार लेकर हुल्शने इनका सम्पादन, लिप्यन्तर तथा भाषान्तर किया (कार्पस इस्क्रिप्शनम इण्डिकेरम भाग १ : अशोकन इंस्क्रिप्शन्स)।

१०. एर्रगुडि लघु शिला अभिलेख

(इसके अनुसन्धान और भौगोलिक स्थितिके लिए देखिये एर्रगुडि शिला अभिलेख, पृ०१२४)।

एर्रगुडिके लघु शिला अभिलेखकी १२ वी पंक्तिके मध्यतकका भाग ब्रह्मगिरिके पाठसे मिलता-जुलता है। इसके आगेके पाठमे पर्याप्त नयी सामग्री है।

इस अभिलेखकी लिपि और लघु शिला अभिलेखोंके ही समान ब्राह्मी है। किन्तु इसकी ८ पंक्तियाँ (२,४,६,९,११,१३,१४,२३) दायेंसे बायेंकी ओर उत्कीर्ण हैं। यदि हम ८ वीं और १४ वी पंक्तियोंको छोड़ दें तो प्रथम १५ पंक्तियाँ बलीवर्द शैली (क्रमशः एक बायेंसे दायें और दूसरी दायेंसे बायें) में उत्कीर्ण हैं। यह लेखन-पद्धति अशोकके और किसी अभिलेखमें नहीं पायी गयी है। एक बात और ध्यान देनेकी है। यद्यपि आठ पंक्तियोंको दिशा दायेंसे बायेंकी ओर है, किन्तु उनके अक्षरोंकी दिशामें कोई अन्तर नहीं। इसको एक अप्रचलित कृत्रिम शैलीका प्रयोग ही कह सकते हैं। इससे यह परिणाम कदापि नहीं निकाला जा सकता कि ब्राह्मी कभी दायेंसे बायें प्रचलित रूपमें लिखी जाती थी।

११, १२. गोविमठ तथा पालकिगुण्डु लघु शिला अभिलेख

अशोकके लघु शिला अभिलेखके ये दो संस्करण कोपवाल (प्राचीन नाम कोपनगर) में पाये गये थे। कोपवाल सिद्धपुरसे साठ मीलकी दूरीपर दक्षिण रेलवेपर हासपेट और गडग जक्शनोंके बीच स्थित है। इसके पड़ोसमें एक अभिलेख गोविमठ और दूसरा पालकिगुण्डु नामक पहाड़ीपर उत्कीर्ण है। इन दोनोंका पता कोपवालके ही निवासी श्री एन० बी० शास्त्रीने १९३१ ई० में लगाया था।

इनका उल्लेख डा० राधाकुमुद मुकर्जीने अपने ग्रन्थ 'अशोक' (परिशिष्ट पृ० २६१) में किया है। डॉ० राधाविनोद बसाकने अपने ग्रन्थ 'अशोकन इंस्क्रिप्शन्स' (१९५९ ई०), पृ० १३३-३८, में इनके पाठका सम्पादन किया है। ये दोनों ही अभिलेख एक समान हैं। अन्य लघुशिला अभिलेखोंके सदृश इनका संस्करण है। इनकी अपनी कोई विशेषता नहीं है। गोविमठ अभिलेखका पाठ रूपनाथके समान पूर्णतः सुरक्षित है।

१३. राजुल मंडगिरि लघु शिला अभिलेख

राजुल-मंडगिरि एक छोटा टीला है जो आन्ध्र प्रदेशके कर्नूल जिलेके पत्तिकोंड तालुकाके चिन्नतुलति गाँवके पास स्थित है। एर्रगुडिसे २० मीलकी दूरीपर है। यहींपर यह अभिलेख प्राप्त हुआ था।

१४. अहरौरा लघु शिला अभिलेख

उत्तरप्रदेशके मिर्जापुर जिलेमें अहरौरा एक कस्बा है। जो सड़क अहरौरा बाँध जाती है उससे लगभग १०० गजकी दूरीपर एक पहाड़ी है। उसकी एक चट्टानके ऊपरी तलपर यह अभिलेख उत्कीर्ण है। इसीके पास भण्डारीदेवीका मन्दिर है। पूजाके लिए इस स्थानपर लोग प्रायः एकत्र होते रहते हैं। आश्चर्य है कि बहुत दिनोंतक अन्वेषकोंका ध्यान इस अभिलेखकी ओर आकृष्ट नहीं हुआ।

११ नवम्बर १९६१ के लीडर (प्रयाग) में एक समाचार प्रकाशित हुआ। इसमें इलाहाबाद विश्वविद्यालयके प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग-के अध्यक्ष, प्रो० गोवर्धनराय शर्माके नेतृत्वमे एक अन्वेषक दल द्वारा इस अभिलेखके अनुसन्धानकी घोषणा की गयी। इस दलमें उनके विभागके श्री जे० एस० नेगी और डॉ० एस० एन० राय भी सम्मिलित थे। जब यह दल पहाड़ीपर पहुँचा तब भंडारीदेवीके मन्दिरसे एक सौ गजकी दूरीपर उपर्युक्त चट्टान दिखायी पड़ी। उसके ऊपरी भागका आयताकार तल्ने इनका ध्यान आकृष्ट किया। वहाँ पहुँचनेपर अभिलेख दिखायी पड़ा। उसकी छाप लेनेपर यह प्रकट हुआ कि अशोकके लघु शिला लेखका ही यह एक संस्करण है जिसके अन्य संस्करण भारतके विभिन्न स्थानोंमें मिल चुके हैं। उत्तरप्रदेशमें प्राप्त यह प्रथम लघु शिला लेख है।

---

१. हैदराबाद आर्केलॉजिकल सिरीज नम्बर १, दि न्यू अशोकन एडिक्ट ऑफ मास्की १९१५।

यह अभिलेख चट्टानके ऊपरी आयताकर तलपर उत्कीर्ण है जिसका माप ३'.१०" × २'.९' है। इसमें ११ पंक्तियाँ हैं। प्रत्येक पंक्तिमें २६ अथवा २७ अक्षर हैं। अन्तिम पाँच पंक्तियाँ पूर्णतः सुरक्षित हैं। ऊपरी तलका बायाँ भाग चिटक गया है, जिसके कारण पहली पंक्तिमें ३ और दूसरीमें २ अक्षर दिखायी पड़ते हैं। तीसरी, चौथी और पाँचवींमें तथा छठवींके मध्यके बहुत-से अक्षर लुप्त हो गये हैं। विषय, शब्दावली और शैलीमें यह सहसराम लघु शिला लेखसे मिलता है। दोनोंमें सबसे बड़ी समता यह है कि पंक्ति ११ में प्रवास (पड़ाव) की संख्या अक्षरोंमें (दुवे सपंना लाति सति) दी हुई है। इस अभिलेखकी विशेषता यह है कि पंक्ति ११ के अन्तमें 'बुधस सलीले आलोढे' वाक्यांश आता है, जिसमें भगवान् बुद्धका स्पष्ट उल्लेख है। इसके पूर्व केवल एक मात्र अभिलेख था, जिसमे भगवान् बुद्धका उल्लेख पाया गया था।

इस अभिलेखकी भाषा मागधी है, जिसमे र का ल, ण का न और प्रथमा विभक्तिमें अ का ए हो जाता है (दे० आलाधतवे, लाति, सखने सलीले आदि)। इसके शब्दोंके अक्षर-संयोजनमें भी विशेषता है। शब्दोंके अन्तमें आनेवाले ह्रस्व वर्ण दीर्घ हो जाते है (दे० पलजमन्तू, जानन्तू, होतू, वढिसती)।

सबसे पहले प्रो० गो० रा० शर्माने इस अभिलेखकी छाप तैयार करायी। इसकी एक प्रति उन्होंने म० म० डॉ० मीराशी (नागपुर) के पास भेजी, जिसके आधारपर उन्होंने भारती (का० वि० वि० सं० ५ भाग १ पृ० १३५-१४०) में इसका एक संस्करण टिप्पणी और ऐतिहासिक विवेचनके साथ प्रकाशित किया। लगभग इसी समय डॉ० अ० कि० नारायण (वाराणसी) ने भी अभिलेखके प्राप्तिस्थानपर जाकर उसकी छाप तैयार करायी और उसके आधारपर भारतीके उसी अंकमें इसका दूसरा संस्करण टिप्पणीके साथ प्रकाशित किया।

तृतीय खण्ड : गुहा अभिलेख

१. २. ३. बराबर गुहा अभिलेख

दक्षिणी बिहारमें गया नगरसे लगभग १५ मील उत्तर एकाएक उठी हुई ग्रेनाइटकी पहाड़ीपर अशोकके ये अभिलेख स्थित हैं। यद्यपि इस पूरी शृंखलाका नाम 'बराबर' है। परन्तु प्रत्येक पहाड़ीके अलग-अलग नाम भी हैं। सबसे ऊँची पहाड़ीका नाम 'बराबर' है जिसे सिद्धेश्वर भी कहते हैं, क्योंकि यहाँपर इसी नामके महादेवका मन्दिर है।[1]

यद्यपि सभी पहाड़ियोंपर कुछ-न-कुछ बौद्ध अवशेष हैं, किन्तु उसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बराबर तथा नागार्जुनी हैं जो लगभग २३०० वर्ष पूर्व गुहाके रूपमें[2] काटी गयी थीं। इस पूरी पहाड़ीमें सात गुहाएं हैं जिनमेंसे चार बराबर शृंखलासे सम्बन्धित हैं, और शेष नागार्जुनी[3] शृंखलासे। नागार्जुनी शृंखलाकी प्रत्येक गुहामें देवानां प्रिय दशरथका अभिलेख है।[4] बराबर गुहामेंसे तीनमें अशोकके अभिलेख उत्कीर्ण हैं। लोमशऋषि गुहामें मौखरी अनन्तवर्मनका वैष्णव अभिलेख उत्कीर्ण है, जिसमें बराबर पहाड़ीका प्राचीन मूल नाम 'प्रवरगिरि'[5] दिया हुआ है। बराबरके द्वितीय तथा तृतीय अभिलेखोंमें बराबर पहाड़ीको 'खलतिक' कहा गया है। इन सभी गुहाओंको अशोक तथा दशरथ दोनोंने आजीविकोंके लिए दान दिया था। तीन स्थानोंपर 'आजीविकेहि' शब्दको काटकर उड़ा देनेका प्रयास किया गया है। सम्भवतः यह कार्य मौखरी अनन्तवर्मनने किया होगा, जिसने बराबरकी एक गुहाको कृष्णको, तथा दो नागार्जुनीकी गुहाओंको शिव तथा पार्वती[6]को समर्पित किया था।

इन अभिलेखोंको सर्वप्रथम श्री किटो[7] महोदयने प्रस्तर-मुद्रित किया। बर्नाफने उनकी परीक्षा की (लोटस, पृ० ७७९ तथा आगे) तथा उसका सम्पादन सेना[8] तथा ब्यूलरने किया (इण्डि. एण्टि., भाग २०. पृ० ३६१ तथा आगे)।

४. ५. ६. नागार्जुनी गुहा अभिलेख

सन् १७८५ में सबसे पहले श्री जे. एच. हैरिंगटनने बराबर और नागार्जुनी गुहाओंकी यात्रा की थी। इसके कुछ वर्ष पहले हॉजेज महोदय नागार्जुनी गुहाओंकी ओर जा रहे थे। परन्तु रास्तेमें ही राजा जेतसिंहके किसी अनुयायीने उन्हें मार डाला। सबसे पूर्व इसका प्रामाणिक सम्पादन डॉ० ब्यूलर द्वारा किया गया जो इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द २०, पृ० ३६४ पर प्रकाशित हुआ। ल्यूडर्सके लिस्ट ऑफ़ ब्राह्मी इन्सक्रिप्शन्स'में इनकी सं० ९५४-५६ है।

---

१. किटो : ज० ए. सो. बं. १६ (१८४७) पृ० ४०२।
२. कनिंगहम : आर्क-रिपो., भाग १; पृ० ४०।
३. वही, पृ० ४४।
४. ल्यूडर्स : लिस्ट ऑफ ब्राह्मी इन्सक्रिप्शन्स, स० ९५४-६।
५. फ्लीट : गुप्त इन्सक्रिप्शन्स; पृ० २२२।
६. वही. सं० ४८-५०।
७. ज० ए० सो० बं०, भाग १६, पृ० ४०१ तथा आगे फलक ९।
८. इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि, भाग २, पृ० २०९ तथा इण्डि. एण्टि. भाग २० पृ० १६८ तथा आगे।

चतुर्थ खण्ड : स्तम्भ अभिलेख

१. देहली-टोपरा स्तम्भ

यह स्तम्भ हलके गुलाबी रंगके बलुआ एक-प्रस्तर-खण्डका बना हुआ है। धरतीके ऊपर इसकी उँचाई ४२ फुट ७ इञ्च है। इसके ऊपरी ३५ फुटपर चमकती हुई पालिश है। निचला शेष भाग खुरदरा है।[१] पहले इस स्तम्भके कई नाम प्रचलित थे, जैसे, भीमसेनकी लाट, सुनहरी लाट, फिरोज शाहकी लाट, देहली-सिवालिक लाट आदि। फिरोजशाह तुगलक (१३५१-८८ ई०) के इतिहासकार शम्से सिराजने इस स्तम्भके स्थानान्तरणका वर्णन किया है। उसके अनुसार यह स्तम्भ मूलतः सालौर तथा खिजराबाद जिलेके टोपरा नामक गाँवमें स्थित था।[२] फिरोजशाहके प्रयत्नसे स्तम्भ दिल्ली लाया गया और फिरोजाबादमें उसके महलके ऊपर खड़ा किया गया। टोपरा नामक गाँवसे, जो दिल्लीसे ९० कोस दूर था, यह स्तम्भ बयालीस पहियोंकी गाडीपर यमुनाके किनारे लाया गया। वहाँसे नावोंके द्वारा यह फिरोजाबाद लाया गया। कनिंगहमने टोपरा गाँवको आधुनिक टोपरा बताया है जो साधोरासे १८ मील दक्षिण खिजराबादसे २२ मील दक्षिण-पश्चिम अम्बाला तथा सिरसवाके मध्यमें स्थित है।[३] स्तम्भ आज भी दिल्ली गेटके बाहर फिरोजशाहके तिमजिले कोटलेपर खड़ा है।[४]

इस दिल्ली-टोपरा स्तम्भपर अशोकके सात अभिलेख उत्कीर्ण है। सातवाँ विशेष महत्त्वका है, क्योंकि प्रथम छः अभिलेख दूसरे स्तम्भोंपर भी पाये जाते हैं, किन्तु सातवाँ नहीं। प्रथम छः तथा सातवेंकी प्रथम ग्यारह पंक्तियाँ क्रमशः उत्तर, पश्चिम, दक्षिण तथा पूर्वमें चार स्तम्भोंमे उत्कीर्ण हैं, सातवेंकी शेष पंक्तियाँ स्तम्भके चारों ओर खचित हैं।

अशोकके अभिलेखोंके अतिरिक्त इस स्तम्भपर अन्य भी छोटे-छोटे अभिलेख हैं। जिनमे यात्रियोंके अभिलेख भी सम्मिलित है। इसी स्तम्भपर अजमेरके चाहमान राजा वीसलदेवके भी छोटे-छोटे तीन अभिलेख (एपि० इण्डि० ९.६७) है, जिनकी तिथि ११६४ ई० है। इनका सम्पादन कीलहार्नने फ्लीटके लिप्यन्तरके आधारपर किया है (द्रष्टव्य, इण्डि० ऐण्टि० भाग १९ पृ० २१५ तथा आगे)।

दिल्ली-टोपरा स्तम्भ अभिलेखको सर्वप्रथम श्री प्रिंसेप महोदयने पढा तथा उसका आंग्ल भाषान्तर किया (ज. ए. सो. सो. ब. भाग ६ पृ० ५६६ तथा आगे)। इस अभिलेखकी प्रतिकृति बंगालकी एशियाटिक सोसाइटीके संग्रहालयमें सुरक्षित है, यद्यपि वहाँ उसको पढनेका प्रयास नही किया गया (वही पृ० ५६६)। हुल्ट्जको सोसाइटीसे ही प्रथम तथा अन्तिम अभिलेखका रेखाचित्र मिला जो आकारमें लगभग मूलके बराबर था। उनका विश्वास था कि उन रेखाचित्रोंको सर विलियम जोन्सको कर्नल पोलियरने प्रदान किया था। (वही. पृ० ५६७)। किस प्रकार श्री प्रिंसेप महोदयने इसको पढा, इसका इतिहास देना आवश्यक है। प्रथम चार अभिलेखोंको श्री बर्नाफ महोदयने 'लोटस'में तथा चतुर्थ तथा षष्ठको श्री कर्न महोदयने 'फारटेलिंग'में सम्पादित किया। श्री सेनार्ने भी इन अभिलेखोको अपने 'इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि'में दिया (द्रष्टव्य २–१ तथा आगे)। इनका सम्पादन कार्य कनिंगहम महोदयके प्रयाससे किये गये लिप्यन्तरके आधारपर हुआ। १८२४ ई०में फ्लीटने इनका एक अच्छा फोटोग्राफ लिया। इसमें श्री ब्यूलर महोदयने नागरी अक्षरोंमें किया गया अपना लिप्यन्तर लगाया (इण्डि. ऐण्टि. भाग १३ पृ० ३०६ तथा आगे)। इसका उपयोग ग्रियर्सनने सेनार्के संस्करणके अंग्रेजी अनुवादमें किया (इण्डि. एण्टि. भाग १७ तथा १८)। ब्यूलरने इन अभिलेखोंको जर्मनमें (जेड. डी. एम० जी०: भाग ४५ तथा ४६) तथा अंग्रेजीमें (एपि० इण्डिका, भाग २, पृ० २४५ तथा आगे) सम्पादित किया।

२. देहली-मेरठ स्तम्भ

टोपरा स्तम्भकी भाँति इस स्तम्भको भी फिरोजशाह तुगलकने दिल्ली लानेका कार्य किया। शम्से सिराजके अनुसार यह पहले मेरठके पास खड़ा था। यह मेरठ उत्तर-प्रदेशका प्रसिद्ध ज़िला है। इसको फिरोजशाहने दिल्लीमें कुश्क-ए-शिकार'में खडा किया। यह स्थान एक पहाडीपर स्थित है।[५] वहीं यह आज भी खडा है।[६]

इसपर टोपरा स्तम्भके पाँच अभिलेख उत्कीर्ण है। इनकी अवस्था बहुत अच्छी नहीं है। श्री प्रिंसेप महोदयने १८३७ ई० में ज. ए. सो. ब. भाग ६ फलक ४२ में इसका एक लिप्यन्तर प्रकाशित किया। श्री पी. एल. पिउ महोदयने और भी विवरण दिया। (वही, पृ० ७९५)।

श्री टाइफेन्थलर महोदयने, जो दिल्ली पधारे थे, इसके पाँच खण्ड देखे। उन्होंने ही बताया कि स्तम्भकी भग्नतामें प्रमुख कारण बारूद था।[८] यह लगभग एक सौ वर्षतक वहीं पडा रहा और बादमें अभिलेखोंको स्तम्भसे अलग करके एशियाटिक सोसाइटीके संग्रहालयके लिए भेज दिया गया। फिर बादमें इसे दिल्ली लाया गया और अब अपनी पुरानी स्थितिमें खड़ा किया गया है।[१०]

श्री फ्लीट महोदयने इस स्तम्भकी प्रतिलिपि तैयार की तथा उसे प्रकाशित कराया।[११] श्री ब्यूलर महोदयने ही उसे लिप्यन्तरित किया था। उन्होंने पुनः उसको जेड. डी. एम. जी., भाग ४५ तथा ४६ में तथा इपि० इण्डि. भाग २ पृ० २४५ तथा आगेमें प्रकाशित कराया।

६ठे अभिलेखकी दो पंक्तियोंवाला खण्ड १९१३ ई० में ब्रिटिश म्यूज़ियम भेजा गया था।

---

१. कनिंगहम : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ अशोक, पृ० ३५।
२. इलियट-डाउसन : हिस्ट्री आफ् इण्डिया, जिल्द ३, पृ० ३५०।
३. ऑर्क० रिपोर्ट, १४. ७८ तथा आगे।
४. किटो : ज॰ ए. सो० बं० ६. ७९६ तथा आगे।
५. इलियट-डाउसन हिस्ट्री ऑफ् इण्डिया भाग ३ पृ० ३५३।
६. कनिंगहम : आर्क० रिपो., भाग १, पृ० १६८।
७. कनिंगहम : वही।
८. कनिंगहम : दि क्रिप्शन्स ऑफ अशोक, पृ० ३७।
९. वही : ओर्क. रिपो०, भाग १, पृ० १६७।
१०. वही : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक पृ०, ३७।
११. इण्डि० एण्टि०, भाग १९।

३, ४. लौरिया अरराज तथा लौरिया नन्दनगढ़के स्तम्भ

ये दोनों ही स्तम्भ बिहारके चम्पारन जिलेमें क्रमशः केसरिया और बेतियाके पास स्थित हैं। श्री प्रिंसेप महोदयको, जिस समय वे दिल्ली-टोपरा अभिलेखका सम्पादन कर रहे थे (१८३१ ई०), इन दोनों स्तम्भ लेखोंका ज्ञान था। दोनों स्तम्भोंपर प्रथम छः अभिलेख उत्कीर्ण है। इनमें चार तो पूर्वी ओर तथा अन्तिम दो स्तम्भके पश्चिमकी ओर उत्कीर्ण है। श्री हॉग्सन महोदयने उन्हें रधिया तथा मठियाके स्तम्भका नाम दिया। श्री कनिंगहमने बतलाया कि ये दोनों ग्राम स्तम्भोंसे लगभग २॥ मील तथा ३ मीलकी दूरीपर स्थित हैं और उन्होंने ही लौरिया अरराज तथा लौरिया नवन गढ़'का नाम प्रदान किया। इन्होंने लौरिया शब्दकी उत्पत्ति जो दी है उसके अनुसार यह शब्द संस्कृतके 'लिंग' शब्दसे बना है। हिन्दीमें ध्वनिसाम्यके आधारपर रूप परिवर्तित हो गया है। परन्तु यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं जान पड़ती। वस्तुतः लौरिया शब्दकी उत्पत्ति संस्कृतके लगुड भोजपुरी लउरसे हुई है। श्री स्मिथ महोदयने बादमें यह बताया कि 'नवनगढ़' नन्दनगढ़का अशुद्ध रूप है (ज. रा. ए. सो. १९०२ पृ० १५३ नोट)।

लौरिया-अरराज स्तम्भ एक-प्रस्तरीय लगभग ३६॥ फुट ऊँचा है।[1] स्मिथके अनुसार इसके ऊपर मूलतः गरुड़ बनाया गया था।[2] लौरिया नन्दनगढ़ स्तम्भकी ऊँचाई ३२ फुट ९॥ ई० है। इसका शीर्ष, जिसकी ऊँचाई ६ फुट १० इंच है, कमलाकार है। इसपर सिंह उत्तरकी ओर मुँह करके खड़ा है। उपकण्ठपर राजहंसोंकी पंक्तियाँ मुक्ताओंको चुगती हुई दिखायी गयी हैं।[3]

ब्यूलरने इन दोनों स्तम्भोंके अभिलेखोंको जर्मन (जेड० डी० एम० जी० भाग ४५ तथा ४६) तथा अंग्रेजी (एपि० इण्डि० भाग २ पृ० २४५ तथा आगे)में सम्पादित किया। अंग्रेजीके संस्करणमें उन्होंने श्री गैरिक महोदयका लिप्यन्तर भी साथ-ही-साथ दिया।

लौरिया-नन्दनगढ़ स्तम्भपर अशोकके अभिलेखोंके अतिरिक्त मुगल सम्राट् औरंगजेबका भी अभिलेख है[4]। इसकी अब शिव-रूपमें पूजा होती है।

५. रामपुरवा स्तम्भ

बिहारके चम्पारन जिलेमें बेतियासे ३२॥ मील उत्तर रामपुरवामें श्री कारलाइल महोदयने छः अभिलेखोंवाले इस स्तम्भका पता लगाया।[5] लौरिया अरराज, लौरिया नन्दनगढ़, तथा रामपुरवाकी स्थितियोंका विवेचन श्री स्मिथ महोदयके रेखाचित्रके साथ (ज. रा. ए. सो. १९०२ पृ० १६२ फलक १) श्री कनिंगहम महोदयने अपने ऑक्यॉलॉजिकल रिपोर्ट्स भाग १६ में दिया है। स्तम्भ तो गिर गया है। शीर्षके ऊपरके सिंहका अंश भी समाप्त हो गया है, किन्तु वर्तुलाकार उपकण्ठ, राजहंसोंकी पंक्तियाँ तथा कमल अब भी ठीक दशामें है। यह 'दण्ड'पर मोटी ताम्रकीलसे बद्ध था।

श्री गैरिक महोदयने स्तम्भके उस अंशकी छाप जो उस समय सुलभ था प्रकाशित किया। ब्यूलरके लिप्यन्तरसे प्रतीत होता है (जेड्-डी० एम० जी० भाग ४५ तथा ४६; तथा एपि० इण्डिका भाग २. पृ० २४५ तथा आगे) कि उसपर चार अभिलेख थे।

श्री जॉन मार्शल महोदयने पूर्ण लिप्यन्तर तैयार किया। लुप्त सिंह शीर्षके पता लगानेका भी श्रेय उन्हींको है। स्तम्भके दण्डकी लम्बाई ४४ फुट ९॥ इञ्च है। जिसमें ८ फुट ९ इञ्च पर ओप नहीं है। अभिलेख दो 'स्तम्भों'में विभक्त हैं। अपने पूर्व स्थानसे आजकल स्तम्भको लगभग २०० गज हटा दिया गया है जो एक टीलेपर अड़ा पड़ा हुआ है। इसपरके अभिलेखोंको सुरक्षित रखनेके लिए इसपर ईंटोंकी छोटी छतरी-सी बना दी गयी है।

६. प्रयाग स्तम्भ

यह स्तम्भ आजकल प्रयागके किलेमें स्थित है। यह एक-प्रस्तरीय लगभग ३५ फुटका लम्बा स्तम्भ है। जड़वाले भागको लेकर इसकी लम्बाई ४२ फुट ७ इं० है। मूलतः यह स्तम्भ कौशाम्बीमें था। वहाँसे किलेमें उसी प्रकार लाया गया, जिस प्रकार टोपरा और मेरठके स्तम्भ दिल्ली लाये गये थे। इसपर निम्नांकित अभिलेख मिलते हैं :

(अ) अशोकके अभिलेख
- (क) दिल्ली-टापरा अभिलेखके प्रथम छः अभिलेख
- (ख) रानी अभिलेख
- (ग) तथाकथित कौशाम्बी अभिलेख

(आ) महाराजाधिराज समुद्रगुप्तकी प्रशस्ति

(इ) जहाँगीरका अभिलेख

(उ) अन्य पंक्तियोंके बीचमें एक देवनागरी अभिलेख

सर्वप्रथम कप्तान जेम्स होरेने अभिलेखोंके कुछ अंशोंका हस्तलिपि रेखाचित्र तैयार करके एशियाटिक रिसर्चेज भाग ७ फलक १३ तथा १४ में प्रकाशित कराया। लेफ्टिनेण्ट टी० एस० बर्टने प्रिंसेपकी प्रार्थनापर स्तम्भका रेखा-चित्र प्रकाशित किया (ज० ए० सो० ब० भाग ३ फलक ३)। उस समय वह भूमिशायी था (द्रष्टव्य० कर्नल किड सम्बन्धी लेफ्टिनेण्ट किटाका नोट ज० ए० सो० ब० भाग ४ पृ० १२७)। उस समय इस स्तम्भके सम्बन्धमें प्रचलित उक्ति यह थी कि यह भीमसेनकी गदा है। स्मरणीय है कि अशोकके अन्य स्तम्भोंको भी लोगोंने भीमसेनकी गदा ही समझ रखा था (वही पृ० १०५)। श्री प्रिंसेप महोदयने अक्षरोंकी एक

१. ज. ए. सो. ब., भाग ३ (१८३४), पृ० ४८१ तथा आगे।
२. इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक पृ० ३९ तथा आगे।
३. वही : पृ० ४०।
४. जेड. डी. एम. जी. ६५ पृ० २२७।
५. कनिंगहम : ऑक्यॉलॉजिकल रिपोर्ट, भाग १, पृ० ७२ तथा आगे।
६. कनिंगहम : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ४१।
७. कनिंगहम : ऑक्यॉलॉजिकल रिपोर्ट्स भाग २२ पृ० ५१।
८. कनिंगहमः इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ३७।
९. लेफ्टिनेण्ट बर्ट : ज० ए० सो० ब० भाग ३ पृ० १०५।

सालिका बनाकर भी प्रकाशित किया (फलक ४ तथा ५)। प्रथम तो उन्हे अक्षरोंको पढ़नेमें कठिनाई हुई किन्तु तीन वर्ष बाद उन्होंने इस स्तम्भके छः अभिलेखों तथा दिल्लीके स्तम्भके छः अभिलेखोंको पढ़ लिया[1]। ज० ए० सो० ब० भाग ६ (१८३७ पृ० ५६६ तथा आगे)।

इस स्तम्भका भी शीर्ष अन्य अशोकीय स्तम्भोंकी भाँति कमल-घण्टिकाकार है। किन्तु अब उसका पता नहीं चलता। उपकण्ठ अब भी सुरक्षित है जिसपर कमल तथा मधुचक्र बने हुए हैं। शीर्षपर सिंहकी मूर्ति थी। किन्तु कालक्रमसे शताब्दियों पूर्व ही नष्ट हो गयी। सन् १६०५ ई०मे जब जहाँगीरने इसको पुनः स्थापित किया तो उसपर सकोण-वर्तुलाकार शीर्ष लगवाया। जिसका रेखा-चित्र श्री टाइफेन्थलरने बनवाया[2]। सन् १८३८ ई०मे कप्तान एडवर्थ स्मिथने पुनः स्तम्भको स्थापित करवाया। तथा उसपर एक नवनिर्मित सिंह स्थापित करवाया[3]। अभिलेखोंके अक्षरोंको हानि जहाँगीरके अभिलेखोंको स्थान देनेके कारण उठानी पड़ी[4]। इण्डियन एण्टिक्वेयरी भाग १३ में श्री फ्लीट महोदयके द्वारा तैयार की गयी प्रतिलिपि तथा नागरी अक्षरोंमें श्री ब्यूलर महोदयका लिप्यन्तर प्रकाशित हुए हैं। (पृ० ३०६ तथा आगे)। इन्होंने पाठको दो बार प्रकाशित किया। प्रथम जर्मन (जे० डी० एम० जं० भाग ४५ तथा ४६) तथा दुबारा अंग्रेजीमें (इपि० इण्डिका भाग २ पृ० २४५ तथा आगे)। रानी अभिलेखका अनुवाद तथा लिप्यन्तर श्री प्रिंसेप महोदयने किया[5]। कौशाम्बीके अभिलेखका लिप्यन्तर तथा अनुवाद श्री कनिंगहम महोदयने किया[6]। सेना[7]ने दोनोंका सम्पादन किया। फ्लीटके लिप्यन्तरके आधारपर श्री ब्यूलर महोदयने इसे सम्पादित किया[8]। कौशाम्बी अभिलेखका सम्पादन श्री बॉयर महोदयने भी किया (जर्नल एशियाटिक भाग १० (१०) पृ० १२० तथा १४१)।

कनिंगहमका निष्कर्ष यह था कि प्रयागका स्तम्भ प्रथम कौशाम्बी (आधुनिक कोसम)में था (इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ३९)। इसको कोसमसे प्रयाग लानेका कार्य श्री फिरोजशाहने किया। तत्पश्चात् अकबरने जब प्रयाग नगरको फिरसे बसाया और उसका नाम इलाहाबाद रखा तो उस समय इसको हटाकर इसके आधुनिक स्थानपर रखा गया होगा। इसी स्तम्भपर बीरबल तथा जहाँगीरके अभिलेख भी खुदे हुए हैं।[9]

---

१. तुलना कीजिये ज० ए० सो० ब० भाग ६ (१८३७) पृ० ९६५ तथा आगे।

२. कनिंगहम : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ३७। श्री कप्तान हॉरेके स्तम्भके विवरणके लिए द्रष्टव्य, एशियाटिक रिसर्चेज भाग ७ फलक १३।

३. द्रष्टव्य, कनिंगहम : ओर्क० रिपो०, भाग १ पृ० ३००।

४. फ्लीट; इण्डि एण्टि० भाग १३, पृ० ३०५।

५. ज० ए० सो० ब० भाग ५९८ तथा आगे तथा पृ० ९६६ तथा आगे।

६. कनिंगहमः इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ३८।

७. इन्सक्रिप्शन्स दे पियदसि, भाग २, पृ० ९९ तथा आगे तथा इण्डि० एण्टि० १८ पृ० ३०८ तथा आगे।

८. इण्डि० एण्टि० भाग १७, पृ० १२२ तथा आगे।

९. कनिंगहमः इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ३९।

पंचम खण्ड : लघु स्तम्भ अभिलेख

१. सांची स्तम्भ

मध्य भारतमें साची एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थान है। यह स्थान विदिशा (भिलसा)से ५।। मील तथा साची रेलवे स्टेशनसे लगभग पौन मील दूरीपर स्थित है। अशोकका यह स्तम्भ एक विस्तृत पालिश किये हुए प्रस्तर स्तम्भका एक भाग है। किन्तु इसके पास ही सिंहचतुष्टययुक्त शीर्ष पड़ा है जो निःसन्देह इसी स्तम्भका शीर्ष रहा होगा[1]। यह जंगलमें है किन्तु मूलतः यह सांची स्तूपके दक्षिणी द्वारपर स्थित रहा होगा[2]।

अभिलेखका प्रारम्भ लुप्त हो गया है। प्रथम पंक्ति, जिसकी रक्षा की जा सकी है, बुरी दशामें है। श्री बर्गसे महोदयने इसकी एक प्रतिलिपिको प्रकाशित किया (एपि० इण्डि० भाग २ पृ० ३६९)। इसका सम्पादन तथा अनुवाद श्री ब्यूलर महोदयने किया है (एपि० इण्डिका पृ० ३६६ तथा आगे) तथा बॉयर महोदयने भी इसका सम्पादन किया (इण्डि० एण्टि० (१०) १० पृ० १२३ तथा आगे तथा पृ० १४१)। हुल्त्ज़ने पुनः उसकी परीक्षा करके उसे प्रकाशित किया। द्रष्टव्य, ज० रा० ए० सो० १९११ पृ० १६७ तथा आगे तथा १९१२ पृ० १०५५ तथा आगे)।

२. सारनाथ स्तम्भ

सारनाथ वाराणसीसे लगभग ४ मील उत्तर स्थित है। यह स्थान भगवान् बुद्धके धर्म-चक्र-प्रवर्तनकी स्मरणीय घटनासे सम्बन्धित है। बौद्ध साहित्यमें इसे ऋषि-पत्तन और मृगदाव कहा गया है। इसका आधुनिक नाम सारनाथ वहाँ स्थित सारनाथ शिव-मंदिरके ऊपर पड़ा है। वहीं भगवान् बुद्धने अपना प्रथम धर्मोपदेश दिया था[3]। यहीं श्री ऑरटेल महोदयने प्रस्तरका भग्नस्तम्भ ढूँढ़ा था जिसपर अशोकके अभिलेख उत्कीर्ण[4] हैं। उन्होंने ही सिंहचतुष्टययुक्त शीर्ष भी खोजा। इन सिंहोंके ऊपर एकप्रस्तरीय धर्मचक्र था जिसका अब भग्न भाग ही उपलब्ध है। सिंहचतुष्टयके निम्नभागमें वर्तुलाकार उपकण्ठ है जिसपर चार पशुओंकी मूर्तियाँ—सिंह, हाथी, वृषभ, तथा अश्व—बनायी गयी हैं। शीर्षका उपकण्ठके ऊपरवाला भाग पर्सिपोलिसके शीर्षोंकी भाँति है जिसके आधारपर विद्वानोंने इस शीर्षपर विदेशी प्रभावकी बातें गढ़ी हैं। कुछ भी हो, उपकण्ठ तथा शीर्षपर बनी हुई मूर्तियोंकी भव्यता इतनी आश्चर्यचकित करनेवाली है कि एक विद्वान्‌ने यहाँतक कह डाला कि कदाचित ही संसारमें कोई दूसरा ऐसा स्थान हो जहाँ मूर्तियोंमें प्रत्येक दृष्टिकोणसे आदर्श-समन्वय हो तथा उनमें आश्चर्य-जनक सफलताके साथ, पूर्णयाथातथ्यके साथ तथ्यात्मकताका निर्वाह करते हुए उन्हें बनाया गया हो।[5]

प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनत्सांगने मृगदावमें अशोक राजके द्वारा निर्मित स्तूपके सम्मुख एक प्रस्तरस्तम्भ देखा था और जो लगभग ७० फुट[6] ऊँचा था। जैसा कि ऑरटेलने अनुमान लगाया था (वही पृ० ३९) कि सारनाथके स्तम्भकी ऊँचाई लगभग ३७ फुट होगी, ह्वेनत्सांगकी धारणा बहुत अधिक गलत थी। सम्भव है कि उसने किसी अन्य स्तम्भकी बात कही हो किन्तु इसकी पुष्टिमें कोई प्रमाण नहीं है।

दुर्भाग्यवश अभिलेखकी ऊपरकी तीन पंक्तियाँ बिल्कुल ही टूटकर लुप्त हो गयी हैं। चतुर्थ पंक्ति भी बुरी तरह अस्पष्ट है। किन्तु ऑरटेल महोदयको कुछ टूटे हुए अंश इस प्रकार प्राप्त हुए थे, जिनको श्री फोगेल महोदयने प्रमाणित किया कि उनपर प्रत्येक पंक्तिके प्रथम दो अक्षर उत्कीर्ण हैं तथा तृतीय और चतुर्थ पंक्तिके अन्तके भी[7] कुछ अक्षर प्राप्त हैं। अवशिष्ट भाग सुरक्षित रूपमें प्राप्त किये जा सके हैं।

स्तम्भपर परवर्ती कालके दो और भी अभिलेख हैं। एक राजा अश्वघोषका है और दूसरा एक बौद्ध अभिलेख है जो पूर्ववर्ती गुप्तलिपिमें लिखा गया है। इन अभिलेखोंको सर्वप्रथम श्री फोगेल महोदयने प्रकाशित किया था (एपि० इण्डि० भाग ८ पृ० १६६ तथा आगे)। उसके बाद इसको श्री बॉयर महोदयने भी प्रकाशित किया। (जर्नल एशियाटिक (१०) १० पृ० ११९ तथा आगे)। मेना (कॉ० रें० १९०७ पृ० २५ तथा आगे) तथा वेनिसने (जं० प्रो० ए० सो० बं० भाग ३ पृ० १ तथा आगे) भी इस अभिलेखको सम्पादित किया। श्री हुल्त्ज़ने भी इसपर एक टिप्पणी लिखी (ज० रा० ए० सो० १९१२ पृ० १०५३ तथा आगे)।

३. कौशाम्बी

यह अभिलेख प्रयाग स्तम्भपर 'रानी अभिलेख'के ऊपर उत्कीर्ण है। इसके पूरे विवरणके लिए देखिये प्रयाग स्तम्भका विवरण (पृ० ११)।

४. रानी स्तम्भ अभिलेख

यह अभिलेख भी प्रयाग स्तम्भपर ही उत्कीर्ण है। यह महाराजाधिराज समुद्रगुप्तके अभिलेखके दाहिने अंकित है। इसके पूरे विवरणके लिए देखिये प्रयाग स्तम्भका विवरण (पृ० ११)।

५. रुम्मिनदेई स्तम्भ

इस स्तम्भका पता १८९६ ई० के दिसम्बर महीनेमें श्री फ्यूररने लगाया था। यह निगली सागर स्तम्भसे लगभग १३ मील दक्षिण-पूर्व, नेपालकी तराईमें

---

१. कनिंगहम : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ० ४२।
२. द्रष्टव्य, एपि० इंडि० भाग २, पृ० ३६६ तथा ज० रा० ए० सो०, १९०२ पृ० ३०।
३. कनिंगहम : ऑर्क० रिपो० १९०२ पृ० ३०।
४. ऑर्क० सर्वे. ऑ. इण्डि. ऐ. रि. १९०४–५ पृ० ६८ तथा आगे।
५. स्मिथ : हिस्ट्री ऑफ् फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सिलोन पृ० ६०।
६. बील. भाग २. ४६।
७. एपि. इण्डि., भाग ८ पृ० १६६ तथा आगे।

आधुनिक रुम्मिनदेई नामक स्थानपर स्थित है। यह पडरिया नामक ग्रामसे लगभग १ मील उत्तर बस्ती 'जिलेके दूल्हा नामक ग्रामसे लगभग ५ मील उत्तर-पूर्वकी ओर स्थित है।

अशोकका यह स्तम्भ बिलकुल छोटा है किन्तु आज भी ईंटोंकी वेदिकासे घिरा हुआ है। पीताभ प्रस्तरका यह स्तम्भ लगभग २१ फुट ऊँचा[1] है। इसीपर अशोकका अभिलेख उत्कीर्ण है। ब्यूलरने सन् १८७८[2] ई० मे अभिलेखको लिप्यन्तरके साथ प्रकाशित किया।

निश्चित रूपसे लुम्मिनी तथा आधुनिक रुम्मिनदेई दोनोंका तात्पर्य लुम्बिनीसे ही है जो परम्पराके अनुसार[3] भगवान् बुद्धकी जन्मभूमि बतायी जाती है। इस समीकरणकी पुष्टि ह्वेनत्सांगके कथनसे होती है कि अशोकराजने लुम्बिनी वनमें एक स्तम्भ खडा करवाया था जिसके पास ही तैल-सरिता प्रवाहित[4] होती थी जिसे अब तिलार नदी कहते हैं। इसका अर्थ लोगोंने तैलिकोंकी नदी बताया है।[5] उसने यह भी बताया कि इस स्तम्भके शीर्षपर एक घोड़ेकी प्रतिमा थी जो बिजलीसे टूट गयी थी। इस वर्णनमें सत्य श्री मुकर्जी महोदयके वर्णनसे प्रतीत होता है (द्रष्टव्य पृ० ३४)। फिर रुम्मिनदेईके मन्दिरमें जो प्रतिमा है उससे भगवान् बुद्धके जन्मकी बात पुष्ट होती है (वही. फलक. २४ अ.)। यह रुम्मिनदेई और लुम्बिनाके समीकरणके लिए एक और भी प्रमाण है।

६. निगली सागर स्तम्भ

नेपालकी तराईमें आधुनिक निग्लीवसे एक मील दक्षिण निगली सागर बृहत् कासारके तटपर श्री फ्युरर महोदयने सन् १८९५ ई० के मार्च महीनेमें इस स्तम्भका पता लगाया था। यह ग्राम रुम्मिनदेईसे लगभग १३ मील उत्तर-पश्चिम बस्ती जिलेके पिप्रावासे लगभग ७ मील उत्तर-पश्चिम नेपालकी एक तहसील तौलिवामें[6] स्थित है।

आजकल इस स्तम्भको भीमसेन[7]की निगाली कहते हैं। यह सम्पूर्ण रूपसे सुरक्षित नही है। केवल दो भग्न अंश ही सुरक्षित किये जा सके हैं। ऊपरी भाग लगभग १४ फुट ९॥ इञ्च ऊँचा है तथा उसपर कुछ मध्यकालीन रेखाचित्र खिंचे हुए हैं। निचला भाग लगभग १० फुट लम्बा है, जिसपर अशोकका अभिलेख चार पंक्तियोंमें उत्कीर्ण है। अन्तिम दो पक्तियोंके कुछ अक्षर लुप्त[8] हो गये हैं।

अभिलेखको सर्वप्रथम श्री ब्यूलर महोदयने (वि. ओ. ज. भाग ९ पृ० १७७) सम्पादित किया जिसमे उन्होंने लिप्यन्तर भी दिया (एपि. इण्डिका, भाग ५ पृ० १ तथा आगे)। इसमें बताया गया है कि अशोकने कोनकमन बुद्धके स्तूपको विस्तृत करके दूना किया। जब उस स्थानपर दुबारा गया तो वहाँ एक स्तम्भ खडा करवाया।

प्रतीत होता कि ह्वेनत्सागने[10] निगली सागर स्तम्भका उल्लेख किया है। उसके अनुसार इसपर एक सिंह भी था। उसने इस स्तम्भकी लम्बाई २० फुट बताया है। किन्तु ह्वेनत्सांगके वर्णनसे स्तम्भका उस स्थानपर पता लगाना, जहाँ उसने वर्णन किया है, अत्यन्त कठिन है।

---

१. स्मिथ : इण्डि. एण्टि. ३४. पृ० १।
२. वही. पृ० ३४. तुलना कीजिये : फुरर मोनोग्राफ आन बुद्ध शाक्यमुनिस बर्थ-प्लेस. (इलाहाबाद १८९७)।
३. एपिग्र. इण्डि. भाग ५, पृ० १ तथा आगे। तुलना कीजिये इण्डि. एण्टि; भाग ४३, पृ० १७।
४. जातक, भाग १. पृ० ५२ तथा ५४।
५. बील : भाग २, पृ० २४ तथा आगे।
६. मुखर्जी : एण्टिक्विटी पृ० ६।
७. मुखर्जी : एण्टिक्विटीज इन तराई।
८. वही. पृ० ३०; तथा फ्युरर मोनोग्राफ पृ० २३।
९. वही. फलक १६ चित्र १।
१०. बील रेकार्ड० भाग २, पृ० १९।
११. मुखर्जी : एण्टिक्विटी० पृ० ३ तथा आगे।

परिशिष्ट

१. तक्षशिला भग्न अरामाई अभिलेख

यह अभिलेख तक्षशिलामें सर जॉन मार्शलको प्राप्त हुआ था। उन्होंने इसकी प्रतिकृति आर्केलाजिक सर्वे ऑफ् इण्डियाके वार्षिक विवरण (ऐनुअल रिपोर्ट), १९१४-१५ पृ० २५ और स्वलिखित 'गाइड टू टैक्सिला'के पृ० ७५-७६, पर प्रकाशित किया था। दोनों ही प्रकाशनोंमें उन्होंने खरोष्ठी लिपिके उद्गमके प्रश्नपर इस अभिलेखके प्रभावका विवेचन किया है। इस अभिलेखको पढ़नेके लिए उन्होंने इसे डॉ० हर्ज़फेल्ड (Dr. Herz feld) के पास भेजा। डॉ० हर्ज़फेल्डने अपने गूढ़-पाठको एक पत्रके रूपमें सर जॉनके पास भेजा। यह पत्र एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द १९ पृ० २५१-२५३ पर प्रकाशित हुआ। पाठोंके अनिश्चयके कारण डॉ० हर्ज़फेल्डने इसका पूरा इंगलिश भाषान्तर नहीं दिया; पत्रमें अरामाई और लातिनी अक्षरोंमें अभिलेखका प्रतिलेख मात्र दिया गया है। इस पत्रसे ही पहली बार पता लगा कि यह मौर्य सम्राट् अशोकका एक नया अभिलेख है।

२. कन्दहार द्विभाषीय (यूनानी-अरेमाई) अभिलेख

यह अभिलेख दक्षिणी अफगानिस्तानमें कन्दहारके पास शरे-कुना नामक स्थानमें मिला था। यह स्थान आरकोशियामें महान् सिकन्दर द्वारा स्थापित अलेक्-जण्ड्रिया नगरकी स्थितिके निकट है। इसकी पहली सूचना एक निबन्धसे मिली, जो रोमसे प्रकाशित होनेवाले पत्र 'ईस्ट एण्ड वेस्ट (न्यू सिरीज, जिल्द ९ सं० १-२), मार्च-जून, १९५८, में प्रकाशित हुआ। इसके लेखक थे उमबर्टो सिरैटो (Umberto Scerrato)। अभिलेख एक शिला-खण्डपर उत्कीर्ण है, जो शरे-कुनाकी पहाड़ीका एक भाग है। यह अभिलेख द्विभाषीय है। इसका एक संस्करण यूनानी और दूसरा अरेमाईमें है। दोनों संस्करण एक लम्बवत् अन्तराल द्वारा एक दूसरेसे विभक्त हैं। ऐसा लगता है कि अरेमाई संस्करण यूनानी संस्करणका एक स्वतन्त्र भाषान्तर है।

अभिलेखके दोनों संस्करण उमबर्टो सिरैटो, जी टुची, जी. पी. कैराटेली तथा जी. एल. डेला विदा द्वारा इताली भाषामें उन एडिट्टो बाइलिग्वे ग्रीको-अरामाईको दी अशोक-ला प्राइमा इस क्रिज़ियोने ग्रेका स्कोप्र्टा इन अफगानिस्तान (Un editto bilingue greco-aramaico di Asoko-Laoprima is crizione greca scoperta in Afghanistan, Rome 1958) नामक पुस्तकमें प्रकाशित हुए। इसमें मूलके साथ इताली अनुवाद भी था। फ्रांसीसी भाषाकी शोध-पत्रिका 'जर्नल एशियाटिके' (१९५८, सं० १, पृ० १ तथा आगे) में कई विद्वानोंने इस अभिलेखका सम्पादन और भाषान्तर किया। एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द ३३ भाग ४ में डॉ० डी. सी. सरकार द्वारा इसपर टिप्पणी प्रकाशित हुई (पृ० ३२३ तथा आगे)।

३. पुले दारुन्त (लमगान) प्रस्तर खण्ड अरेमाइक अभिलेख

लन्दन विश्वविद्यालयके स्कूल ऑफ् ओरियंटल एण्ड अफ्रिकन स्टडीजकी शोध पत्रिका (बुलेटिन, जिल्द १३, १९४९-५०)में डब्ल्यू. बी. हेनिंगने एक प्रस्तर खण्डपर उत्कीर्ण अशोक अभिलेखका वर्णन किया है जिसको वे 'अशोकका अरेमाई अभिलेख' कहते हैं। यह अभिलेख पुले दारुन्त (लमगान)के पास मिला था और इस समय काबुल संग्रहालयमें सुरक्षित है। लमगान प्रदेश काबुल नदीके बायें किनारेपर जलालाबादके ऊपर स्थित है। यह संस्कृत साहित्यका लम्पाक है, जो भारतका पश्चिमोत्तरी भाग माना जाता था। यह अभिलेख अरेमाई अक्षरोंमें उत्कीर्ण है। अरेमाई भाषाके शब्द भी इसमें पाये जाते हैं। साथ ही, कुछ भारतीय शब्द भी मिलते हैं, जो गान्धारी प्राकृतके हैं। अशोकके जो अभिलेख भारतमें पाये जाते है उनके कुछ अंशोंका इस अभिलेखमें समन्वित संक्षिप्त रूप पाया जाता है।

अ. अभिलेखोंका तिथि-क्रम

'अभिलेखोंका अनुसन्धान और अध्ययन'में अभिलेखोंका क्रम उनके महत्त्वकी दृष्टिसे रखा गया है। वास्तवमें उनके प्रवर्तनका क्रम इससे भिन्न है। अभिलेखोंमें जो राज्य वर्ष दिये गये हैं उनके अनुसार उनका तिथि-क्रम निम्नांकित प्रकार है :

१. लघुशिला अभिलेख—अशोक द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकार करनेके ढाई वर्ष पश्चात् (सातिलेकानि अढतियानि वय सुमि पाका सवके रूपनाथ अभिलेख'' ये अभिलेख उत्कीर्ण हुए थे। यह समझा जाता है कि कलिंग-युद्धकी भीषणतासे अनुतप्त होकर अशोकने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। कलिंग-युद्ध उसके राज्यकालसे आठवें वर्षमें हुआ था (अठवषाभिसितषा देवानं पियष पियदसिने लाजिने कलिग्या विजिता''। कालसी त्रयोदश शिला अभिलेख)। इस प्रकार अशोकके राज्य-कालके ८ + अ + २॥ = लगभग ग्यारहवें वर्षमें इन अभिलेखोंका प्रवर्तन हुआ था। तभी ये उत्कीर्ण भी हुए।

२. चतुर्दश शिला अभिलेख—अशोकके राज्य-कालके बारहवें वर्षमें ये अभिलेख उत्कीर्ण हुए थे (द्वादसवासाभिसितेन मया इदं आज्ञपितं''। गिरनार तृतीय शिला अभिलेख)।

दो पृथक् कलिंग शिला अभिलेख—अशोकके राज्य-कालके चौदहवें अथवा पन्द्रहवें वर्षमें उत्कीर्ण हुए।

३. गुहा अभिलेख—अशोक प्रथम और द्वितीय गुहा अभिलेख उसके राज्य-कालके बारहवें वर्षमें (दुआडस वसाभिसितेना''। प्रथम तथा तृतीय गु० अ०) और तृतीय गुहा अभिलेख उन्नीसवें वर्षमें (एकुनवीसति वसाभिसितेना) उत्कीर्ण हुआ था।

[दशरथके तीन गुहा अभिलेख उसके अभिषेकके तुरन्त बाद उत्कीर्ण हुए थे (आनंतलियं अभिषितेना''।)।]

४. तराई स्तम्भ अभिलेख—रुम्मिनदेई और निगलीव सागरके दो तराई स्तम्भ अशोकके राज्य-कालके बीसवें वर्षमें उत्कीर्ण हुए थे (वीसतिवसाभिसितेन अतन आगा च महीयिते''। रुम्मिनदेई ल० स्त० अ०, वीसतिवसाभिसितेन च अतन आगा च महीयिते''निगलीव सागर ल० स्त० अ.)।

५. स्तम्भ अभिलेख—अशोकके राज्य-कालके छब्बीसवें वर्षमें ये अभिलेख उत्कीर्ण हुए थे (सडुवीसति वस अभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता''। टोपरा प्रथम स्त० अ०; चतुर्थ स्त० अ०)।

६. लघुस्तम्भ अभिलेख—तराईके दो लघु स्तम्भ अभिलेखोंको छोड़कर शेष अशोकके राज्य-कालके उनतीसवेंसे लेकर अट्ठतीसवें वर्ष तकमें उत्कीर्ण हुए।

आ. अशोकके अभिलेखोंकी लिपि

अशोकके अभिलेख दो लिपियों—ब्राह्मी और खरोष्ठी—में लिखे गये हैं। पश्चिमोत्तर भारतमें स्थित शहबाजगढ़ी और मानसेहरा तथा दक्षिणमें मास्की लघु शिला अभिलेखके अन्तमें लेखक चपड द्वारा एक अत्यन्त संक्षिप्त टिप्पणीको छोड़कर अशोकके समस्त अभिलेख ब्राह्मी लिपिमें उत्कीर्ण हैं, जो बायेंसे दायेंकी ओर लिखी जाती है। शहबाजगढ़ी और मानसेहराके अभिलेख खरोष्ठी लिपिमें उत्कीर्ण किये गये हैं, जो दायेंसे बायेंकी ओर चलती है। इन दोनों लिपियोंकी उत्पत्तिके मत-मतान्तरों और विशेषताओंका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है :

१. ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्ति

जैसा कि इसके नामसे प्रतीत होता है इस लिपिका आविष्कार ब्रह्म अथवा वेदकी सुरक्षाके लिए हुआ था। विशेषकर ब्राह्मण इसका प्रयोग करते थे। वे वेदोंके लेखन, स्मरण तथा पठन-पाठन द्वारा वैदिक साहित्यका संरक्षण और आगामी पीढ़ियोंको उसका हस्तान्तरण करते थे। इस तथ्यको परवर्ती जैन तथा बौद्ध लेखकोंने भी स्वीकार किया है। इस लिपिको वे सदा 'बम्ही' (ब्राह्मणी) कहते आये हैं। ये लेखक वैदिक साहित्य और ब्राह्मणोंके कटु आलोचक थे। अतः इनपर पक्षपातका दोष नहीं लगाया जा सकता। आधुनिक लेखक भी, जो किसी सामी स्रोतसे ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्ति मानते हैं, इस बातको स्वीकार करते हैं कि प्राचीन भारतीय ब्राह्मणोंने इस लिपिको पश्चिमी एशियासे व्यापारके माध्यमसे प्राप्त किया था किन्तु उन्होंने उसको ऐसी पूर्णता प्रदान की, जिससे इसके सामी रूपको पहचानना ही असम्भव हो गया। इस सम्बन्धमें यह निवेदन किया जा सकता है कि भारतमें लेखनके आविष्कारकी मौलिक प्रेरणा सुमेर और बेबीलोनकी भाँति व्यापारिक नहीं, अपितु धार्मिक थी और यह नितान्त असम्भव है कि आर्य संस्कृतिकी क्रीडाभूमि उत्तरी भारतके ब्राह्मणोंने अपनी पवित्र ब्राह्मी लिपिके सूत्रको सिन्धु और सुराष्ट्रके बन्दरगाहोंसे ग्रहण किया हो। ब्राह्मी लिपिके मूलकी समस्याके समाधानके मार्गमें आधुनिक विद्वानोंके सामने सबसे बड़ी कठिनाई ई० पू० की पाँचवीं शताब्दीसे पहलेके ब्राह्मी लेखका अभाव है। फलतः ब्राह्मी लिपिके मूलके लिए अनेक मतोंकी स्थापना की गयी है। मुख्यतः इन मतोंको दो भागोंमें विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वे मत जो ब्राह्मी लिपिके मूलको स्वदेशी मानते हैं तथा दूसरे वे जो ब्राह्मीका मूल विदेशी स्रोतमें खोजते हैं। अधोलिखित पङ्क्तियोंमें संक्षेपसे इन मतोंको उपस्थित करने तथा उनके विवेचन करनेका प्रयास किया गया है :

१. स्वदेशी-उत्पत्तिके पोषक सिद्धान्त

(क) द्राविड़मूल : एडवर्ड थॉमस तथा उनके मतके अन्य विद्वानोंकी ऐसी मान्यता थी कि ब्राह्मी वर्णोंके आविष्कारका श्रेय द्रविड़ लोगोंको है जिनका अनुकरण आर्योंने किया। इस मतका आधार यह अनुमान मालूम पड़ता है कि आर्योंके तथाकथित भारतीय आक्रमणके पूर्व द्रविडोंका सम्पूर्ण भूमिपर अधिकार था और सांस्कृतिक दृष्टिसे अधिक उन्नत होनेके कारण उन्होंने लेखन-कलाका आविष्कार किया। यह कल्पना मूलतः अशुद्ध है, क्योंकि द्रविड लोगोंकी मूल भूमि दक्षिणमें थी तथा आर्योंका मूल अभिजन उत्तरी भारत था।

इस सिद्धान्तके विरुद्ध यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि लेखनके प्राचीनतम उदाहरण आर्योंके मूल देश उत्तरी भारतमें पाये गये हैं; द्रविड़ोंकी निवासभूमि दक्षिणमें नहीं। इसके अतिरिक्त द्रविड़ भाषाओंकी वर्तमान विशुद्ध प्रतिनिधि तामिलमें वर्गके केवल प्रथम और पञ्चम वर्ण हैं जब कि ब्राह्मीमें वर्गके पाँचों वर्ण हैं। ध्वनिकी दृष्टिसे अल्पसंख्यक तामिलवर्ण सम्पन्न ब्राह्मी-वर्णोंसे गृहीत प्रतीत होते हैं।

(ख) आर्य या वैदिक-मूल : जर्नल कनिंगहम, डाउसन,[१] लेसेन[२] प्रभृति विद्वानोंकी मान्यता थी कि आर्य पुरोहितोंने भारतमें ही बीजाक्षरोंके लिए प्रयुक्त होनेवाली चित्रकी लिखावटके लक्षणों (हायरोग्लिफिक्स)से ब्राह्मी अक्षरोंका विकास किया। ब्यूलर निम्नलिखित शब्दोंमें कनिंगहमकी आलोचना करते हैं :

"कनिंगहमका विचार जिसका समर्थन पहले कुछ विद्वानोंने किया था, भारतीय चित्र-रूपोंकी पूर्व कल्पना करता है जिनका अभीतक कुछ भी पता नहीं लगा है।" सिन्धु घाटीकी लिपिके प्रकाशनने, जो चित्रात्मक है, ब्यूलर द्वारा प्रस्तुत आपत्तिको नितान्त निर्बल बना दिया है[३]।

जबतक सिन्धु घाटीकी लिपिकी व्यक्त ध्वनिका ज्ञान नहीं होता तबतक ब्राह्मी अक्षरोंके ऊपर इसके प्रभावके विषयमें कुछ भी निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता। किन्तु सिन्धु घाटीके कुछ चिह्नोंसे ब्राह्मीके कुछ वर्णोंका निकलना बहुत सम्भव है[४]।

शामशास्त्री द्वारा प्रतिपादित मतके अनुसार ब्राह्मी वर्ण देवोंको व्यक्त करनेवाले चिह्नों और प्रतीकोंसे जिनकी संज्ञा देवनगर थी, निकले हैं। इस सिद्धान्तकी सबसे बड़ी निर्बलता इस बातमें है कि शामशास्त्री द्वारा उपस्थित किये गये सभी प्रमाण परवर्ती तान्त्रिक ग्रन्थोंके हैं; तथापि पूर्णरूपसे इस मतको अमान्य नहीं किया जा सकता और यह ब्राह्मी वर्णोंके चित्रलिपि-परक मूलके अति समीप है। लिपिका ब्राह्मी नाम भी कुछ अंशोंमें इस मतकी पुष्टि करता है।

डॉ० डेविड डिरिंजरने ब्राह्मी लिपिके स्वदेशी मूलके समर्थकोंको निम्नलिखित तथ्योंके विषयमें चेतावनी दी है :

(१) किसी देशमें दो क्रमिक लिपियोंका अस्तित्व यह नहीं सिद्ध करता कि दूसरी पहलीपर आधारित है; उदाहरणके लिए क्रीटमें प्रयुक्त होनेवाले प्राचीन ग्रीक वर्ण प्राचीन क्रीटन या मनोन लिपिसे नहीं निकले हैं।

(२) यदि सिन्धु घाटीके चिह्नों तथा ब्राह्मी वर्णोंमें आकार-साम्य सिद्ध भी हो जाय तब भी ब्राह्मी लिपिके सिन्धु घाटीकी लिपिसे निकलनेका उस समयतक कोई प्रमाण नहीं है, जबतक कि यह न सिद्ध हो जाय कि दोनों लिपियोंके समान चिह्नों द्वारा व्यक्त ध्वनि भी समान है।

(३) सिन्धु घाटीकी लिपि सम्भवतः परिवर्तनशील पद्धति या मिश्रित-ध्वनि (स्वर) भावात्मक (सिलेबिक-इडियोग्रेफिक) लिपि थी, जबकि ब्राह्मी अर्धाक्षरी। जहाँतक हमें ज्ञात है कोई भी ध्वनि-भावपरक लिपि किसी वर्णात्मक लिपिके प्रभावके बिना स्वयं वर्णनात्मक नहीं बनी है। किसी गम्भीर विद्वान्ने यह प्रदर्शित करनेका प्रयास नहीं किया है कि सिन्धु घाटीकी भावपरक लिपि ब्राह्मीके अर्धवर्णात्मक लेखनमें कैसे विकसित हो सकी।

(४) बृहत् वैदिक साहित्यमें लेखनके अस्तित्वका कोई निर्देश नहीं पाया जाता' 'लेखनका कहीं उल्लेख नहीं है। प्राचीन भारतीय देवताओंमें लेखनका कोई देवता नहीं था यद्यपि ज्ञान, विद्या और वाक्‌की देवी सरस्वती थीं।

(५) केवल बौद्धसाहित्य प्राचीन समयमें लेखनका स्पष्ट निर्देश करता है।

(६) केवल अभिलेखोंके आधारपर यह माना जा सकता है कि छठी शती ई० पू० में ब्राह्मी लिपि विद्यमान थी।

(७) इतिहासके महान् पण्डितोंके अनुसार' '८००–६०० ई० पू० का काल भारतके व्यापारिक जीवनमें विशिष्ट उन्नति प्रदर्शित करता है।' ' 'इसी कालमें' ' भारतके दक्षिण-पश्चिमी तटसे' ' बेबीलोनके साथ नौ-व्यापारका विकास हुआ। प्रायः यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि व्यापारिक विकासने लेखनके ज्ञानके प्रचारमें सहायता की।

(८) भारतके प्राचीन आर्योंके इतिहासके विषयमें ज्ञान अत्यल्प है। श्री तिलक, जो वैदिक साहित्यकी प्राचीनतम ऋचाओंका समय लगभग ७,००० ई० पू० ठहराते हैं, तथा श्री शंकर बालकृष्ण दीक्षित, जो कुछ ब्राह्मणोंको ३,८०० ई० पू०का बताते हैं, के निराधार काल्पनिक मतोंको गम्भीरतापूर्वक स्वीकार नहीं किया जा सकता। भारतमें आर्योंका प्रवेश अब ईसा पूर्व की दूसरी सहस्राब्दीके उत्तरार्धमें ठहराया जाता है। भारतमें लेखन-कलाका प्रवेश इसके पर्याप्त पश्चात् सम्भव हुआ।

(९) ईसा पूर्व छठवीं शताब्दीमें उत्तरी भारतमें एक विशेष धार्मिक क्रान्ति हुई। जिसने भारतीय इतिहासकी गतिविधिको काफी प्रभावित किया। इसमें सन्देह नहीं कि जहाँ लेखनके ज्ञानने जैन और बौद्ध धर्मोंके प्रसारमें सहायता की, वहाँ इन दोनों धर्मोंने विशेषकर बौद्ध-धर्मने लेखनके ज्ञानके प्रसारमें भी महान् योग दिया।

(१०) अन्ततोगत्वा प्रमाणके विभिन्न सूत्र आर्य भारतमें लेखनके प्रवेशके लिए ई० पू० आठवीं और छठवीं शताब्दियोंके बीचका काल सूचित करते हैं।

डॉ० डेविड डिरिजरके तर्कोंके सम्यक् परीक्षणकी आवश्यकता है। इनमेंसे प्रथम दो नितान्त असंगत हैं। किसी देशमें दो क्रमिक लिपियोंकी विद्यमानता तबतक परवर्ती लिपिके पूर्ववर्ती लिपिसे निकलनेका पोषण करेगी जबतक इसके विरुद्ध अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत न किये जायँ। जहाँतक तृतीय युक्तिका सम्बन्ध है अभी यह सिद्ध करना शेष है कि सिन्धु घाटीकी लिपिमें ध्वनि-तत्त्वका अभाव है। चतुर्थ धारणा पूर्णतया मिथ्या है तथा वैदिक साहित्यके अपूर्ण ज्ञानपर आधारित है। यह कथन कि वैदिक देवमण्डलमें लेखनका देवता नहीं है किन्तु ज्ञान, विद्या तथा वाक्‌की देवता सरस्वती है" ठीक नहीं है। हिन्दू देवमण्डलमें स्वयं सरस्वती तथा ब्रह्मा दोनों ही अपने एक हाथमें पुस्तक लिये हुए प्रदर्शित किये गये हैं। पाँचवीं युक्तिके अन्यथात्वकी सिद्धिके लिए बौद्ध-साहित्यमें जाकर वेदांगों तथा वैदिक साहित्यका अध्ययन आवश्यक है। छठवीं युक्ति केवल स्मारक अवशेषोंका निर्देश करती है, जिससे नाशवान् उपकरणोंका विरोध नहीं होता। भारत तथा पश्चिमके बीच व्यापारिक सम्बन्धविषयक सातवीं युक्तिसे भारतका ऋणी होना नहीं सिद्ध होता; वस्तु-स्थिति इसके विपरीत भी हो सकती है। आठवीं युक्तिमें यह प्रदर्शित करनेकी चेष्टा की गई है कि पश्चिमी एशियाकी सभ्यताकी अपेक्षा भारतकी सभ्यता कम पुरानी है। श्री तिलक तथा श्री शंकरके वैदिक वाङ्मयके कालविषयक सिद्धान्त पश्चिमी विद्वानोंको कोरी कल्पना प्रतीत हो सकते हैं, किन्तु ब्यूलर और विन्टरनित्स जैसे गम्भीर प्राच्य विद्वानोंने यह दिखा दिया है कि भारतमें आर्य सभ्यताका प्रारम्भ ईसा पूर्व चतुर्थ सहस्राब्दीमें रखा जा सकता है। जहाँतक नवम युक्तिका सम्बन्ध है इसमें किञ्चित सन्देह नहीं कि जैन और बौद्ध धर्मोंने प्राकृतोंको तथा उनके साथमें लेखनको लोकप्रिय बनाया, किन्तु दोनों ही धर्म वैदिक या संस्कृत भाषाके लिए लेखनकी पूर्व-कल्पना करते हैं। वास्तवमें बुद्धने अपने शिष्योंको छन्दों (वैदिक या लौकिक संस्कृत भाषा)में कथानक लिखनेका विरोध किया था। दशम युक्ति बुद्धिसंगत नहीं प्रतीत होती, क्योंकि यह इस कल्पनापर आधारित है कि लेखनका मूल आर्येतर है तथा आर्य भारतमें बाहरसे आनेवाले हैं। अबतक कोई ऐसी तथ्यात्मक बात नहीं कही गयी जो पूर्वमें विद्यमान किसी लेखन-पद्धतिसे भारतीय लिपिके निकलनेकी सम्भावनाका निषेध कर सके।

२. विदेशी उत्पत्ति के पोषक सिद्धान्त

ब्राह्मी लिपि के विदेशी मूलके समर्थक मतोंको दो उपभागोंमें विभाजित किया जा सकता है—(क) कतिपय मत यह प्रतिपादित करते हैं कि ब्राह्मी यूनानी वर्णोंसे निकली है तथा (ख) अधिकांशकी ऐसी मान्यता है कि ब्राह्मीका उद्‌गम किन्हीं दो या अधिक सामी वर्णमालाओंके समन्वयसे हुआ है।

(क) यूनानी उत्पत्ति—भारतकी किसी श्रेष्ठ या महान् वस्तुका उद्‌गम यूनानसे बतानेकी पूर्ववर्ती पाश्चात्य विद्वानोंकी प्रवृत्ति थी। ओटफ्रेड म्यूलर, जेम्स प्रिन्सेप, रावेल डीरोशेल्, एमिले सेना, गाब्लेत दअल्वील्ल, जोसेफ हालवे, विल्सन इत्यादि का यह मत था कि ब्राह्मी यूनानी वर्णोंसे निकली है। ब्यूलरके शब्दोंमें "इस कल्पित असम्भव मतका सहज ही निराकरण किया जा सकता है, क्योंकि ऊपर विवेचित साहित्यिक और लिपि-शास्त्रीय साक्ष्योंसे इसका मेल नहीं खाता है। इन प्रमाणोंसे यह सम्भव ही नहीं, सत्य प्रतीत होता है कि मौर्यकालके अनेक शताब्दियों पूर्व ब्राह्मी लिपिका प्रयोग भारतमें होता था तथा प्राचीनतम उपलब्ध भारतीय अभिलेखोंके समयतक इसका एक लम्बा इतिहास बीत चुका था।" यूनानी और ब्राह्मी वर्णोंका सम्बन्ध इसका उल्टा प्रतीत होता है। इसमें संदेह नहीं कि यूनानी वर्णमाला फीनिशियन वर्णमालाकी ऋणी है। यह पहले ही प्रस्तावित किया जा चुका है कि फीनिशियन (वैदिक पणि)का मूल भारतीय था जो अपने साथ भारतसे लेखन कलाको ले गये तथा पश्चिमी एशिया और यूनानमें इसका प्रसार किया।

(ख) सामी मूल—इस मतके अनेक समर्थक हैं, किन्तु सामी वर्णोंकी किस शाखासे ब्राह्मी वर्ण निकले या प्रभावित हुए, इस प्रश्नपर उनमें मतभेद है। सुविधार्थ उन्हें निम्नाङ्कित वर्गोंमें विभाजित किया जा सकता है:

(अ) फीनिशियन—वेबर, बेन्फे, जॉन्सन, ब्यूलर प्रभृति विद्वान् ब्राह्मी वर्णोंके फीनिशियन मूलके पोषक थे। इस मतके समर्थन में प्रमुख तर्क यह था कि लगभग एक तिहाई फीनिशियन वर्ण और उनके अनुरूप ब्राह्मी चिह्नोंके प्राचीनतम रूप एक ही थे तथा शेष दो तिहाईमें भी न्यूनाधिक रूपमें समता प्रदर्शित की जा सकती है। इस मतको स्वीकार करनेमें एक बड़ी आपत्ति यह है कि ब्राह्मी लिपिके प्रादुर्भावके समय भारत और फीनिशियनके बीच सीधा सम्बन्ध नहीं था तथा फीनिशियनका प्रभाव पश्चिमी एशियाकी पड़ोसी लिपियोंपर प्रायः नगण्य समझा जाता था। मैं नहीं समझता कि भारत और भूमध्य सागरके पूर्वी-तटके बीच १५०० तथा ४०० ई० पू० के बीच कभी सीधे सम्बन्धका अभाव रहा। फीनिशियन तथा ब्राह्मी वर्णोंके साम्य भी स्पष्ट हैं। अब प्रश्न यह कि दोनोंमसे कौन अनुकरण करनेवाला है? यह प्रश्न भी फीनिशियन लोगोंके मूलसे सम्बन्धित है।

टायरके विद्वान सदैव यह मानते थे, तथा यूनानी इतिहासज्ञ भी इसे स्वीकार करते थे, कि फीनिशियन लोग भूमध्य सागरके पूर्वी तट पर समुद्र मार्गके द्वारा पूर्वसे आये थे। ऋग्वैदिक प्रमाणोंसे फीनिशियन लोगोंका भारतीय मूल लक्षित होता है। फीनिशियन तथा पश्चिमी एशियाके सामी वर्णोंमें साम्यके अभावसे भी यह सूचित होता है कि फीनिशियन लोग वहाँ बाहर से आये थे। इस प्रकार यह नितान्त सम्भव प्रतीत होता है कि फीनिशियन वर्णमाला भूमध्य सागरके तटपर भारतसे ले जाई गयी थी।

(आ) दक्षिणी सामी मूल—टेलर, डीक तथा केननकी यह धारणा थी कि ब्राह्मी वर्ण दक्षिणी सेमेटिक वर्णों से निकले हैं। इस मतकी पुष्टि करना दुसाध्य है। यद्यपि भारत और अरबके बीच सम्बन्ध सम्भव था, क्योंकि अरब, भारत और भूमध्य सागरके बीचमें स्थित है, परन्तु भारतपर इस्लामी आक्रमणके पूर्व भारतीय संस्कृतिपर अरबके प्रभावका पता नहीं लगता। इसके अतिरिक्त ब्राह्मी वर्णों तथा दक्षिणी सामी वर्णोंमें साम्य इतना नगण्य है कि दोनोंके बीच कोई सम्बन्ध बताना हास्यास्पद है।

(इ) उत्तरी सामी मूल—इस मतके प्रमुख पोषक डा० ब्यूलर हैं। दक्षिणी सामी वर्णोंसे ब्राह्मी वर्णोंके निकलनेमें कठिनाइयोंका निर्देश करते हुए ब्यूलरने लिखा है, "प्राचीन उत्तरी सामी वर्णोंसे, फीनिशियासे लेकर मेसोपोटामिया तक समान रूप दिखाई पड़ता है, ब्राह्मी वर्णोंके सीधे निकलनेमें विद्यमान कतिपय मान्य समताओंका हाल ही में प्रकाश में आये हुए रूपोंकी सहायतासे बड़ी आसानीसे समाधान किया जा सकता है और उन सिद्धान्तोंको पहचानना कठिन नहीं है जिसके अनुसार सामी चिह्न भारतीय चिह्नोंमें परिवर्तित हुए हैं।"

उत्तरी सामी वर्णोंसे ब्राह्मी को निकालनेका प्रयास करते हुए ब्यूलर प्राचीन भारतीय वर्णों की निम्नलिखित विशेषताओंका संकेत करते हैं:

"(१) वर्ण यथासम्भव सीधे रखे जाते हैं तथा ट, ठ और ब के चिह्नों के विरल अपवादोंको छोड़कर उनकी ऊँचाई समान रखी जाती है।

(२) अधिकांश वर्ण खड़ी रेखाओंसे बने हैं, इनमें जो योग हैं वे प्रायः नीचे, बगलमें, विरलरूपसे बिलकुल ऊपर या बिलकुल नीचे तथा शायद ही कभी मध्य भागमें हैं; किन्तु किसी भी उदाहरणमें केवल शीर्ष भागपर योग नहीं हैं।

(३) वर्णोंके शिरोभागपर अधिकतर खड़ी रेखाका सिरा पाया जाता है, उससे कम छोटी आड़ी पायी जाती है और इससे भी विरलरूपमें अधोमुखी कोणोंके शीर्ष भागपर वक्ररेखा, म (υ) और इ (⁞) के एक रूपमें दो रेखाओंके ऊपर आनेका उदाहरण अपवादमात्र हैं। किसी भी उदाहरण में, लटकती हुई रेखाके साथ त्रिभुज या वृत्तके ऊपर लटकती हुई खड़ी या तिरछी रेखाकी सहायतासे अगल-बगल रखे गये कोणोंसे युक्त शीर्ष भाग नहीं मिलता।

ब्यूलरने उपरिनिर्दिष्ट विशेषताओंकी व्याख्या की तथा उत्तरी सामीके वर्णोंसे ब्राह्मीके निकलनेके सिद्धान्तका प्रतिपादन हिन्दुओंकी निम्नलिखित प्रवृत्तियोंके आधारपर किया :

(१) एक विशिष्ट पंडिताऊ रूढ़िवादिता,

(२) ऐसे चिह्नोंके बनानेकी प्रवृत्ति जो यथाक्रम पंक्तियोंके बनानेमें सहायक हों,

(३) शीर्ष गुरु वर्णोंके प्रति अरुचि। उनके मतसे "यह विशेषता सम्भवतः अंशतः इस परिस्थितिके कारण है कि प्राचीन कालसे ही भारतवासी अपने वर्णोंको एक कल्पित या वास्तविक खींची गयी रेखासे लटकाते थे, तथा अंशतः स्वर मात्राओंके कारण जो अधिकतर व्यञ्जनोंके शीर्ष भागपर आड़ी लगाई जाती है। वास्तवमें रेखान्त शीर्षवाले चिह्न इस प्रकारकी लिपि के लिए सर्वोपयुक्त थे। हिन्दुओंकी इन्हीं प्रवृत्तियों और अरुचियोंके कारण चिह्नोंको उलटकर या पार्श्वाश्रित करके कोण खोलकर, इत्यादि विधियों द्वारा अनेक सामी वर्णोंके भारी शिरोभागसे छुटकारा मिला। अन्तमें लेखनकी दिशामें परिवर्तनके कारण पुनः परिवर्तनकी आवश्यकता हुई, यहाँतक कि यूनानी (लिपि)के समान चिह्न दायेंसे बायको घुमा देने पड़े।"

उपर्युक्त विवेचनके आधारपर ब्यूलरकी यह मान्यता भी थी कि ब्राह्मी वर्णमालाके २२ वर्ण उत्तरी सामी वर्णमालासे, उनमेंसे कुछ प्राचीन फीनिशियन वर्णमालासे, थोड़े मेसाके प्रस्तर अभिलेखसे तथा पाँच असीरियाकी बाटोंकी लिपिसे निकले हैं। ब्राह्मीके शेष चिह्न भी गृहीत चिह्नों में कतिपय परिवर्तनोंके योगसे बने हैं।

उत्तरी सामी मूलके दूसरे प्रबल समर्थक डा० डेविड डिरिंजर हैं। वे लिखते हैं, "सभी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक प्रमाण प्राचीन अरेमाइक वर्णमालाको ब्राह्मी लिपिका पूर्वरूप माननेवाले सिद्धान्तके पोषक हैं। ब्राह्मी फीनिशियन वर्णोंसे स्वीकृत साम्य प्राचीन अरेमाइक वर्णोंपर भी लागू होता है, जब कि मेरे विचारमें किञ्चित सन्देह नहीं हो सकता कि भारतीय आर्य व्यापारियोंके सम्पर्कमें आनेवाले सम्पूर्ण सामियोंमें अरेमाइक व्यापारी प्रथम थे।"

वे आगे लिखते हैं : "साठ वर्षोंसे अधिक हुए रॉयल एशियाटिक सोसाइटीके तत्कालीन अवैतनिक मंत्री आर० एन० कस्टने उस सोसाइटी के जर्नलमें एक लेख प्रकाशित किया था (भारतीय वर्णमालाके मूलपर जे० आर० ए० एस० एन० एस० १६, १८८४ पृ० ३२५-५९)। तबसे अनेक नये अन्वेषण हुए हैं तथा सैकड़ों पुस्तकों और लेखोंमें इस समस्याका विवेचन हुआ है। फिर भी ब्राह्मी लिपिके मूलके सम्बन्धमें आज भी मैं उसके प्रथम दो निष्कर्षोंसे भली-भाँति सहमत हूँ :

(१) भारतीय वर्णमाला किसी भी दशामें भारतीय लोगोंका स्वतन्त्र आविष्कार नहीं है, तथापि दूसरोंसे गृहीत ऋणको उन्होंने आश्चर्यजनक परिणाममें विकसित किया।

(२) किसी तर्कपूर्ण सन्देहके बिना स्वर और व्यञ्जन ध्वनियोंको विशुद्ध वर्णपरक चिह्नों द्वारा व्यक्त करनेका विचार पश्चिमी एशियासे लिया गया था (तब भी भारतीय वर्णमाला अर्द्धवर्णिक है विशुद्ध वर्णिक नहीं)।

अपने मतके समर्थनमें तर्कके रूपमें वे लिखते हैं :

(१) "हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि ब्राह्मी अरेमाइक वर्णोंकी साधारण उत्पत्ति है। सम्भवतः वर्णात्मक लेखनका विचार ही स्वीकार किया गया था, यद्यपि अनेक ब्राह्मी चिह्नोंके आकार सामी प्रभाव सूचित करते हैं तथा ब्राह्मी वर्णोंकी मौलिक, दायेंसे बायेंकी दिशा भी सेमेटिक मूलक थी।"

(२) कुछ विद्वानोंकी ऐसी धारणा है कि भारतीय लिपि देखनेमें अक्षरात्मक-स्वरात्मक है। अतएव यह किसी भी वर्णमालासे नहीं निकली होगी क्योंकि वर्णात्मक लेखन स्पष्टतः अधिक उन्नत होते हैं। ये विद्वान् यह सत्य भूल जाते हैं कि सामी वर्णमालामें स्वर नहीं होते थे और आवश्यकतावश सामी भाषाएँ स्वर-चिह्नोंके बिना भी काम चला सकती थीं जब कि भारोपीय भाषाएँ ऐसा नहीं कर सकती थीं। यूनानियोंने इस समस्याका सन्तोषप्रद समाधान निकाला था किन्तु भारतीय लोग कम सफल रहे। हो सकता है कि ब्राह्मीका आविष्कारक वर्णात्मक लेखन-पद्धतिके तथ्यको न समझ सका हो। यह पूर्ण सम्भव है कि सेमेटिक लिपि उसे अर्द्ध अक्षरात्मक-स्वरात्मक प्रतीत हुई हो, जैसी कि किसी भी भारतीय आर्य-भाषाके बोलनेवालेको प्रतीत हो सकती थी।"

ब्राह्मी लिपिके उत्तरी सामी मूलके पक्षमें निम्नलिखित तर्क हैं :

(१) सेमेटिक और ब्राह्मी वर्णोंमें साम्य है;

(२) प्राचीन भारतीय लेखन चित्रपरक था; कोई भी वर्णात्मक लिपि चित्रवर्णोंसे नहीं निकल सकती।

(३) ब्राह्मीकी दायेंसे बायेंकी दिशाको मौलिक माना गया है;

(४) भारतमें ईसा पूर्वकी पाँचवीं शताब्दीसे पूर्व लेखनके उदाहरणोंका अभाव है।

इन तर्कोंका क्रमशः विवेचन करना आवश्यक है। इसमें सन्देह नहीं कि उत्तरी-पश्चिमी एशियाके फीनिशियन तथा अरेमाइक वर्णों और भारतकी ब्राह्मी लिपिमें कुछ (अल्प) समानता है। किन्तु ब्यूलर तथा उसके विचार-सम्प्रदायके अन्य विद्वानोंका यह मत कि ब्राह्मी उत्तर-पश्चिमी एशियाकी अरेमाइक वर्णमालासे निकली है, प्रमाणित नहीं किया जा सकता। विशेष रूपसे ब्यूलर द्वारा प्रस्तावित व्युत्पत्ति-पद्धति तर्कहीन है और यदि उसे न्याय्य मान लिया जाय तो ब्राह्मी वर्ण फीनिशियन और अरेमाइकसे ही नहीं, अपितु संसारके किसी भी ज्ञात वर्णोंसे निकाले जा सकते हैं।

दोनों वर्णमालाओंमें साम्यका कारण यह था कि, जैसा कि इस ग्रन्थके प्रथम अध्यायमें प्रतिपादित किया गया है, फीनिशियन मूलतः भारतके ही थे। फीनिशियन लोग अपने साथ भारतीय वर्णमालाको सुदूर उत्तरी-पश्चिमी एशियामें ले गये। किन्तु वे सेमेटिक लोगोंसे घिरे हुए थे इसलिए उनके वर्णोंमें एक बड़ा परिवर्तन हुआ, यद्यपि उन्होंने अरेमाइक कहे जानेवाले उत्तरी सेमेटिक वर्णोंको भी, जिन्होंने दक्षिणी सामी और मिस्रके वर्णोंको प्रेरणा प्रदान की थी, प्रभावित किया। इस प्रकार यदि आकार या प्रेरणामें किसी प्रकारका अनुकरण हुआ तो फीनिशियन या अरेमाइक वर्णोंने ही ब्राह्मीके पूर्वरूपसे कुछ तत्त्वोंको ग्रहण किया; इसका उलटा नहीं हुआ।

जहाँतक दूसरे तर्कका सम्बन्ध है इसका आधार ही कि कोई वर्णात्मक लिपि किसी चित्रात्मक लिपिमें नहीं निकल सकती, भ्रमपूर्ण है। इसमें किञ्चित सन्देह नहीं कि सभी प्राचीन लिपियाँ स्वभावतः चित्रात्मक थीं। "मनुष्यने चित्र लेखनसे लिखना आरम्भ किया जैसा कि एक बालक करना पसन्द करता है"। निश्चय ही यह एक भिन्न विषय है कि चित्रवर्णोंके आविष्कारकोंमें कौन किन चित्रवर्णोंसे विशुद्ध वर्णोंका विकास किस पूर्णताके साथ कर सके। दूसरे भारतमें सिन्धु घाटीके लेखोंसे प्राप्त होनेवाले लेखनके प्राचीनतम उदाहरण पूर्ण चित्रात्मक नहीं हैं; अधिकांश ध्वनिपरक और पदात्मक हैं, तथा उनका झुकाव वर्णात्मकताकी ओर है। इसके अतिरिक्त

अनेक चिह्न, जिन्हें भ्रमवश चित्रवर्ण माना जाता है ध्वनि-द्योतक चिह्नोंके योगके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इसलिए सिन्धु घाटीकी लिपिसे ब्राह्मीकी निष्पत्तिका किसी भी अवस्थामें निराकरण नहीं किया जा सकता।

तीसरा तर्क कि ब्राह्मी आरम्भमें दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी तथा यह तथ्य ब्राह्मीके सामी मूलका निदर्शक है, निर्बल तथा संदिग्ध सामग्रीपर आश्रित है। जिस समय ब्यूलरने अपनी "इण्डियन स्टडीज" में लिखा और "इण्डियन पैलियोग्राफी" प्रकाशित की, उस समय दायेंसे बायेंको लिखी गयी ब्राह्मीके निम्नलिखित उदाहरण थे :

(१) अशोकके अभिलेखोंके कतिपय वर्ण,

(२) मध्यप्रदेशके सागर जिलेके एरणसे कनिंगहम द्वारा प्राप्त सिक्कोंपरके अभिलेख।

इस प्रसंगमें मद्रास प्रेसीडेंसीके कर्नूल जिलेसे प्राप्त अशोकके लघु शिलालेखका एर्रगुडि संस्करण भी स्मरणीय है। ब्यूलर ऊपरके दो उदाहरणोंको उन तर्कोंकी श्रृंखलाकी खोई हुई कड़ी समझते हैं, जिनसे दायेंसे बायें लिखे जानेवाले सामी वर्णोंसे ब्राह्मीकी उत्पत्ति सिद्ध होती है। किन्तु ब्यूलर द्वारा यह प्राप्त कड़ी अत्यन्त निर्बल प्रतीत होती है। प्रथम सभी उदाहरण बिखरे हुए तथा समकालीन बायेंसे दायेंको लिखे गये अभिलेखोंकी बड़ी संख्याकी तुलनामें अत्यल्प हैं। वर्णोंके कुछ अनियमित रूप, जो आगे चलकर स्थिर हो गये, वर्णोंकी अस्थिर दशाके बोधक हैं; किसी विदेशी स्रोतसे उनके उद्गमके नहीं। दूसरे, सिक्कोंपर अभिलेख कभी-कभी साँचा बनानेवालेकी गलतीसे भी उलट जाते हैं जो साँचेपर भूलसे सीधे वर्ण खोद देता है। अतः जबतक अधिकांश उदाहरणोंके साथ उनकी समानता नहीं सिद्ध होती वे लेखनकी दिशाके निश्चित परिचायक नहीं हैं। यही कारण है कि हुल्ज और फ्लीट ब्यूलरके निष्कर्षोंसे सहमत नहीं हैं। जहाँतक अशोकके लघु शिलालेखके एर्रगुडि संस्करणका प्रश्न है, यह एक विलक्षण उदाहरण है। ऐसा प्रतीत होता है कि खोदनेवाला बायेंसे दायेंको लिखी जानेवाली ब्राह्मी पद्धतिसे अभ्यस्त होनेपर भी एक नया प्रयोग कर रहा था। उसने प्रथम पंक्ति बायेंसे दायेंको और दूसरी दायेंसे बायेंको लिखी है तथा इसी प्रकार एक छोड़कर दूसरी पंक्तिकी दिशा बदलते हुए लेखन जारी रखा है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वह किसी नियमित या स्थिर पद्धतिका अनुसरण नहीं कर रहा था, अपितु एक नये प्रयोगका प्रयास कर रहा था। इसके अतिरिक्त दायीं ओरसे बायीं ओरको लिखी गयी पंक्तियोंमें केवल वर्णोंका स्थान बदल दिया गया था उनका रूप नहीं, जिससे प्रतीत होता है कि यह एक बलात् और कृत्रिम लेखन था तथा ब्राह्मी वर्णमालाके मूलसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

चौथा तर्क पाँचवीं शताब्दी ई० पू० तथा चौथी सहस्राब्दी ई० पू० जो सिन्धु घाटीकी लिपिका समय है, के बीच लेखनके उदाहरणोंकी अनुपस्थिति है। वास्तवमें सभी पुरातात्त्विक प्राप्तियाँ आकस्मिक हैं और जबतक उत्तरी भारतके सभी प्राचीन नगरोंकी खुदाई नहीं होती, कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि इस सुदीर्घ कालमें लेखन-कला विद्यमान नहीं थी। भारतीय इतिहासके सहस्रों वर्षोंतक व्यापक प्राग्बौद्धकालमें लेखनकी विद्यमानताके सूचक साहित्यिक प्रमाण अनल्प हैं।

ब्यूलरने भी इसकी सबलताको निम्नलिखित शब्दोंमें स्वीकार किया है : "यह अनुमान कि कोई वैदिक ग्रन्थ, जिसमें लेखनका निर्देश नहीं है अवश्य ही उस समय रचा गया होगा जब कि लेखन भारतमें अज्ञात था, त्याग देना चाहिये।" व्यक्तियों, श्रेणियों तथा देवताओंके नामोंसे युक्त सिन्धु घाटीके, कठोर लेखनोपकरणपर अवशिष्ट, आंशिक अभिलेख यह सिद्ध करते हैं कि भारतमें प्राप्त कोमल नाशवान् पदार्थोंपर भी लेखन होता था। ऐसी परिस्थितियोंमें ब्राह्मीका पूर्वरूप खोजनेके लिए किसीको भारतसे बाहर जानेकी आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।

३. निष्कर्ष

किसी ज्ञात वर्णमालासे, ब्राह्मीका उद्गम खोजनेके पूर्व ब्राह्मीकी निम्नलिखित विशेषताओंका ध्यान रखना आवश्यक है :

(१) प्रायः सभी उच्चरित ध्वनियोंके लिए ब्राह्मीमें स्वतन्त्र और असन्दिग्ध चिह्न विद्यमान हैं;

(२) उच्चरित स्वर और लिखित वर्णमें अभिन्नता;

(३) स्वरों तथा व्यञ्जनोंके लिए सबसे अधिक—चौसठ—चिह्न;

(४) ह्रस्व और दीर्घ स्वरोंके लिए भिन्न चिह्न;

(५) अनुस्वार (ं) अनुनासिक ँ तथा विसर्ग (:) के लिए चिह्न;

(६) उच्चारणके स्थानके अनुसार वर्णमालाका ध्वन्यात्मक वर्गीकरण;

(७) मात्राओंकी सहायतासे स्वर और व्यञ्जनोंका योग।

उपरिनिर्दिष्ट विशेषताओंसे युक्त ब्राह्मी वर्णमालाकी उत्पत्ति किसी भी सामी वर्णमालासे, जिनमें इन विशेषताओंका पूर्णतया अभाव है, नहीं सिद्ध की जा सकती। उत्तरी सामी वर्णमालामें १८ ध्वनियोंके लिए २२ चिह्न हैं। इसमें उच्चरित स्वरों तथा लिखित वर्णोंमें साम्य नहीं है। एक ध्वनिके लिए इसमें अनेक चिह्न हैं। इसमें ह्रस्व और दीर्घ स्वरमें कोई भेद नहीं है तथा अनुस्वार और विसर्गके लिए कोई चिह्न भी नहीं हैं। सामी वर्णमालामें स्वरों और व्यञ्जनोंका मेल नहीं हो सकता; प्रायः स्वर व्यञ्जनके बाद लिखे जाते हैं। ध्वन्यात्मक दृष्टिसे सामी वर्णमाला एक पद्धति न होकर एक ढेर है, उदाहरणके लिए अ (अलिफ)के, जिसका कण्ठ स्थान है, तुरन्त पश्चात् ब (बे) आता है जिसका स्थान ओष्ठ है। सामी वर्णमालाके समान निर्धन और दोषपूर्ण वर्णमाला ब्राह्मी वर्णमालाका उद्गम नहीं हो सकती। ब्राह्मीके आविष्कारकोंको सामीसे ब्राह्मीकी निष्पत्तिके लिए सामाकी ओर देखने तथा ब्यूलर द्वारा प्रस्तावित उपायोंको ग्रहण करनेकी आवश्यकता ही क्या थी?

ब्यूलरने ब्राह्मी वर्णमालाकी ध्वनि एवं व्याकरण-सम्बन्धी उच्च अवस्थाको पहचान कर यह स्वीकार किया कि इसके प्राचीनतम रूपका विकास भारतीयोंने किया : "तथापि निस्सन्देह ब्राह्मीका प्राचीनतम ज्ञात रूप संस्कृत लिखनेके लिए विद्वान् ब्राह्मणों द्वारा गढ़ी गयी लिपि थी। इस कथनकी पुष्टि अशोकके प्रस्तर लेखोंके वर्णोंके अवशेषोंसे, जिनमें संस्कृत 'ए' और 'ओ' स्वरोंके चिह्न विद्यमान हैं तथा जो ध्वन्यात्मक सिद्धान्तोंके अनुसार क्रमबद्ध किये गये हैं, से ही नहीं अपितु शिक्षा और व्याकरणके प्रभावसे भी, जो प्रत्यय चिह्नोंके निर्माणमें लक्षित होता है, होती है। निम्नांकित सूत्रोंसे ध्वनिशास्त्र तथा वैयाकरणका प्रभाव समझा जा सकता है :

(१) पाँच नासिका स्थानीय वर्णों तथा अनुनासिक चिह्नका, तथा साथ-ही-साथ दीर्घ स्वरोंके लिए चिह्नोंके एक समुदायका विकास;

(२) उच्चारणकी दृष्टिसे नितान्त भिन्न किन्तु व्याकरणकी दृष्टिसे सजातीय स और ष के चिह्नोंकी उत्पत्ति :

(३) 'उ'का अर्ध व (व्)के रूपमें उल्लेख, जो सम्प्रसारण द्वारा बहुधा स्वर (उ)में परिणत हो जाता है;

(४) उ से एक दण्डके योगसे ओ की उत्पत्ति;

(५) वैयाकरणोंकी शिक्षाके अनुसार, जो प्रत्येक व्यञ्जनमें ह्रस्व 'अ'को विद्यमान मानते हैं, ह्रस्व 'अ'की मात्राको न लगाना। यह सब देखनेमें इतनी विद्वत्तापूर्ण और ध्वनिशास्त्रीय लिपिका आविष्कार केवल पण्डितों द्वारा हो सकता था, व्यापारियों और लिपिकों द्वारा नहीं।"

उस जातिको, जो वैज्ञानिक शिक्षा और व्याकरणके विकासकी विलक्षण प्रतिभासे सम्पन्न हो तथा जो अपने आधेसे अधिक वर्णोंको जन्म देनेमें समर्थ हो निर्धन

और दोषपूर्ण सामी वर्णोंकी ओर ऋणके लिए देखनेकी आवश्यकता नहीं हो सकती। यह विशेषतः विस्मयजनक प्रतीत होता है कि इन तथ्योंके होते हुए ब्यूलर यह कैसे मानते थे कि भारतीयोंने अपने वर्णोंको सामी वर्णोंसे ग्रहण किया।

किसी वर्णमालाके विकासके विभिन्न सूत्रोंके अध्ययनसे स्पष्ट हो जाता है कि ब्राह्मी वर्ण, भाषा शास्त्रकी दृष्टिसे अन्य राष्ट्रोंकी वर्णमालाकी तुलनामें अधिक उन्नत तथा लेखनके परिसूचक बृहत् वैदिक-साहित्यके स्रष्टा भारतीय लोगोंकी प्रतिभाकी उपज हैं। ब्राह्मी चित्रलेखों (पिक्टोग्राफ), भाव लेखों (ईडियोग्राफ) तथा ध्वन्यात्मक चिह्नों (फोनेटिक साइन)से जिनके प्राचीनतम उदाहरण सिन्धु घाटीके अभिलेखोंमें प्राप्त होते हैं, प्रादुर्भूत हुई।

इ. खरोष्ठी वर्णोंकी उत्पत्ति

१. नाम—खरोष्ठी लिपि विभिन्न नामोंसे जानी जाती है। पहले यह बैक्ट्रियन, इण्डो-बैक्ट्रियन—आर्यन बैक्ट्रो-पालि, उत्तर-पश्चिमी भारतीय, काबुली, खरोष्ठी इत्यादि नामोंसे पुकारी जाती थी। फिर भी इसका सर्वाधिक प्रचलित नाम खरोष्ठी है, जो चीनी साहित्यके आधारपर, जिसमें यह नाम सातवीं शताब्दी ई० तक प्रचलित रहा, स्वीकार किया गया था।

२. नामका मूल—साधारण रूपसे इस नामकी निम्नलिखित व्याख्याएँ प्राप्त होती हैं:

(१) इस लिपिका आविष्कारक खरोष्ठ नामका व्यक्ति था (खर + ओष्ठ = गधेके ओठ);

(२) इसका यह नाम इस कारण है कि यह खरोष्ठों द्वारा प्रयुक्त होती थी जो भारतकी उत्तर-पश्चिमी सीमाके असंस्कृत लोग थे, जैसे यवन (ग्रीक), शक, तुषार (कुषाण) तथा मध्य एशियाके अन्य लोग।

(३) खरोष्ठ मध्य एशियाके काश्गर प्रान्तका संस्कृत रूप है जो इस लिपिका यह सबसे परवर्ती केन्द्र था। स्टेन कोनोने इस सुझावपर निम्नलिखित शब्दोंमें अपना विचार व्यक्त किया है: "यह सत्य है कि अनेक खरोष्ठी अभिलेख चीनी तुर्किस्तानमें विशेष रूपसे पूर्वी ओसेसमें मरुस्थलके दक्षिणतक पाये जाते हैं तथा एकमात्र ज्ञात खरोष्ठी हस्तलिखित प्रति खोतान देशमें प्राप्त हुई है, तथापि प्रत्येक स्थानमें भारतीय भाषाके लिखनेके लिए इस वर्णमालाका प्रयोग होता था और पहलेसे ही हमें यह सोच लेना चाहिये कि तुर्किस्तानमें यह भारतीय लोगों द्वारा लायी गयी। इसके अतिरिक्त हस्तलिखित प्रति तथा लेख अपेक्षाकृत परवर्ती तिथिके हैं। उनमेंसे कोई भी स्पष्ट रूपसे दूसरी शती ई०से पूर्वका नहीं है। इसके अतिरिक्त भारतमें खरोष्ठीका प्रयोग ईसा पूर्वकी तीसरी शताब्दीतक जाता है (कार्पस इन्स्क्रिप्शनम इण्डिकेरम्, खण्ड २ पृ० १४)।

(४) ईरानी शब्द खरोष्ठ या खरपोस्त, जिसका अर्थ गधेकी खाल है, का यह भारतीय रूप है। बहुत सम्भव है कि गधेकी खालके ऊपर लिखनेके लिए इस लिपिका प्रयोग होता रहा हो।

(५) इस लिपिके लिए एक अरेमाइक शब्द खरोष्ट था जो कालान्तरमें, शब्द-निष्पत्तिकी प्रचलित पद्धतिसे, संस्कृत रूप खरोष्ठमें परिणत हो गया (तु० लुडविग गुरुपिय कौमुदी पृ० ६८ तथा आगे)। नामके विषयमें प्राचीनतम परम्पराका उल्लेख फा-वान-शु-लिनमें मिलता है। यह एक ६६८ ई० का चीनी ग्रन्थ है जिसके अनुसार लिपिका यह नाम इसलिए है कि इसके आविष्कारकका नाम खरोष्ठ था। यह कहना कठिन है कि यह अनुश्रुति नामपर आधारित कल्पनामात्र है या सत्यपर आधारित है। जहाँतक अन्य व्याख्याओंका प्रश्न है वे कल्पनामात्र हैं जिनकी पुष्टिमें कोई प्रमाण नहीं है। स्पष्टतः खरोष्ट्र नाम संस्कृत खरोष्ठका प्राकृत रूप है। लिपिका यह नाम इस कारण भी हो सकता है कि अधिकांश खरोष्ठी वर्ण अनियमित रूपसे बढ़ाये हुए एवं वक्र हैं तथा वे हिलते हुए गधेके ओठोंकी भाँति प्रतीत होते हैं। मूलतः यह उपनाम रहा होगा जो कालान्तरमें प्रचलित हो गया।

३. अरेमाइक उत्पत्तिका सिद्धान्त—खरोष्ठी लिपिके मूलके विषयमें सर्वाधिक प्रचलित धारणा यह कि अरेमाइक वर्णमालासे यह निकली है।[1] इस मतके पक्षमें निम्नांकित तर्क उपस्थित किये जा सकते हैं:

(१) खरोष्ठी तथा अरेमाइक वर्णोंकी समानता—"अन्ततः उनकी पुष्टि इस परिस्थितिमें हो जाती है कि अधिकांश खरोष्ठी वर्ण ४८२ और ५०० ईसा पू० के सक्करह तथा तीमा अभिलेखोंमें प्रकट होनेवाले अरेमाइक रूपोंमें बड़ी सरलतासे निकाले जा सकते हैं, जब कि कुछ वर्ण असीरियाके बटखरों एवं बेबीलोनियाकी तावीजों और रत्नोंपरके अपेक्षाकृत प्राचीन रूपोंसे मेल खाते हैं तथा दो या तीन वर्णोंका लेसर तीमा अभिलेख, स्टेलेवेतिकाना और सेरापोमके लिवेशन लेवलके उत्तर-कालीन रूपोंसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। लम्बे खींचे गये तथा लम्बे पूँछवाले वर्णोंवाली खरोष्ठीकी सम्पूर्ण रूप-रेखा 'मेसोपोटामिया'के बटखरों, मुद्राओं तथा पत्थरपर उभड़ी हुई नक्काशियोंके समान है, जिसके सक्कर तीमा तथा सेरापोमके अभिलेखोंपर पुनः दर्शन होते हैं।"[2]

(२) खरोष्ठी लिपिकी दायेंसे बायेंकी दिशा।

(३) खरोष्ठीमें कुछ ऐसी विशिष्टताएँ हैं जो सामी लिपियोंमें पायी जाती हैं, जैसे दीर्घ स्वरोंका अभाव।

(४) खरोष्ठीका भारतके केवल उन भागोंमें प्रयोग जो छठी शती ई० पू० के उत्तरार्द्धसे चौथी शती ई० पू० तक इरानियोंके अधिकारमें रहें।

(५) उत्तर-पश्चिमी भारतमें मानसेरा तथा शहबाजगढ़ीसे प्राप्त होनेवाले अशोकके अभिलेखोंमें लेखन या अनुशासनके लिए स्पष्ट रूपसे प्राचीन फारसीसे गृहीत 'दिपि' शब्दका प्रयोग।

(६) खरोष्ठीका ईरानी आक्रमणके पश्चात् भारतमें आविर्भाव।

(७) पश्चिमी एशिया तथा मिश्रमें अरेमाइक वर्णमालाका विस्तृत प्रयोग तथा शासनपरक प्रयोगके लिए फारसी सम्राटों द्वारा इसकी स्वीकृति, जिससे यह भारत आयी।

(८) अरेमाइक वर्णमाला, कुछ परिवर्तनों ओर योगोंके समावेशसे भारतीय भाषाओंके अनुरूप बना ली गयी।

(९) अरबी लिपि, जो कुछ परिवर्तनोंके साथ मध्यकालमें भारतमें प्रविष्ट हुई तथा जिसका भारतीय भाषाओंको लिखनेमें प्रयोग होता था, की उत्तर-कालीन समता।

इस प्रसंगमें खरोष्ठीके अरेमाइक मूलके पक्षके तर्कोंका एक-एक करके परीक्षण करना उपादेय होगा:

(१) जहाँतक उनकी रचना-प्रकार, घसीट शैली तथा दायेंसे बायेंको लिखनेका प्रश्न है, खरोष्ठी और अरेमाइक वर्णोंमें एक साधारण बाह्य साम्य है। किन्तु साम्य इसके परे नहीं जा सकता। ब्यूलरकी अरेमाइक वर्णोंसे खरोष्ठी वर्णोंकी व्युत्पत्ति आयाससाध्य है तथा उसके द्वारा प्रस्तावित व्युत्पत्तिविषयक सिद्धान्त व्यायामके

---

१. इस मतका सबसे बड़ा पोषक ब्यूलर था (इण्डियन पेलिओग्राफी पृ० १९-२०) तथा अधिकांश विद्वानोंने इसे स्वीकार किया है।

२. ब्यूलर, इण्डियन पेलियोग्राफी, पृ० २०।

सिद्धान्तोंके समान हैं। वास्तवमें सभी वर्ण ऋजु, वर्तुल, कोणात्मक, ग्रन्थिक तथा वृत्तात्मक रेखाओंके योगसे बनते हैं तथा इन अगोंके स्थान-परिवर्तनसे कोई भी वर्ण दूसरे वर्णसे बनाया जा सकता है।

ब्यूलरकी धारणाकी निरर्थकता तब प्रकट हो जाती है जब हमारा ध्यान इस बातपर जाता है कि वह आठवीं-दशवीं शताब्दी ई० पू० की अरेमाइकसे खरोष्ठी वर्णोंकी व्युत्पत्ति मानते हैं। तुलनासे यह स्पष्ट हो जायेगा कि खरोष्ठी ओर अरेमाइकमें साम्य अत्यन्त साधारण है तथा यह अरेमाइकसे खरोष्ठीकी उत्पत्तिका समर्थन नहीं करता।

(२) खरोष्ठीकी दायेंसे बायेंकी दिशा इस बातका प्रमाण नहीं कि यह सामी मूलसे निस्सृत है; लेखनकी बायीं ओरको गति सामी लोगोंका एकाधिकार नहीं समझा जा सकता। भारत जैसे विस्तृत देशमें बायेंसे दायें तथा दायेंसे बायेंको चलनेवाली दो लिपियोंका विकास असम्भव नहीं है।

(३) खरोष्ठीमें दीर्घ स्वरोंका अभाव इस कारण है कि इसका प्रयोग प्राकृत लिखनेमें होता था, जिसमें दीर्घ स्वरों, समासों तथा कठिन सन्धियोंका बहिष्कार किया जाता था। इस प्रकार खरोष्ठीके तथाकथित समान धर्म जनप्रयोगके कारण थे, किसी सामी प्रभावके कारण नहीं।

(४) यह सम्भव है कि भारतका उत्तर-पश्चिमी भाग ई० पू० को छठी शतीसे चौथी शती तक ईरानी साम्राज्य में रहा हो। किन्तु भारतके उस भागमें ईरानके सम्राटोंका एक भी राजकीय लेख खरोष्ठीमें नहीं पाया गया ओर न कोई ईरानी लेख अरेमाइकमें, जिसका भारतवासी अनुकरण कर सकते। बहुत सम्भव है कि ईरानियोंने सीधे भारतपर शासन नहीं किया तथा भारतमें उनके उपनिवेश या अड्डे नहीं थे। इस प्रकार भारत पर उनका प्रभाव इतना गहरा नहीं था कि वह एक नवीन लेखन-पद्धति का प्रारम्भ कर सकता। जब कभी भी विदेशी वर्णोंको भारतमें ग्रहण किया गया है, प्रायः सीधे और सम्पूर्णताके साथ उनका ग्रहण हुआ है, जैसे परवर्तीकालमें अरबी और रोमन लिपियोंका प्रयोग।

(५) ब्यूलर कोई कारण नहीं बतलाते कि 'दिपि' शब्दको केवल फारसी या संस्कृतेतर ही क्यों माना जाय। साधारण रूपसे इस शब्दकी व्युत्पत्ति संस्कृत धातु दिप्, जिसका अर्थ प्रकाशित होना है, से की जा सकती है। वर्ण आलंकारिक रूपसे देदीप्यमान, प्रकाशमान तथा व्यञ्जक माने जाते थे।

(६) खरोष्ठी पदोंसे फारसी सिग्लोइयोंका अंकित करना भारतके उत्तर-पश्चिमी भागपर फारसी अधिकारके पूर्व ही खरोष्ठीकी विकसित रूपमें विद्यमानताकी कल्पना करता है।

(७) इसमें सन्देह नहीं कि पश्चिमी एशियामें अरेमाइक वर्णोंका व्यापक प्रचार था किन्तु भारतमें इनका प्रचलन नहीं था। प्रथम, यही अति सन्दिग्ध है कि क्या भारत कभी शासन की दृष्टिसे फारसी राज्यमें था।[1] दूसरे जैसा कि ऊपर निर्देश किया गया है कि फारसके सम्राटोंका अरेमाइकमें लिखा हुआ कोई भी लेख भारतमें नहीं पाया जाता है। ऐसी परिस्थितियोंमें भारतीय लोगों द्वारा अरेमाइक वर्णोंके अनुकरण या ग्रहण करनेका कोई अवसर या आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।

(८) दोनों लिपियोंमें समानता इतनी दूरवर्ती है तथा भारत और फारसके बीच सम्बन्ध इतना प्राचीन था कि ग्रहण का प्रश्न ही नहीं उठता।

(९) मध्यकालमें भारतमें अरबी या तथाकथित फारसी लिपिके प्रवेशका दृष्टान्त उचित नहीं है। अरबी वर्ण केवल अरब और तुर्क आक्रान्ताओं द्वारा ही प्रयुक्त होते थे। जब वे शासकके रूपमें भारत में जम गये तब उन्होंने अरबी और फारसी भाषाओंको राजभाषाके रूपमें प्रयुक्त किया। यहा ऋणका प्रश्न नहीं था, अपितु अरबी और फारसी भाषाओंके साथ अरबी लिपिका सशरीर आरोप हुआ।

४. भारतीय-मूल—खरोष्ठी वर्णमालाके मूलकी समस्याका समाधान करते समय उसके उद्गम स्थान और उत्तरवर्तीकालमें प्रसारके क्षेत्रको ध्यानमें रखना आवश्यक है। अबतक ज्ञात प्राचीनतम खरोष्ठी अभिलेख उत्तर-पश्चिमी भारतमें प्राप्त हुआ है। पश्चिमी एशियाके किसी भी देशमें कोई लेख या लेखनका उदाहरण खरोष्ठीमें अब तक नहीं पाया गया है। फारसी सम्राटोंने भी, जो खरोष्ठी वर्णमालाके विकासमें कारणभूत माने जाते हैं, अरेमाइक या इससे उद्भूत मानी जानेवाली खरोष्ठीका प्रयोग आधिकारिक कार्योंके लिए नहीं किया। अशोकका प्राचीनतम खरोष्ठी अभिलेख तीसरी शती ई० पू० का है। बलूचिस्तान, अफगानिस्तान तथा मध्य एशियासे प्राप्त खरोष्ठी अभिलेख बादकी तिथिके है तथा स्पष्ट रूपसे सूचित करते हैं कि वे वहाँ भारतीय प्रवासियों तथा धर्मोपदेशकों द्वारा ले जाये गये थे। खरोष्ठीके मूलके साथ दूसरा स्मरणीय तथ्य यह है कि इसके वर्ण भारतीय भाषाओंके लिखनेके लिये विकसित हुए हैं। दायेंसे बायेंको इसकी दिशाके अतिरिक्त इसकी रचना-पद्धति विशेष रूपसे वर्णोंके अनुसार चिह्न और स्वरमात्रायें लगानेमें तथा सन्धि करनेमें भारतीय है।

सभी परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुये निरापद रूपसे माना जा सकता है कि खरोष्ठी लिपिका भारतके उत्तर-पश्चिमी भागमें प्रादुर्भाव हुआ। जैसा कि चीनी परम्पराओंमें सुरक्षित है कि इसका आविष्कार एक भारतीय प्रतिभावान् व्यक्ति द्वारा हुआ था जिसका उपनाम खरोष्ठ था क्योंकि ये वर्ण खर (गधे)के ओष्ठके समान थे इसलिए इनका आविष्कारक खरोष्ठ कहलाया और लिपि खरोष्ठी। देशके उस भागपर फारसी अधिकारके समय खरोष्ठी जन-लिपिके रूपमें स्वीकृत थी और यही कारण है कि फारसी सिग्लोई खरोष्ठी स्वरोंमें अंकित है। जब मध्य भारतके मौर्योंने उस भागको अधिकृत किया तो उन्हें भी उस भागके लिए खरोष्ठी लिपिको ग्रहण करना पड़ा। तत्पश्चात् यवनों, पह्लवों, शकों तथा कुषाणोंने यूनानीके साथ-ही-साथ भारतीय भाषाओंके लिए इस लिपिका प्रयोग किया। कुषाणोंके अन्तर्गत बौद्ध-धर्मके प्रसारसे खरोष्ठी पश्चिमी और उत्तरी प्रदेशोंमें पहुँच गयी तथा चतुर्थ शती ईसा पू० तक प्रचलित रही।

भारतमें विदेशी शक्तियों द्वारा अधिकृत प्रदेशोंमें खरोष्ठीके साथ उनके सुदीर्घ सम्पर्कने शेष भारतमें इसके प्रति घृणा उत्पन्न कर दी। गुप्तोंकी शक्तिके उदय तथा देशके एकीकरणकी मॉग एवं राष्ट्रीयताके विकासके साथ खरोष्ठी विदेशी राजकीय सत्ताके साथ ही समाप्त हो गयी तथा भारतको सर्वव्यापक ब्राह्मी लिपिने भारतके उत्तर-पश्चिमी भागमें भी खरोष्ठीका स्थान ग्रहण किया। किन्तु वास्तवमें खरोष्ठीमें कुछ भी विदेशी नहीं था। इसका मूल भारतमें था, भारतमें ही इसका उदय और अस्त हुआ।

---

१ डॉ० आर० सी० मजुमदार, ई० हि० क्वा, खण्ड २५, सं ३, सितम्बर १९४९।

आ. अशोकके अभिलेखोंकी भाषा और व्याकरण

अ. भाषा

अशोकके अभिलेख उसके विस्तृत साम्राज्यके विभिन्न और एक दूसरेसे दूरस्थ भागोंमें पाये जाते हैं। पश्चिमोत्तरमें शहबाजगढ़ी (पेशावर जिलेकी युसुफजई तहसील) और मानसेहरा (हजारा जिला)से लेकर पूर्व-दक्षिणमें धौली (पुरी जिला) और जौगड (उडीसाका गंजाम जिला तक और उत्तरमें कालसी (देहरादून जिला)-से लेकर दक्षिणमें जटिंग-रामेश्वर (मैसूरका चितलद्रुग जिला) तथा एर्रगुडि (आन्ध्रका कर्नूल जिला)तक ये अभिलेख बिखरे हुए हैं। इनका उद्देश्य था अशोकके नये धर्म (नीतिप्रधान बौद्ध-धर्म)को साम्राज्यके विभिन्न प्रदेशोंकी जनतातक पहुँचाना। किन्तु इसके अतिरिक्त भी विशाल मगध-साम्राज्यको प्रशासनके लिए एकसूत्रीय सार्वदेशिक भाषाकी आवश्यकता थी। वास्तवमें महाभारतके बादका भारतीय इतिहास मगध-साम्राज्यका इतिहास है। इसलिए शताब्दियोंसे उत्तर भारतमें एक सार्वदेशिक भाषाका विकास हो रहा था। यह भाषा वैदिक भाषासे उद्भूत लौकिक संस्कृतसे मिलती-जुलती और उसके समानान्तर प्रचलित हो रही थी। इसकी सुविधाके लिए भारतकी प्रथम सर्वप्रचलित शिष्ट लोक-भाषा (प्राकृत) और जनताकी दृष्टिसे राष्ट्र-भाषा कह सकते हैं। यह पुरानी लौकिक संस्कृत और पालिके बीचकी भाषा थी। अशोकने अपने प्रशासन और धर्म-प्रचारके लिए इसी भाषाको अपनाया। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इस भाषाका केन्द्र मगध था जो मध्यदेश [स्थूण = स्थाणेश्वर = थानेसर = पूर्वी पंजाब और कजंगल (राजमहलकी पहाड़ियोंके बीचका देश)]के पूर्व भागमें स्थित था। इसलिए मागधी भाषाकी इसमें प्रधानता थी। परन्तु सार्वदेशिक भाषा होनेके कारण भारतके दूसरे प्रदेशोंकी ध्वनियों और कहीं-कहीं शब्दों और मुहावरोंको भी यह आत्मसात् करती जा रही थी। अशोकके अभिलेख मूलतः मगध-साम्राज्यकी केन्द्रीय भाषामें लिखे गये थे। फिर भी यह समझा गया कि दूरस्थ प्रदेशोंकी जनताके लिए यह प्रशासन और प्रचारकी भाषा थोड़ी अपरिचित थी। इसलिए अशोकने इस बातकी व्यवस्था की थी कि अभिलेखोंके मूल पाठोंका विभिन्न प्रान्तोंमें आवश्यकतानुसार थोडा बहुत लिप्यन्तर और भाषान्तर कर दिया जाय। यही कारण है कि अभिलेखोंके विभिन्न संस्करणोंमें पाठ-भेद पाया जाता है। पाठ-भेद इस तथ्यका सूचक है कि भारतके विभिन्न भागोंमें विभिन्न बोलियाँ थीं जिनकी अपनी भाषागत विशेषतायें थी। अतः भारतकी आदि लिखित अथवा उत्कीर्ण प्राकृत और उसकी विभिन्न बोलियोंके भाषा-वैज्ञानिक अध्ययनके लिए अशोकके अभिलेखोंमें प्रचुर सामग्री है।

अशोकके अभिलेखोंमें प्रयुक्त बोलियाँ भाषा विज्ञानके आधारपर निम्नांकित वर्गोंमें बाँटी जा सकती हैं: (१) पश्चिमोत्तरीय वर्ग (पैशाच अथवा गान्धार), जिसमें शहबाजगढ़ी और मानसेहराके अभिलेख सम्मिलित हैं; (२) मध्य भारतीय (अथवा मागध) जिसमें बैराट, दिल्ली-टोपरा, सारनाथ और कलिंगके अभिलेख भी सम्मिलित हैं (३); पश्चिमीय (महाराष्ट्र), जिसमें गिरनार तथा बम्बई-सोपाराके अभिलेखोंकी गणना है और (४) दाक्षिणात्य (आन्ध्र-कर्णाटक), जिसमें दक्षिणके सभी लघु शिला अभिलेखोंका समावेश है। इनमेंसे प्रत्येककी अपनी-अपनी विशेषतायें हैं, जिनको नीचे क्रमशः दिया जाता है:

१. पश्चिमोत्तरीय (पैशाच-गान्धार)

(१) दीर्घ स्वरों—आ, ई, ऊ—का अभाव।
(२) श, ष, स (ऊष्मन्)का प्रयोग।
(३) रेफ् (ˊ अथवा ◌्र)को छोड़कर संयुक्त व्यञ्जनोंका अभाव।
(४) अन्तिम हलन्त व्यञ्जनोंका अभाव।
(५) शीर्षस्थानीय रेफ्के स्थानमें वामपार्श्वी रेफ्का प्रयोग (अर्थाय> अथये)।
(६) मूर्द्धन्य ण का उपयोग (आज्ञापयामि > अणपयेमि)।
(७) प्रथमा विभक्ति (कर्ता कारक)के एक वचनमें अकारान्त शब्दोंका ए मे अन्त।
(८) संयुक्त अक्षरोंके अन्तर्भावका अभाव।
(९) र का प्रयोग और र के ल में परिवर्तनका अभाव।

२. मध्य भारतीय (मागध)

(१) र के स्थानपर ल का व्यापक प्रयोग।
(२) प्रथमा एकवचनके अकारान्त शब्दोंका एकारान्त रूप होना।
(३) संयुक्त व्यञ्जनोंके अन्तर्भावका अभाव।
(४) स्वरभक्ति स्वरोंका प्रयोग, यथा अभिनव (= आस्नवः), दुवालते (= द्वारतः), अलहामि (= अर्हामि)।
(५) अहके स्थानपर हकंका प्रयोग।
(६) संस्कृत मया (= प्राकृत ममाइ)के स्थानपर हमियायेका प्रयोग।
(७) कृ धातुका क्त ट हो जाता है (कटे)।
(८) कल्याण शब्दमें संयुक्ताक्षर ल्य य्य और पुनः संक्षिप्त रूपमें य हो जाता है (कयाने)
(९) मूर्द्धन्य ण का अभाव।
(१०) प्राकृत रूप तुम्हाण अथवा तुज्झाण तथा तुम्हेसु अथवा तुज्झेसुके म्ह अथवा ज्झ का फ में परिवर्तन (तुफाकं, तुफेसु)।
(११) तु का तवेमें परिवर्तन।

३. पश्चिमीय (महाराष्ट्र)

(१) र का प्रयोग (राजा); र के ल मे परिवर्तनका अभाव ।
(२) अधोवर्ती रेफ़का शीर्षवर्ती रेफ़के रूपमे प्रयोग (प्रिंयो = प्रियो) ।
(३) संस्कृत न्य अथवा पालि ञ्ञ के स्थानमें केवल ञ का प्रयोग (अञे = अन्ये) ।
(४) संयुक्ताक्षरोंके अन्तर्भावका अभाव (वढयिसति = पालि वढयिस्सति) ।
(५) आदिम य का स्वरमे परिवर्तन (सं० यावत् > आव) ।
(६) त का ट मे परिवर्तन (सं० संवर्तकल्प > संवटकपा) ।
(७) ष्ठ का स्त में परिवर्तन (सं० तिष्ठन्तो > तिस्टन्तो) ।
(८) प्रथमा एकवचनके अकारान्त शब्दोंके ओकारान्त रूपका प्रयोग ।
(९) संस्कृत र्द्ध के ड्ढ के बदले केवल ढ में परिवर्तन ।
(१०) मूर्द्धन्य ण का यदा-कदा प्रयोग ।
(११) अधिकरण (सप्तमी) एकवचन मे स्मि के साथ-साथ म्हि का भी प्रयोग ।
(१२) ञ का दीर्घीकरण (राञो) ।
(१३) ऊष्मन्‌मेसे केवल दन्त्य स का प्रयोग ।

इन विशेषताओंपर ध्यान देनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा कि इस समूहकी भाषा पालिसे बहुत मिलती-जुलती है ।

४. दाक्षिणात्य (आन्ध्र-कर्णाट)

(१) मूर्द्धन्य ण का प्रयोग (पकमम्मिेण, सावणे); तालव्य ञ का प्रयोग (ञातिक) ।
(२) प्रथमा एकवचनके अकारान्त शब्दोंके एकारान्त रूपोंका प्रयोग (फले, स्वगे) ।
(३) स्वर भक्तिका उपयोग (पकमस = सं० प्रकमस्य) ।
(४) तु के बदले वैदिक तवे का प्रयोग (पापोतवे, आराधेतवे) ।
(५) र का उपयोग; इसका ल में परिवर्तन नही ।
(६) संयुक्त व्यञ्जनोंके अन्तर्भावका अभाव ।
(७) त्म के बदले त्प का प्रयोग (महात्पा = सं० महात्मा) ।
(८) ऊष्मन्‌ मे दन्त्य स का प्रयोग ।

अशोकके अभिलेखोंकी विभिन्न बोलियोंकी विशेषताओंको देखनेसे यह ज्ञात होता है कि मध्य भारतीय भाषा ही इस समयकी सार्वदेशिक भाषा थी । मूलतः इसीमें अशोकके अभिलेख प्रस्तुत हुये थे । इसीमें कतिपय सामान्य परिवर्तन करके उनके स्थानीय संस्करण तैयार हुये थे । इसको मागध अथवा मागधी भी कह सकते हैं । परन्तु नाटकों और व्याकरणकी मागधी प्राकृतसे भिन्न है । जहाँ मागधी प्राकृतमें केवल तालव्य श का प्रयोग होता है, वहाँ अशोककी मागधीमें केवल दन्त्य स का ।

पश्चिमोत्तरीय (गान्धारी)में जिस बोलीका प्रयोग हुआ है वह संभवतः उस प्रदेश (जिसकी राजधानी तक्षशिला थी)की राजभाषा थी । इसकी सबसे बड़ी विशेषता है इसमें संस्कृत तत्त्वोंकी उपस्थिति (प्रिय, पुत्र आदि) । इसका यह कारण नहो कि अभिलेखोंका रचयिता स्वयं संस्कृत जानता था, इसलिये इन शब्दोंका प्रयोग किया । इसका वास्तविक कारण यह है कि इस बोलीका प्राचीन रूप अभी बना हुआ था और यह संस्कृतसे मध्य भारतीयकी अपेक्षा अधिक निकट थी । इस सम्बन्धमें मिकेलसनने एक और मत प्रकट किया है ।[1] उनके मतमें गान्धारी संस्कृतसे सीधे उत्पन्न नहीं है; इसका सम्बन्ध अवेस्ताके भाषासे अधिक निकट है । उन्होंने अपने मतके पक्षमें निम्नांकित सादृश्य प्रस्तुत किया है :

अशोकके अभिलेख		अवेस्ता
सुस्रूसा सूस्रूसता	(गिर.)	सुस्रूसेम्नो
स्रुणारु	(गिर.)	
श्रुणेयु	(शाह.)	सुरुनाओति
श्रुणेयु	(मान.)	

पश्चिमोत्तरीय (गान्धारी)में संस्कृत तत्त्वोके साथ-साथ मध्य भारतीय (मागधी)के भी कतिपय तत्त्व वर्तमान हैं, जैसे, एक वर्गके स्पर्शोके दूसरे वर्गके स्पर्शोंसे समीकरण । ऐसा जान पड़ता है कि ये तत्त्व मूल मध्य भारतीयमें तैयार किये गये अभिलेखोंसे जैसेके तैसे उद्धृत कर लिये गये थे; किन्तु बोलीकी दृष्टिसे पश्चिमोत्तरीय (गान्धारी)के लिये ये बाहरी थे । फिर भी ये तत्त्व ऐसे थे जो उन प्रदेशोंमें भी समझे जाते थे, जहाँ की मातृभाषामें ये मूल रूपसे वर्तमान नहीं थे ।

यह बात विशेष रूपसे ध्यान देने की है कि बोली-सम्बन्धी विभिन्नतायें प्रायः ध्वनिमूलक हैं व्याकरण अथवा व्युत्पत्ति तथा रचना-विन्यासकी नहीं । सभी बोलियोंका एक सार्वदेशिक अथवा सर्वतोनिष्ठ व्याकरण है । और यह व्याकरण मगध-साम्राज्यकी राजधानी पाटलिपुत्रका है, जो राजनीतिक और धार्मिक कारणोंसे इस समय मध्य भारतीय भाषाका भी केन्द्र था ।

---

१. मिकेलसन, जर्नल ऑफ अमेरिकन ओरियंटल सोसायटी, ३०,३३ ।

आ. व्याकरण

ध्वनि-तत्त्व

वर्णमाला

अशोकके अभिलेखोंमें निम्नलिखित स्वर और व्यञ्जन पाये जाते हैं :

स्वर— अ आ इ ई
उ ऊ ए ओ

व्यञ्जन— क ख ग घ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म
य र ल व
श ष स
ह

अशोकके अभिलेखोंमें संस्कृतमें प्रयुक्त ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ऐ और औ स्वर नही पाये जाते। इनमेंसे ऋ, ऐ और औ के स्थान दूसरे स्वर ग्रहण करते हैं।

स्वर-परिवर्तन

१. ऋ का परिवर्तन (लघु शब्द-खण्डों में)

(१) जब यह शब्दके आदिमें रहता है तो यह प्रायः अ मे परिवर्तित होता है। गिरनार शिला अभिलेखमें तो ओष्ठ्यसे संयुत होने पर भी ऋ का अ हो जाता है, जब अन्यत्र इसका उ हो जाता है। कालसी तथा मानसेहरा अभिलेखमें तो इसके अ और इ दोनों रूप समानान्तर पाये जाते हैं। शहबाजगढी शिला अभिलेखमें ऋ का प्राय इ हो जाता है; किन्तु कभी-कभी इसका उ रूप भी पाया जाता है। जब इसका संयोग ओष्ठ्य अक्षरके साथ होता है तब इसका रूप उ होता है। धौली और जौगड शिला अभिलेख तथा स्तम्भ और लघु शिला अभिलेख इस सम्बन्धमे कालसीका ही अनुसरण करते हैं। केवल लघु शिला अभिलेखमें एक अपवाद है। ओष्ठ्य अक्षर से संयुक्त होनेपर ऋ का स्थान उ ले लेता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ-जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कृत	कत	कट	किट किट्र	कट किट	कट	कट	कट
मृग	मग	मिग	म्रुग	म्रिग	मिग		
पृथिवि	पुठवि				पुठवि		
स्मर						सिमल	
मृषावाद							मुसावाद

यह भी ध्यान देनेकी बात है कि शहबाजगढी और मानसेहरा शिला अभिलेखमे ऋ बराबर इ तथा उ में परिवर्तित नहीं होता। कहीं-कहीं इसके बदले ऋ का व्यञ्जन रूप रि प्रयुक्त होता है। यह प्रायः अर्द्ध-तत्सम शब्दोंमे पाया जाता है। गिरनार शिला अभिलेखमें संस्कृत √श्रृ-णुका स्रुणारु बन जाता है। किन्तु इसपर श्रु के अन्य रूपोंका प्रभाव है (द्रष्टव्य : हुल्त्ज, का० इ० इ० भाग १, भूमिका पृ० ५६) कालसीमें इसका सुनेयु, शहबाजगढीमे श्रुणेयु, लघु शिला अभिलेखोंमें सुनेयु रूप पाया जाता है।

(२) जब ऋ शब्दान्तके एक अक्षर पहले आता है तब ऋ के इ में बदलनेकी प्रवृत्ति शीघ्रतासे कम होने लगती है, जो शब्दोंके आदिम ऋ में पायी जाती है। इस स्थितिमें ऋ का अ मे परिवर्तन सामान्य हो जाता है। किन्तु बलाघातके कारण सभी समूहोंमे यह इ हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ-जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
व्यापृत	व्यापत	वियापट	वपट वियपट	वपुट वियप्रट	वियापट	वियापट	
एतादृश	एतारिस		एदिश	एदिश	एदिस	हेदिस	
दृश							

(३) ऋ, जो शब्दान्तमें आता है और प्रायः मानव सम्बन्ध-सूचक होता है, इ अथवा उ में बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	शाह०	मान०	काल०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मातृ	भ्रतु	भ्रतु मत	माति	माति	माति		
पितृ	पितु पिति	पितु पिति	पिति	पिति पितु	पिति	पिति	पिति पितु (एर०)

२. ऋ का परिवर्तन (दीर्घ शब्द-खण्डोंमें)

(१) शब्दके आदिका ऋ प्रायः सभी अभिलेखोंमें अ में परिवर्तित हो जाता है। किन्तु जहाँ ओष्ठ्य अक्षरसे संयुक्त होता है वहाँ गिरनार शिला अभिलेखमें कम किन्तु अन्य अभिलेखोंमें अधिकतर उ में बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ० जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
वृक्ष	वछ	लुख	रुछ	रुछ	लुख		
वृद्धि	वढि वुढ (सोपारा)	वढि वुढि	वढि	वढि	वढि वुढि	वढि	वढि
अधिकृत्य							अधिगिच्य
दृक्ष्		दख	द्रख	द्रख	दख		दख
दृश्यते					देख	देख्य	दिसेया

(२) शब्दान्तके एक अक्षर पहलेका ऋ भी शब्दके आदिम ऋ की तरह अ और उ में ही परिवर्तित है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ० जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
आनृण्य	आनन	अननिय	अनणिय	अनणिय	आनन		
निवृत्ति		निवुति	निवुति	निवुति	अनावुति		
अपकृष्ट						अपकट	
निसृष्ट						निषिट	

(३) ऐ सभी अवस्थाओं और अशोकके सभी अभिलेखोंमें ए हो जाता है। परन्तु ऐ (संयुक्त स्वर) जहाँ सन्धिसे बनता है वहाँ ऊ में परिवर्तित होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ० जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कैवर्त						केवट	
एकैक						इकिक (सारनाथ)	
एक						इक (सारनाथ)	

इकिकमें दूसरी इ समीकरण अथवा सन्धिकी विशेषताके कारण है।

४. औ सभी अवस्थाओं और सभी स्थानोंमें ओ में बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ० जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पौत्र	पोत्र पोत	पोत	पोत	पोत्र	पोत	पोतिक	
पौराण							

भाब्रु ल० शि० अ० मे गालव शब्द आता है, जिसको कुछ विद्वान् गौरवका प्राकृतिक रूप समझते हैं। इस दशामें औ का परिवर्तन आ में हो जायेगा। परन्तु गौरवमे गालवकी व्युत्पत्ति ठीक नही जान पड़ती। यह सीधे गर मूलसे व्युत्पन्न हो सकता है (दे० संस्कृत गरीयम्, गरिष्ठ आदि)।

५. अय और अयि साधारणत: ए मे परिवर्तित हो जाते है, किन्तु कभी-कभी इनका मूल रूप सभी प्रादेशिक संस्करणोंमे सुरक्षित रहता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ० जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
पूजयति	पुजयति	पुजेति	पुजेति	पुजेति			
पूजयितव्या	पुजेतया						
आज्ञापय	आज्ञापय	अनपय	अणपय अनपे	अणपय अनपे	आनपय	आनपय	
त्रयोदश	त्रैदस	तेदस	तोदस		तेदस		
उज्जयिनी					उजेनि (पृथक्)		

६. अव साधारणतः ओ मे परिवर्तित होता है। परन्तु जब संस्कृतका ऊ ओ अथवा अव रूप धारण करता है तो अशोकके अभिलेखोंमे भी इसका अव अथवा ओ रूप पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ० जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
अवरोधन		ओरोधन			ओरोधन	ओरोधन (टोपरा)	
भवति	भवति होति	होति	होति	होति	होति	होति	होति

७. अ का लघु शब्द-खण्डोमे परिवर्तन अशोकके अभिलेखोंमे अ का रूप प्रायः सुरक्षित है। परन्तु किन्ही स्थानोंमे इसका परिवर्तन हो जाता है।

(१) अ का आ मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ० जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
च		चा			चा	चा	चा
न		ना					
रति	रति	लाति	रति	रति			
उद्यम		उयाम					

(२) अ का इ मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ० जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
मध्यम	मझम	मझिम			मझिम (पृथक्)	मझिम	
वर्द्धिष्यति							वढिसिति

यहाँ अ का इ मे परिवर्तन अन्तस्थ य की उपस्थितिके कारण है।

(३) अ का उ मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
त्वरणा					तुलना			
त्वरा						तुला		
मनुष्य					मुनिस	मुनिस	मुनिस	मुनिस
मत		मुत	मुत	मुत			मुत	मुत
उच्चावच	उचावुच उचावच	उचावुच	उचावुच	उचावुच				
उदापन		उदुपान		उदुपान	उदुपान	उदुपान	उदुपान (टो)	
औषध	ओसुढ	ओसध	ओसुद		ओसध	ओसध		
च								चु

(४) अ का ए में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मन्यते			मेनाति					
शल्यक							मेयक मयक	मेयक
संयम				सयमे				

(५) आदिम अ का लोप

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अपि	पि	पि	पि	पि	पि	पि	पि	पि
अष्टकम	अह	हक	अहं	अहं	हक	हक	हक	हक
अर्वन्ति							अरघन्ति रघंति लघति	
अध्यक्ष	हाग्व	अधियख	भियख	हाग्व				
अस्मि								सुमि

(६) शब्दान्तका अ अधिकांश स्थलोंमें सुरक्षित है; कुछ स्थानोंमें आ, ए अथवा ओ में बदल जाता है; थोड़ेसे स्थानोंमें इसका लोप भी दिखायी पड़ता है।

(अ) समस्त पदोंमें अ आ में परिवर्तित हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मारशुद्धि	शालवढि	शालावढि	मलवढि	सलवढि				
अर्धत्रिक								अढातिय अधातिय

(आ) शब्दान्त व्यञ्जनके लोप होनेपर अ आ में परिवर्तित हो जाता है। यह प्रवृत्ति अधिकांश उत्तर और पूर्वोत्तरमें पायी जाती है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
यावत							आवा	
सम्यक्	सम्य	सम्या	सम	सम्य	सम्या	सम्या	(रांभ० मेरठ)	

(इ) कहीं-कहीं अंतिम अक्षरके लोप न होनेपर भी अ का दीर्घीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
आह	आह	आहा आह			आहा	आहा आह	आह	आहा (एर्र०) आहा (ब्र०मि०)
यात्र		यता						
अथ								अथा (एर्र०)
मयेन							मयेना	
जानपदस्य	जानपदस	जानपदसा			जानपदम		जानपदसा जानपदस	

(ई) विसर्गके लोप होनेपर उसके पूर्ववर्ती अ का परिवर्तन निम्नांकित स्वरोंमे होता है :

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
(क) आ मगः	मगा	मका	मक	मक				
(ख) ओ यशः	यसो	यशो यषो		यशो	यसो	यसो		
वयः							वयो	
(ग) ए जनः	जनो	जने	जने जनो	जने	जने	जने	जने	
प्रियः	प्रियो पियो	पिये	प्रियो पियो	प्रिया पियो	पिये	पिये	पिये	पिये

(८) दीर्घमात्रिक शब्द-खण्डोंमे अ प्रायः सुरक्षित रहता है किन्तु किन्हीं स्थलोंमें आ मे परिवर्तित हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
रज्जुक	राजूक	लजुक	रजक	रजुक	लजूक		लाजूक	राजूक (एर०)
वक्तव्य	वतव्य	वतविय	वतव	वतनिय	वतविय वतविय (पशक्) (पथक्)	वतविय		बातवा (भम्र०) वतविय (दक्षिण)
पुनर्वसु							पुनावसु	
अन्यत्र	अअत	आनत अनत	अ त्र	अ त	अनत अनत	अनत	अंनत	

दीर्घमात्रिक शब्द खण्डोंमे अ का इ मे भी परिवर्तन विकल्प रूपमें पाया जाता है; अ प्रायः सुरक्षित रहता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
गृहस्थ	घरस्त	गिहिथ गहथ	ग्रहथ	गहथ			गिहिथ (टो०)	

(९) ह्रस्वमात्रिक शब्द-खण्डोंमे इ का परिवर्तन। यद्यपि इ प्रायः सुरक्षित रहती है, तथापि इसमें निम्नांकित परिवर्तन होते है।

(१) इ का अ मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पिपीलिका							कपीलिक किपिलिका (कौशा०)	
पृथिवी					पुठवी(प्र.)			

(२) इ का उ मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
द्वितीय							दुतीय (निग०) दुतीय (रानी०इ०)	
स्विद्					सु (पृ०)	सु (पृ०)		

(३) इ का ए में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
त्रिदश	त्रैदस	तेदस		त्रेदश	तेदस			तिदश (महस०)

(४) इ का दीर्घीकरण (उपसर्ग, प्रत्यय और अंतिम व्यञ्जन अथवा विसर्गके लोपमें: कभी-कभी विभक्तियोंके पहले भी यह परिवर्तन दिखायी पड़ता है)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्रतिभाग	पटीभाग	पटिभाग	पटिभाग				पटी (टो०)	
अभिकार	अभीकार	अभिकल	अभिकर	अभिकर	अभीकाल			
स्थितिक		थितिक	थितिक	ठितिक	ठितीक	ठितीक	ठितीक ठितिक (टो०) थितिक (टो०) थितिक (दे० मे०)	ठितीक ठितिक (रूप० मह०, भब्रू)
लिपिः					लिपी (पृ.) लिपि	लिपी (ए.)	लिपि (सार०)	
प्रकृतिः								पकिती (सिद्ध०) पकिती (ब्रह्म०) पकिति (जटि०)
एतस्मिन	एतम्हा				एतसि(ए.)	एतसि(पृ.)		
ज्ञातिषु	ञातीसु							अनेवासीसु (एर्र०)
राजभिः							लाजिहि (टो०) लाजीहि (टो०)	

(५) शब्दके आदिमें इ का किन्हीं स्थानोंमें लोप।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
इदानीम		इदानि	इदानि	इदानि				दानि, दाणि
इति	ति इति	ति	ति	ति	ति इति	ति	ति	ति

१०. दीर्घमात्रिक शब्द-खण्डोंमें इ का स्वरूप। इ प्रायः सुरक्षित है; परन्तु कभी-कभी ई अथवा ए में बदल जाती है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
निर्लक्ष्							नीलख निलख (राम०)	
विंशति							वीसति सतविसति-वस (टो०)	
चिकित्सा	चिकीछ		चिकिछा	चिकिछा	चिकिछा	चिकिछा		
अविहिंसा	अविहीसा अविहिंसा	अविहिंसा	अविहिसा	अविहिंसा	अविहिसा	अविहिंसा	अविहिसा (टो०)	
इत्र	एत	हेता	एत्र हेता		एत हेता	हेता	हेता (रानी इ०)	

११. उ का रूप ह्रस्वमात्रिक शब्द-खण्डोंमें प्रायः सुरक्षित रहता है, किन्तु कभी कभी अ, इ, ऊ अथवा ओ में परिवर्तित हो जाता है।

(१) उ का अ में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पुनर्	पुना	पुना	पन पुना	पन पुना	पन	पन		
गुरु	गरु गुरु	गल् गुल्	गरु गुरु	गुरु	गुल्	गुल्		गरु (एर्र०) गरुत (ब्रह्म०)

(२) उ का इ में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पुरुष					पुलिस (पू०)	पुलिस (पू०)	पुलिस	
मनुष्य	मनुस	मुनिस मनुष	मनुष	मनुष	मनिस	मुनिस	मनिस	मुनिस माणुस (दाक्षि०)
पुलिन्द	पारिद	पिलट	पुलिंद	पालिंद				

(३) उ का ऊ में परिवर्तन (कभी-कभी विभक्तियोंके पूर्व और विसर्गके लोप होनेपर)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
बहुभिः	बहूहि	बहूहि	बहूहि		बहूहि	बहूहि		
बहुषु					बहूसु	बहूसु	बहूसु	
गुरुषु								गुरूसु (एर्र०)
साधुः					साधू		साधू (टो०)	
वसेयुः	वसेयु	वसेयू	वसेयु	वसेयु	वसेयू	वसेयु		

(४) उ के दीर्घीकरणके कहीं-कहीं विरल प्रयोग पाये जाते हैं।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
युज्					यूज (पू.)	यूज (पू.)		
प्रत्युपगम							पच्चूपगमन	पच्चुपगमन (दाक्षि०)
माधुरता	माधूरता	माधुरता	माधुरता	माधुरता	माधुरता	माधुरता		

(५) शब्दके अन्तका उ दीर्घ हो जाता है यदि इसके पश्चात ति (स० = इति) आता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
जानन्तुइति								जानंतू ति
भवतुइति							होतू ति	
युञ्जन्तु	युजन्तु	युजन्तू		युजन्तु	युजन्तू			

१२. उ का रूप दीर्घमात्रिक शब्द-खण्डोंमे।

अत्यन्त विरल स्थलोंमें उ का दीर्घमात्रिक शब्द-खण्डोंमे।

उदाहरण

संस्कृत	गिर॰	काल॰	शह॰	मान॰	धौ॰	जौ॰	स्त॰ अ॰	ल॰ शि॰ अ॰
अनायुक्तिक					अनावुतिय (पृ॰)	अनावुतिय (पृ॰)		
नैष्ठुर्य					निठुलिय (पृ॰)	निठुलिय (पृ॰)	निठुलिय	
अनुप्रतिपन्न							अनुपटिपन (टो॰)	

१३. दीर्घ स्वरों —आ, ई तथा ऊ— के सम्बन्धमें यह बात स्मरण रखना चाहिये कि अशोकके शहबाजगढ़ी और मानसेहराके अभिलेखोंकी लिपि खरोष्ठी है जिसमें दीर्घ स्वरोंके लिए संकेत नहीं हैं; इसलिए इन अभिलेखोंमें दीर्घ स्वरोंके स्थानपर ह्रस्व स्वरोंका ही प्रयोग पाया जाता है।

१४. आ का रूप

(१) जब इसके पश्चात् कोई एक व्यञ्जन आता है तो प्रायः इसका रूप सुरक्षित रहता है, परन्तु कहीं-कहीं यह ह्रस्व भी हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर॰	काल॰	शह॰	मान॰	धौ॰	जौ॰	स्त॰ अ॰	ल॰ शि॰ अ॰
अगाध	अपरध							
महानस	महानस	महानस	(महनस)	(महनस)	महनस			
महामात्र							महमत (रु॰)	
महाधन								महधन (एर्र॰)

(२) आ जब शब्दके अन्तमें आता है तो प्रथमा विभक्ति (कर्ता) के एकवचन और तृतीय विभक्ति (करण) के एक वचनमें इसका रूप ह्रस्व हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर॰	काल॰	शह॰	मान॰	धौ॰	जौ॰	स्त॰ अ॰	ल॰ शि॰ अ॰
राजा	राज राजा	लाज लाजा	रज	रज	लाज लाजा	लाजा	लाज (टो॰) लाजा (टो॰)	
इच्छा	इछा	इछ इछा	इछ	इछ	इछ (पृ॰)	इछ (पृ॰)	इछा	
आत्मना							अतन अतना (टो॰को॰)	

(३) जब आ के पश्चात म (अनुस्वारमें परिवर्तित) आता है अथवा अन्तमें आनेवाले विसर्गका लोप हो जाता है तो इसका रूप ह्रस्व हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर॰	काल॰	शह॰	मान॰	धौ॰	जौ॰	स्त॰ अ॰	ल॰ शि॰ अ॰
भूतानाम	भूतान भूताना	भूतान			भूतान	भूतानं	भूतान (टो॰)	
पुत्राः	पुत्रा	पुत	पुत्र	पुत्र	पुत	पुत		

(४) जब आ के पश्चात् व्यञ्जन-गुच्छ आता है तो अशोकके पश्चिमी अभिलेखोंमें यह सुरक्षित रहता है, किन्तु अन्य स्थानोंमें प्रायः इसका रूप ह्रस्व हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर॰	काल॰	शह॰	मान॰	धौ॰	जौ॰	स्त॰ अ॰	ल॰ शि॰ अ॰
आत्ययिक	आत्त्रायिक	अतियायिक	अचयिक	अचयिक	अतिया-यिक	अतिया-यिक		
मार्दव	मादव	मदव					मदव (टो॰)	
प्रक्रान्त								पकंत

(५) जब आ के पश्चात् अनुनासिकके साथ व्यञ्जन-गुच्छ आता है तो सर्वत्र यह ह्रस्व हो जाता है। जहाँ वह सुरक्षित रहता है वहाँ या तो अनुस्वारका लोप हो जाता है अथवा गुच्छका समीकरण।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ताम्रपर्णी	तंबपंनी	तंबपंनी	तंबपनी	तंबपंणि		तंबपनी		
क्रान्त					किलत (पृ०)	किलत (पृ०)		
क्षान्ति	छाति	खति	छति					
आज्ञप्	आञप	आनप	अणप	अणप	आनप	आनप	आनप (टो०)	आणप (ब्रह्म०)
आत्मना					अतने (पृ०)	अतने (पृ०)	अतना	

१५. ई के रूपमें परिवर्तन

(१) जब इसके पश्चात् अकेला व्यञ्जन आता है तो प्रायः इसका रूप सुरक्षित रहता है; केवल कालसी संस्करणमें इसका ह्रस्व रूप पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
जीव	जीव	जिव	(जिव)	(जिव)	जीव	जीव	जीव	
दीपन	दीपन	दिपन	(दिपन)	(दिपन)				
शील	सील	सील	(शिल)	(शिल)	सील			

(२) ईकारान्त स्त्री-लिंग एक वचनमें गिरनार शि० अ० तथा दाक्षिणात्य ल० शि० अ० में प्रायः इसका रूप दीर्घ रहता है; अन्यत्र इसका रूप ह्रस्व हो जाता है। इन् (ई) अन्तवाले पुल्लिङ्ग एकवचन शब्दोंमे गिर०, शह०, मान०, स्त० अ० संस्करणोंमें ह्रस्व स्वर पाया जाता है, किन्तु धौ०, जौ०, कांगा० में दीर्घ स्वर मिलता है।

(३) ई के विरल ह्रस्व रूप भी कहीं-कहीं पाये जाते हैं।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पिपीलिका							कपिलिक किपिल्लिका (कौ) कपीलिक (टो०)	
मिश्रीभूत								मिसिभूत (मास्की)
द्वितीय							दुतिय (निग०) दुतिय (रुमी)	
आश्वासनीय					अस्वास-नियं(पृ०)	अस्वास-निय(पृ०)		

(४) ई कभी-कभी अपने गुण रूपमें बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ईदृश		हेदिस	एदिश	एदिश	हेदिस	हेदिश		

(५) ई स्वर जब व्यञ्जन-गुच्छके पहले आता है तो गिरनारको छोडकर अन्य संस्करणोमे इसका ह्रस्व रूप हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कीर्ति	कीति किति	किति	किन्नी	कित्री	किती	किती		
ईर्ष्या					इसा (पृ०)	इसा (पृ०)	इसा	
दीर्घायुष								दीघायुस (ब्रह्म.सिद्ध.) दिघायुस(सिद्ध.जति.)

१६. ऊ स्वरका परिवर्तन

(१) अकेले व्यञ्जनके पूर्व

शहबाजगढ़ी, मानसेरा और कालसी अभिलेखोंको छोड़कर अन्यत्र प्रायः इसका दीर्घ रूप बना रहता है। निग्लीव स्तम्भ अभिलेखका थुब शब्द संस्कृत स्तूपके बदले स्तुभसे निकाला जा सकता है। इसी प्रकार शिला अभिलेखोंका भुय शब्द भूयस्के बदले भुय्यके अधिक निकट है। इसके स्फुट ह्रस्वीकरणके कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
सूप	सूप	सुप	(सुप)	(सुप)	सूप	सूप		
मयूर		मजुल	(मजुल)	(मजुल)		मजल		
पूजा	पूजा		(पुज)	(पुज)			पूजा	
शुश्रूषा	सुश्रूसा	सुसुसा	सुश्रूष	सुश्रूष	सुसूसा	सुसुसा सुसूस	सुसुसा (टो०) सुसूसा	सुसूस (ब्रह्म० सिद्ध०)

(२) व्यञ्जन-गुच्छके पूर्व

इसी परिस्थितिमें इसका रूप प्रायः सर्वत्र ह्रस्व हो जाता है। कुछ विरल स्थलोंपर इसका दीर्घ रूप भी पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पूर्व	पुर्व पुव	पुलुव	पुव	पुव	पुलुव	पुलुव		
दूष्य							दुस (सार० सा०, रानी०)	
सूत्र								सूत (भब्रु०)
सूर्य							पूरिय (सा०) पूलिय (निग०)	

१७. ए स्वरका परिवर्तन

इन अभिलेखोंमें इसका रूप सुरक्षित है। यहाँतक कि व्यञ्जन-गुच्छोंके पूर्व भी इसका रूप नहीं बदलता। विरल स्थानोंमें ही इसका परिवर्तन पाया जाता है; यथा, सारनाथ स्तम्भ अभिलेखमें संस्कृत एकका रूप इक हो जाता है। शहबाजगढ़ी अभिलेखमें भी अंतिम ए के इ में परिवर्तित होनेकी प्रवृत्ति पायी जाती है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
द्वे	दुवे	दुवे	दुवि	दुवे	दुवे	दुवे		

१८. ओ स्वरका परिवर्तन

ए की भाँति ओ का रूप भी इन अभिलेखोंमें प्रायः सुरक्षित है। व्यञ्जन-गुच्छोंके पूर्व भी यह बना रहता है। किन्तु सन्धियोंमें इसका रूप संकुचित होकर उ हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	गुहा० अ०
एकोन								एकुन (बराबर)
प्रजोत्पादन			पजुपदन					

व्यञ्जनोंमें परिवर्तन

अशोकके अभिलेखोंमें आदिम और मध्यग अकेला व्यञ्जन प्रायः सुरक्षित है। सघोषीकरण, स्पर्शका लोप और अन्य दूसरी प्रवृत्तियाँ, जिनके कारण परवर्ती प्राकृतोंमें मध्यवर्ती व्यञ्जनोंमें अनेक प्रकारके परिवर्तन होते हैं, अभी प्रारम्भिक और विरल अवस्थामें पायी जाती हैं, यद्यपि उनका सर्वथा अभाव नहीं है। इसी प्रकार मूर्द्धन्यीकरणकी प्रवृत्ति भी आंशिक रूपमें मिलती है।

१. कण्ठ्य-व्यञ्जनोंमें परिवर्तन

(१) शब्दके आदिमें आनेवाले व्यञ्जन प्रायः सुरक्षित हैं। गिरनार शिला अभिलेखमें संस्कृत गृहस्थका घरस्तमें परिवर्तन आदिम महाप्राणीकरणका उदाहरण नहीं है। ऐसा लगता है कि मध्य भारतीय आर्य भाषाओंका घर मूल संस्कृतके गृहसे व्युत्पन्न न होकर भारोपीय ध्रोमसे निकला है।

(२) मध्यवर्ती कण्ठ्य वर्णोंमें जो थोड़े परिवर्तन होते हैं, उनका विवरण निम्नलिखित है :

(अ) अघोष क का घोष ग में परिवर्तन। यह प्रवृत्ति प्रायः पूर्वमें पायी जाती है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
लोक	लोक	लोक	लोक	लोक	लोक	लोग(पू०)		
अधिकृत्य								अधिगिच्य (भाब्रु)

(आ) क और ग कण्ठ्य व्यञ्जनोंका अर्द्ध स्वर य में परिवर्तन। यह भी प्रायः पूर्वमें ही पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अनायुक्तिक					अनावृ-तिय (पू०)	अनावृ-तिय (पू०)		
पशूपग	पसुपय पसुपग	पसुपय पसुपग	पसुपय	पसुपय	पसुपय पसुपग पसुपग (पू०)	पसुपग	पसुपग (टो०)	
अर्धत्रिक								अधातिय

(इ) अघोष ग का अघोष क में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मग	मग	मक	मक	मक				
अंतिगोनस (ग्रीक)	अंतेकिन	अंतेकिन	अंतेकिन	अंतेकिन				
उपग			उपक	उपक				
आरोग्य								आरोक (एर्र०) आरोगिय (ब्रह्म०, सिद्ध०)

(ई) घ् का ह् मे परिवर्तन। यह परिवर्तन स्पर्शके लोपसे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
लघु	लहु	लहु					लहु (टो०)	

२. तालव्य व्यञ्जनोंमें परिवर्तन

(१) शब्दोंके आदिमें तालव्य व्यञ्जन प्रायः सुरक्षित है।

(२) मध्यग तालव्य व्यञ्जनोंने निम्नांकित परिवर्तन पाये जाते हैं :

(अ) अघोष च का सघोष ज मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अचल					अजल (पू०)	अचल (पू०)		
सांकुचि							संकुज	

(आ) केवल तालव्य ज का य में बदलनेका उदाहरण पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कम्बोज	कबोज	कंबोज	कम्बोय	कबोज				
राजन			रय					
समाज	समाज	समाज	समय समाज	समाज	समाज	समाज		

(इ) सघोष ज का अघोष च में परिवर्तन। प्राच्य प्रभावके कारण पश्चिमी और पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें इसके उदाहरण पाये जाते हैं।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कम्बोज					कंबोच			
व्रज	वच	वच	व्रच	व्रच	वच	वच		

३. मूर्द्धन्य व्यञ्जनोंका परिवर्तन

(१) अशोकके अभिलेखोंमें मूर्द्धन्य वर्णोंसे प्रारम्भ होनेवाले शब्दोंका प्रायः अभाव है। शब्दके आदिम मूर्द्धन्यके लोपका एक ही उदाहरण मिलता है। स्तम्भ-लेखोंमें डुल्कि डुडी अथवा दडी रूप पाया जाता है।

(२) मध्यग मूर्द्धन्य, ण को छोड़कर, प्रायः सुरक्षित है।

(अ) मध्य देश और उत्तरमें ट ड में बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
वाटिका							वडीका (रवि) वडीक्या (टो०)	

(आ) पश्चिमोत्तरको छोड़कर अन्य स्थानोंमें ड ळ में परिवर्तित हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
एडक							एळक एडक (टो०र० में)	
द्वादश							दुआडस दुआळस	
पञ्चदश							पनडस पनळस	

(इ) पश्चिमी, पश्चिमोत्तरी और दाक्षिणात्य अभिलेखोंमें ण प्रायः सुरक्षित है। अन्यत्र यह न में परिवर्तित हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कारण	कारण	कालन	कारण				कालन	कारन (एर्र०)
पौराण								पोराण (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटिंग०) पोरान (एर्र०)
श्रावण							सावन (टो०)	सावण (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटिंग०) सावन (एर्र०)

४. दन्त्य व्यञ्जनोंका परिवर्तन

(१) अशोकके अभिलेखोंमें आदिम दन्त्य व्यञ्जन प्रायः सुरक्षित हैं। उत्तरी अभिलेखोंमें अपवाद रूपमें एक परिवर्तन पाया जाता है। वह है त का ट में बदलना।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
तोष	तोस	दोस	तोष	तोष	तोम(पृ०)	तोम		

(२) मध्यग दन्त्य व्यञ्जनोंके रूप भी सामान्यतः सुरक्षित है। फिर भी निम्नांकित परिवर्तन पाये जाते है।

(अ) अघोष त का सघोष द मे परिवर्तन (प्रायः उत्तरमे)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
हित	हित	हिद हित	हिद हित	हिद हित	हित	हित	हित	
यात्रा	याता	याता		यद्र	याता			
हापयिष्यति	हपेसति	हपेसति	हपेशदि	हपेसति	हपेसति	हपेसति		

(आ) अघोष द का अघोष त मे परिवर्तन (प्रायः पूर्वमे)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्रतिपद					पटिपाद (पृ०)	पटिपात	पटिपाद (टो०)	

(इ) स्पर्शके लोपमे ध का ह मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
न्यग्रोध							निगोह (टो०)	निगोह (बरा०)
विधा							विदह	

(ई) महाप्राणताके लोपमे ध का द मे परिवर्तन।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
इध	इध	हिद	हिद	हिद	हिद	हिद		
स्कन्ध	स्कंद	कध	कध	कध	कध			

(उ) त का लोप और व का प्रवेश (अकोमे)

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
चतुर्दश							चावुदस	

(ऊ) द का लोप (पश्चिम और दक्षिणमे)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
तादृश	तारिस	तादिस	तदिश	तदिश	तादिस	तादिस		
यादृश	यारिस	आदिस	यदिश	आदिस	आदिस	आदिस		यारिस (एर्र०)

५. ओष्ठ्य व्यञ्जनोंका परिवर्तन

(१) शब्दोंके आदिम ओष्ठ्य व्यञ्जन प्रायः सुरक्षित हैं, परन्तु थोड़े परिवर्तन दिखायी पड़ते हैं।

(अ) सघोष ब का अघोष प में परिवर्तन (केवल एक उदाहरण पश्चिमोत्तरके अभिलेखमें)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
बाढम	बाढ	बाढ	पढ बढतर					

(आ) भ का ह में परिवर्तन (पूर्वमें किन्तु पश्चिमोत्तरमें भ बना रहता है)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
भू	होति होतु		होति भोति भवति भवे	होति	होति	होति		

(२) मध्यग ओष्ठ्य व्यञ्जनोंमें निम्नांकित परिवर्तन पाये जाते हैं।

(अ) अघोष प का सघोष ब में परिवर्तन (उत्तरमें)

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
लिपि	लिपि	लिपि	लिपि	लिपि	लिपि	लिपि	लिबि (टो०) लिपि	लिपि

(आ) प का व में परिवर्तन (एक ही उदाहरण)

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्राप्								पाव (सह०) पाप

(इ) भ का प में परिवर्तन (भ्रम अथवा समीकरणके कारण)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्रतिभोग		पटिभोग	पटिभोग	पटिभोग			पटिपोग (र०) पटिभोग	

(ई) भ का ह में परिवर्तन (स्पर्शके लोपमें)

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जो०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
लभ् भिः	 हि	 हि	 हि	 हि	लह (पृ०) हि	लह (पृ०) हि	लह (कौशा०) हि	 हि

(उ) भ का ब में परिवर्तन (महाप्राणताके लोपसे)।

निगलीव लघु स्तम्भ अभिलेखमें स्तुभका थुव हो सकता है। किन्तु यदि थुव संस्कृत स्तूपमें व्युत्पन्न माना जाय तो यह प के व में परिवर्तनका उदाहरण होगा।

(ऊ) भ का फ में परिवर्तन (महाप्राणताके विपर्ययके कारण)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कमट							कफट	

६. अन्तस्थ व्यञ्जनों (अर्द्धस्वरों) में परिवर्तन

र को छोड़कर, जो पूर्वी अभिलेखोंमें बोलीगत विशेषताके कारण ल मे बदल जाता है, शेष अन्तस्थ व्यञ्जन अशोकके अभिलेखोंमें प्रायः सुरक्षित हैं। कुछ परिवर्तनोंके उदाहरण नीचे दिये जाते है।

(१) य का परिवर्तन

(अ) य का ज मे परिवर्तन (केवल एक उदाहरण)

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मयूर			मजुर	मजुर	मजूल	मजूल		

(आ) आदिम और मध्यग दोनो अवस्थाओंमे य का प्रायः लोप हो जाता है। प्रथम अवस्थामे मुख्यतः अन्य और सम्बन्धवाचक सर्वनाममे य का लोप देखा जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
यत्र	यत्र	यत्र	यत्र	यत्र				यत्र (सह०)
	यता	यता	यता	यता				यता (सह०)
		अत			अत	अत	अत (टो०)	
यावत्	यव		यव	यव			यव	
	आवा	आवा	आवा	आवा	आवा		आवा	
	अवं	अव	अव	अवं	अव		अव	
यादृश्	यारिस	आदिस	यदिश	आदिस	आदिस	आदिस		
यत् (अ०)		अ		अ	अ (पृ०)	अ (पृ०)		
	य	यं	य	य	य	यं		
यत् (सर्व०)	य	अं	य	अ	अ	अ		अ (जटिंग०)
	य	ए	य	ए	ए	ए		ए (जटिंग०)
		य			य			य
		य			य			य

ऊपरकी तालिकामे यह देखा जा सकता है कि पूर्वी बोलियोंमे य का लोप हो जाता है, किन्तु पश्चिमी बोलियोंमे इसका रूप सुरक्षित है; जहाँ पश्चिममीमे इसका लोप है वह पूर्वी प्रभावके कारण। मध्यग य का लोप सर्वथा पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमे ही मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्रिय	पिय	पिय	प्रिअ	प्रिय	पिय	पिय		
	प्रिय	प्रिय	प्रिय					
एकत्य		एकतिय	एकतिअ	एकतिय	एकतिय	एकतिय		
द्वयर्ध		दियढ	दिअढ	दियढ				दिय ढिय

यह एक विचित्र बात है कि जहाँ शहबाजगढी अभिलेखमे मध्यग य का लोप पाया जाता है वहाँ मानसेरामे उसका रूप सुरक्षित है। यह स्थिति मागधी प्रभावके कारण है, यद्यपि मानसेरा शहबाजगढीके निकट है।

(इ) जहाँ मध्यग य के आगे उ मात्रा आती है वहाँ य का लोप हो जाता है और उसके स्थानपर व प्रकट हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
दीर्घायुस								दीर्घायुस (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटि०)
आयुक्ति					आवुति (पृ०)	आयुति	आवुति	
विषय	विसय	विसव	विषव	विषय			विषव (सम०)	

(इ) विधि क्रियाके रूप एयुमें य का व मे परिवर्तन पाया जाता है, यथा—एयुका एवु ।

(उ) कभी शब्दके आदिमें ए के स्थानपर य प्रकट हो जाता है। यह विशेषता गिरनारको छोडकर अन्य स्थानोंमें पायी जाती है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
एव	एव	येव ऐव	एव	येव	येव	येव	येव	

(२) र का परिवर्तन

(अ) र का ल में परिवर्तन: अशोकके पश्चिमी और पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमे आदिम र सुरक्षित है, किन्तु अन्य स्थानोंमे यह ल मे परिवर्तित हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
रज्जुक	राजुक	लजक	रजुक	रजुक	लजूक		लजूक	
राजन्	राजा		राजा	राजा				
	राजा (सोपा०)	लाजा			लाजा	लाजा	लाजा	लाजा

(आ) मध्यग र मे भी प्रायः वे ही परिवर्तन होते हैं जो आदिम र। किन्तु इसके कुछ अपवाद पाये जाते हैं। दक्षिणके ल० शि० अ० मे से मैसूर, कोपबाल तथा एर्रगुडिके अभिलेखोंमें मध्यग र सुरक्षित रहता है। मध्यदेशीय ल० शि० अ० में भी कहीं-कहीं र सुरक्षित है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
-चरण	चरण	चलन	चरण	चरण	चलन	चलन	चलन	
चिर-	चिर	चिल-	चिर	चिर-	चिल	चिल-	चिल-	
पौराण								पोराण (दक्षिण) पोरान
सातिरेक								सातिरेक (दक्षिण) सातिलेक (उत्तर)
वत्सर-								वछर-(दक्षिण) वछल-(उत्तर) वछर-(रूप०)
सुर्य							मुलिय (टो०) मुलिय (सांची)	धुलिप(ना-गुहा)
गौरव								गालव (भाब्रू)
उदार-								उडल (रूप) उडल (मा०, ब्रह्म सिद्ध)
कर-								कल-(मा०)

(३) ल का परिवर्तन

(अ) अशोकके अभिलेखोंमे आदिम ल प्रायः सुरक्षित है। मध्यग ल कतिपय स्थानोंमें ड में बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
महिला	महिडा							
चोल	चोड	चोड	चोड	चोड	चोड	चोड		
केरल	केरल	केरल	केरड	केरल	केरल	केरल		
दुलि							दुडि दडि	

(४) व का परिवर्तन

(अ) अशोकके अभिलेखोंमें आदिम व प्रायः सुरक्षित है; कुछ स्थानोंमे जहाँ यह प में बदलता है उसका कारण ध्वनिका समीकरण है; यथा—
संस्कृत विपुलका रूप नाथ ल० शि० अ० में पिपुल हो जाता है, किन्तु अन्य स्थानोंमें विपुल ही मिलता है।

(आ) सयुक्ताक्षर (व्यञ्जनगुच्छ) द्व मे व पश्चिमी और पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमे व मे बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
द्वादश	द्वारस	दुवदस	बदय	दुवदश	दुवादस	दुवादस		

(२) मध्यग व प्रायः सुरक्षित है किन्तु जहाँ त् के साथ गुच्छित होता है, वहाँ पश्चिमी अभिलेखोंमें प मे बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
चत्वारः	चत्पारो	चतालि	चतुरे					
-त्वा	-त्पा	-तु	-तु	-तु	-तु	-तु		

(ई) मध्यग, व का केवल पश्चिमी अभिलेखोंमें लोप होता है, यथा—संस्कृत स्थविर गिर० शि० अ० मे थैर हो जाता है।

(उ) उ के पूर्व शब्दके आदिम अक्षरके रूपमें व प्रकट होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ऊढ	वुढ	वुद	वुढ	वुढ				
उच््	वुच		वुच	वुच				
	वुत				वुत			
उप्त			वुत					

७. ऊष्म व्यञ्जनोंका परिवर्तन

मध्य भारतीय आर्य भाषाओंमे तीनों ऊष्म (श, ष और स) बहुधा दन्त्य स मे विलीन हो जाते हैं। किन्तु अशोकके अभिलेखोंकी बोलियोंमे जो म० भा० आ० के प्रारम्भिक रूपका प्रतिनिधित्व करती हैं, ऊष्मोंके प्राकृतीकरणकी प्रवृत्ति अभी दृढ नहीं हो पायी थी। आदिम, मध्यग और अंतिम तीनों दशाओंमे ऊष्मोंके तीन उपयोग पाये जाते है :

(१) शहबाजगढ़ी और मानसेराके अभिलेखोंमे, जो संस्कृतके अधिक निकट है, तीनों ऊष्मोंके स्वतन्त्र रूप सुरक्षित हैं।

(२) कालसीको छोड़कर शेष अभिलेखोंमे केवल दन्त्य स का प्रयोग मिलता है। यह विशेष रूपसे ध्यान देनेकी बात है कि पूर्वी अभिलेखोंमे भी श के स्थान-पर स का ही प्रयोग होता है, जब कि परवर्ती कालमे वहाँ श का प्रयोग होने लगा।

(३) कालसी शि० अ० में ऊष्मोंकी कुछ विचित्र स्थिति है। प्रथम नव शि० अ० मे गिरनार शि० अ० की भाँति कालसीमें भी श और ष के स्थानमें स का प्रयोग होता है, यद्यपि चतुर्थ अभिलेखमें श का दो बार प्रयोग (वश, पियदशिना) पाया जाता है। कुछ स्थानोंमें संस्कृत व्याकरणके अनुसार ष का ठीक प्रयोग है। किन्तु अधिकाश स्थानोंमे ध्वनिशास्त्रकी दृष्टिसे श और ष का अशुद्ध उपयोग हुआ है। ऐसा लगता है कि कालसी अभिलेखका लेखक स्वयं ऐसी बोली बोलता था, जिसमें ऊष्मोंमेंसे केवल स का ही प्रयोग होता था; इसलिए दन्त्य स के लिए उसने श और ष का मनमाना प्रयोग किया। इसलिए कालसी अभिलेखमें श और ष शुद्ध लिप्यात्मक है, ध्वन्यात्मक नहीं। इसका एक और कारण भी हो सकता है। कालसी पश्चिम और पूर्वके बीच मध्यदेशके उत्तरमें स्थित है। अतः यहाँपर कई प्रवृत्तियों-का संगम था। साधारण लेखक लिखनेके समय असमंजसमें पड़कर ऊष्मोंका सूक्ष्म भेद नहीं कर पाता था।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
श्रावक	स्रावापक	सावक	श्रवक	श्रवक	सावक	सावक		
शुश्रूषा	सुसुसा	सुसूसा	सुश्रुष	शुश्रुष	सुसूसा	सुसूसा	सुसूसा	सुसूस
-दश	दस	दस	दश	दश	दस	दस	दस	डस
मानुष	मनुस	मनुश मनुष मनुस	मनुश	मनुश	मनुस	मनुष	मुनिस	मुनिस माणुष(दक्षिण)

(४) इसके कुछ अपवाद भी पाये जाते हैं, जिनके उदाहरण निम्नांकित हैं;

(अ) तालव्य श में परिवर्तन विषमीकरणके कारण।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
शुश्रूषा			सुश्रुष	सुश्रुष				
अनुशोचन			अनुसोचन					
शाक्य								शक (मास्की)

(आ) मूर्द्धन्य ष मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अभिषिक्त			अभिसित	अभिसित				अभिषित
मानुष			मनुश	मनुश				(नाग०गुहा०)
विषय							विषव (सार०)	
एषः							एषे (रानी०)	
वर्ष								वष (मास्की)

(इ) दन्त्य स मे परिवर्तन (समीकरणके कारण) ।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
संशयिक				शशयिक				
सत्य								सच (सिद्ध०)
स्वर्ग								स्वग (ब्रह्म०)
शासन			शशन	शशन				
उपासक								उपाशक (मास्की)

दन्त्य स का ह मे परिवर्तन कभी-कभी भविष्यत् क्रिया-पदोंके अन्तमे पाया जाता है; यथा— -हथ तथा -हंति ।

(५) महाप्राण ह का परिवर्तन

(अ) आदिम और मध्यग रूपोंमे प्राय. सुरक्षित है । किन्तु पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमे कभी-कभी इसका लोप हो जाता है ।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
हस्तिन	हस्ति	हथि	अस्ति	अस्ति	हथि			
इह		इह	इअ इह	इअ इह				
मम	मम	मम		मम	मम	मम		
मह (प्रा०)			मअ					
आह				अअ (एकवार)				
अह	अहं वा हकं			शेष (आहा) अअ				

(आ) कुछ ऐसे भी प्रयोग पाये जाते है, जहाँ स्वरके पहले ह प्रकट हो जाता है ।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ईदृश	एतारिस (स० एतादृश)	हेदिस एदिस	एदिश	एदिश	हेदिस एदिस	हेदिस एदिस	हेदिस (सार०)	
एवम्		हेवं एवं	एवं	एवं	हेव (पृ०) एवं	हेवं (पृ०) एवं	हेवं (टो०) हेव (राम०)	हेवं
इत्र	हेता (सो०) एत	हेता	एत्र	एत्र	हेता एत	हेता	हेता (रानी०)	

८. अन्तिम हलन्त व्यञ्जनोंका परिवर्तन

(१) अशोकके अभिलेखोंमें अन्तिम हलन्तका प्रायः लोप हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
यावत्			याव				याव यावा	
भवेत्	भवे							
पुनर्	पुना	पुना	पुना पन	पुना पन	पन	पन		
स्यात्		सिया	सिय	सिय	सिया(पृ०)	सिया(पृ०) सिय	सिया सिय	सिया
मनाक्							मिना	

अन्तिम हलन्तोंके लोपमें यह प्रायः देखा जाता है कि यदि उसके पूर्वका स्वर ह्रस्व है तो उसका दीर्घीकरण हो जाता है और यदि दीर्घ है तो उसका ह्रस्वीकरण।

(२) अन्तिम हलन्तोंके लोप होनेके नियमके अनुसार अन्तिम म् और न का भी लोप होता है, परन्तु इस दशामें इनके पूर्वके व्यञ्जनका अनुनासिकीकरण हो जाता है, यद्यपि इसके कुछ अपवाद भी पाये जाते हैं, जिनमें अनुस्वारका भी लोप पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
दानम्	दान	दान	दान	दान दन	दान दन	दान	दान	
धर्मम्			ध्रम	ध्रम		धम		
कर्तव्यम्	कतव्य	कतव्य	कतव्य	कतव्य	कतव्य	कतव्य		

९. व्यञ्जनोंका तालव्यीकरण

इस नियमके अनुसार कण्ठ्य और दन्त्य व्यञ्जनोंका स्वर इ तथा अर्द्धस्वर य के साथ तालव्यीकरण हो जाता है। यह प्रवृत्ति प्रायः पश्चिमी तथा पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें पायी जाती है। इसका अपवाद उत्तरमें क और ग के तथा पूर्वमें त के तालव्यीकरणमें मिलता है।

(१) कण्ठ्य व्यञ्जनोंका तालव्यीकरण

(अ) उत्तरमें क और ग का तालव्यीकरण

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
निकाय		निक्याय						
स्थितिक		ठितिक्य						
कलिंग		कलिंग्य						
कौशिक							कोसिक्य (ला०)	
-वाटिका							वढिक्या (शा०)	

(आ) मध्यग ख जब य के साथ संयुक्त होता है तो इसका कहीं-कहीं तालव्यीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
संख्या	सछाय	संखये	सखय	संखय				

(इ) संयुक्त अक्षर क्ष का पश्चिमी और पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें तालव्यीकरण किन्तु अन्य स्थानोंमें कण्ठ्य ख के साथ समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
क्षुद्र	छुद	खुद			खुद	खुद		खुद
क्षण	छण		क्षण	छण	खन (पृ०)	खन (पृ०)		
मोक्ष		मोख	मोछ	मोछ	मोख	मोख		
पक्षी							पखि	

(२) प्रायः य के साथ सयोग होनेपर दन्त्य व्यञ्जनोंका तालव्यीकरण होता है। किन्तु कहीं कहीं आदिम त का भी तालव्यीकरण पाया जाता है।
(अ) पूर्वी अभिलेखोंमें आदिम त इ स्वरके पहले तालव्य व्यञ्जनमें बदल जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
तिष्ठ	तिष्ठ	चिठ	तिठ	चिठ	चिठ			

(आ) व्यञ्जन-गुच्छ त्य का पूर्व छोड़कर अन्य स्थानोंमें तालव्यीकरण हो जाता है। पूर्वके अभिलेखोंमें इसका नियमेन लय होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
आत्यायिक		अतियायिक	अचयिक	अचयिक	अति-यायिक	अति-यायिक		
सत्य							सच	सच (ब्रह्म०, जटिंग०, एर्र०)
अधिकृत्य	अधिगच							अधिगिच्य (भाब्रु)

(इ) व्यञ्जन-गुच्छ त्स अथवा त्स्य में दन्त्यका पश्चिम और दक्षिणमें तालव्यीकरण किन्तु अन्य स्थानोंमें समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
संवत्सर							सवछर (रू०)	सवछल (सहस०) सवछर (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटिंग०)
चिकित्सा	चिकीछ	चिकिसा	चिकिसा	चिकिसा	चिकिसा	चिकिसा		
उत्साह							उत्साह	एर्र०,राजु०,गोवि०,
उत्सृत	उसट	उपट	उसट	उसट	उसट	उसट		
मत्स्य							मछ	

(ई) व्यञ्जन गुच्छ द्य का प्रायः सभी स्थानोंमें तालव्यीकरण होता है। किन्तु जब यह शब्द पिण्डमें नहीं आता तो य के साथ समीकृत हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अद्य	अज	अज	अज	अज	अज	अज		
प्रतिपद्य							पटिपजतु	
उद्यान	उयान	उयान	उयान	उयान	उयान	उयान		
उद्यम		उयम						

(उ) व्यञ्जन-गुच्छ ध्य का प्रायः सभी स्थानोंमें तालव्यीकरण होकर झ बन जाता है। परन्तु ध्+य का तालव्यीकरण केवल पश्चिम और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें पाया जाता है। इस नियमके अपवाद भी मिलते हैं।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मध्यम	मझम	मझिम			मझिम(पृ.)	मझिम(पृ)	मझिम	
निध्याति	निझति	निझति	निझति	निझति	निझति	निझति	निझप-	
अवध्य							अवधिय (टो०,मे०,कौ०) अवध्य (टो०, र०, मे०, राम०)	
अध्यक्ष	(अ) झख	अधियख	अधियच	(अ) झख				

(ऊ) सानुनासिक ण और न का तालव्यीकरण

(ए) ऊष्म श का च में परिवर्तन किन्हीं स्थलोंमें पूर्व, मध्य और दक्षिणके अभिलेखोंमें पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
शक्	सक		सक	सक	चक	चक		चक (ब्रह्म., सिद्ध., राजु., गावि., जटि.)

१०. व्यञ्जनोंका मूर्द्धन्यीकरण

इस नियमके अनुसार दन्त्य व्यञ्जनोंका मूर्द्धन्यीकरण प्रायः र् और ऊष्म (श, ष, स) के सम्पर्कमें, और कुछ स्थानोंमें इनके अभावमें भी हो जाता है। अशोकके पश्चिमी अभिलेखोंमें मूर्द्धन्यीकरणका न्यूनतम प्रभाव है। गिरनार अभिलेखमें इसका केवल एक उदाहरण मिलता है।

(१) दन्त्य त का मूर्द्धन्यीकरण। पश्चिमको छोड़कर अन्य प्रदेशोंमें यह प्रवृत्ति पायी जाती है।

(अ) (ऋ) त का ट में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कृत	कत	कट	कट	कट	कट		कट	कट
भृत	भत	भट	भट	भट	भट			
निवृत्त			निवुट	निवुट				

(आ) र्त का ट मे परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कर्तव्य	कतव्य	कटव कटविय	कटव कटविय	कटव कटविय	कटव किटविय		कटव कटविय	कटव कटविय
कीर्ति	कीति	कीति	किट्रि	किटी	[illegible]टी	किटी		
मवर्त	मवट							

(इ) (र) त का ट में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्रति	पटि प्रति	पटि	पटि	पटि	पटि	पटि		

(ई) स्त का ठ में परिवर्तन बहुत कम पाया जाता है। प्रायः इसका समीकरण थ के साथ हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
स्तम्भ							ठभ (रुम्मिन) थभ(टो.,रु.,सह.) थभ (,,)	
आश्वस्त							अस्वठ (मेरट) अस्वथ	
अनुशास्ति	अनुसस्टि अनुसस्ति	अनुसटि अनुसथि	अनुशस्ति		अनुसथि	अनुसथि	अनुसथि (टो०)	

(२) दन्त्य थ का मूर्द्धन्यीकरण। यह प्रवृत्ति अशोकके पश्चिमी अभिलेखोंमें नहीं पायी जाती है। इसका अपवाद केवल उन्हीं स्थलोंमें पाया जाता है, जहाँ थ का संयोजन किसी ऊष्म अक्षर (श, ष, स) के साथ होता है।

(अ) र्थ का ठ में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अर्थ	अथ	अठ अथ	अठ अथ	अथ	अठ	अठ अथ	अठ	अठ

(आ) (-र-) थ का परिवर्तन ठ में

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
निर्गन्थ							निगंठ (टो०)	

(इ) स्थ का ठ अथवा स्ट में परिवर्तन। इस व्यञ्जन-गुच्छ का प्रायः थ से समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
स्थितिक		ठितिक	थितिक	ठितिक	ठितिक	ठितिक	ठितिक (कों०) थितिक (टो०) थितिक (मे०, र०)	ठितिक
स्थित	स्टित							
अनस्थिक							अनठिक अनथिक (कौशा०)	

(३) दन्त्य द का मूर्द्धन्यीकरण।

(अ) र्द व्यञ्जन-गुच्छका किसी भी मूर्द्धन्य अक्षरसे समीकरण नहीं होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मार्दव	मादव	मादव					मादव (टो०)	
चातुर्दश							चावुदस	

(आ) (-र) द का ड में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
त्रिदश		तेडस	तिदश	त्रेडश	तेडस			

(इ) -द् (ऋ) का ड में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ईदृश		हेडिस हेदिस	हदिस एदिश	एदिश	हेदिस		हदिस (सार०)	

(ई) -द (-र) का ड में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
उदार								उडाल उडार

(उ) -द- का ड में परिवर्तन।
इसका एक अपवाद त्रिदश है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
द्वादश		दुआडस		दुआडश दुआदश	दुआदस	दुआदस	दुआडस	दुआडस दुआडश
पञ्चदश							पंनडस पंनलस पंचदस (कौ०)	

(४) दन्त्य ध का मूर्द्धन्यीकरण

अशोकके पश्चिमी अभिलेखोंमें र के साथ संयुक्त होनेपर इसका मूर्द्धन्यीकरण नहीं होता है; परन्तु ऋ के सम्पर्कसे होता है।

(अ) -(ऋ) ध का -ढ में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
वृद्धि	वढि वधि	वढि	वढि	वढि	वढि	वढि	वढि (रु०)	
वृद्ध	वुढ (सो०)	वुध	वुढ	वुध्र	वुढ	वुढ		

(आ) र्ध का -ढ में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
द्व्यर्ध		दियढ	दिअढ	दियढ				दियढिय
वर्ध्	वढ वध	वढ	वढ	वढ वध	वढ	वढ	वढ	वढ
वर्धित		वधित		वध्रित				

(इ) -(ष-) ध का -ढ में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
औषध	अमुढ	ओसध	अपुढ		ओसध	ओसध		

(५) दन्त्य न का मूर्द्धन्यीकरण।

अशोकके सभी अभिलेखोंमें और शब्दोंके सभी स्थानों (आदि, मध्य और अन्त) में प्रायः यह सुरक्षित है। दक्षिणके कुछ लघु शिला अभिलेखोंमें और एक बार पृथक् जौगड शिला अभिलेखमें आदिम न ण में बदल जाता है। पश्चिमी और पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें मध्यग न का भी ण में परिवर्तन पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
नो								णो (दक्षिण)
निध्या						णिझप (पृ.)	निझप	निझति
दर्शन	दसण दसन	दसन		द्रशन	दसन	दसन		
प्राप्नु	प्रापुण	प्रापुन	प्रापुण		प्रापुन (पृ.)	प्रापुन (पृ.)		
मानुष								माणुम (दक्षिण)
इदानीम्								दाणि (दक्षिण) दानि (मास्की.एर्र.)
लौकिकेन						लोकिकेण (पृ०)		
देवानाम्			देवाण (एकबार)					देवाण (दक्षिण) दवान (एर. सिद्ध.)
अर्द्धतृतीयानि								अढतियाणि (दक्षिण)
सतिरेकानि								सातिरेकाणि (दक्षि.)

(६) सानुनासिकके साथ व्यञ्जन-गुच्छोंका मूर्द्धन्यीकरण

(अ) न्य का ण में परिवर्तन। यह केवल मानसेहरामें पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अन्य	अञ अन	अञ अन	अञ अन	अण अञ	अञ अन	अञ अन		
मन्य	मन मञ	मन मञ	मन मञ	मण मन	मन मञ	मन मञ		

(आ) न का ण में परिवर्तन

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	म० भ०	ल० शि० भ०
आज्ञप			आणप	आणप				आणप (ब्रह्म०)

११. व्यञ्जनोंका सानुनासिकीकरण

(१) जब पूर्ववर्ती स्वर ह्रस्व हो जाता है तो परवर्ती व्यञ्जनका द्वित्त रूप लक्षित करनेके लिए, बीचमें अनुस्वार का प्रवेश पाया जाता है। कभी-कभी अनियमित ढगसे इसका प्रवेश मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	म० भ०	ल० शि० भ०
त्रीणि		तिंनि तिंनि		तिंनि	तिंनि	तिंनि	तिंनि	
भू	अहुंसु							
शुश्रषा	सुसुंसा							
अन्यान्य	अंनमंन	अंनमंन	अंनमंन					
प्रकृति								पंकिति (सिद्ध०) पंकिति (ब्रह्म०, जटिंग०)
विश्वस्							विसंवस (मा०)	
यावत्		अंव						
न								नं (भाब्रू)
पारत्रिक		पालंतिक्य						
मिश्रदेव								मिसंदेव (महस०)

व्यञ्जन-गुच्छ

१. मध्य भारतीय आर्य भाषाओंमें साधारणतः व्यञ्जन गुच्छोंका कई प्रक्रियाओं द्वारा या तो समीकरण हो जाता है अथवा लोप। यही नियम अशोकके अभिलेखोंमें भी काम करता है। केवल पश्चिम और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें एक अपवाद पाया जाता है। इनमें -र् से संयुक्त व्यञ्जन-गुच्छ सुरक्षित है। पश्चिमोत्तरीय बोलियोंकी यह विशेषता दरदी बोलियोंमें आजतक पायी जाती है। सभी व्यञ्जन-गुच्छोंका विवरण देना यहाँ अभीष्ट नहीं है। मुख्य व्यञ्जन गुच्छोंका ही विवरण नीचे दिया जाता है। शेष व्यञ्जन-गुच्छ इन्हींपर लागू होनेवाले नियमोंके अन्तर्गत आ जाते हैं। व्यञ्जन-गुच्छोंमें तालव्यीकरण और मूर्द्धन्यीकरणकी प्रवृत्तियोंका विवरण दिया जा चुका है (देखिये ९ तथा १०)।

(१) स्पर्श व्यञ्जनोंके साथ व्यञ्जन-गुच्छ। इस वर्गके अन्तर्गत उन व्यञ्जन गुच्छोंका विवेचन है जो अन्तस्थ अथवा ऊष्म वर्ण + स्पर्श व्यञ्जनोंमें रचित होते हैं।

(अ) र + स्पर्श व्यञ्जन। जहाँ दूसरे व्यञ्जनोंके साथ र् का संयोजन होता है वहाँ एकरूपता नहीं पायी जाती। र कभी पूर्ववर्ती और कभी परवर्ती अक्षरके साथ जुट जाता है। इस सम्बन्धमें हुल्त्शका मत ध्यान रखने योग्य है: "यह याद रखना चाहिये कि जब कभी ऐसे शब्द पाठमें आवें तो वर्ण-न्यास ही अशुद्ध है उच्चारण नहीं।" ब्यूलरका भी यही मत था: "इस प्रकारके व्यञ्जन-गुच्छोंमें अक्षरोंका क्रम उच्चारणके अनुसार न होकर संयोजनकी सुविधाके अनुसार होता है।" परन्तु र् चाहे पूर्ववर्ती अथवा परवर्ती अक्षरके साथ जुटा हो इसकी उपस्थिति मूल संस्कृत शब्दोंके संयुक्ताक्षरोंका ही सूचक है। जैसा कि ऊपर लिखा गया है र् + स्पर्श व्यञ्जनसे बने गुच्छोंमें र का, पश्चिमोत्तरको छोड़कर, सभी स्थानोंमें समीकरण हो जाता है। पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें र् की सुरक्षाके कुछ उदाहरण निम्नांकित हैं:

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	म० भ०	ल० शि० भ०
वर्ग		वग	व्रग्र	व्रग्र	वग	वग		
स्वर्ग	स्वग	स्वग	स्पग्र	स्पग्र	स्वग	स्वग		
गर्भागार	गभागार	गभागार	ग्रभगर	ग्रभगर	गभागार गभागाल	गभागार गभागाल		स्वग

(आ) र + दन्त्य व्यञ्जनोंसे बने हुये गुच्छोंके उदाहरणके लिये ऊपर मूर्द्धन्यीकरणके उदाहरण देखिये (१०)।

(इ) ष् + स्पर्श व्यञ्जन। ष्ट् गुच्छ में अल्पप्राण अघोष अक्षर समीकरणकी स्थितिमें सघोष हो जाता है। पश्चिमी अभिलेखमें ष्थ् गुच्छ स्त के रूपमें सुरक्षित रहता है। इस गुच्छके व्यवहारमें मूर्द्धन्य उच्चारण कभी-कभी लुप्त हो जाता है :

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अष्टमी		अथ-	अथ	अथ-			अटमी	
व्युष्ट								व्यूट (रूप०, एर्र०) व्यूथ (ब्रह्म) विवुथ (सहस०)
श्रेष्ठ	सेस्ट	सेट	सेट	सेट				
तिष्ठ	तिष्ठ	चिठ	तिठ	चिठ	चिठ			
दुष्कृत	दुकत	दुकट	दुकट	दुकट	दुकट			
दुष्कर	दुकर	दुकल	दुकर	दुकर	दुकल	दुकल		

(ई) स् + स्पर्श व्यञ्जन। स्त गुच्छ गिरनार, शाहबाजगढी और मानसेहराके अभिलेखोंमें सुरक्षित है, किन्तु अन्य स्थानोंमें इसका समीकरण हो जाता है। स्थ गुच्छ केवल गिरनारमें ही सुरक्षित है। (मूर्द्धन्यीकरणके लिये देखिये १०)।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
हस्तिन	हस्ति	हथि	हस्ति	हस्ति	हथि			हथि (एर्र०)
गृहस्थ	घरस्त	गहथ	ग्रहथ	गहथ			गिहिथ (टो०)	
स्कन्ध	खंद	कध	कध	कध	कध			

२. य् के साथ व्यञ्जन-गुच्छ। ऐसे व्यञ्जन-गुच्छोंमें य् का या तो समीकरण, संरक्षण अथवा लोप हो जाता है।

(१) स्पर्श व्यञ्जन + य। पश्चिमी और पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें गुच्छका प्रायः समीकरण, पूर्वी अभिलेखोंमें लोप और मध्यदेशीय और दाक्षिणात्य अभिलेखोंमें कभी-कभी इसका संरक्षण पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
शक्य	सक		सक		चकिय (पृ०)	सकिय चकिय (पृ०)	सकिय (रुम्मिन०, सार०)	सक (सिद्ध.मास्की) सक्य (ब्रह्म०सिद्धे) चक्य (बैराट) सकिय (एर्र०)
मुख्य		मुख	मुख	मुख	मोख्य (पृ०)	मोखिय (पृ०)	मुख्य (टो०) मोख्य	
आरोग्य								आरोगिय ओगक - (एर्र०)
युग्य								युग्य (एर्र०)
द्व्यर्ध		दियढ	दिअढ	दियढ			दियढिय	
इभ्य		इभ	इभ	इभ्य	इभिय	इभिय		
आरभ्य	आरभित्पे		आरभिय-	आरभिसु आरभिय-	आलभिय	आलभिय		

(२) र्य गुच्छ। गुच्छका या तो य में समीकरण हो जाता है अथवा स्वर-भक्तिके द्वारा इसका लोप हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
मर्य	मय	मय	मय	मय	मय			
-आर्य							अय अलिय (भाब्रू)	
माधुर्य		माधुलिय	मधुरिय	मधुरिय	माधुलिय	माधुलिय		
आचार्य								आचरिय (ब्रह्म०, जटि०, एर्र०)
सूर्य							सुलयिक (टो०) सुरियिक (सा०)	

(३) ल्य गुच्छ। पश्चिम और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें इसका -ल- में समीकरण हो जाता है। पूर्व, मध्य और उत्तरके अभिलेखोंमें -य- में इसका समीकरण होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कल्याण	कलाण	कयान	कलाण	कलाण कयाण	कयान		कयान	

(४) व्य गुच्छ। यह पश्चिमके अभिलेखमें और कभी-कभी मध्यदेशीय और दाक्षिणात्य अभिलेखोंमें सुरक्षित रहता है। पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें इसका व में समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
व्यञ्जन	व्यंजन	वियंजन	वजन	वियजन	वियंजन	वियजन	वियजन (सार०) वियजन (रुम्मिन०)	
व्युष्ट								विवुथ (सहस०) व्यूथ (ब्रह्म०) व्यूठ (रूप०) व्यूठ (एर्र०)
कर्तव्य	कतव्य	कटविय	कटव	कटविय	कटविय	कटविय	कटविय	कटविय (सिद्ध०, जटि०, एर्र०)

(५) ऊष्म + य। विरले स्थानोंमें ही यह सुरक्षित है। प्रायः इसका या तो समीकरण होता है अथवा लोप।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
प्रतिवेश्य	-वेसिय	-वेसिय	-वेशिय	-वेशिय				
दूष्य							दुस (सार, सां०)	
आलस्य					आलसिय (पृ०)	आलस्य (पृ०)		
ईर्ष्या					इसा (पृ०)	इमा (पृ०)	इस्या	
आरभिष्यन्ति			अरभिशंति	अरभिशति				
मनुष्य	मनुस	मनुष	मनुश	मनुश	मनुस	मनुस		

३. र के साथ गुच्छ। जिस स्पर्श व्यञ्जनके साथ र् का संयोग होता है उसके साथ इस गुच्छका समीकरण हो जाता है। किन्तु पश्चिमी और पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें और कभी-कभी दाक्षिणात्य अभिलेखोंमें, आदिम और मध्यग दोनो अवस्थाओंमें यह गुच्छ सुरक्षित रहता है।

(१) कण्ठ्य + र

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अतिक्रम	अतिक्रम अतिकात परिकम	अतिकम	अतिक्रम	अतिक्रम	अतिकम	अतिकम	अतिकम (टो०)	
चक्रवाक							चकवाक	
प्रकान्त								पकंत
अग्र	अग	अग	अग्र	अग्र	अग	अग	अग	

(२) दन्त्य + र

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
त्रि, त्रीणि	ती	तीनि	त्रयो	तीनि	तिनि	तिनि	तिनि	
	त्री	तिनि		तिनि	तिनि	तिंनि	तिनि	
पुत्र	पुत	पुत				पुत	पुत (टो०, सो०)	
	पुत्र		पुत्र	पुत्र				
तत्र	तत	तत			तत (पृ०)	तत (पृ०)	तत (टो०, सहस)	
	तत्र		तत्र	तत्र				
द्रह्								द्रहितव्य (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटिंग०)
अर्द्धत्रिक							अढातिय	द्रह्यितव्य ,,

(३) ओष्ठ्य + र

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
प्रजा	प्रजा	पजा	प्रजा	प्रजा	पजा	पजा	पजा	
प्रकाश							प्रकास (रूप०)	
प्रसाद	प्रसाद	पसाद	प्रसाद	प्रसाद				प्रसाद (भाबु)
प्रकान्त							पकत (रूप०)	प्रकंत (ब्रह्म०)
								पकत (सिद्ध०)
								पकत (एर्र०)
प्राण	प्राण	प्रन	प्राण	प्रन	प्रन	प्रन		प्राण (एर०)
प्रकरण	पकरण	पकलन		पकरण	पकलन			
	प्रकरण		प्रकरण					
ब्राह्मण	बभन (सो.)	बंभन	ब्राह्मण	ब्राह्मण	बाभन	बाभन	बाभन (टो०)	
	बाम्हण			बमण				
भ्रातृ	भ्रात्र	भत	भ्रत	भ्रत	भत	भत		
				भत				

(४) व्र गुच्छ। यह केवल पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें ही सुरक्षित पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
व्रज	वच	वच	व्रच	व्रच	वच	वच		
प्रव्रजित	पवजित	पवजित	प्रव्रजित	प्रव्रजित			पवजित (टो०)	

(५) ऊष्म + र गुच्छ। पश्चिमोत्तरीय और कभी-कभी पश्चिमी अभिलेखोंमें यह गुच्छ सुरक्षित है। अन्य स्थानोमे र का ऊष्म वर्णके साथ समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
श्रुणु	स्रुण	सुन	श्रुण	श्रुण				
		सुन			सुन (पृ०)	सुन(पृ०)	सुन (टो०)	सुन (भाब्रु०)
							सावाय (टो०)	सावाय (ब्रह्म.सिद्ध.)
सहस्र	सहस्र		सहस्र	सहस्र				
			सहस		सहस	सहस	सहस	
परिश्रव	परिस्रव	पलासव	परिस्रव	परिसव	पलिसव	पलिसव		
मिश्र								मिस
								मिसं

४. व के साथ गुच्छ ।

(१) स्पर्श व्यञ्जन + व । पश्चिमी अभिलेखोंमें यह आदि, मध्य और अन्त सभी अवस्थाओंमें सुरक्षित है। यहाँ केवल ध्वन्यात्मक परिवर्तनसे त्व का त्व और द्व का द्व हो जाता है। शेष अभिलेखोंमें आदिम व का लोप और मध्यगका समीकरण पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
क्वापि		कुवापि						
द्वि	द्वे द्वो	दुवे	दुवि	दुवे		दुवे	दुवेहि (टो०)	
द्वादश	द्वादस	दुवाडस	बडय	दुवाडश	दुवादस	दुवादस	दुआडस	
चत्वारः	चत्पारो	चतालि	चतुरे					
-त्वा	त्पा	–तु	–तु	–तु	–तु	–तु	–तु	
षड्विंशति							सड्वीसति	

(२) अन्तस्थ + व । पश्चिमी और पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें यह गुच्छ सुरक्षित है। परन्तु अन्य स्थानोंमें या तो इसका लोप अथवा समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
सर्व	सर्व	सव	सव्र	सव्र	सव	सव		
पूर्व	पुव पुर्ध	पुलुव	प्रुव	प्रुव	पुलुव	पुलुव		

(३) अन्तस्थ + व । पश्चिमी और पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें यह गुच्छ आदिम अवस्थामें सुरक्षित है। पश्चिममें स्व का स्प रूप हो जाता है। अन्य स्थानोंमें स्वरभक्ति द्वारा या तो इसका लोप अथवा समीकरण पाया जाता है। मध्यग अवस्थामें सभी स्थानोंमें सुरक्षित है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
स्वामिक	स्वामिक	सुवामिक	स्पमिक	स्पमिक	सुवामिक	सुवामिक		
श्वेत	स्वेत						सेत	
स्वर्ग	स्वग	स्वग	स्पग्र	स्पग्र	स्वग	स्वग		
शाश्वत					सस्वत(पृ.)	सस्वत(पृ.)		
अश्व							अस्व	

५. ऊष्मोंके साथ गुच्छ ।

(१) क् + ष तथा त् + स के लिए उपर्युक्त तालव्यीकरणकी प्रवृति देखिये ।

(२) र + ऊष्म । पश्चिम और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें यह गुच्छ सुरक्षित है। अन्य स्थानोंमें र का ऊष्ममें समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
दर्शन	दसन दर्सन दसन (सो०)	दसन	द्रशन	द्रशन	दसन	दसन		
–दर्शिन्	द्रसी दसी	दसी	द्रशी	द्रशी	दसी	दसी	दसी	दसी (भाब्रु)

(३) ह के साथ गुच्छ । र्ह गुच्छका प्रायः सभी स्थानोंमें लोप हो जाता है। इस दशामें र् के साथ अ स्वर जुट जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
गर्हा गर्हण }	गरहा गरह	गलहा	गरन गरह	गरहा गरह				
यथार्ह								यथारह (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटिंग०)

६. सानुनासिकके साथ गुच्छ।

ऐसे गुच्छोंका प्रायः सानुनासिकके साथ समीकरण हो जाता है और इस दशामे सानुनासिकका अनुस्वारमें परिवर्तन। परन्त अनुस्वार सदा लेखमे प्रस्तुत नही होता। ञ, ण, न और म सानुनासिकोंकी अपनी विशेषतायें हैं, जिनका उल्लेख नीचे किया जाता है·

(१) ञ के साथ गुच्छ।

(अ) ज्ञ (ज + ञ)। यह गुच्छ पश्चिमी, पश्चिमोत्तरीय और दाक्षिणात्य अभिलेखोंमे प्रायः ञ मे समीकृत हो जाता है। पूर्वी और मध्यदेशी अभिलेखोंमें इसका समीकरण न के साथ होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ज्ञाति विज्ञप्ति	ञाति	नाति			नाति	नाति	नाति विनति (रानी०) विनय-(सार०)	ञाति (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटिंग०)
राज्ञा	राञा राजिन(सो०)	लाजिना	राञा		लाजिना	लाजिना	लाजिना(रुम्मिन०, निगलीव)	लाजिना (भाब्रु)

(आ) ञ्च गुच्छ। अंकोमे इसका अच अथवा अंन रूप पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
पञ्च	पच	पंच	पच	पच	पच	पच	पच (कौश) पंन	

(इ) ञ्ज गुच्छ। पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमे इस गुच्छका ञ के साथ समीकरण हो जाता है। अन्य स्थलोंमे इसका रूप प्रायः-अज अथवा -ज- मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
व्यञ्जन	व्यंजन	वियजन	वञन	विजयन	वियंजन	वियंजन	वियंजन (मार०) वजयन (रुम्मिन)	

(२) ण के साथ गुच्छ।

(अ) र्ण गुच्छ। ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर और जटिंग रामेश्वरके अभिलेखोंमें जहाँ इसका समीकरण होता है वहां इसका मूर्द्धन्य उच्चारण सुरक्षित रहता है। स्तम्भ अभिलेखोंमें यह लुप्त हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
सुवर्ण पूर्ण							पुण	सुवंण (ब्रह्म.,सिद्ध.)

(आ) -क्ष्ण (क् + ष् + ण)। इस गुच्छका परिवर्तन-खिनमें हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
श्लक्ष्ण अभीक्ष्ण					सखिन (पृ०)			अभिखिन(भाब्रु०)

(इ) ण्य। पश्चिमी और पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें इस गुच्छका ञ के साथ समीकरण हो जाता है। अन्य स्थानोंमे इसका समीकरण न के साथ होता है; पश्चिमी (गिरनार) मे भी न के साथ समीकरण पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अपुण्य हिरण्य	अपुञ हिरन	अपुन हिलंन	अपुञ	अपुञ	हिलंन	हिलंन		

(३) न के साथ गुच्छ। इस गुच्छका स्पर्श व्यञ्जनोंके साथ या तो समीकरण होता है अथवा लोप। केवल न्य गुच्छमें पश्चिमी तथा पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें इसका ञ के साथ समीकरण और अन्य स्थानोंमें न के साथ समीकरण होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अन्य	अञ	अंन	अञ	अञ अन-ञ अण	अन	अन	अन	
मन्य	मञ	मन	मञ	मञ मण	मन(पृ०)	मन (पृ०)		

(४) म के साथ गुच्छ।

(अ) त्म। पश्चिमी और दक्षिणी अभिलेखोंमें यह त्प के रूपमें सुरक्षित है। अन्य स्थानोंमें सामान्यतः इसका समीकरण त के साथ हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
आत्मन्	आत्पा	अत	अत	अत	अत (पृ०)	अत (पृ०)	अत	महात्पा (ब्रह्म., सिद्ध., एर्र., जटिंग.) महत

(आ) स्म अथवा ष्म। यह गुच्छ या तो स्म अथवा स्प के रूपमें सुरक्षित रहता है; नहीं तो म्ह अथवा स के साथ इसका समीकरण हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अकस्मात्					अकस्मा (पृ०)	अकस्मा (पृ०)		
स्मिन्	म्हि	सि	स्पि	स्पि	सि	सि		
तस्मात्		तफा						
अस्मै					अफे(पृ०)	अफे(पृ०)		
युष्मत्					तुफ(पृ०)	तुफ(पृ०)	तुफ(रुम्मिन.सार.)	तुप (एर्र०)
अस्मि							सुमि (रुम्मिन. सहस.)	सुमि (मास्की०, ब्रह्म०, सिद्ध०)

(इ) ह्म। निम्नांकित रूप मिलते है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
ब्राह्मण	ब्रह्मण बाम्हण बंभन (सो०)	बंभन बामन	ब्रमण	ब्रमण	बाभन	बाभन	बाभन (टो०)	

(ई) म्य। इस गुच्छमें म प्रायः सुरक्षित है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
सम्यक्	सम्या	सम्या	सम	सम्या	सम्या	सम्या		

(उ) म्र। सर्वत्र इसका परिवर्तन म्ब मे हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
आम्र							अम्बा	
ताम्रपर्णी	तंबपंनि	तंबपंनि	तंबपंनि	तंबपंनि —पणि		तंबपंनि		

पद-रूप-विज्ञान

शब्द-रूप

प्राचीन भारतीय आर्य-भाषाके शब्द-रूपोंमें बहुत विविधता और जटिलता थी। इस युगकी मध्य भारतीय आर्य भाषामें जो प्रवृत्तियाँ काम कर रही थी उनके कारण शब्द रूपोंमें बड़ी सरलता आ गयी। द्विवचनका सर्वथा लोप हो गया। शब्दोंका व्यञ्जनान्त (हलन्त) मूल स्वरान्त (अजन्त) में परिवर्तित हो गया। परवर्ती प्राकृतकी विशेषतायें भी अभी प्रकट नहीं हुई थी। इन अभिलेखोंके शब्द रूपोंमें प्रादेशिक भेद पाये जाते हैं। दो मुख्य भेद है पूर्वी और पश्चिमी। परस्पर प्रभाव और आरोपके कारण इनके अपवाद भी मिलते हैं। यथास्थान इनका उल्लेख कर दिया गया है।

१. संज्ञा

(१) पुल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग अकारान्त संज्ञा-शब्द

(अ) पुल्लिङ्ग कर्ता एक वचन। शब्दोंका अन्त मुख्यतः ओ और ए में होता है। गिरनार, शहबाजगढी और मानसेहराके शिला-अभिलेखोंमें ए की अपेक्षा अ का प्रयोग अधिक होता है। कालसी, धौली और जौगड के शिला-अभिलेखों, स्तम्भ अभिलेखों तथा लघु शिला-अभिलेखोंमें ए का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० स्त० अ०
जन	जनो	जने	जनो	जने	जने	जने	जने (टोप०)	अठे

अपवाद—

(क) कभी-कभी ओकारान्त रूप पूर्वमें और एकारान्त पश्चिमोत्तर और पश्चिममें पाया जाता है। उदाहरणार्थ केरलपुतो कालसीमें तथा सेतो रूप धौलीमें पाये जाते हैं। राजुके, सकले आदि गिरनारमें, जने, विवदे आदि शहबाजगढी और मानसेहरामें मिलते है।

(ख) मूल अकारान्त रूप बहुत कम मिलता है, यथा जन शहबाजगढी, वध कालसी, संपतिपाद धौली (पृथक्) तथा यावतक रूप रुम्मिनदेई अभिलेखमें पाये जाते है।

(ग) विदेशी यवन शब्द अंतेकिन गिरनारमें अकारान्त है किन्तु शहबाजगढीमें इकारान्त हो जाता है। दूसरा यवन शब्द मग गिरनार और कालसीमें आकारान्त हो जाता है।

(आ) पुल्लिङ्ग कर्म एक वचन। इसका अन्त अं अथवा अ में होता है। अ रूप अनुस्वारके लोप होनेसे बनता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
जनं, धर्म, संघ	जन	धंम	ध्रम जन		धंम	धंमं	जन	संघं

अपवाद—

(क) पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें कभी-कभी इसके ओकारान्त और एकारान्त रूप भी मिलते हैं, जैसे—ध्रमो और सयमे।

(ख) कालसीमें आकारान्त रूप भी मिलता है, यथा—अत-पाशडा।

(इ) नपुंसक कर्ता और कर्म एक वचन। इन संज्ञा-शब्दोंका गिरनार, शहबाजगढी और मानसेहरामें अ में अन्त होता है। दूसरे अभिलेखोंमें अ केवल कर्मकारकमें पाया जाता है। कर्ता एक वचनमें एकारान्त ही रूप मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
कर्ता दानं कर्म मङ्गलं	दान	दाने दान	दानं	दानं	दाने मंगलं	दाने मगलं	दाने दानं	फले विपुल

अपवाद—

(क) गिरनार, शहबाजगढी और मानसेहराके कुछ स्थलोंपर कर्ता एक वचनका रूप एकारान्त पाया जाता है, जैसा कि पूर्वीय अभिलेखोंमें। इसी प्रकार पश्चिमी (गिरनार) अभिलेखके समान उत्तरी (कालसी), पूर्वी और कुछ दक्षिणी अभिलेखोंमें अ रूप पाया जाता है, जैसे, दाने पश्चिम और पश्चिमोत्तरमें; जीवं उत्तर और पूर्वमें; लिखितं जटिंगरामेश्वरमें; सच और कटविय एर्रगुडि अभिलेखमें।

(ख) किन्हीं तुमन्त पदोंमें -ओ रूप पाया जाता है, जैसे—शहबाजगढीमें कटवो।

(ग) कालसी, धौली और जौगडके अभिलेखोंमें -आ रूप भी मिलता है, जैसे—आदिसा (कालसी), कटविय-तला (धौली जौगड)।

(घ) कभी-कभी कर्मकारक एक वचनके शब्दोंका अन्त कालसी और धौली पृथक् अभिलेखोंमें ए में पाया जाता है, जैसे—आनंने (धौली पृथक्) दाने (कालसी)।

(ई) करण एक वचनके शब्दोंका अन्त प्रायः सवत्र-एनमें होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	जनेन	खुदकेन	पुत्रेन	पुत्रेन	पुतेन खुदकेन	पुतेन खुदकेन	धमेन	खुदकेन

अपवाद—

(क) स्तम्भ अभिलेखों तथा लघु शिला अभिलेखोंमे अन्तिम न दीर्घ हो जाता है, जैसे—भयेना, अभिसितेना।

(ख) दक्षिणी अभिलेखोंमें अन्तिम न कभी-कभी मूर्द्धन्य ण हो जाता है, जैसे—लिपिगरेण (ब्रह्मगिरि, जटिङ्गरामेश्वर), महतेण (गोविमठ, पालकगुंडि, राजुल मड गिरि)।

(उ) सम्प्रदान एक वचनके शब्दोंका अन्त ओर स्थानोंमे -ये मे किन्तु पश्चिमी, केन्द्रीय और दक्षिणी अभिलेखोंमे -य मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
अर्थाय	अथाय	अठाये	अठाये	अठाये	अठाये	अठाये	कालाय (रुम्मिन) अठाय (,,)	अठाय (दक्षिणी) अठाये (सिद्ध०)

अपवाद—

(क) गिरनार और टोपरामे एक बार इसका अन्त आ मे होता है, जैसे—अथा।

(ऊ) अपादान एक वचनके शब्दोका अन्त पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंको छोडकर सर्वत्र -आ मे होता है। पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमे इनका अन्त -अ मे पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	कपा	अनुबधा	करण	करण				महतता

अपवाद—

(क) धौली अभिलेखमे कभी-कभी आ का ह्रस्व हो जाता है, जैसे—अनुबध।

(ए) सम्बन्ध एक वचनके शब्दोंका प्राय. सर्वत्र -स में अन्त होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
जनस्य अशोकस्य प्रकमस्य	जनस	जनस	जनस	जनस	जनस	जनस	जनस	असोकस (मास्की) पकमस

अपवाद—

(क) अंतिम स्वरका कहीं-कहीं दीर्घ हो जाता है, जैसे—कालसीमे जनसा, टोपरा और मेरठमें अस्वसा।

(ऐ) अधिकरण एक वचनके शब्दोंका अन्त प्रायः म्हि, ए और सि अथवा स्पि में पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	अथम्हि कोले		ओरोधनस्पि उठनसि भ्रमे	ओरोधनस्पि उठनसि भ्रमे	अठसि	अठसि	जनसि	जंबुदीपसि सुपियें (बराबर०)

(ओ) कर्ता पुल्लिङ्ग बहुवचन शब्दोंका अन्त प्रायः सर्वत्र -आ में होता है। केवल शहबाजगढी और मानसेहरामे स्थानीय प्राकृतके प्रभावसे दीर्घ स्वरका ह्रस्व स्वर हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
मयूराः	मोरा							
पुत्राः		पुता	पुत्र	पुत्र	पुता	पुता		
पुरुषाः							पुलिसा	
देवाः								देवा
ज्ञात्रिकाः		नातिका						
रज्जुकाः							लजूक	
अनुद्विग्नाः					अनुविगिन (पृथक)	अनुविगिन (पृथक)		

अपवाद—

(क) दिल्ली-टोपरा स्तम्भ अभिलेखमें दो बार -आसे शब्दान्त पाया जाता है, जैसे—वियापटासे। यह वैदिक बहुवचनान्त आसः का अवशेष है।

(औ) कर्मकारक पुल्लिङ्ग बहुवचन शब्दोंका अन्त गिरनारमे ए किन्तु अन्यत्र —आनिमें पाया जाता है। यह अर्द्धमागधी बोलीकी विशेषता जान पड़ती है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
युक्तान्	युते							
स्कन्धान्					कंधानि	कधानि		
पुरुषान्							पुलिसानि	
ब्राह्मणान्								बंभनानि (एर्र०)

अपवाद—

(क) गिरनारमें-आनि शब्दान्त भी पाया जाता है, जैसे—घरस्तानि।

(अं) कर्ता और कर्मकारक नपुंसक बहुवचन शब्दोंका अन्त प्रायः सर्वत्र -आनिमे पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
	रूपानि		रूपानि	रूपानि				
		फलानि						
					वसानि	वसानि		नसानि

अपवाद—

(क) कहीं-कहीं इन शब्दोंका अन्त आ में भी होता है, जैसे—दर्संणा (गिरनार), लोपापिता (कालसी, धौली), हालापिता (कालसी), लातिसता (सहसराम, रूपनाथ)।

(ख) अन्तिम स्वर (इ) का एक स्थानमे दीर्घ हो जाता है, जैसे—हत वियानी (दिल्ली-मेरठ)।

(ग) न का ण में परिवर्तन, जैसे—वसाणि, अढतियाणि (गोविमठ, राजुल मंडगिरि, पालक गुंडि)।

(अः) करण कारक बहुवचनका अन्त -एहि मे पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स० अ०	ल० शि० अ०
	सतेहि	सतेहि						
					जातेहि (पु०)	जातेहि (पु०)		
								देवेहि

(क) सम्प्रदान कारक बहुवचनका अन्त भी -एहि में ही होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
				महमत्रेहि	समनेहि	समनेहि	अजीविकेहि (बराबर)	

(ख) सम्बन्धकारक बहुवचनके शब्दोंके अन्त नं अथवा न में पाये जाते है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	थ्रैरानं	पानानं पशब्दान	प्रणन श्रमणन	प्रणनं श्रमणन	पानानं	पानानं		

-ना अथवा -ना में अन्त होनेवाले शब्दोंके विरल प्रयोग भी मिलते हैं, जैसे, भूताना (गिरनार), बंभनाना (काल्सी)।

(ग) अधिकरणकारक बहुवचनके शब्दोका अन्त प्रायः -सु और कहीं-कहीं -षु मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	थैरेसु	वसेसु	वषेषु	वषेषु	वसेसु	वसेसु	अठेसु	पवतेसु प्रानेसु (एर०)

कभी-कभी अन्तिम स्वर (उ) का दीर्घ हो जाता है, जैसे,
पंथेसू (गिरनार)।

(९) आकारान्त स्त्री-लिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ताकारक एकवचनमें शब्दोंका अन्त प्रायः -आ में होता है। पश्चिमोत्तर (शाह. ओर मान.) तथा मध्य और पूर्वके अभिलेखोंमें -आ का ह्रस्व (-अ) हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	इछा	इछा लोकिक	इछा	इछा	इछ पजा	इछ पजा	इछा अपेख	पोराना (दक्षिण; एर०)

(आ) कर्मकारक एकवचन शब्दोंका अन्त प्रायः -आं मे होता है, किन्तु कहीं-कहीं अनुस्वारका लोप भी हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	पूजां, पूजा	पूजा	पूजा	पूजां			पजं पटिपधा (मेरठ)	

(इ) करणकारक एकवचन शब्दोंका अन्त -या (पूर्व, मध्य और पश्चिमके अभिलेखोंमें) अथवा -ये (उत्तर और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें) में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	पूजाया	पुजाये	पुजाये	पुजाये			पूजाया	
					इमाय	इमाय		

(ई) सम्प्रदान, अपादान और सम्बन्धकारक शब्दोंका अन्त -ये में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
							विहिसाये	
							दखिनाये	
							दुतियाये	

(उ) अधिकरणकारक एकवचनके शब्दोंका अन्त पूर्व, मध्य तथा दक्षिणके अभिलेखोंमें -य किन्तु उत्तर, पश्चिमोत्तर और (कदाचित्) पूर्वके अभिलेखोंमें -ये मे पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	गणनाय					समापाय		
							तिसाय (टो०मे०)	वेलाय (दक्षिण)
			मतिरणये	सतिरिणये				
		संतिलनाये					तिसाये	
					पजाये	पजाये		

अपवाद—

(क) अन्तिम अनुस्वारका कहीं-कहीं लोप हो जाता है, जैसे,

सतिरणाय (गिर०), संतीलनाय (धौ०, जौ०)।

(ऊ) कर्ता बहुवचन शब्दोंका अन्त सर्वत्र -आ में होता है; केवल पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें वहाँकी प्राकृत भाषाके व्याकरणके अनुसार -अ मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	कता							
							सडिकया	
								उपासिका (भाब्रू)
			चिकिस	चिकिस				

अपवाद—

(क) गिरनार अभिलेखमें एक बार अन्तिम -आ का -अ मिलता है, जैसे, चिकीछ।

(ख) गिरनारमें ही -आ का -आयो रूप मिलता है, जैसे, महिडायो।

(ए) अधिकरण बहुवचन शब्दका अन्त स्तम्भ अभिलेखोंमें -सु में पाया जाता है, जैसे, दिवसु।

(२) इकारान्त पुल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता एकवचन पुल्लिङ्ग शब्दका अन्त -ई में होता है, जैसे, सक्यमुनी (स्तम्भ अभिलेख)। कहीं -इ में भी जैसे, विधि (वही)।

(आ) कर्ता एकवचन नपुंसक शब्दका अन्त -इ में होता है, जैसे, असमति (कालसी सि० अ०)।

(इ) कर्ता बहुवचन पुल्लिङ्ग शब्दोका अन्त -ई और -ओ दोनोंमें पाया जाता है, जैसे, त्री (गिर० शि० अ०); त्रयो (शाह० तथा मान० शि० अ०)।

(ई) कर्ता तथा कर्मकारक बहुवचन नपुंसक लिङ्ग शब्दोंका अन्त सर्वत्र -नि में पाया जाता है, जैसे तिंनि (काल०, धौ०, जौ० शि० अ० तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें); ओसधीनि (काल० शि० अ०)।

(ऊ) कर्ताकारक बहुवचनके शब्दोंका अन्त पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंको छोड़कर सर्वत्र -आ मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	कता		चिकिस	चिकिस			वढिक्या	उपासिका

अपवाद—

(क) अन्तिम -अ का एक बार गिरनारमें ह्रस्व हो जाता है, जैसे, चिकीछ।

(ख) केवल गिरनारमें एक बार -आयोमे अन्त पाया जाता है, जैसे, महिडायो।

(ए) अधिकरणकारकके बहुवचनमे शब्दोंका अन्त -सु मे पाया जाता है, उदाहरणार्थ; स्तम्भ अभिलेखोंमें दिवसु।

(२) पुलिङ्ग तथा नपुंसक इकारान्त सज्ञा-शब्द

(अ) कर्ता पुलिङ्ग एकवचन शब्दोंका अन्त स्तम्भ अभिलेखोंमे इ मे होता है, जैसे, विधि, सक्यमुनि।

(आ) कर्ता नपुंसक लिङ्ग एकवचन शब्दका अन्त कालसी शिला अभिलेखमे इ मे होता है, जैसे, असमति।

(इ) कर्ता पुलिङ्ग बहुवचन शब्दोंका अन्त गिरनारमें -ई और शाहबाजगढ़ी तथा मानसेहरामें ओ मे होता है, त्री (गिरनार), त्रयो (शाहबाजगढ़ी और मानसेहरा)।

(उ) सम्बन्धकारक बहुवचन शब्दोका अन्त प्रायः सर्वत्र -नं मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अभि०	ल० शि० अ०
	नातीनं	नातिनं	नातीन ञतिन	नातीनं ञतिन				

अपवाद—

(क) कहीं-कहीं अन्तिम अनुस्वारके लोपसे पूर्ववर्ती स्वरका दीर्घ हो जाता है, जैसे, नातिना (काल० शि० अ०)।

(ऊ) अधिकरण बहुवचन शब्दोका अन्त पूर्व और पश्चिमके अभिलेखोंमे -सु तथा उत्तर और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोमे -षु में पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	ञातिसु	नाभायतिषु		नाभापतिषु	नातिसु	नातिसु		

(४) ईकारान्त स्त्रिलिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिम और दक्षिणके अभिलेखोंमें -ई मे और दूसरे अभिलेखोंमें -इ मे पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	लिपी	लिपि	दिपि	दिपि			वधि	पकिती (दक्षिण) पकिति (पूर्व०)

अपवाद—

(क) इन शब्दान्तोंके विनिमय पाये जाते हैं, जैसे, अपचिति (गिर०), अनुसयी (धौ० और जौ०) गभिनी (स्त० अ०)।

(आ) कर्मकारक एकवचन शब्दोंका अन्त गिरनार शिला अभिलेख तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें -इं और काल०, धौ०, जौ०, शह०, मान० के शिला अभिलेखोंमें और स्तम्भ अभिलेखोंमें -इ में मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	संबोधि	सबोधि	सबोधि	सबोधि	सबोधि	संबोधि	वढि (टोपरा०, रुम्मिन०)	
							लिपि (सार०)	

अपवाद—

(क) अन्तिम अनुस्वारके लोप होनेपर पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो जाता है, जैसे, किटी (धौ०, जौ०) अनुपपटीपती (टोपरा०)।

(ख) अन्तिम अनुसारके लोप होनेपर भी अपवादरूपसे ह्रस्व -इ पायी जाती है, जैसे, किति, छाति, वधि (गिर०)।

(इ) करणकारक एकवचन शब्दोंका अन्त प्रायः सर्वत्र -या में पाया जाता है। धौ० तथा जौ० के शिला अभिलेखों और स्तम्भ अभिलेखोंमें कभी-कभी अन्तिम स्वरका ह्रस्व हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	भतिया	भतिया	भतिया	भतिया				
					अनुसथिया अनावुतिय	अनुसथिया अनावुतिय	अनुसथिया	
							वढिया	

अपवाद—

(क) कालसी शि० अ० में कभी-कभी -ये में अन्त होता है, जैसे, अनुसथिये।

(ख) केवल एर्रगुड्डि अभिलेखमें -ना में अन्त पाया जाता है, जैसे, मेरिना।

(ई) सम्प्रदान एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिमी, पश्चिमोत्तरी और उत्तरी अभिलेखोंमें -या में तथा पूर्वी अभिलेखोंमें -ये में पाया जाता है। पूर्वी प्रभावके कारण पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें भी -ये रूप मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	अनुसष्टिया	वढिया	वढिया	वढिया	वढिये	वढिये	घातिये (टोप०)	
			अनुशस्तिये	अनुशस्तियो				

(उ) अपादानकारक एकवचनका अन्त प्रायः -या में होता है। पश्चिमोत्तरी अभिलेखोंमें इसका रूप -ये हो जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		निखुतिया	निखुटिय	निखुटिय	निफतिया	निफतिया		

(ऊ) सम्बन्धकारक एकवचन शब्दोंका अन्त स्तम्भ अभिलेखोंमें -ये में पाया जाता है, जैसे, देवीये (प्रयाग रानी अभिलेख)।

(ए) अधिकरण एकवचन शब्दोंका अन्त धौ०, जौ० तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें -यं; शह० और मान० अभिलेखोंमें -य और काल०, धौ०, जौ० तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें -ये में पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
					पुथवियं	पुथवियं	कोसंबियं	
		आयतिये	अयतिय	अयतिय	आयतिये	आयतिये		
							चातुंमासिये	

(ऐ) कर्ताकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त गिर० तथा काल० अभिलेखोंमे -यो; भाब्रु अभिलेखमें -ये और शह०, मान०, धौ० तथा जौगड अभिलेखोंमें -ई में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	अटवियो	जनियो	अटवि	अटवि	इथि	इथि		भिखुनियें (भाब्रु)

(ओ) सम्बन्धकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त -नं अथवा -ना में पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		भगिनीना			भगिनीन	भगिनीन	देवीनं (टोप०)	

(औ) अधिकरण बहुवचन शब्दोंका अन्त -सु मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
							तीसु	पवतिसु (रूप०)

(५) उकारान्त पुलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग शब्दोंके रूप।

(अ) कर्ता एकवचन पुलिङ्ग शब्दोंका अन्त सर्वत्र -उ मे होता है। -उ का दीर्घरूप भी मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	साधु	साधु	साधु	साधु	साधु साधू	साधु साधू	भिखु (सार०)	भिखु (दक्षिण)

(आ) कर्ता और कर्मकारक नपुंसक एकवचन शब्दोंका अन्त सर्वत्र -उ में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		बहु	बहु	बहु	साधु	साधु	बहु	

(इ) अधिकरण एकवचन शब्दका अन्त टोपरा स्तम्भ अभिलेखमे -ने मे होता है, यथा, बहुने। परन्तु सम्भवतः यह बहुन शब्दका रूप है।

(ई) कर्ता और कर्मकारक नपुंसक बहुवचन शब्दोंका अन्त सर्वत्र -नि मे पाया जाता है, यथा, बहूनि (मुख्य शिला अभिलेख तथा स्तम्भ अभिलेख)।

(उ) करण बहुवचन शब्दोका अन्त -हि मे होता है, यथा, बहूहि (मुख्य शिला अभिलेख)।

(ऊ) सम्बन्धकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त -नं -न और -ना में पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	गुरूनं	गुरुना	गुरुन	गुरुन	गुलूनं	गुलूनं	भिखुनं (सांची)	

(ए) अधिकरण बहुवचन शब्दोंका अन्त -सु में होता है

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
					बहुसु(पृ.)	बहुसु(पृ.)	गुलुसु	गरुसु (दक्षिण) गरुसु (एर्र०)

(६) उकारान्त स्त्रिलिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ताकारक एकवचनमें स्त्रिलिङ्गमें प्रयुक्त साधु शब्दका वही रूप होता है जो पुलिङ्ग ओर नपुंसक लिङ्गमें पाया जाता है।

(७) ऋकारान्त पुलिङ्ग शब्दोंका रूप। [इनका विकृत कारक आधार -इ अथवा -उ होता है।] गिरनारमें संस्कृत रूप सुरक्षित है।

(अ) कर्ता एकवचनका अन्त -आ में होता है। कहीं -अ में भी।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
					पिता(पृ.)	पिता(पृ.)	अपहटा (टोप०) अपहट (रधि०)	

(आ) करणकारक एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिमी अभिलेखोंमें -आ तथा अन्यत्र -ना में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	पिता भाता भात्रा	पितिना	पितुन	पितुन	पितिना	पितिना		

(इ) अधिकरण एकवचन शब्दोंका अन्त -इ में पाया जाता है, यथा, पितरि (गिरनार अभिलेख)।

(ई) कर्ता बहुवचन शब्दोंका अन्त -ओ, -ए और -इ तीनोंमें मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		मताले	नतरो	नतरे	नति	नति		

(उ) सम्बन्धकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त -नं और -न दोनोंमें पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		भातिनं	भ्रतुन	भ्रतुन	भातिनं	भातिनं		

(ऊ) अधिकरण बहुवचन शब्दोंका अन्त -सु और -षु में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		पितिसु पितिषु	पितुषु	पितुषु	पितिसु	पितिसु	पितिसु	पितिसु (ब्रह्म०) पितीसु (एर्र०)

(८) ऋकारान्त स्त्रिलिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) सम्बन्धकारक (सम्प्रदान) एकवचन शब्दोंका अन्त -उ में होता है, यथा, -मातु (प्रयाग-कोसम रानी-अभिलेख)

(आ) अधिकरण एकवचन शब्दोंका अन्त -इ मे होता है, यथा, मातरि (गिरनार अभिलेख)।

(इ) सम्बन्धकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त -न में होता है, यथा, स्पसुन (शाह० मान० अभिलेख)।

(९) हलन्त शब्दोंके रूप। संस्कृत शब्दोंके प्राकृतीकरणके कारण सभी हलन्त शब्दोंके रूप अकारान्त शब्दोंके समान चलते हैं। तथापि यदा-कदा संस्कृत व्याकरणके अनुसार हलन्त शब्दोंके अवशेष पाये जाते हैं।

(१०) -अत्में अन्त होनेवाले शतृ प्रत्ययान्त शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता पुल्लिङ्ग एकवचन शब्दोंका अन्त गिरनार शिला अभिलेखमें -उं, -उ और -ओ मे पाया जाता है। धौली और जौगडमें -अं और -ए रूप भी मिलते हैं। -अं रूप पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें भी मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	करुं, करु करोतो	मत	मत	मतं	मत महते	मंतं महंते	मंतं	कलंतं (मास्की)

(आ) सम्बन्धकारक एकवनन शब्दोंका अन्त मानसेहरा शिला अभिलेखमें -स मे पाया जाता है, यथा, अशतस।

(इ) कर्ता पुल्लिङ्ग बहुवचन शब्दोंका अन्त -ओ और -अ में पाया जाता है, यथा, तिस्टंतो (गिरनार अभिलेख); मत (सहसराम लघु शिला अभिलेख)।

(११) -अत् मे अन्त होनेवाले अन्य शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता एकवचन शब्दोंका अन्त -अ, -अं और -ए मे पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		पजाव	प्रजव	प्रजव	प्रजव		किय (लौं० न०) किय भगवं (रुम्मि०) आवते (सार०)	

(आ) करणकारक एकवचन शब्दोंका अन्त -आ में होता है, यथा, भगवता (भाब्रु अभिलेख); हेतुवता (काल्सी शिला अभिलेख)।

(१२) -अन् में अन्त होनेवाले पुल्लिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता एकवचन शब्दोंका अन्त संस्कृत व्याकरणके समान -आ मे होता है, यथा, राजा (गिरनार, शाह; और मान; अभिलेख); लाजा (काल०, धौ०, जौ०, स्त० अ० तथा लघु शिला अभिलेख)। विकल्पसे प्रायः सभी संस्करणोमें -आ का ह्रस्व (-अ) हो जाता है, परन्तु गिरनार अभिलेखमें बहुत कम ऐसा होता है। उदाहरणतः, योनराज (गिरनार०); लाज (काल० धौ०, जौ०, स्त० अ० तथा ल० शि० अ०)।

(आ) कर्मकारक एकवचन शब्दोंका अन्त -अ मे होता है, यथा, अतानं (धौ० और जौ० पृथक् अभिलेख)।

(इ) करणकारक एकवचनका अन्त प्रायः सभी संस्करणोमें -आ में होता है। अपवादसे -आ का ह्रस्व (-अ) भी मिलता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	राञा	लाजिना	राञा	रजिन	लाजिना	लाजिना	लाजिना अतना (टो०, कौशा०) अतन(लौं० आर०, लौं० म०)	महत्पना(सिद्ध.एर्र.)

(ई) सम्बन्धकारक एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिमी अभिलेखोंमें -ओ तथा पूर्वीमें -ए में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शाह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	राञो	लाजिने	राञो	रजिने	लाजिने	लाजिने		

(उ) कर्ता बहुवचन शब्दोंका अन्त पश्चिमी अभिलेखोंमे -ओ और पूर्वी अभिलेखोंमें -ए मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	रू० शि० अ०
	राजानो	लाजाने	राजानो		लाजाने	लाजाने	लाजाने	

अपवाद—

(क) कालसीमें कभी-कभी -ओ रूप भी मिलता है, यथा, लाजानो।

(ख) शह० में अन्तिम स्वरका -इ हो जाता है, जैसे रजनि।

(ग) दाक्षिणात्य वर्गके अभिलेखोंमें अकारान्त शब्दोंके समान इसका अन्त -आ मे होता है, जैसे, महात्पा (ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर अभिलेख)।

(ऊ) कारणकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त -हि मे होता है, यथा, लाजिहि (स्त० अ०)।

(१३) -अन् मे अन्त होनेवाले नपुंसक शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता एकवचन शब्दोंका अन्त उत्तर और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमे -अं मे किन्तु पूर्वीय अभिलेखोंमे -ए में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	रू० शि० अ०
		कंम कमे	क्रम	क्रम	कंमे	कमे		

(आ) कर्मकारक एकवचन शब्दोका अन्त पूर्वीय अभिलेखोंमे -अं में होता है; कहीं-कहीं अनुस्वारका लोप भी पाया जाता है, जैसे, कंमं (धौ०, जौ०); नाम (अन्य शि० अ० तथा स्त० अ०)

अपवाद—

(क) कहीं-कहीं अन्तिम -अ का दीर्घ हो जाता है, जैसे, नामा (कालसी अभिलेख)।

(इ) करणकारक एकवचन शब्दोंका अन्त -न में होता है, जैसे, कमन (पृथक् धौ० तथा जौ० शिला अभिलेख)।

(ई) सम्प्रदानकारक एकवचन शब्दोंका अन्त उत्तर और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमे -ये मे और पूर्वी अभिलेखोंमें -ने मे होता है। हुल्त्शके अनुसार मानसेहरा शि० अ० मे -ने का मूर्धन्यीकरण होकर -णे रूप बन जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	रू० शि० अ०
		कंमाये	क्रमये	क्रमणे	कमने	कमने		

(उ) सम्बन्धकारक एकवचन शब्दोंका अन्त -स मे होता है, जैसे, कंमस (पृथक् धौ० तथा जौ० शिला अभिलेख)।

(ऊ) कर्मकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त -आनिमे होता है, जैसे, कंमानि (स्त० अ०)

(१४) -अस् मे अन्त होनेवाले पुल्लिङ्ग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता बहुवचन शब्दोंका अन्त -आ में होता है, जैसे, अविमना (स्त० अ०)।

(१५) अम् में अन्त होनेवाले नपुंसक शब्दोंके रूप

(अ) कर्मकारक एकवचन शब्दोंका अन्त पूर्वीय और पश्चिमी अभिलेखोंमें समान रूपसे -ओ में होता है, -ए रूप पश्चिमेतर अभिलेखोंमें ही पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	रू० शि० अ०
	यसो	यसो भुये	यशो भुये	यशो भुये	यसो दविये (पृ.)	यसो	भुये	

अपवाद—

(क) गिर० अभिलेखमें -अ में भी अन्त होता है, जैसे, भुय।

(१६) -इन् में अन्त होनेवाले पुल्लिंग शब्दोंके रूप

(अ) कर्ता एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिममे ह्रस्व इ और पूर्वमें दीर्घ ई में होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	पियदसि	पियदसि पियदसी	प्रियद्रशि	प्रियद्रशि	पियदसी	पियदसि पियदसी	पियदसि (टो०, मे०, लौ०) पियदसी (कौ०)	पियदसि (रूप०, मास्रु०) पियदसी (मास्रु०)

(आ) करणकारक एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिमोत्तरको छोड़कर सभी संस्करणोंमें -आ में होता है; पश्चिमोत्तरमें -अ मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	पियदसिना अंतेबासिना	पियदसिना	०द्रशिन	०द्रशिन	पियदसिना	पियदसिना	पियदसिन (रुम्मि०)	अंतेवासिना (दक्षिण

(इ) सम्प्रदान एकवचन शब्दोंका अन्त -ए में होता है, जैसे—पियदसिने (काल० अ०) -दसिने (धौ०, जौ० अ०) -द्रशिने (मान० अ०)।

अपवाद—

(क) मान० अ० मे एक बार -अ मे भी अन्त पाया जाता है, जैसे—द्रशिन।

(ई) सम्बन्धकारक एकवचन शब्दोंका अन्त पश्चिम (गिर० अ०) में -नो में और अन्यत्र -ने मे पाया जाता है ; -सा मे अन्त केवल उत्तर और पश्चिमोत्तरमें पाया जाता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	पियदसिनो	पियदसिने पियदसिसा	प्रियद्रशिन	प्रियद्रशिने	पियदसिने	पियदसिनें		

अपवाद—

(क) एर्रगुडि अभिलेखमें -न में भी अन्त पाया जाता है, जैसे—यथाचारिन।

(उ) कर्मकारक बहुवचन शब्दोंका अन्त पूर्व, दक्षिण और उत्तरमे -नि में और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें -न अथवा -ने मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
		हथीनि	अस्तिन	अस्तिनं	हथीनि	हथीनि		अतेवासिन (एर्र०)

(ऊ) अधिकरण कारक बहुवचन शब्दोका अन्त -सु में होता है, जैसे—अतेवासीसु (एर्र०)

(१७) -इन् मे अन्त होनेवाले नपुंसक शब्दोंके रूप—

(अ) कर्ता बहुवचन शब्दोंका अन्त -नि में होता है, जैसे—गामिनि (स्त० अ०)।

(१८) दिश् मे अन्त होनेवाले स्त्री-लिङ्ग शब्दोंके रूप—

(अ) कर्मकारक एकवचन शब्दोंका अन्त -आ मे होता है, जैसे—दिसा (काल० अ०)

(१९) -अद् में अन्त होनेवाले स्त्री-लिङ्ग शब्दोंके रूप—

(अ) कर्ता एकवचन शब्दोंका अन्त -आ में होता है, जैसे—पलिसा (काल०, धौ०, जौ०); परिसा (गिर० अ०); परिष (मान० अ०)।

(आ) अधिकरण एकवचन शब्दोंका अन्त पूर्व और पश्चिमके अभिलेखोंमें -यं में तथा उत्तर और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें -ये मे होता है।

उदाहरण

संस्कृत	गिर०	काल०	शह०	मान०	धौ०	जौ०	स्त० अ०	ल० शि० अ०
	परिसायं	पलिसाये	परिषयं	परिषये		पलिसायं		

अपवाद—

(क) अन्तिम अनुस्वारके लोपसे पूर्ववर्ती स्वरका दीर्घ हो जाता है, जैसे—परिसाया (धौ० अ०)।

२. सर्वनाम

(१) अशोकके अभिलेखोंकी भाषा प्राचीन संस्कृत और परवर्ती प्राकृतोंके बीचकी है, अतः इसके सर्वनाम शब्दोंके रूप संस्कृतके सर्वनाम शब्दोंके रूपोंसे प्रायः मिलते-जुलते हैं। परन्तु उत्तम पुरुष सर्वनाम अफ- और मध्यम पुरुष सर्वनाम तुफ- इन अभिलेखोंकी अपनी विशेषता है। विभिन्न लिङ्गोंमें सर्वनाम शब्दोंके भेद स्पष्ट नहीं हैं। अतः एक ही रूप प्रायः विविध रूपोंमें प्रयुक्त पाया जाता है। सम्बन्धवाचक सर्वनामका आदिम य- पूर्वी अभिलेखोंमें लुप्त हो जाता है; किन्तु कभी इसका परिवर्तन ज- में नहीं होता, जैसा कि परवर्ती प्राकृतोंमें पाया जाता है।

(२) उत्तम पुरुष सर्वनामके रूप : इसके विशिष्ट रूप कर्ता एकवचनमें हकं; कर्ता बहुवचनमें मये; करण और अपादान एकवचनमें आधार मम और बहुवचनमें अफ- आदि हैं। कुछ रूपोंमें आदिम ह विशेष ध्यान देने योग्य है।

(अ) कर्ता एकवचन : गिरनार, शहबाजगढी और मानसेहराके शिला अभिलेखोंमें संस्कृत रूप अहं सुरक्षित है, यद्यपि मानसेहरामें अअं रूप भी पाया जाता है। दूसरे अन्य सभी संस्करणोंमें हकं रूप मिलता है।

(आ) कर्म एकवचन : स्तम्भ अभिलेखोंमें म रूप मिलता है।

(इ) करण एकवचन :

(क) मया रूप गिरनार, शहबाजगढी, मानसेहरा, ब्रह्मगिरि और एर्रगुडिके अभिलेखोंमें पाया जाता है।

(ख) मइया रूप काल्सी, धौली, जौगड, टोपरा और बैराटके अभिलेखोंमें पाया जाता है।

(ग) में रूप काल्सी, धौली, रधिया, मेरठ, एर्रगुडि, गोविमठ, पालकगुंडि और राजुलमडगिरिके अभिलेखोंमें मिलता है।

(घ) ममिया रूप केवल एक बार टोपरामें प्राप्त होता है।

(ङ) ममाये रूप केवल पृथक् धौली अभिलेखमें उपलब्ध होता है।

(च) ममियाये रूप केवल पृथक् जौगड अभिलेखमें मिलता है।

(छ) हमियाये रूप केवल भाब्रु अभिलेखमें पाया जाता है।

(ई) अपादान एकवचन : ममते रूप पृथक् धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें पाया जाता है।

(उ) सम्बन्ध एकवचन :

(क) शुद्ध संस्कृत रूप मम गिरनार, काल्सी, धौली और जौगडके शिला अभिलेखों तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें मिलता है।

(ख) मअ रूप पश्चिमोत्तर (शहबाजगढी और मानसेहरा)के अभिलेखोंमें पाया जाता है।

(ग) मे रूप शिला अभिलेखों, लघु शिला अभिलेखों तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें मिलता है।

(घ) अपवाद रूपसे एक बार पृथक् जौगड अभिलेखमें मम रूप दृष्टिगोचर होता है।

(ङ) मम का अन्तिम स्वर दीर्घ होकर ममा रूप काल्सी, धौली, टोपरा और मेरठके अभिलेखोंमें मिलता है।

(च) हमा रूप भाब्रु अभिलेखमें उपलब्ध होता है।

(ऊ) कर्ता बहुवचन : मये रूप पृथक् धौली तथा जौगड अभिलेखोंमें मिलता है।

(ए) कर्म बहुवचन : अफे रूप पृथक् धौली अभिलेख तथा अफेनि रूप पृथक् जौगड अभिलेखमें उपलब्ध होता है।

(ऐ) सम्बन्ध बहुवचन : ने रूप काल्सी शिला अभिलेख तथा पृथक् धौली और जौगड शिला अभिलेखोंमें मिलता है; अफा का रूप केवल पृथक् धौली शिला अभिलेखमें मिलता है।

(ओ) अधिकरण बहुवचन : अफेसु रूप पृथक् धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें पाया जाता है।

(३) मध्यम पुरुष सर्वनाम : तुफ- मूल।

(अ) कर्ता बहुवचन : तुफे रूप पृथक् धौली, जौगड शिला अभिलेखों तथा सारनाथ लघु स्तम्भ अभिलेखमें; प्रे रूप केवल पृथक् जौगड शिला अभिलेखमें।

(आ) कर्म बहुवचन : तुफेनि रूप केवल पृथक् जौगड शिला अभिलेखमें।

(इ) करण बहुवचन : फेनि रूप पृथक् धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें।

(ई) सम्प्रदान बहुवचन : वे रूप मास्की लघु शिला अभिलेखमें।

(उ) सम्बन्ध बहुवचन : तुफाक रूप पृथक् धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें; तुफाक रूप सारनाथ लघु स्तम्भ अभिलेखमें; तुपक रूप रूपनाथ लघु शिला अभिलेखमें।

(ऊ) अधिकरण बहुवचन : तुफेसु रूप पृथक् धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें।

(४) अन्य पुरुष सर्वनाम पुल्लिङ्ग : त- मूल।

(अ) कर्ता एकवचन : सो रूप गिरनार और शहबाजगढी शिला अभिलेख; से काल्सी, मानसेहरा, धौली, जौगड शिला अभिलेख; लघु शिला अभिलेख तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें।

(क) सा रूप एक बार गिरनार शिला अभिलेखमें।

(ख) स रूप शहबाजगढीमें एक बार।

(ग) पे और शे रूप काल्सी शिला अभिलेखमें।

(घ) ते रूप पृथक् धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें।

(आ) कर्म एकवचन :

(क) सो रूप गिरनार शिला अभिलेखमें।

(ख) तं रूप काल्सी, शहबाजगढी और मानसेहरा शिला अभिलेखोंमें।

(इ) करण एकवचन :

(क) तेन रूप शिला अभिलेखों तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें।

(ख) तेना रूप कालसी शिला अभिलेखमें।

(ई) सम्प्रदान एकवचन :

(क) पश्चिमीय (गिरनार) शिला अभिलेखमें -य में अन्त होता है, जैसे—ताय।

(ख) अन्य अभिलेखोंमें -ये मे अन्त होता है, जैसे, कालसी, शहबाजगढ़ी तथा मानसेहरा शिला अभिलेखोंमें।

(उ) अपादान एकवचन : तफा और ता रूप कालसी शिला अभिलेखमें पाये जाते हैं।

(ऊ) सम्बन्ध एकवचन :

(क) तस रूप शिला अभिलेखोंमें।

(ख) तसा रूप कालसी शिला अभिलेखमें।

(ग) तश तथा तआ रूप कालसी अभिलेखमें।

(ए) अधिकरण एकवचन :

(क) पश्चिमी (गिरनार) अभिलेखमें अन्त -म्हि में होता है, जैसे—तम्हि।

(ख) अन्य अभिलेखोंमें अन्त -सि में होता है, जैसे, तसि शहबाजगढ़ी, मानसेहरा, धौली तथा जौगड शिला अभिलेखोंमें।

(ग) तशि रूप केवल कालसी अभिलेखमें।

(ऐ) कर्ता बहुवचन :

(क) ते रूप शिला अभिलेखों तथा लघु शिला अभिलेखोंमें।

(ख) से रूप धौली तथा दाक्षिणात्य।

(ओ) करण बहुवचन : -हि में अन्त होता है, जैसे —तेहि रूप कालसी शिला अभिलेखमें।

(औ) सम्प्रदान बहुवचन : -हि में अन्त होता है, जैसे—तेहि रूप गिरनार, कालसी और मानसेहरामें पाया जाता है।

(अं) सम्बन्ध बहुवचन :

(क) -सं रूप गिरनार, जौगड, लौरिया अर०, लौरिया नंद०, रामपुरवामें पाया जाता है, यथा तेसं।

(ख) -षं रूप कालसी, शहबाजगढ़ीमें, यथा, तेषं।

(ग) -ष कभी -नं मे बदल जाता है, यथा, तानं।

(घ) अपवाद रूपसे अन्तिम अनुस्वारका लोप हो जाता है। उदाहरणार्थ, तेस (गिरनार, पृथक् धौली अभिलेख; तेष (शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।

(अः) अधिकरण बहुवचन : -सु रूप मिलता है। उदाहरणार्थ— तेसु (स्तम्भ अभिलेख)।

(५) अन्य पुरुष सर्वनाम स्त्री-लिङ्ग : ता- मूल (कर्तामें सा-)।

(अ) कर्ता एकवचनमें -आ रूप मिलता है, जैसे, सा गिरनार और कालसीमें; स शहबाजगढ़ी और मानसेहरामें।

(आ) षा रूप कालसीमें पाया जाता है।

(इ) कर्म एकवचन : -अं रूप मिलता है, जैसे, तं (स्तम्भ अभिलेख)।

(ई) सम्प्रदान एकवचनमें -ये रूप, जैसे, ताये (स्तम्भ अभिलेख)।

(उ) कर्म बहुवचनमें -अ (=आ) रूप मिलता है, जैसे, त (=ता) शहबाजगढ़ी और मानसेहरा।

(६) अन्यपुरुष सर्वनाम नपुसक-लिङ्ग, त (अथवा स) मूल।

(अ) कर्ता और कर्म एकवचन :

(क) त रूप गिरनार और कालसीमें।

(ख) तं रूप शहबाजगढ़ी, धौली, जौगड, स्तम्भ अभिलेख (केवल कर्म), लघु शिला स्तम्भ (केवल कर्म)।

(ग) से रूप कालसी, मानसेहरा, धौली, जौगड, स्तम्भ अभिलेख, लघु शिला अभिलेखोंमें। गिरनारमें अपवाद रूपसे।

(घ) षे रूप कालसीमें।

(ङ) सो और स रूप शहबाजगढ़ीमें।

(आ) कर्ता और कर्म बहुवचन :

(क) -नि रूप पृथक् धौली अभिलेख तथा स्तम्भ अभिलेखोंमे मिलता है, जैसे—तानि।

(ख) य रूप शहबाजगढ़ी और ये मानसेहरामें सम्भवतः पुल्लिङ्ग हैं।

(७) सर्वनाम मूल न-

(अ) कर्म बहुवचन पुल्लिङ्ग : ने रूप गिरनारमें।

(आ) कर्म बहुवचन नपुंसक-लिङ्ग : नानि रूप गिरनार और स्तम्भ अभिलेखोंमें।

(८) संकेतवाचक एतद् : पुल्लिङ्ग (मूल एस- अथवा एतक-)

(अ) कर्ता एकवचन :

(क) एसा रूप गिरनार, धौली, स्तम्भ अभिलेखोंमें।

(ख) एसे रूप कालसी अभिलेखमें।

(ग) एषे रूप कालसी, शहबाजगढ़ी और मानसेहरामें।

(घ) एष रूप कालसी और मानसेहरामें।

(आ) करण एकवचन :

(क) -न रूप, यथा एतकेन शहबाजगढ़ी, मानसेहरा, धौली, जौगड अभिलेखोंमें; एतेन स्तम्भ अभिलेखमें।

(ख) अन्तिम -अ का दीर्घ हो जाता है, जैसे, एतकेना कालसी अभिलेखमें।

(इ) सम्प्रदान एकवचन :

(क) -य रूप पश्चिमी और दक्षिणी अभिलेखोंमें, जैसे—एताय, एतकाय गिरनार और एर्रगुडि अभिलेखोंमें।

(ख) -ये अन्य अभिलेखोंमें, जैसे एताये शहबाजगढ़ी, मानसेहरा, कालसी, धौली, जौगड, स्तम्भ अभिलेख; एतकाये, शहबाजगढ़ी, मानसेहरा, कालसी, धौली और जौगड अभिलेखोंमें।

(ई) सम्बन्ध एकवचन—इसमें मूल एति- हो जाता है :

(क) एतिषा रूप कालसीमें।

(ख) एतिस रूप शहबाजगढ़ी और मानसेहरामें।

(उ) अधिकरण एकवचन :

(क) -म्हि रूप पश्चिमी अभिलेखमें, जैसे—एतम्हि (गिरनार)।

(ख) -सि रूप पूर्वीय अभिलेखोंमें, जैसे—एतसि (पृथक् धौली और जौगड अभिलेख)।

(ऊ) कर्ता बहुवचन :

(क) एते रूप गिरनार, पृथक् धौली और स्तम्भ अभिलेखोंमें।

(ख) एत रूप शहबागढी और मानसेहरामें।

(ए) अधिकरण बहुवचन, -सु रूप, यथा एतेसु (स्तम्भ अभिलेखोंमें)।

(९) संकेतवाचक सर्वनाम एतद् स्त्री-लिङ्ग : मूल एसा अथवा एतका।

(अ) कर्ता एकवचन -आ रूप प्रायः; -अ पश्चिमोत्तरमें।

(क) एसा रूप गिरनार शिला अभिलेख तथा स्तम्भ अभिलेखोंमें।

(ख) एष रूप कालसी, शहबाजगढ़ी और मानसेहरा अभिलेखोंमें।

(ग) एता (त) का पृथक् जौगड अभिलेखमें।

(घ) हेसा रूप एर्रगुडि अभिलेखमें।

(१०) संकेतवाचक सर्वनाम एतद् नपुंसक लिङ्ग : मूल एत- अथवा एस-।

(अ) कर्ता एकवचन :

(क) -अ अथवा -अं रूप, जैसे—एत अथवा अ (गिरनार, शहबाजगढी और मानसेहरा)।

(ख) एस अथवा एसा रूप (गिरनार, धौली, जौगड, लघु शिला अभिलेख और स्तम्भ अभिलेख)।

(ग) ए रूप, जैसे, एसे अथवा एषे (कालसी, शहबाजगढी, मानसेहरा, वैराट)।

(घ) एतके (शहबाजगढ़ी)।

(आ) कर्म एकवचन : -अ अथवा अं में अन्त होता है :

(क) एत (गिरनार)।

(ख) एवं (धौली, जौगड, स्तम्भ अभिलेख)।

(इ) करण एकवचन : -न, -ना अथवा -नि मे अन्त होता है :

(क) एतेन (शहबाजगढी)।

(ख) एतिना (रूपनाथ)।

(ग) एतेनि (भाब्रु)।

(ई) सम्प्रदान एवचन : -य में अन्त होता है :

(क) एतिय (रूपनाथ)।

(ख) एताय (ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर)।

(उ) कर्ता, कर्म बहुवचन— -नि में अन्त होता है :

(क) एतानि (कालसी, शहबाजगढी, मानसेहरा, जौगड तथा स्तम्भ अभिलेख)।

(११) संकेतवाचक सर्वनाम इदं : पुल्लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन :

(क) अयं (गिरनार, कालसी, शहबाजगढ़ी, मानसेहरा, जौगड, लघुशिला अभिलेख)।

(ख) अपवाद रूपसे पश्चिमोत्तरके अभिलेखों (शहबाजगढी और मानसेहरा) में अयि रूप भी मिलता है।

(ग) रूपनाथ और मास्कीमें अन्तिम अनुस्वारका लोप हो जाता है, जैसे—इय।

(आ) कर्म एकवचन : इम अथवा इमं रूप (स्तम्भ अभिलेख)।

(इ) करण एकवचन :

(क) इमिना (गिरनार, ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर, एर्रगुडि)।
(ख) इमेन (जौगड)।
(ई) सम्प्रदान एकवचन : इमाये (धौली, रूपनाथ)।
(उ) सम्बन्ध एकवचन :
(क) इमस (गिरनार, मानसेरा, धौली)।
(ख) इमशा (कालसी)।
(ग) इमिस (शहबाजगढ़ी)।
(ऊ) अधिकरण एकवचन : इमम्हि (गिरनार)।
(ए) कर्ता बहुवचन : इमे (गिरनार, कालसी, मानसेहरा, धौली, टोपरा, ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर, जटिंग रामेश्वर)।
(ऐ) करण बहुवचन : इमेहि (धौली, जौगड)।

(१२) संकेतवाचक सर्वनाम इद : स्त्री-लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन—अयं और इयं :
(क) अय (गिरनार)।
(ख) इयं (गिरनार, कालसी, मानसेहरा, लौरियानन्द०, बराबर गुहा)।
(ग) अय और अयि (शहबाजगढी और मानसेहरा)।
(आ) कर्म एकवचन : इमं (स्तम्भ अभिलेख)
(इ) सम्प्रदान एकवचन :
(क) इमाय (गिरनार, कालसी)।
(ख) इमाये (मानसेहरा, धौली)।
(ग) इमि (शहबाजगढ़ी)।
(ई) अधिकरण एकवचन : इमायं (दाक्षिणात्य अभिलेख)।

(१३) संकेतवाचक सर्वनाम—इदं : नपुंसक-लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन :
(क) इदं (गिरनार, शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।
(ख) अयं (गिरनार)।
(ग) इयं (कालसी, शहबाजगढ़ी, मानसेहरा, धौली, जौगड, लघु शिला अभिलेख, स्तम्भ अभिलेख)।
(घ) अपवादरूपसे अन्तिम अनुस्वारका लोप हो जाता है, जैसे—इय (दक्षिण, मानसेहरा); इद (गिरनार, शहबाजगढ़ी)।
(ङ) पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें इमं, इम और इयो रूप भी पाये जाते हैं।
(आ) कर्म एकवचन :
(क) इदं (गिरनार)।
(ख) इमं (कालसी, शह०, मान०, धौ०, जौ०, लघु शि० अ०)।
(इ) कर्ता बहुवचन : इमानि (स्तम्भ अभिलेख)।

(१४) सम्बन्धवाचक सर्वनाम यद्-पुल्लिङ्ग : पूर्वीय अभिलेखोंमें आदिम य का प्रायः लोप हो जाता है; पश्चिमी (गिरनार) अभिलेखमें यह बना रहता है।

(अ) कर्ता एकवचन :
(क) -ओ रूप पश्चिम और पश्चिमोत्तरके अभिलेखोंमें, जैसे—यो (गिरनार, शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।
(ख) -ये रूप (कालसी, मानसेहरा, धौली, जौगड, स्तम्भ अभि०)।
(आ) करण एकवचन :
(क) -न रूप, यथा, येन (काल०, शह०, मान०, स्त० अ०)।
(ख) एन रूप (टोपरा, पृथक् धौली तथा जौगड)।
(इ) सम्बन्ध एकवचन :
(क) -स रूप, यथा, यस (गिर०, शह०, मान०)।
(ख) अस (धौली, जौगड)।
(ग) अशा (कालसी)।
(ई) कर्ता बहुवचन :
(क) ये (गिर०, काल०, शह०, मान०, धौ०, जौ०, स्त० अ०)।
(ख) या (रूपनाथ)।
(ग) ए (कालसी, मानसेहरा, धौली, जौगड, जटिंग०)।
(उ) सम्बन्ध बहुवचन :
(क) -सं, षं और येसं रूप (गिरनार)।
(ख) येषं (कालसी, मानसेहरा)।

(ग) येष (शहबाजगढ़ी)।

(ऊ) अधिकरण बहुवचन— -शु, -सु और षु रूप :

(क) येशु (कालसी)।

(ख) येसु (शहबाजगढी)।

(ग) येषु (मानसेहरा)।

(१५) सम्बन्धवाचक सर्वनाम यद्—स्त्री-लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन : -आ और -य में अन्त होता है·

(क) या रूप (धौली, टोपरा)।

(ख) य रूप (शहबाजगढी, मानसेहरा)।

(ग) य् का लोप : आ (पृथक् धौली, जौगड)।

(१६) सम्बन्धवाचक सर्वनाम यद् नपुंसक लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन :

(क) य (गिरनार, एर्रगुडि)।

(ख) यं (शह०, मान०, एर्र०)।

(ग) ये (काल०, मान०, स्तम्भ अभिलेख)।

(घ) य् का लोप : ए (काल०, धौ०, जौ०, ल० शि० अ०, स्त० अ०)।

(ङ) -अ और अं रूप (कालसी)।

(आ) कर्म एकवचन :

(क) य अथवा यं रूप (गिर०, काल०, शह०, मान०, ल० शि० अ०)।

(ख) अं (कालसी, धौली, जौगड, सिद्धपुर)।

(ग) ए (कालसी, मानसेहरा)।

(घ) यो (पु०) रूप (शह०, मान०)।

(इ) कर्ता बहुवचन :

(क) यानि (गिरनार, स्तम्भ अभिलेख)।

(ख) आनि (धौली, जौगड)।

(१७) प्रश्नवाचक सर्वनाम पुल्लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन : (-ओ तथा -ए में अन्त होता है)

(क) को- चि (गिरनार)।

(ख) के- चा (धौली, जौगड)।

(ग) के -छ (कालसी)।

(घ) के -छि (मानसेहरा)।

(ङ) अपवादरूप -अ: क- चि (शहबाजगढी)।

(आ) करण एकवचन :

(क) केन -पि (सारनाथ)।

(ख) किना [किनसु] (टोपरा)।

(इ) अपादान एकवचन : अ- कस्मा (पृथक् धौली, जौगड)।

(ई) कर्म बहुवचन : -आनि, यथा, कानि (स्तम्भ अभिलेख)।

(१८) प्रश्नवाचक सर्वनाम नपुंसकलिङ्ग :

(अ) कर्ता और कर्मकारक एकवचन :

(क) कि अथवा किं (गिर०, काल०, शह०, मान० धौ०, जौ० स्तम्भ अभिलेख, ल० शि० अ०)।

(ख) कं (गिरनार, धौली, जौगड)।

(ग) के-चि [=किंचि] (भाब्रु)।

(घ) किमं और किंमं (स्तम्भ अभिलेख कर्मकारकमें)।

(आ) कर्ता और कर्म बहुवचन : कानि (काल० धौ०, जौ०, स्त० अ०)।

(१९) सार्वनामिक विशेषण अन्य-पुल्लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन : प्रायः -ए में अन्त होता है :

(क) अञे (गिरनार)।

(ख) अञे (शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।

(ग) अंने (काल०, धौ०, जौ०, स्त० अ०)।

(घ) अपवाद रूपसे अन्तिम ए इ में परिवर्तित हो जाता है, जैसे—अञि (शहबाजगढ़ी)।

(आ) सम्प्रदान एकवचन -य और -ये मे अन्त होता है :

(क) अञाय (गिरनार)।

(ख) अञये (शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।

(ग) अंनाये (कालसी, धौली, जौगड)।

(इ) सम्बन्ध एकवचन :

(क) अंञस (गिरनार)।

(ख) अञस (शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।

(ग) अपवाद रूपसे अन्तिम -अ -आ में परिवर्तित हो जाता है, जैसे—अनपा (कालसी)।

(ई) अधिकरण एकवचन : -म्हि में अन्त, जैसे अञम्हि (गिरनार)।

(उ) कर्ता बहुवचन : -ए में अन्त होता है;

(क) अञे अथवा अञे (गिरनार, शहबाजगढ़ी, मानसेहरा)।

(ख) अंने (कालसी, धौली, स्तम्भ अभिलेख)।

(ऊ) सम्बन्ध बहुवचन : -नं में अन्त, जैसे अंनान (टोपरा)।

(ए) अधिकरण बहुवचन : -सु मे अन्त, जैसे अंनेसु (धौ०, टोप०)।

(२०) सार्वनामिक विशेषण अन्य- नपुंसकलिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन : पश्चिमीय (गिर०) और पश्चिमोत्तरी (शह०, मान०) अभिलेखोंमें -अ अथवा -अं तथा अन्य अभिलेखोंमें -ए रूप मिलते हैं :

(क) अञ (गिरनार)।

(ख) अञ (शहबाजगढ़ी)।

(ग) अने (काल०, धौ०, जौ०, प्रयाग)।

(घ) अञे (मानसेहरा)।

(ङ) अपवाद रूपसे अञे (गिरनार)।

(च) अपवाद रूपसे अन (टोपरा)।

(आ) कर्ता तथा कर्म बहुवचन : -नि रूप प्रायः सर्वत्र :

(क) अञानि (गिरनार, शह०, मान०)।

(ख) अनानि (काल०, धौ०, जौ०, स्त० अ०)।

(२१) सार्वनामिक विशेषण सर्व- पुल्लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन : -ए रूप : सवे (स्त० अ०)।

(आ) कर्म एकवचन : -अं रूप : सवं (काल०, धौ०, जौ०) स्रवं (मान०)।

(इ) करण एकवचन : -न रूप : सवेन (पृथक् धौ०, जौ०) : सवेण (अपवाद रूपसे मूर्द्धन्यीकरण)।

(ई) सम्बन्ध एकवचन : -स रूप : सवस (पृथक् धौ०, जौ०)।

(उ) अधिकरण एकवचन : -ए पश्चिम तथा -मि उत्तरमें :

(क) सवे (गिरनार)।

(ख) सवसि (टोपरा)।

(ऊ) कर्ता बहुवचनः -ए सर्वत्र : सवे (शि० अ०)।

(ए) अधिकरण बहुवचन : -सु प्रायः सर्वत्र; -षु पश्चिमोत्तरमें :

(क) सवेसु (गिर०, धौ०, जौ०, काल०, टोप०, सार०)।

(ख) सवेषु (शह०, मान०)।

(२२) सार्वनामिक विशेषण सर्व- स्त्री-लिङ्ग :

(अ) कर्ता एकवचन : -आ रूप : षवा (कालसी)।

(२३) सार्वनामिक विशेषण सर्व- नपुंसक-लिङ्ग:

(अ) कर्ता एकवचन : -अं रूप पश्चिम और पश्चिमोत्तर; -ए रूप अन्यत्र :

(क) सर्वं (गिरनार)।

(ख) स्रवं (शह०, मान०)।

(ग) सवे (काल०, धौ०, जौ०)।

(घ) सवें (बैराट)।

(ङ) अपवाद -अ : सव (काल०, एर०)।

(च) अपवाद -ए : सत्रे (शाह०, मान०)।

(आ) कर्म एकवचन : -अं रूप सर्वत्र : सवं (गिर०, काल०, शाह०, धौ०)।

(२४) सार्वनामिक विशेषण एकतर-

(अ) अधिकरण एकवचन :

(क) -म्हि रूप पश्चिममें, यथा, एकतरम्हि (गिरनार)।

(ख) -ए रूप पश्चिमोत्तरमें, यथा, एकतरे (शाह०)।

(ग) -सि रूप उत्तरमें, यथा, एकतलषि (कालसी)।

(२५) सार्वनामिक विशेषण एकत्य-

(अ) कर्ता बहुवचन पुल्लिङ्ग :

(क) -आ : एकचा (गिरनार)।

(ख) -इया : एकतिया (काल०, धौ०, जौ०)।

(ग) -अ : एकत (शाहबाजगढ़ी)।

(२६) सार्वनामिक विशेषण इतर- :

(अ) कर्ता एकवचन नपुंसक-लिङ्ग : -ए रूप :

(क) इतले (कालसी)।

(ख) इतरे (मानसेहरा)।

(२७) सार्वनामिक विशेषण उभय :

(अ) सम्बन्ध बहुवचन : -स रूप :

(क) उभये सं (कालसी, मानसेहरा)

(ख) अपवादमें अनुस्वारका लोप, यथा, उभयेस (शाहबाजगढ़ी)

---

३. अङ्क

१. संख्यावाचक

(१) एक : पुल्लिङ्ग तथा नपुंसक मूल एक- :

(अ) कर्ता एकवचन पुल्लिङ्ग :

(क) -ओ रूप पश्चिममें, यथा, एको (गिरनार)।

(ख) -ए रूप अन्यत्र, यथा, एके (काल०, मान०, धौ०, जौ०, सार०)।

(ग) इकिके (सारनाथ)।

(आ) कर्मकारक एकवचन नपुंसक : -अं रूप, यथा, एकं (शाह०, मान० एर्र०)।

(इ) करण एकवचन : -न रूप, यथा, एकेन (पृथक् धौ०, जौ०)।

(२) एक : स्त्री-लिंङ्ग मूल इका- (=एका)।

(अ) कर्ता एकवचन : -आ रूप, यथा, इका (सारनाथ)।

(आ) कर्म एकवचन : -अं रूप, यथा, इकं (सारनाथ)।

(३) दो : पुल्लिङ्ग तथा नपुंसक-लिङ्ग : मूल द्व अथवा दुव :

(अ) कर्ता पुल्लिङ्ग :

(क) -ओ रूप पश्चिममें, यथा, द्वो (गिरनार)।

(ख) -ए रूप अन्यत्र, यथा, दुवे (कालसी, शाह०, मान०, धौ०, जौ०)।

(ग) अपवाद रूपसे -ए का -इ में परिवर्तन, यथा, दुवि (शाहबाजगढ़ी)।

(आ) कर्ता नपुंसक : -ए रूप, यथा, दुवे (सहसराम)।

(इ) करण : -हि रूप, यथा, दुवेहि (स्त० अ०)।

(४) दो : स्त्री-लिङ्ग : मूल द्व- अथवा दुव- ।

(अ) कर्ताकारक :

(क) -ए रूप पश्चिममें, यथा, दुवे (गिरनार)।

(ख) -इ रूप पश्चिमोत्तरमें, यथा, दुवि (शाह०)।

(५) तीन : पुल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग : मूल ति- अथवा त्रि :

(अ) कर्ता पुल्लिङ्ग

(क) -ई रूप पश्चिमीय अभिलेखमें, यथा—ती अथवा त्री (गिरनार)।

(ख) -ओ रूप पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें, यथा—त्रयो (शाहबाजगढ़ी)।

(आ) कर्ता और कर्म नपुंसक-लिङ्ग : -नि रूप पाया जाता है :

(क) तिनि (काल्सी, मानसेहरा)।

(ख) तिंनि (काल्सी, धौली, जौगड)।

(६) तीन : स्त्री-लिङ्ग : मूल ति-

(अ) अधिकरण : -सु रूप, यथा—तिसु (स्त० अ०)।

(७) चार · पुल्लिङ्ग और नपुंसक : मूल : चतु

(अ) कर्ता पुल्लिङ्ग : -ओ रूप, यथा, चत्पारो (गिरनार)।

(आ) कर्म पुल्लिङ्ग : -ए रूप, यथा, चतुरे (शाह०, मान०)।

(इ) कर्ता नपुसक : -इ रूप, यथा, चतालि (काल्सी)।

(८) पाँच : मूल : पंच :

(अ) अधिकरण : -सु रूप, यथा, पंचसु (गिर०, काल०, धौ०, जौ०);

· -षु रूप, यथा, पंचषु (शाह०, मान०)।

(९) छः : मूल ष- :

(अ) अधिकरण : -षु रूप, यथा, षषु (शाह०, मान०, काल०)।

(१०) आठ : मूल अठ।

(अ) -अ रूप, यथा, अठ (काल०, शाह०, मान०)

(११) दस : मूल दस।

(अ) -अ रूप, यथा, दस (गिर, काल०, धौ०, जौगड);

दश (शाह०, मान०)।

(१२) बारह : मूल

(अ) -अ रूप

(क) द्वादस (गिरनार)।

(ख) बदयस (सहसराम)।

(ग) दुआडस (काल्सी, टोपरा, रुपनाथ, भाब्रु)

(घ) दुआदस (धौली, जौगड)।

(ङ) दुभदश तथा दुअडश (मानसेहरा)

(च) दुवाळस (लौरिया नन्दनगढ)

(१३) तेरह : मूल

(अ) -अ रूप

(क) त्रेदस (गिरनार)।

(ख) तेदस (काल्सी, धौली, जौगढ)।

(ग) त्रेडस (मानसेहरा)।

(घ) तोदश (शाहबाज गढ़ी)।

(१४) चौदह : मूल

(अ) -अ रूप

(क) चोदस (निग्लीव स्त. अ.)।

(१५) उन्नीस : मूल

(अ) -इ रूप

(क) एकुनवीसति (भाब्रु)।

(१६) बीस : मूल

(अ) -इ रूप

(क) वीसति (रुम्मिनदेई, निग्लीव)।

(१७) पच्चीस : मूल

(अ) -इ रूप

(क) पंनवीसति (स्तम्भ अभिलेख)।

(१८) छब्बीस : मूल
(अ) -इ रूप
(क) सडुवीसति (स्त. अ.)।

(१९) सत्ताइस : मूल
(अ) -इ रूप
(क) सतवीसति (टोपरा)

(२०) छप्पन : मूल
(अ) -आ रूप
(क) सपना (सहसराम)

(२१) सौ : मूल सत-
(अ) कर्ता पुल्लिङ्ग बहुवचन : -आ रूप, यथा, सता (ल० शि० अ०)।
(आ) कर्म नपुंसक बहुवचन : -नि रूप, यथा, सतानि अथवा शतनि (शि० अ०)।
(इ) करण बहुवचन : -हि रूप, यथा, सतेहि अथवा शतेहि (शि० अ०)।
(ई) अधिकरण बहुवचन : षु रूप, यथा, षतेषु (कालसी); शतेषु (शाह०); सतेषु (मानसेहरा)।

(२२) हजार : मूल सहस-
(अ) अधिकरण बहुवचन : -सु रूप
(क) सहसे सु (पृथक् जौगड)।
(ख) सहसे सुं (पृथक् धौली)।

(२३) लाख : मूल सत-सहस-
(अ) कर्ता एकवचन : -ए रूप
(क) शत-सहस्रे (शाह०, मान०)।
(ख) षत-सहसे (कालसी)।
(आ) कर्ता बहुवचन : -नि रूप
(क) सत-सहस्रानि (गिरनार)।
(ख) सत-सहसनि (शाहबाजगढ़ी)।
(ग) सत-सहस्रनि (मानसेहरा)।
(घ) सत-सहसानि (कालसी, धौली, जौगड)।
(इ) अधिकरण बहुवचन : -सु रूप, यथा, सत-सहसेसु (स्त० अ०)।

२. क्रम वाचक
(१) चौदहवाँ : मूल
(अ) -आ रूप, चावुदसा (स्त० अ०)।
(२) पन्द्रहवाँ : मूल
(अ) -आ रूप
(क) पंनडसा (स्त० अ०)।
(ख) पंचदसा (कौशाम्बी -प्रयाग)।
(ग) पंनळसा (लौरिया अरराज, लौरिया नन्दनगढ़)।
(३) सौवाँ : मूल
(अ) -अ रूप
(क) शत- (शाह०, मान०)।
(ख) षत- (कालसी)।
(४) हजारवाँ : मूल
(अ) -आ रूप
(क) सहस्र- (शाह० मान०)।
(ख) षहष- (काल०)।

४. धातु-रूप

धातु-रूपोंके प्रयोगमें अशोकके अभिलेखोंपर संस्कृतका प्रचुर प्रभाव दिखायी पड़ता है। धातुओंके रूप प्रायः वैसे ही चलते हैं, जिस प्रकार संस्कृतमें, यद्यपि प्राकृतके नियमोंके अनुसार स्वर और व्यञ्जनके ध्वनियोंमें आवश्यक परिवर्तन हो जाते हैं। धातु-रूपोंके संचालनमें सरलीकरणकी प्रवृत्ति दिखायी पड़ती है। द्विवचनका प्रयोग बिलकुल बन्द हो गया और कर्मवाच्य प्रयोग केवल पश्चिमी (गिरनार) अभिलेखमें अवशेष रह गया। फिर भी इन अभिलेखोंमें धातु-रूप परवर्ती प्राकृतोंसे प्राचीन है। इसी प्रवृत्तिके कारण संस्कृतके दस धातु-गुणों के बदले प्रायः दो ही—भ्वादि (-अ) और चुरादि (-अय)—का प्रयोग पाया जाता है।

(१) वर्तमान सूचनात्मक : कर्तृवाच्य

(अ) उत्तम पुरुष एकवचन :—मि रूप सर्वत्र पाया जाता है।

(क) करोमि (गिरनार)।

(ख) करेमि (शाह०, मान०)।

(ग) पलक मामि (धौ०, जौ०)।

(घ) विदहमामि (स्त० अ०)।

(ङ) इच्छामि (ल० शि० अ०)।

(च) सुमि (ल० शि० अ०)।

(छ) अपवाद-नि रूप, यथा—पलकमानि (कालसी)।

(आ) अन्य पुरुष एकवचन :-ति रूप सर्वत्र मिलता है।

(क) इछति (काल०, शाह०, मान०, धौ० जौ०)।

(ख) पसति (गिरनार)।

(ग) देखति (स्त० अ०)।

(घ) होति (दक्षिणके अभिलेख)।

(ङ) अथि (रुम्मिन०, सहस०)।

(च) आनययति (एर्र०)।

(इ) उत्तम पुरुष बहुवचन : - म रूप

(क) सुसुम (एर्र)

(ई) अन्य पुरुष बहुवचन :-अन्ति रूप प्रायः सभी स्थानोंमें पाया जाता है। कहीं-कहीं अनुस्वारका लोप भी मिलता है।

(क) इछन्ति (का०, शाह०, मान०, धौ०, जौ०)।

(ख) लघंति (स्त० अ०)।

(ग) वपति (कालसी)।

(घ) व सति (शाह०, मान०)।

(ङ) कलेति (धौ०, जौ०)।

(च) अपवादः इछति (गिरनार)।

(छ) अपवाद : प्रायुणति (गिरनार)।

(२) वर्तमान सूचनात्मक : भाववाच्य

(अ) अन्य पुरुष एकवचन : ते रूप केवल गिरनारमे पाया जाता है। दूसरे स्थानोंमें तर्तृवाच्य रूप--ति मिलता है।

(क) करोते (गिरनार)।

(ख) कलेति (काल०, धौ०, जौ०)।

(ग) करोति (शाह०, मान०)।

(घ) अपवाद : करोति (गिरनार)।

(ङ) अपवाद : मंनते (धौली)।

(आ) अन्य पुरुष बहुवचन : —ते,—रे,—अन्ति रूप।

(क)-ते रूप : करोंते (केवल गिरनार)।

(ख)-रे रूप : अनुवतरे (गरनार)।

(ग) अनुवतन्ति (कालसी)।

(घ) अनुवटन्ति (शाह०)।

(३) वर्तमान हेतुमत् (लेट्) कर्तृवाच्य

(अ) उत्तम पुरुष एकवचन :—मि रूप सर्वत्र पाया जाता है।

(क) सुखापयामि (गिरनार)।

(ख) सुखायामि (काल०, शाह०, मान०, धौ०, जौ०)।

(ग) सावापयामि (स्त० अ०)।

(घ) अपवाद :—मी (ह्रस्व इ का दीर्घीकरण), जैसे, आवहामी (लौरिया नन्दनगढ़)।

(आ) अन्य पुरुष : एकवचन

(क)-अ रूप : मंञा (गिरनार)।

(ख)-तु रूप : सुसुषातु (कालसी)।

(ग)-दि रूप : हुवाति (सारनाथ)।

(इ) उत्तम पुरुष बहुवचन : (क)-म रूप : ठिपयम (मानसेहरा)।

(ई) मध्यम पुरुष बहुवचन :-था रूप

(क) निखियाथ (सारनाथ)।

(ख) विवासापयाथा (सारनाथ)।

(ग) लिखापयाथा (सहसराम)।

(उ) अन्य पुरुष बहुवचन

(क) -तु रूप : पलकमातु (कालसी)।

(ख) -वु रूप : निखमावु (धौली, जौगड)

(४) हेतुमत् : भाववाच्य

(अ) अन्य पुरुष बहुवचन

(क) -ते रूप केवल मानसेहरामें (परक्रमते)

(५) विधि : कर्तृवाच्य

(अ) उत्तम पुरुष एकवचन

(क) एयं (गिर०, मान० शह०)

(ख) गछेय (गिर०)

(ग) व्रचेय (श०)

(घ) येहं (काल०, धौ०, जौ०)

(ङ) एहं (अन्यत्र)

(च) अभ्युंनामयेह (टोप०)

(आ) अन्य पुरुष एकवचन

(क) अस, व (गिर०)

(ख) एभवे (गिर०)

(ग) उगछ (छे) (पृ० धौ०)

(घ) -एया (सर्वत्र) तिष्टेय (गिर०)

(ङ) निवटेया (काल०)

(च) दखेया (पृ० धौ०; जौ०)

(छ) अनुपटि पजेया (टोप०)

(ज) अभिगछेया (मास्की)

(झ) -या, सिया (शह० मान०, धौ०, जौ०, स्त० अ०, ल०, शि० अ०)

(ञ) -ति (सूचनार्थक) सियाति (काल०, शह०, मान०)

(ट) -वा, पापोवा (स्त० अ०)

(इ) उत्तम पुरुष : बहुवचन

(क) -एम : दीपयेम (गिर०, काल०)

: गछेम (पृ० धौ०, जौ०)

(ई) अन्य पुरुष : बहुवचन

(क) : उ : असु (गिर०, काल०, शह० मान०)

(ख) -एया (सर्वत्र) : वसेयु (शह०, मान, गिर०)

: हुवेयु (काल०)

: चलेयु (पृ० जौ०)

: पकमेयु (ब्रह्म०, सिद्ध०)

: सुनेयु (वगवर०)

(ग) -एयु (गिरनार छोड़कर सर्वत्र)

: वसेवु (काल०)

: चलेवु (पृ० धौ०)

: पवतयेवु (स्त० अ०)

: उपदहेवु (स्त० अ०)

: जानेवु (एर्र०)

(घ) -वु : यावु (सार०, ल० स्त० अ०)

(६) विधि भाववाच्य

(अ) अन्यपुरुष : एकवचन

(क) -य : पटिपजेय (केवल गिर०)

पटिपजेया (अन्य संस्करणोंमें कर्तृवाच्य—शह० मान०, काल०, धौ०)

(आ) अन्यपुरुष : बहुवचन (इच्छार्थक)

(क) -एर : सुसुसेर (केवल गिर०)

(ख) अपवाद : सुसुषेयुं (काल०)

: श्रुषेयु (शह०, मान०)

(७) आज्ञा कर्तृवाच्य

(अ) अन्यपुरुष : एकवचन

(क) -तु : होतु (काल०, धौ०, जौ०, स्त०, अ०, ल० शि० अ०)

: भोतु (शह०, मान०)

(आ) मध्यमपुरुष : बहुवचन

(क) -थ (सभी संस्करणोंमें)

: पटिवेदेथ (गिर०)

: देखथ (पृ० धौ०, जौ०)

: लिखापयथ (सहस०)

: निवेसयाथ (एर्र०)

(ख) अपवाद : -त

: लेखापेत (रूप०)

(इ) अन्यपुरुष : बहुवचन

(क) -अतु : युजतु (शि० अ०)

: अनुपटिपजतु (सा० अ०)

: जाणंतु (दाक्षिणात्य)

(ख) अपवाद : अनुस्वारका लोप

: नियातु (गिर०)

: मनतु (काल०)

: मञतु (शह०)

रु : सुणारु (गिर०)

(८) आज्ञा : भाववाच्य

(अ) अन्यपुरुष : एकवचन

(क) -तां : अनुविधियता (केवल गिरनार)

(ख) अपवाद : अनुविधियतु (शह०, मान०, काल० कर्तृवाच्य रूप पाया जाता है)।

(ग) इच्छार्थक -ता रूप: सुसुसता (केवल गिर०)

(घ) समुपातु (कालसी)

(ङ) सयूसतु (धौ०, जौ०)

(आ) अन्यपुरुष : बहुवचन

(क) र : अनुवतर (गिर०)

(ख) अपवाद : अनुवततु (काल० कर्तृवाच्य)

: वततु (शह०, धौ० कर्तृवाच्य)

(९) अपूर्णभूत : कर्तृवाच्य

(अ) अन्यपुरुष : एकवचन

(क) भू धातु : अहो (अभोत ?)

(१०) अद्यतनभूत : कर्तृवाच्य

(अ) उत्तमपुरुष : एकवचन

(क) -सं : हुसं (दाक्षिणात्य)

(ख) -स : हुस (एर्र०)

(आ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) -मि : निकमि (शाह०, मान०)
: निखमि (धौ०)
(इ) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -मु . ञयामु (गिरनार)
: निखमिसु (काल०, धौ०, जौ०)
: अभुवसु (शाह०, मान०)
: हुसु (स्त० अ०, ल० शि० अ०)
(ख) अपवाद : -अंसु, अहंसु (गिर०)
: षु, निक्रमिषु (शाह०, मान०)
मनिषु (काल०)

(११) अद्यतनभूत : हेतुमत् (लेट्)
(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -षु : मञिषु (शाह०, मान०)
(ख) -सु : अलोचयिसु (काल०, मान०, धौ०, जौ०)

(१२) अद्यतनभूत : भाववाच्य
(अ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) -था : निखमिथा (काल०)
: हुथा (टोप०)
: वढिथा (टोप०)
(ख) -ढा (मूर्द्धन्यीकरण) : निखमिठा (सोपारा)
(ग) कर्तृवाच्य (अन्यत्र)
: निक्रमि (शाह०, मान०)
: निखमि (धौली)

(१३) पूर्णभूत : कर्तृवाच्य
(अ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) : आहा (सर्वत्र)
(ख) अपवाद : अहति (शाह०)
: हहति (शाह०)

(१४) भविष्यत् : कर्तृवाच्य
टि० -स- का कभी-कभी -ह- में परिवर्तन हो जाता है।
(अ) उत्तमपुरुष : एकवचन
(क) -स अथवा -सं (पश्चिमी तथा पश्चिमोत्तरीय शिला अभिलेखों एवं स्त० अ० में)
: लिखापयिस (गिर०)
: पलिभसयिसं (स्त० अ०)
: कष (शाह०)
(ख) अपवाद : कपमि (मान०)
: कछामि (काल०)

(आ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) -मति ,-सति अथवा -षति (प्रायः सर्वत्र)
: आञपयिसति (गिर०)
: खमिसति (धौ०, जौ०)
: वढिशति (शाह०)
: वढिसति (स्त० अ०, वैराट, सहस० ल० शि० अ०)
: आनपयिसति (एर्र०)
: कषति (शाह०, मान०)
(ख) अपवाद -दाक्षिणात्य अभिलेखोंमें प्रायः -सतिमेंका अ स्वर -य- की उपस्थितिके कारण इ में परिवर्तित हो जाता है।
: वढिसिति (ब्रह्म०, सिद्ध०, जटि०)
: वढसिता (एर्र० ?)

विशेष रूप : कछति (काल०, धौ०, जौ०, स्त० अ०)
: भारवति (स्त० अ०)
: चघति (स्त० अ०)

(इ) मध्यमपुरुष : बहुवचन
(क) -सथा, इथ, ए सथ (पृ० जौ०)
(ख) -एहथ (पृ० धौ०)
(ग) आलाध यितथा (पृ० धौ०, जौ०)

(ई) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -संति, -शति अथवा—षंति रूप
: अनुसासि संति (गिर०, काल०)
: निखम्सिंति (धौ०, जौ०)
: अणपेशंति (शह०)
: कषंति (शह०)
: वढिसंति (स्त० अ०)
(ख) अपवाद : कछंति (काल०, धौ०, जौ०, स्त० अ०)
: छषंति (स्त० अ०)
: दाहति (स्त० अ०)
: होहति (टोप०)

(१५) भविष्यत् : भाववाच्य
(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -सरे : अनुवतिसरे (केवल गिर०)
(ख) अपवाद : अनुवतिसति (काल०, धौ०)
: अनुवतिशंति (शह०, मान०)

(१६) सूचनार्थक : कर्मवाच्य
(अ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) ति : पसवति (काल०, शह०)
: प्रसवति (मान०)
: खादियति (स्त० अ०)
(आ) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -रे : आरभरे (केवल गिर०)
(ख) अपवाद : अनुविधियति (काल०, स्त० अ०)
: आलभियति (मान०, धौ०, जौ०)

(१७) आज्ञा : कर्मवाच्य
(अ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) ता : अनुविधियता (केवल गिर०)
(ख) -तु : अनुविधियतु (शह०, मान०)
(आ) अन्य पुरुष : बहुवचन
(क) - अंतु : अनुविधियंतु (काल०)

(१८) विधि : कर्मवाच्य
(अ) अन्यपुरुष : एकवचन
(क) -या -दिसेया (भाब्रु० ल० शि० अ०)
(आ) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -यु अथवा वु : युजेयु (पृ० जौ०)
: युजेवु (पृ० धौ०)
(ख) -सु : हञयसु

(१९) अद्यतन भूत : कर्मवाच्य
(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन
(क) -सु : आरभिसु (गिर०, मान०)
: अरभयिसु (शह०)
: आल (–) भियिसु (काल०, धौ०, जौ०)

(२०) भविष्यत् : कर्मवाच्य

(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन

(क) -स्सरे : आदमिस्सरे (गिर०)

(ख) -संति : (अन्यत्र)

(ग) -स्सरे : ससुंसेर (गिर०)

(घ) -ष्यु : सुषुष्यु (काल०)

(ङ) -षयु : मशुषयु (मान०, एर्र०)

(२१) वर्तमान : भाववाच्य

(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन

(क) -रे : आरभरे (गिर०)

(ख) -इयरे : अनुविधियरे (गिर०)

(२२) भविष्यत् : कर्मवाच्य-भाववाच्य

(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन

(क) इसरे : आरभिसरे (गिर०)

(२३) इच्छार्थक : आज्ञा

(अ) अन्यपुरुष : एकवचन

(क) -ता : सस्रुसतार (गिर०)

(ख) -तु : सुसुमतु (धौ०, जौ०)

: सुश्रुषतु (शाह०, मान०)

(२४) इच्छार्थक : विधि

(अ) अन्यपुरुष : बहुवचन

(क) -र : सुसुसेर (गिर०)

(ख) -यु : सुसुषेयु (काल०)

(ग) -ष्यु : सुश्रुष्यु (शाह०, मान०)

(२५) इच्छार्थक : हेतुमत् (लेट्)

(अ) अन्यपुरुष : एकवचन

(क) -तु : सुसुषातु (काल०)

(२६) वर्तमान : शतृ कर्तृवाच्य

(अ) -अंत अथवा त : संत- (शि० अ०, स्त० अ०, ल० शि० अ०)

: कलत- (काल०)

: करत- (शाह०, मान०)

: अशत- (मान०)

(आ) अपवाद : करं (गिर०)

: करु (गिर०)

(२७) वर्तमान : शतृ भाववाच्य

(अ) -मान : सर्वत्र

: भुजमान- (गिर०)

: अदमान- (काल०, धौ०, जौ०)

: अशमन- (शाह०)

: अशत- * (कर्तृ०) (मान०)

: विजिनमन- (काल०, शाह०)

: अनुवेखमान- (टोप०)

: समान- (ब्रह्म० सिद्ध०)

(आ) अपवाद : -मीन

: सपटिपजिमीन- (पृ० धौ०)

: विपटिपादयमीन- (पृ० धौ०)

: -पातयंत- (कर्तृ०) (पृ० जौ०)

: पायमीव- (स्त० अ०)

: पकममीन- (सिद्ध० एर्र०, रूप०)

(इ) अपवाद : दन्त्यका मूर्द्धन्यीकरण (दाक्षिणात्य)
: पकममीण- (ब्रह्म०)

(२८) भूत कृदन्त : कर्मवाच्य

(अ) -त : मत- (शि० अ०, टोप०)
: प्रकंत (दाक्षिणात्य)
: पकंत (ल० शि० अ०)
: उपयित (एर्र०)
: प्रसंन- (गिर०)
: प्रसन- (शह० मान०)
: पपन- (काल०)
: उविजिन- (पृ० धौ०, जौ०)

(इ) अपवाद : कट (गिर० को छोडकर सर्वत्र)
: अपकट (स्त० अ०)
: व्यूट (रूप०, एर्र०)
: व्युथ (ब्रह्म०)
: दिन- (टोप०)
: दिन- (बराबर०)
: लध- (गिर०, काल०, शह-, मान०)
: मुढ- (शह०, धौ०, जौ०, सोपा०)
: पत- (स्त० अ०)
: अम्वथ (स्त० अ०)

(२९) भविष्यत् कृदन्त : कर्मवाच्य

(अ) -तव्य (पाश्चात्य तथा दाक्षिणात्य अ०)
: कतव्य (गिर०)
: द्रहितव्य (दाक्षिणात्य)

(आ) -तविय अथवा टविय (अन्यत्र)
: कटविय- (काल०, मान०, धौ०, जौ० टोप०)
: पुजेतविय (शह०, मान०)
: हतविय (स्त० अ०)
: देखितविय (ल० शि० अ०)

अनिय : वेदनिय- (काल०, शह०, मान०)
: अस्वासनिय- (पृ० जौ०)

(इ)- य (अधिकांशका अन्तर्भाव अथवा लोप पाया जाता है; कतिपयका तालव्यीकरण हो जाता है)।
: मंक- (गिर०, मास्की०)
: शक- (शह०, मान०)
: दुपटिवेख (स्त० अ०)
: सकिय (जौ०, रूप०, एर्र०)
: चकिय- (पृ० धौ०, जौ० सहस०, दाक्षिणात्य)
: कच- (गिर०)

(उ) अपवाद : कटविय (सिद्ध०, जटि०)
: विजेतविअ (शह०)
: कटव (शह०)
: संचलितव्य (पृ० जौ०)
: संचलितविय (पृ० धौ)
: ला (लि) खापेतवय (रूप०)
: विवासेतवाय (रूप०)
: इद्वितय- (पृ० जौ०)
: अवध्य (रधिया० में मुच्छ सुरक्षित)

(३०) क्रियार्थक क्रियायें (तुम् प्रत्यय)

(अ) कर्मकारक : -तु

: आराधेतु (गिर०)

(आ) सम्प्रदान : -तवे

: छमितवे (गिरनार)

: खमितवे (धौ०, जौ०)

: मेतवे (स्त० अ०)

: जापेतवे (ल० शि० अ०)

: आराधतवे (एर्र०)

(इ) अपवाद : दन्त्यका मूर्द्धन्यीकरण

: पलिहटवे (टोप०)

(३१) पूर्वकालिक क्रिया : क्त्वा प्रत्यय

संस्कृत भाषामें धातुके पूर्व उपसर्ग लगनेसे जो -क्त्वा और -य का भेद उत्पन्न होता है वह अशोकके अभिलेखमें नहीं पाया जाता। इन दोनोंमें -क्त्वाका ही उपयोग अधिक मिलता है। प्राकृतके प्रभावके कारण क्त्वाके कई परिवर्तित रूप उपलब्ध होते हैं।

(अ) -त्या : आरभित्या (गिर०)

(आ) -तु : सुतु (काल०, टोप०)

: जानितु (पृ० धौ०)

अपवाद : कटु (पृ० धौ०) मूर्द्धन्यीकरण

: कट (पृ० जौ०) ,,

(इ) -य : मछोय (=सन्त्या) (गिर०)

: मम्वय (शाह०, मान०)

अपवाद : अन्तिम अ का आ में परिवर्तन, यथा—

सनंधापयिया (मार०)

: तालव्यीकरण, यथा,

आगाच (रुम्मिन०, निग०)

: गुच्छका सुरक्षित रूप, यथा,

अधिगिच्य (भाब्रु०)

(ई) -ति : पश्चिमोत्तरीय अभिलेखोंमें :

: निठिति (शाह०)

: विजिनिति (शाह०)

: द्रशेति (मान०)

प्रथम खण्ड : शिला अभिलेख

गिरनार शिला

प्रथम अभिलेख

(जीव-दया : पशुयाग तथा मांस-भक्षण निषेध)

१. इयं धंमलिपी देवानं प्रियेन
२. प्रियदसिना राजा लेखापिता [१] इध न किं
३. चि जीवं आरभित्पा प्रजूहितव्यं [२]
४. न च समाजो कतव्यो [३] बहुकं हि दोसं
५. समाजम्हि पसति देवानंप्रियो प्रियद्रसि राजा[1] [४]
६. अस्ति पि तु एकचा समाजा साधुमता देवानं-
७. प्रियस प्रियदसिनो राञो [५] पुरा महानसम्हि[2]
८. देवानं प्रियस प्रियदसिनो राञो अनुदिवसं ब-
९. हूनि प्राणसतसहस्रानि आरभिसु सूपाथाय [६]
१०. से अज यदा अयं धंमलिपी लिखिता ती एव प्रा-
११. णा आरभरे सूपाथाय द्वो मोरा एको मगो सो पि
१२. मगो न ध्रुवो[3] [७] एते पि त्री प्राणा पछा न आरभिसरे [८]

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः देवानांप्रियेण
२. प्रियदर्शिना राज्ञा लेखिता। इह न क-
३. श्चित् जीवः आलभ्य प्रहोतव्यः।
४. न च समाजः कर्तव्यः। बहुकं हि दोषं
५. समाजे पश्यति देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा।
६. सन्ति अपि च एकतराः समाजाः साधुमताः देवानां
७. प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः। पुरा महानसे
८. देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः अनुदिवसं ब-
९. हूनि प्राणशतसहस्राणि आलभ्यन्त सूपार्थाय।
१०. तद् अद्य यदा इयं धर्मलिपिः लेखिता त्रयः एव प्रा-
११. णाः आलभ्यन्ते—द्वौ मयूरौ एकः मृगः। सः अपि च
१२. मृगः न ध्रुवम्। एते अपि च त्रयः प्राणाः पश्चात् न आलप्स्यन्ते।

पाठ टिप्पणी

१. राजाके पूर्व एक अतिरिक्त **र** उत्कीर्ण होकर कटा हुआ है।
२. इस शब्दमें **म** मे और **स** सेकी तरह दिखाई पड़ता है। ऐसा लगता है कि पहले **महानसे** लिखकर फिर **म्हि** पीछेसे जोड़ा गया है।
३. सेना और ब्यूलरने इसे **"ध्रुवो"** पढ़ा। '**थ**'के नीचे '**र**' और '**उ**' दोनोंके चिह्न दिखाई पड़ते हैं।

हिन्दी भाषान्तर

१. यह धर्मलिपि[1] देवानां प्रिय[2] (देवताओंके प्रिय)
२. प्रियदर्शी[3] राजा द्वारा लिखायी गयी। यहाँ[4] को-
३. ई जीव मारकर हवन[5] न किया जाय।
४. और न समाज[6] किया जाय। क्योंकि बहुत दोष

५. समाजमें देवानां प्रिय (देवताओंके प्रिय) प्रियदर्शी राजा देखते हैं।
६. ऐसे भी एक प्रकारके समाज हैं जो देवानां-
७. प्रिय प्रियदर्शी राजाके मतमें साधु हैं। पहले
८. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाकी पाकशालामें प्रतिदिन कई
९. लाख प्राणी' सूप' के लिए मारे जाते थे।
१०. परन्तु आज जब यह धर्मलिपि लिखायी गयी तीन ही प्रा-
११. णी मारे जाते हैं—दो मोर' और एक मृग। वह
१२. मृग भी निश्चित (रूपसे) नहीं। ये भी तीन प्राणी पीछे नहीं मारे जायँगे।

भाषान्तर टिप्पणी

१. इसका शाब्दिक अर्थ है 'धर्म अथवा नीतिके ऊपर अंकित अभिलेख'। व्यूलरने इसका भाषान्तर 'धर्म-लेख' किया है (जेड. डी. एम. डी., भाग ३७ पृ. ९३)। डॉ० भाण्डारकरने 'लिपि'का अर्थ 'लेख' दिया है और 'धर्मलिपि'का भाषान्तर 'धर्म-शासन' किया है (अशोक, पृ. २६५)। म. म. पं. गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा-ने इसका कोई विशेष अर्थ नहीं दिया है। श्री जनार्दन भट्टके अनुसार इसका अर्थ है 'धर्म सम्बन्धी लेख' (अशोकके धर्मलेख, पृ. ११०)। वास्तवमें भारतीय साहित्यमें धर्म एक व्यापक शब्द है जो धार्मिक विश्वास, कर्मकाण्ड, नीति, कर्तव्य आदि सभीके लिए प्रयुक्त होता है। हुल्श (इंसक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, पृ. २) ने 'धर्म'का अर्थ केवल 'नीति' ग्रहण किया है, जो संकुचित है।
२. यह एक सम्मानसूचक उपाधि है। इसका शाब्दिक अर्थ है 'देवताओंका प्रिय'। बौद्ध साहित्यमें इसका वही अर्थ है जो अंग्रेजीमें 'हिज ग्रेसस मजेस्टी' (His Gracious Majesty) का होता है (देखिये इण्डियन ऐण्टीक्वेरी, १८९१, पृ. २३१; जर्नल ऑफ् रायल एशियाटिक सोसायटी, १९०१, पृ. ५७७)। संस्कृत साहित्य-में 'देवानां प्रिय' का अर्थ पालि-साहित्यसे भिन्न है। पाणिनिके एक सूत्र (६-३-२१) में लिखा है 'षष्ठ्या आक्रोशे' अर्थात् आक्रोश अथवा घृणा प्रकट करनेमें षष्ठी विभक्तिका लोप नहीं होता। कात्यायनने अलुक् समासके उदाहरणमें लिखा है 'देवानां प्रिय इति च मूर्खे' अर्थात् 'देवानां प्रिय' का अर्थ मूर्ख है। अपनी सिद्धान्त-कौमुदीमें भट्टोजिदीक्षितने लिखा है 'अन्यत्र देवप्रियः' जिसका तात्पर्य यह है कि 'देवानां प्रिय' अलुक् समास 'मूर्ख' अर्थमें होता है परन्तु इससे भिन्न अच्छे अर्थमें षष्ठी तत्पुरुष समास 'देवप्रिय' हो जाता है। अवश्य ही अशोकके लिए बुरे अर्थमें इसका प्रयोग नहीं हुआ है। पातञ्जल महाभाष्यमें यह शब्द भवत्, आयुष्मत्-के साथ एक वर्गमें रखा गया है जो आदर-और-मंगलसूचक है। ऐसा लगता है कि बौद्धधर्मके प्रति उदासीनता और अनादरकी वृद्धिके साथ 'देवानां प्रिय'-के मूल अर्थमें विकृति आने लगी। इसके अन्य भी कई उदाहरण पाये जाते हैं, जैसे, बुद्ध = बुद्धू; नग्न (जैन क्षपणक) = नंगा; लुंचित (जैन साधु जिसके बाल नोचे गये हों) = लुच्चा आदि।
३. इसका शाब्दिक अर्थ है 'जिसका दर्शन प्रिय हो।' राजाका दर्शन शुभ अथवा मांगलिक माना जाता है। परन्तु 'देवानां प्रिय'की ही भाँति यह भी एक उपाधि अथवा पदवी है। अशोक देखनेमें दुःस्पर्शगात्र (असुन्दर) था; राजा होनेके कारण ही उसे यह उपाधि मिली थी।
४. 'इध' (यहाँ) का यहाँ अर्थ है 'अशोकके साम्राज्यमें।' कुछ लोगोंने इसका अर्थ 'पाटलिपुत्र (राजधानी) के आसपास' लिखा है, जो बहुत संकुचित है।
५. इसके द्वारा पशु-यागका निषेध किया गया है।
६. समाज एक प्रकारका सामूहिक उत्सव अथवा सम्मेलन था। कौटिल्यने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र में जिस संदर्भमें इस शब्दका प्रयोग किया है उससे इसपर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है (अर्थशास्त्र २.२१; २.२५; ५.२; १३.३,५)। इस शब्दका प्रयोग निम्नांकित सन्दर्भोंमें हुआ है :

यात्रा-समाजोत्सव-प्रवहणानि,
उत्सव-समाज-यात्रासु,
यात्रा-समाजाभ्या,
समाजे,
दैवत-प्रेत-कार्योत्सव-समाजेषु,
देश दैवत-समाजोत्सव-विहारेषु।

इससे स्पष्ट है कि समाज एक प्रकारका विलास और आमोद-प्रमोदपूर्ण उत्सव था जिसमें गाना, बजाना, नृत्य, मांस, मदिरा आदिका प्रयोग उन्मुक्त रूप-से होता था। डॉ० दत्तात्रय रामकृष्ण भाण्डारकरने महाभारत, हरिवंश और बौद्ध साहित्यका उल्लेख करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि प्राचीन भारतमें दो प्रकार-के 'समाज' होते थे। एक प्रकारके समाजमें शुद्ध मनोरंजन होते थे परन्तु दूसरे प्रकारमें मांस, मदिरा आदि भी चलता था। दूसरे प्रकारके समाजको अशोकने बन्द करा दिया। प्रथम प्रकारके समाजमें परिवर्तन-परिवर्द्धन करके अशोकने अपने धर्मप्रचारका माध्यम बनाया। व्यूलर और विनसेंट स्मिथने दूसरे प्रकारके समाजको ही यहाँ अभिहित माना है। टॉमस (ज० रा० ए० सो० १९१४, पृ० ३९२) ने 'समाज'का अर्थ अखाड़ा या खेलका मैदान किया है जहाँ पशुओं और मनुष्यों-में दंगल होता था और इसके चारों ओर दर्शकोंके बैठनेके स्थान बने होते थे। यह अर्थ बहुत ही कष्टकल्पित है। श्री एन० जी० मजुमदार (इंडियन एंटिक्वेरी, १९१८) ने समाजका अर्थ प्रेक्षणक अथवा नाटक किया है। कामसूत्र (चौखम्भा संस्कृत सिरीज, पृ० ४९-५१), जातक (कणवेर जातक) तथा रामायणमें समाज शब्दका प्रयोग नाटक अर्थमें हुआ है। परन्तु अर्थशास्त्र और महाभारतमें दिया हुआ अर्थ ही अधिक समीचीन जान पड़ता है।

७. केवल राज-परिवारकी पाकशालामें लाखों प्राणियोंका वध प्रतिदिन सम्भव नहीं। सभी राजकीय कर्मचारी और सेनाके लिए बहुसंख्यक प्राणी अवश्य मारे जाते रहे होंगे। महाभारत और पुराणोंमें वर्णित रन्तिदेवकी कथासे इसका मेल खाता है; रन्तिदेव की पाकशालामें इतने पशु मारे जाते थे कि उनके रक्तसे चर्मण्यवती (चम्बल) नदीका जल लाल धाराके रूपमें प्रवाहित होता था। प्रतिदिन २००० अन्य पशु और २००० गायोंका वध राजकीय पाकशालाके लिए होता था (महा० ३.२०८, ८-१०; १४.२९.१२७, ७.६७.१६-१८)।
८. मांस अथवा शाकका रस।
९. मयूर पक्षीके मांसको खानेकी प्रथा कम है। फिर भी अशोककी पाकशालामें इस मांसका प्रयोग होता था।

द्वितीय अभिलेख

(लोकोपकारी कार्य)

१. सर्वत विजितम्हि देवानंप्रियस प्रियदसिनो[1] राजो
२. एवमपि प्रचंतेसु यथा चोडा पाडा सतियपुत केतलपुतो आ तंब
३. पंणी अंतियोको योनराजा ये वा पि तस अंतियकस[2] सामीपं[3]
४. राजानो सर्वत्र देवानं प्रियस प्रियदसिनो राजो द्वे चिकीछ कता
५. मनुसचिकीछा च पसुचिकीछा च [१] ओसुढानि च यानि मनुसोपगानि च
६. पसोपगानि च यत यत नास्ति सर्वत्रा[4] हारापितानि च रोपापितानि च [२]
७. मूलानि च फलानि च यत यत्र[5] नास्ति सर्वत[6] हारापितानि रोपापितानि च [३]
८. पंथेसू कूपा च खानापिता व्रछा च रोपापिता परिभोगाय पसुमनुसानं [४]

संस्कृतच्छाया

१. सर्वत्र विजिते देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः
२. एवम् अपि प्रत्यन्तेषु—यथा चोळाः पाण्ड्याः सत्यपुत्रः केरलपुत्रः आताम्र
३. पर्ण्याः अन्तियोकः यवनराजः ये वापि तस्य अन्तियोकस्य समीपे
४. राजानः सर्वत्र देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः द्वे चिकित्से कृते
५. मनुष्य-चिकित्सा च पशु-चिकित्सा च । औषधानि (ओषधयः) च यानि मनुष्योपगानि च
६. पशूपगानि च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च ।
७. मूलानि च फलानि च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च ।
८. पन्थेषु कूपाः च खानिताः वृक्षाश्च रोपिताः प्रतिभोगाय पशुमनुष्याणाम् ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार यह पाठ '**प्रियदसिनो**' होना चाहिये ।
२. वही (जेड. डी. एम. जी. ३७-९५) अन्तियोकसा ।
३. ब्यूलर और हुल्त्श इसको '**सामन्ता**' का अशुद्ध पाठ मानते हैं ।
४. ब्यूलरके अनुसार '**सर्वत्र**' और सेनाके अनुसार **सर्वता** पाठ होना चाहिये ।
५. ब्यूलर इसको '**यत्**' पढ़ते हैं ।
६. ब्यूलरके अनुसार यह पाठ 'सर्वत्र' है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय (देवताओंके प्रिय) प्रियदर्शी राजाके राज्यमें सर्वत्र
२. इसी प्रकार प्रत्यन्तों[1] में यथा चोल[2], पाण्ड्य[3], सत्यपुत्र[4], केरलपुत्र[5] ताम्रपर्णी[6]—
३. तक; यवन[7]राज अन्तियोक;[8] उस अन्तियोकके समीप जो
४. राजा हैं; सर्वत्र देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाकी दो चिकित्साएँ[9] व्यवस्थित हैं—
५. मनुष्य-चिकित्सा और पशु-चिकित्सा । मनुष्योपयोगी और पशूपयोगी जो ओषधियाँ
६. जहाँ-जहाँ नहीं हैं (वे) सर्वत्र लायी गयीं और रोपी गयी हैं ।
७. और मूल और फल जहाँ-जहाँ नहीं हैं (वे) सर्वत्र लाये गये हैं और रोपे गये हैं ।
८. पशु और मनुष्योंके उपयोगके लिए पंथोंमें कूएँ खोदे गये हैं और वृक्ष रोपे गये हैं ।[10]

भाषान्तर टिप्पणी

१. अन्त (सीमा) के ऊपर पड़ोसी राज्य ।
२. प्रसिद्ध चोल-राज्य । वर्तमान नीलौर और पद्दू कोटाके बीचका प्रदेश ।
३. प्रसिद्ध पाण्ड्य-राज्य । वर्तमान मदुरा और तिनीवल्ली जिले । ताम्रपर्णी नदीके किनारे कोरकर्ट इसकी प्राचीन तथा मदुरा परवर्ती राजधानी थी ।
४. कर्नने इसका तादात्म्य सतपुड़ा पर्वतसे किया था जो अमान्य है (देखिये ब्यूलर : जेड० डी० एम० जी०, ३७.९८) । डॉ० दत्तात्रेय रामकृष्ण भाण्डारकरने इसको मराठोंकी एक उपाधि 'सातपुते'से मिलाया है । वास्तवमें यह शब्द चोल और पाण्ड्यकी तरहसे जाति अथवा वंश-सूचक है । तुलु भाषाका प्रदेश ।
५. केरल अथवा मलाबारका राजा या राज्य । इसका दूसरा नाम चेर था । इसकी प्राचीन राजधानी वञ्जि नगरी थी ।
६. ताम्रपर्णी = श्रीलंकाका एक प्राचीन नाम । दीपवंशमें इसका उल्लेख है । मेगस्थनेको यह नाम (ताम्रोवर्न = *Taπpo Ba'vn*) मालूम था । तिनवेल्ली जिलेमें इस नामकी एक नदी है जिसका उल्लेख रामायण (बम्बई संस्करण, ४.४१.५.१७) में पाया जाता है ।
७. 'यवन' शब्द यूनानी 'आयोनिया'का संस्कृत रूप है । सिकन्दरके आक्रमणके बहुत पूर्व यवनोंका एक उपनिवेश भारतकी सीमाके निकट बसा हुआ था ।
८. ऐंटिओकस द्वितीय थियॉस, सीरियाका राजा (२६१-२४६ ई० पू०) । (देखिये सेना, इण्डियन एंटिक्वेरी, २०, २४२) ।
९. डॉ० दत्तात्रेय रामकृष्ण भाण्डारकरके अनुसार चिकित्साका अर्थ औषधालय अथवा औषध नहीं है अपितु 'आवश्यक व्यवस्था' जिसके अन्तर्गत औषधालय आदि आ जाते हैं ।
१०. ये सब लोकोपकारी पूर्त-कर्म हैं ।

तृतीय अभिलेख

(धर्मप्रचार : पञ्चवर्षीय दौरा)

१. देवानं प्रियो[1] पियदसि राजा एवं आह [१] द्वादस वासाभिसितेन मया इदं आञपितं [२]
२. सवत विजिते मम युता च राजूके च प्रादेसिके च पंचसु पंचसु वासेसु अनुसं-
३. यानं नियातु एतायेव अथाय इमाय धंमानुसस्टिय यथा अञा-
४. य कंमाय [३] साधु मातरि च पितरि च सुसूसा [2]मित्रसंस्तुतञातीनं बाम्हण-
५. समणानं साधु दानं प्राणानं साधु अनारंभो अपव्ययता अपभाडता[3] साधु [४]
६. परिसा पि युते आञपयिसति गणनायं हेतुतो च व्यंजनतो च [५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया इदम् आज्ञापितम् ।
२. सर्वत्र विजिते मम युक्ताः च रज्जुकाः च प्रादेशिकाः च पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु अनु-
३. संयानं नियान्तु एतस्मै अर्थाय अस्यै धर्मानुशिष्टये यथा अन्य-
४. स्मै कर्मणे । साधु मातृपित्रोश्च शुश्रूषा । मित्र संस्तुतज्ञातिकेभ्यः ब्राह्मण-
५. श्रमणेभ्यः साधु दानं प्राणानां साधु अनालम्भः अल्पव्ययता अल्पभाण्डता साधु ।
६. परिषदः अपि च युक्तान् आज्ञापयिष्यन्ति गणनायां हेतुतः च व्यञ्जनतः च ।

पाठ-टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार **'प्रियो'** पाठ होना चाहिये ।
२. यह **'मित्ता'** के सदृश दिखाई पडता है ।
३. ब्यूलर इसको **'अपभांडता'** पढ़ते हैं ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय (देवताओंके प्रिय) प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा । अभिषेकके बारह वर्ष पश्चात् ऐसी आज्ञा मेरे द्वारा दी गयी ।
२. मेरे राज्यमें सर्वत्र युक[1], रज्जुक[2] और प्रादेशिक[3] पाँच-पाँच वर्षपर
३. इस कार्यके लिए, धर्मानुशिष्टिके लिए, यथा अन्य कार्यके लिए दौरे[4]पर जायँ ।
४. माता-पिताकी शुश्रूषा साधु है । मित्र, परिचित, जाति, ब्राह्मण
५. और श्रमणको दान देना साधु है । प्राणियोंका अवध साधु है । अल्पव्ययता और अल्प भाण्डता (अल्प संग्रह) साधु है ।
६. परिषदें[5] युक्तोंको हेतु (कारण) और व्यञ्जन (अक्षरशः अर्थ) के साथ (इन नियमोंकी) गणना करनेके लिए आज्ञा देंगी ।[6]

भाषान्तर टिप्पणी

१. जिलेके राजस्व विभागके अधिकारी । कौटिल्यके अर्थशास्त्र (२.९) और मनुस्मृति (८.३४) दोनोंमें इसका उल्लेख मिलता है । भ्रष्ट युक्तोंके सम्बन्धमें अर्थशास्त्र-की यह उक्ति है : "मत्स्याः यथान्तस्सलिले चरन्तो ज्ञातुं न शक्या सलिलं पिबन्तः । युक्तास्तथा कार्य-विधौ नियुक्ताः ज्ञातुं न शक्या धनमाददानाः ॥" [जिस प्रकार यह नहीं जाना जा सकता कि पानीके नीचे चलती हुई मछलियाँ जल पी रही हैं या नहीं उसी प्रकार यह नहीं जाना जा सकता कि राज-कार्यमें नियुक्त युक्त नामक अधिकारी धन अपहरण कर रहे हैं या नहीं ।] मनुने कहा है कि "नष्ट हुआ जो धन प्राप्त हो वह युक्तोंकी सुरक्षामें रखा जाय । उनमेसे जो चोर (युक्त) हड़पनेका प्रयत्न करें उन्हें राज-हस्ति (बड़े हाथी) से मरवा डालना चाहिये ।" [प्रणष्टाधिगतं द्रव्य तिष्ठेद्युक्तैरधिष्ठितम् । या स्तत्र चौरान् गृह्णीयात्तान् राजेभेन घातयेत् ॥] परवर्ती अभिलेखोंमें आयुक्तक और विनियुक्तक शब्द पाये जाते हैं (फ्लीटः गुप्त अभिलेख, पृ० १६९, पाद० टि० ४, ५) ।
२. भूमि-माप करनेवाला अधिकारी । रज्जु अथवा रस्सीसे भूमि मापी जाती थी, अतः यह नाम । भूमिकी व्यवस्था करनेवाला बड़ा अधिकारी होता था, इसलिए अशोक-के शासनमें उसे लोक-कल्याण, न्याय-सम्बन्धी आदि कार्य भी सौंपे गये थे (चतुर्थ स्तम्भ-लेख) । कुछ लोगोंने रज्जुका अर्थ सूत्र भी किया है और मत व्यक्त किया है कि राज्यका सूत्र रज्जुकोंके हाथमें होता था । जैन ग्रन्थोंके आधारपर ब्यूलरने यह लिखा है कि रज्जुक लेखकका कार्य करते थे और उच्च अधिकारियोंका चुनाव उन्हीं में से होता था (जेड० डी० एम० जी०, जिल्द ४०, ७० पृ० १६) ।
३. एक प्रदेशका शासक प्रादेशिक कहलाता था । आजकलके राज्यपालका समकक्ष । कुछ लोग इसे अर्थशास्त्रके 'प्रदेष्टा'से मिलानेका प्रयास करते हैं (दे० बसाक, अशोकन इन्स्क्रिप्शन्स० पृ० १२) जो भ्रान्त है; प्रदेष्टा न्यायिक अधिकारी था [ज० रा० ए० सो० १९१४ पृ० ३८३) । कल्हणकी राजतरङ्गिणी (४.१२६) 'प्रादेशिकेश्वर' शब्द आया है जिसका अर्थ है 'प्रदेशका मुख्याधिकारी' ।
४. 'अनुसयान'का अर्थ 'महासभा' अथवा 'साधारण सभा' भी किया गया है जो ठीक नहीं ।
५. सेनाने इसका अर्थ 'भिक्षु-संघ' किया है जो यहाँ उपयुक्त नहीं जान पड़ता । इण्डियन ऐंटिक्वेरी (४२.२८३) में काशीप्रसाद जायसवालने इसकी समता कौटिल्य-के मन्त्रि-परिषद्से की है जो अधिक समीचीन है ।
६. इस वाक्यकी विस्तृत व्याख्याके लिए देखिये इण्डियन ऐंटिक्वेरी १९०८, पृ० २१; ज० रा० ए० सो० १९१४ पृ० ३८८ ।

चतुर्थ अभिलेख

(धर्मघोष : धार्मिक प्रदर्शन)

१. अतिकातं अंतरं बहूनि वासमतानि वढितो एव प्राणारंभो विहिंसा च भूतानं आतीसु—
२. असंप्रतिपती ब्राम्हणस्रमणानं असंप्रतीपती[1] [१] त[2] अज देवानंप्रियस प्रियदसिना[3] राञो
३. धंमचरणेन भेरीघोसो अहो धंमघोसो विमानदर्सणा[4] च हस्तिदसणा च
४. अगि खंधानि च अञानि च दिव्यानि रूपानि दसयित्या जनं [२] यारिसे बहूहि वाससतेहि
५. न भूतपुवे तारिसे अज वढिते देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो धंमानुसस्टिया अनारं—
६. भो प्राणानं अविहीसा[5] भूतानं आतीनं सपंटिपती ब्रम्हण समणानं संपटिपती मातरि पितरि
७. सुसुसा थैरसुसुसा [३] एस अञे च बहुविधे धंमचरणे वढिते [४] वढयिसति चेव देवानंप्रियो
८. प्रियद्रसि[6] राजा धंमचरणं इदं [५] पुत्रा च पोत्रा च प्रपोत्रा च देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो
९. प्रवधयिसंति[7] इदं धंमचरणं आव सवटकपा[8] धंमम्हि सीलम्हि तिस्टंतो धंमं अनुसासिसंति [६]
१०. एस हि सेस्टे कंमे य धंमानुसासनं [७] धंमचरणे पि न भवति असीलस [८] त इमम्हि अथम्हि
११. वधी च अहीनी च साधु [९] एताय अथाय[9] इदं लेखापितं इमस अथस वधि युजंतु हीनि[10] च
१२. नो[11] लोचेतव्या [१०] द्वादस वासाभिसितेन देवानं प्रियेन प्रियदसिना राजा इदं लेखापितं

संस्कृतच्छाया

१. अतिक्रान्तम् अन्तरं बहूनां वर्षशतानाम्। वर्द्धितः एव प्राणालम्भः विहिंसा च भूतानां ज्ञातिषु
२. असम्प्रतिपत्तिः ब्राह्मणश्रमणेषु असम्प्रतिपत्तिः। तत् अद्य देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः
३. धर्माचरणेन भेरिघोषः अभूत् धर्मघोषः विमानदर्शनं च हस्तिदर्शनं च
४. अग्निस्कन्धान् च अन्यानि च दिव्यानि रूपाणि दर्शयित्वा जनम्। यादृशः बहुभिः वर्षशतैः
५. न भूतपूर्वः तादृशः अद्य वर्द्धितः प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्मानुशिष्ट्या अनालं—
६. भः प्राणानाम् अविहिंसा भूतानां ज्ञातिषु सम्प्रतिपत्तिः ब्राह्मणश्रमणेषु सम्प्रतिपत्तिः मातरि पितरि
७. शुश्रूषा स्थविरशुश्रूषा। तत् अद्य बहुविधं धर्माचरणं वर्द्धितम्। वर्द्धयिष्यति चैव देवानांप्रियः
८. प्रियदर्शी राजा धर्माचरणम् इदम्। पुत्राः च पौत्राः च प्रपौत्रा च देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः
९. प्रवर्द्धयिष्यन्ति इदं धर्माचरणं यावत्कल्पं ध॰ शीले तिष्ठन्तः धर्मम् अनुशासिष्यन्ति।
१०. एतत् हि श्रेष्ठं कर्म यत् धर्मानुशासनम्। धर्माचरणम् अपि न भवति अशीलस्य। तत् अस्य अर्थस्य
११. वृद्धिः च अहानिः च साधु। एतस्मै अर्थाय इदं लेखापितम्। अस्य अर्थस्य वृद्धिः युञ्जन्तु हानिः च
१२. न आरोचयेयुः। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन देवानांप्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा इदं लेखापितम्।

पाठ टिप्पणी

१. शब्दखण्ड प पीछेसे जोड़ा गया।
२. अक्षर त पीछेसे जोड़ा गया।
३. इसमें द् अक्षर पीछेसे जोड़ा गया।
४. सेना और ब्यूलर इसका—दसणा पढ़ते हैं।
५. ही अक्षर पीछेसे जोड़ा गया।
६. इसमें प्रि स्पष्ट नहीं है।
७. इसमें प्र स्पष्ट नहीं है।
८. ब्यूलर इसको संवट पढ़ते हैं।
९. था और य के बीचमें अन्तराल है।
१०. ही और नि के बीचमें अन्तराल है।
११. कर्न इसको नालो च तव्या पढ़ते हैं (इण्डियन ऐंटिक्वेरी; ५'२६१-२६२)।

हिन्दी भाषान्तर

१. बहुत सैकड़ों वर्षोंका अन्तर बीत चुका। प्राणियोंका वध, जीवधारियोंके प्रति विशेष हिंसा, जातिके लोगोंके साथ
२. अनुचित व्यवहार (और) ब्राह्मण तथा श्रमणोंके साथ अनुचित व्यवहार बढ़ता ही गया। परन्तु आज देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाके
३. धर्माचरणसे भेरी-घोष (युद्धका बाजा) धर्म-घोष (धर्म-प्रचार) हो गया है[1]—विमान-दर्शन[2], हस्ति-दर्शन[3],
४. अग्नि-स्कन्ध[4], तथा अन्य दिव्य प्रदर्शनोंको जनताको दिखा कर। (इसी प्रकार) बहुत सैकड़ों वर्ष (बीत चुके)
५. जैसा भूतपूर्व (भूतकाल) में नहीं हुआ वैसा आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्मानुशासनसे प्राणियोंका अवध,
६. जीवधारियोंके प्रति अहिंसा, जातियोंके प्रति उचित व्यवहार, ब्राह्मण-श्रमणोंके प्रति उचित व्यवहार, माता-पिताकी

७. शुश्रूषा और स्थविरों (श्रेष्ठजनों) की शुश्रूषा बढ़ी है। इस प्रकार आज बहुविध धर्माचरणकी वृद्धि हुई है। देवानां प्रिय
८. प्रियदर्शी राजा इस धर्माचरणको और बढ़ायेंगे। देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाके पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र
९. इस धर्माचरणको बढ़ायेंगे और कल्पान्ततक धर्म और शीलका आचरण करते हुए धर्मका अनुशासन करेंगे।
१०. जो धर्मानुशासन है वही श्रेष्ठ कर्म है। शीलरहित (व्यक्ति) धर्माचरण नहीं कर सकता। इसलिए इस अर्थ (धर्माचरण) की
११. वृद्धि और अहानि (लाभ) साधु है। इस उद्देश्यसे यह लिखाया गया कि लोग इस अर्थ (धर्माचरण) की वृद्धिमें लगें और (इसकी) हानि
१२. न चाहें। राज्याभिषेकके बारह वर्ष पश्चात् देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा यह लिखाया गया।

भाषान्तर टिप्पणी

१. भेरी लड़ाईके एक बाजे का नाम है। इसके द्वारा युद्ध, विज्ञप्ति अथवा किसी मनोरजनकी घोषणा की जाती थी। इनके बदलेमें अशोकने भेरीका उपयोग अपने धार्मिक प्रचारकी घोषणा करनेमें किया। इसका भावार्थ यह है कि अशोकके शासन कालमें युद्ध बन्द करके धर्मका प्रचार किया गया।
२. विमान देवताओंके दिव्य रथको कहते हैं। विमानोंके प्रदर्शनसे जनताको इस बातकी प्रेरणा दी जाती थी कि वह अपने नैतिक आचरणसे देवत्वके योग्य बन सके।
३. श्वेत हाथी भगवान् बुद्धका प्रतीक है। लोकपालोंके वाहन भी दिव्य हाथी होते है।
४. डॉ० भाण्डारकरके अनुसार अग्नि-स्कन्ध **खदिरंगार-जातक**का अग्नि-कुण्ड है। चाइल्डर्सके **पालि-कोश**के अनुसार यह तेज और यशका प्रतीक है। टॉमस (जं० रा० ए० सो० १९१४, ३९५) अग्नि-स्कन्ध उत्सव-अग्नि (बॉन-फायर) है। प्रस्तुत सन्दर्भमें यह अर्थ ठीक नहीं, क्योंकि यहाँ अग्नि-स्कन्ध अन्य दिव्य प्रदर्शनोंमेंसे एक है।

पंचम अभिलेख

(धर्म महामात्र)

१. देवानं प्रियो पियदसि राजा[1] एवं आह [१] कलाणं दुकरं [२] यो आदिकरो कल्यानस[2] सो दुकरं करोति [३]
२. त मया बहु कलाणं कतं [४] त मम पुता च पोता[3] च परं च तेन य मे अपचं आव संवटकपा अनुवतिसरे तथा
३. सो सुकतं कासति[4] [५] यो तु एत देसं पि हापेसति सो दुकतं कासति [६] सुकरं हि पापं [७] अतिकातं अंतरं
४. न भूतप्रुवं[5] धंममहामाता नाम [८] त मया त्रैदसवासाभिसितेन धंममहामाता कता [९] ते सव पाषंडेसु व्यापता धामधिस्टानाय[6]
५. ············धंमयुतस च योण[7] कंबोज गंधारानं रिस्टिकपेतेणिकानं ये वा पि अंञे आपराता[8] [१०] भतमयेसु व
६. ············सुखाय धंमयुतानं अपरिगोधाय व्यापता ते [११] बंधनबधस पटिविधानाय
७. ············प्रजा[10] कताभीकारेसु वा थैरेसु वा व्यापता ते [१२] पाटलिपुते च बाहिरसु[11] च
८. ············ये वा पि मे अञे ञातिका सर्वत व्यापता ते [१३] यां अयं धंमनिस्रितो ति व
९. ············ते धंममहामाता [१४] एताय[12] अथाय अयं धंमलिपी लिखिता
१०. ············

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। कल्याणं दुष्करम्। यः आदिकरः कल्याणस्य सः दुष्करं करोति।
२. तत् मया बहु कल्याणं कृतम्। तत् मम पुत्राः च पौत्राः च परं च तेभ्यः यत् मम अपत्यं यावत्संवर्त्तकल्पम् अनुवर्तिष्यन्ते तथा
३. ते सुकृतं करिष्यन्ति। यः तु एतत् देशम् अपि हापयिष्यति सः दुष्कृतं करिष्यति। सुकरं हि पापम्। अतिक्रान्तम् अन्तरम्
४. न भूतपूर्वाः धर्ममहामात्राः नाम। तत् मया त्रयोदशवर्षाभिषिक्तेन धर्ममहामात्राः कृताः। ते सर्वपाषण्डेषु व्यापृताः धर्माधिष्ठानाय
५. ············धर्मयुक्तस्य यवन-कम्बोज-गन्धाराणां राष्ट्रिकपैत्र्यणिकानां ये वा अपि अन्ये अपरान्ताः। भृतार्येषु वा
६. ············सुखाय धर्मयुक्तानाम् अपरिबाधाया व्यापृताः ते। बन्धनबद्धस्य प्रतिविधानाय
७. ············प्रजा कृताभिचारेषु वा स्थविरेषु वा व्यापृताः ते। पाटलिपुत्रे च बाह्येषु च
८. ············ये वा पि मे अन्ये ज्ञातिकाः सर्वत्र व्यापृता ते। यः अयं धर्मनिश्रितः इति वा
९. ············ते धर्म महामात्रा। एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः लिखिता।
१०. ············

पाठ टिप्पणी

१. इस शब्दमें रा के पहले और पीछे अन्तराल है।
२. सेना और ब्यूलर इसको **'ये कलाणेस'** पढ़ते हैं।
३. ब्यूलर इसको **'पोत्रा'** पढ़ते हैं।
४. यह **कच्छंति** का भ्रष्ट रूप जान पड़ता है।
५. सेना इसको 'पुवं' पढ़ते हैं; ब्यूलर 'प्रुवं'।
६. दूसरे संस्करणोंमें **'धम्माधि-'** पाठ है।
७. ब्यूलरके अनुसार पाठ **'योन'** है।
८. ब्यूलर इसको **'अपराता'** पढ़ते हैं।
९. **'बंधन'** का **न** पीछेसे जोड़ा गया।
१०. यह शब्द **'परजा'** की तरह दिखाई पड़ता है।
११. **'बाहिरेसु'** अच्छा पाठ है।
१२. **य** अक्षर पीछेसे जोड़ा गया।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। कल्याण दुष्कर (है)। जो कल्याणका प्रारम्भ करता है[1] वह दुष्कर (कार्य) करता है।
२. परन्तु मुझसे बहुत कल्याण किया गया। यदि मेरे पुत्र, पौत्र और उनके परे जो मेरे अपत्य (संतान) कल्पके अन्ततक (इसका) अनुसरण करेंगे तो
३. वे सुकृत करेंगे। जो इसका एक अंश[2] भी नष्ट करेगा वह दुष्कृत करेगा। पाप सुकर है। बहुत समय बीता
४. भूतकालमें धर्ममहामात्र[3] नाम (क अधिकारी) न (थे)। परन्तु (राज्या) भिषेकके तेरह वर्ष पश्चात् धर्ममहामात्र नियुक्त किये गये। धर्मकी स्थापनाके लिए वे सब पाषण्डों[4] (धार्मिक सम्प्रदायों) में व्याप्त हैं।
५. ············उन धर्मयुक्तों[5] (धार्मिक कार्य करनेवालों) का जो यवन, कम्बोज, गन्धार, राष्ट्रिक, प्रतिष्ठानिक[6] (अथवा पैत्रयणिक) तथा अन्य अपरान्तों (पश्चिमी सीमाप्रान्तोंमें) भृतक (नौकर) तथा आर्य (स्वामी) में
६. ············(हित-) सुखके लिए (और) धर्मयुक्तोंकी लोभसे मुक्ति[7]के लिए नियुक्त हैं। बन्धन-बद्ध (बन्दी = कैदी) की सहायताके लिए
७. ············बच्चोंवाले, टोना-जादूसे आविष्ट[8] तथा स्थविरों (बूढ़ों) में वे व्यस्त हैं। पाटलिपुत्रमें, बाहरके सब नगरोंमें

८. ....जो भी अन्य जातिके लोग हैं (उन सबमें) सर्वत्र वे नियुक्त हैं। ये जो धर्माश्रित[९]
९. ....वे महामात्र। इस प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि लिखी गयी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **आदिकरः**। जो सर्वप्रथम शुभ कर्म करता है।
२. देसं = संस्कृत देशं = एक देश, एक अंश।
३. धम्म महामाता = संस्कृत धर्म महामात्राः। महामात्र। अमात्र = अमात्य (महामात्रः समृद्धे चामात्ये हस्तिपकाधिपे। मेदिनी)। इसका अर्थ हुआ 'धर्मविभागका बड़ा अधिकारी'। इस वर्गके अधिकारियोंकी नियुक्ति अशोकके शासनकी नवीनता थी। इसके अधिकार-क्षेत्रमें जनताका जीवन-मरण सम्मिलित था।
४. पाषण्डका आधुनिक अर्थ है 'मिथ्याचार' जो मनुसे लिया गया है: कितवान् कुशीलवान् क्रूरान् पाषण्डस्थांश्च मानवान्। विकर्मस्थान् शौण्डिकांश्च क्षिप्रं निर्वासयेत् पुरात्॥ मनुके टीकाकार कुल्लूकने पाषण्डका अर्थ 'श्रुतिस्मृति-बाह्यव्रत धारी' किया है। पुराना अर्थ था 'परम्परा विरोधी सम्प्रदाय'। अशोकके अभिलेखोंमें इसका प्रयोग 'धार्मिक सम्प्रदाय'के अर्थमें किया गया है। प्रारम्भिक बौद्ध साहित्यमें इसका प्रयोग अपना सम्प्रदाय छोड़कर अन्य सम्प्रदायों—आजीवक, निर्ग्रन्थ, ब्राह्मण आदिके अर्थमें किया गया है। कौटिल्यने **पाखण्डाः** (अर्थशास्त्र, ३.१६), **पाखण्ड छद्मना** (१२.५) का उल्लेख किया है।
५. धर्मयुतः संस्कृत धर्मयुक्त। धर्म विभागमें नियुक्त सामान्य अधिकारी जो धर्म महामात्रोंके सहायक थे। धर्म महामात्रोंकी तरह धर्मयुतोंकी नियुक्ति भी अशोकके शासनकी नवीनता थी।
६. यवन = आयोनियन (Ionians) जो भारतकी पश्चिमोत्तर सीमापर बसे थे। **कम्बोज** कश्मीरकी पश्चिमोत्तर सीमापर बसते थे, **गन्धार** पंजाबकी पश्चिमोत्तर सीमा पर। राष्ट्रिक = महाराष्ट्रिकका संक्षिप्त पूर्व रूप। प्रतिष्ठानिक = प्रतिष्ठान (पैठन) के आसपास बसने वाले; पैत्र्यणिक (जाति विशेष) जिसकी पहचान सुनिश्चित नहीं।
७. अपरिगोधायमें गोध शब्द पालि 'गिद्धि'से बना है। संस्कृत 'गृध्' धातुका अर्थ 'लोभ करना' है।
८. अभिचार = जादू-टोना। कोई-कोई 'कृताभिकार' रूप ग्रहण करते हैं जिसका अर्थ है 'विपत्ति-ग्रस्त'। देखिये धम्मपद (५.२५): दीप कयिराथ मेधावी य ओघो नाभिकीरति।
९. पालि 'निस्सित' नि + श्रि से व्युत्पन्न।

षष्ठ अभिलेख

(प्रतिवेदना)

१. देवा······सि राजा एवं आह [१] अतिक्रातं अंतरं
२. न भूतप्रुवं सव···ल अथ कंमे व पटिवेदना वा [२] त मया एवं कतं [३]
३. सवे काले भुंजमानस मे ओरोधनम्हि गभागारम्हि वचम्हि व
४. विनीतम्हि च उयानेसु च सवत्र पटिवेदका स्टिता अथे मे जनस
५. पटिवेदेथ इति [४] सर्वत्र च जनस अथे करोमि [५] य च किंचि मुखतो
६. आञपयामि स्वयं दापकं वा स्रावापकं वा य वा पुन महामात्रेसु
७. आचायिके[२] अरोपितं[३] भवति ताय अथाय विवादो निझती व संतो परिसायं
८. आनंतरं पटिवेदेतव्यं मे सवत्र सर्वे काले [६] एवं मया आञपितं [७] नास्ति हि मे तोसो
९. उस्टानम्हि अथ संतीरणाय व [८] कतव्यमते हि मे सर्वलोकहितं [९]
१०. तस च पुन एस मूले उस्टानं च अथसंतीरणा च [१०] नास्ति हि कंमतरं
११. सर्वलोकहितत्पा [११] य च किंचि पराक्रमामि अहं किंति भूतानं आनंणं गछेयं
१२. इध च नानि सुखापयामि परत्रा च स्वगं आराधयंतु तं [१२] एताय अथाय
१३. अयं धंमलिपी लेखापिता किंति चिरं तिस्टेय इति तथा च मे पुत्रा पोता च प्रपोत्रा च
१४. अनुवतरं[५] सवलोकहिताय [१३] दुकरं तु इदं अञत्र[६] अगेन पराक्रमेन [१४]

संस्कृतच्छाया

१. देवा [नां प्रियः प्रियद]र्शी राजा एवम् आह। अतिक्रान्तम् अन्तरम्
२. न भूतपूर्वं सर्वं (का) लम् अर्थकर्म वा प्रतिवेदना वा। तत् मया एवं कृतम्।
३. सर्वं कालं भुञ्जतः मे अवरोधने, गर्भागारे, व्रजे वा
४. विनीते च उद्यानेषु च सर्वत्र प्रतिवेदका स्थिताः अर्थं मे जनस्य
५. प्रतिवेदयन्तु इति। सर्वत्र च जनस्य अर्थं करोमि। यच्च किञ्चित् मुखतः
६. आज्ञापयामि स्वयं दापकं श्रावकं वा यत् वा पुनः महामात्रेभ्यः
७. आत्ययिकम् आरोपितं भवति—तस्मै अर्थाय विवादः निध्यातिः वा सतः परिषदि
८. आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे सर्वत्र सर्वं कालम्। एवं मया आज्ञापितम्। नास्ति मे तोषः
९. उत्थाने अर्थ-संतीरणायां वा। कर्तव्यमतं हि मे सर्वलोक-हितम्।
१०. तस्य च पुनः एतत् मूलम् उत्थानं अर्थ-संतीरणं च। नास्ति हि कर्मान्तरं
११. सर्वलोक-हितात्। यत् च किञ्चित् प्रक्रमे अहं किमिति ? भूतानाम् आनृण्यं गच्छेयं
१२. इह च कान् सुखयामि परत्र च स्वर्गम् आराधयन्तु। तत् एतस्मै अर्थाय
१३. इयं धर्मलिपिः लेखिता किमिति ? चिरं तिष्ठेत् इति तथा च मे पुत्राः पौत्राः प्रपौत्राश्च
१४. अनुवर्तेरन् सर्वलोकहिताय। दुष्करं तु इदम् अन्यत्र अग्र्यात् पराक्रमात्।

पाठ टिप्पणी

१. 'भूतपुवे' पाठ अधिक अच्छा है।
२. सेना और ब्यूलर 'आचायिक' पढ़ते हैं।
३. ब्यूलरके अनुसार 'आरोपित'।
४. 'ति' पाठ अच्छा है।
५. सेना और ब्यूलर 'अनुवतंरम्' पढ़ते हैं।
६ वही 'अभत' पढ़ते हैं।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। बहुत समय व्यतीत हुआ
२. भूतकालमें सब समय अर्थकर्म (राज्यका आवश्यक कार्य) अथवा प्रतिवेदना (कार्यकी सूचना) नहीं होती थी। इसलिए मेरे द्वारा ऐसा किया गया।
३. सब काल (चाहे) मैं भोजन करता रहूँ, अवरोधन (अन्तःपुर) में रहूँ, गर्भागार (शयनगृह) में रहूँ, व्रज[१] (पशु-शाला) में रहूँ,
४. विनीत[२] (पालकी) पर रहूँ या उद्यानमें रहूँ सर्वत्र प्रतिवेदक[३] स्थित (होकर) मेरी जनताके कार्य की
५. प्रतिवेदना करें। (मैं) सर्वत्र जनताका कार्य करता हूँ। जो कुछ मैं मौखिक
६. आज्ञा दूँ स्वयं दान अथवा विज्ञप्तिके सम्बन्धमें; अथवा कोई आवश्यक कार्य महामात्रोंको

७. सौंप दूँ और इसके बारेमें परिषद्में विवाद खड़ा हो अथवा पुनर्विचारके लिए प्रस्ताव हो तो"
८. अविलम्ब मुझे सर्वत्र और सब कालमें प्रतिवेदन मिलना चाहिये। इस प्रकार मेरे द्वारा आज्ञा की गयी। मुझे सन्तोष नहीं है
९. उत्थान और कार्य-सम्पादनमें। सर्वलोक-हित मेरा कर्तव्य है ऐसा मेरा मत है।
१०. फिर उसका मूल है उत्थान और कार्य-सम्पादन। दूसरा बड़ा कर्म नहीं है
११. सर्वलोक हितसे। जो कुछ पराक्रम मैं करता हूँ इस (किस) लिए कि भूतों (जीवधारियों) के ऋणसे मुक्त होऊँ,
१२. मैं उनको यहाँ (इस लोकमें) सुखी बनाऊँ और वे दूसरे लोकमें स्वर्ग प्राप्त कर सकें। अतः इस प्रयोजनके लिए
१३. यह धर्मलिपि लिखवायी गयी जिससे कि यह चिरस्थायी हो तथा मेरे पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र
१४. सर्वलोक-हितके लिए इसका अनुसरण करें। यह दुष्कर है उत्तम पराक्रमके बिना।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'वचम्हि'का अर्थ कुछ लोग 'शौचालयमें' करते हैं। परन्तु इससे मिलते-जुलते संस्कृत शब्द 'वर्चस' का अर्थ शौचालय न होकर 'गोबर' है। मानसेहराके द्वादश शिलालेखमें इसका समकक्ष शब्द 'व्रज' अथवा 'वच' है जो संस्कृत व्रजका रूपान्तर है जिसका अर्थ गोचर-भूमि, गोष्ठ अथवा गोशाला हो सकता है। भारतीय राजाओंके राजप्रासादमें गोशाला रखनेकी प्रथा थी। काशीप्रसाद जायसवालने 'व्रजे'का अर्थ 'अस्तबलमें' किया है (इण्डियन ऐण्टिक्वेरी' १९१८ पृ० ५३)। श्री विधुशेखर भट्टाचार्य शास्त्रीने 'व्रजे'का अर्थ अमरकोशके आधारपर 'सड़कपर' किया है (वही, १९२० पृ० ५३)।

२. 'विनीत' शब्दके कई अर्थ किये गये हैं। इसका शाब्दिक अर्थ है 'विशेष प्रकारसे लाया गया'। इस सन्दर्भमें 'पालकी' अथवा 'गाड़ी' अर्थ ठीक बैठता है। पं० रामावतार शर्माने इसका अर्थ 'व्यायामशाला' किया। काशीप्रसाद जायसवालके मतमें इसका अर्थ 'विनय' अथवा 'कवायद' है (इण्डियन ऐण्टिक्वेरी, १९१८ पृ० ५३)।

३. विवरण अथवा सूचना देनेवाले कर्मचारी। ये प्रकट और गुप्त दोनों प्रकारके होते थे। अर्थशास्त्र (१.१२) में गुप्तचरोंका उल्लेख है। मेगस्थने (मैकक्रिंडल: मेगस्थने, पृ० ८५) ने भी प्रतिवेदकोंका उल्लेख किया है, "साम्राज्यमें क्या हो रहा है इसका ज्ञान प्रतिवेदक रखते थे और इसकी सूचना सम्राट्को देते थे।··· योग्य और विश्वासपात्र व्यक्ति इस कार्यके लिए नियुक्त किये जाते थे।"

४. काशीप्रसाद जायसवालने इसका अर्थ इस प्रकार किया है: "यदि मैं स्वय अपने मुखसे यह आज्ञा दूँ कि अमुक आज्ञा लोगोंको दी जाय (दापकं) अथवा सुनायी जाय (स्रावकं) अथवा महामात्रोंको कोई आवश्यक आज्ञा दी जाय और यदि उस विषयमें परिषद्में कोई विवाद (मतभेद) उपस्थित हो अथवा परिषद् उसे अस्वीकार करे (निझति = निक्षिप्ति) तो मैंने आज्ञा दी है कि अविलम्ब हर घड़ी और हर समय मुझे सूचना दी जाय (इण्डियन ऐण्टिक्वेरी, १९१३ पृ० २८८)।" 'निझति'का संस्कृत 'निध्यप्ति' (= पुनर्विचार)।

सप्तम अभिलेख

(धार्मिक समता : संयम, भावशुद्धि)

१. देवानंपियो पियदसि राजा सर्वत इछति सवे पासंडा वसेयु [१] सवे ते सयमं च
२. भावसुधिं च इछति [२] जनो तु उचावचछंदो उचावच रागो [३] ते सर्वं व कासंति एक देसं व कसंति [४]
३. विपुले तु पि दाने यस नास्ति सयमे भावसुधिता व कतंञता व दढभतिता च निचा बाढं [५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वत्र इच्छति—सर्वे पाषण्डाः वसेयुः। सर्वे ते संयमं च
२. भावशुद्धिं च इच्छन्ति। जनः तु उच्चावचच्छन्दः उच्चावचरागः। ते सर्वं वा काङ्क्षन्ति एकदेशं वा करिष्यन्ति।
३. विपुलं तु अपि दानं यस्य नास्ति संयमः भावशुद्धिः वा कृतज्ञता वा दृढभक्तिता च नित्या वा बाढम्।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा सर्वत्र (साम्राज्यमें) इच्छा करते हैं कि सभी (धार्मिक) सम्प्रदाय बसें। वे सभी संयम और
२. भावशुद्धि चाहते हैं। किन्तु लोगोंके ऊँच-नीच विचार और ऊँच-नीच भाव होते हैं। वे या तो सम्पूर्ण (कर्तव्य) करेंगे अथवा उसका अंश।
३. जो बहुत दान नहीं कर सकता (उसमें भी) संयम, भावशुद्धि, कृतज्ञता, दृढ़भक्ति नित्य आवश्यक हैं[1]।

भाषान्तर टिप्पणी

१. ब्यूलरने 'नीचे बाढ'का अर्थ 'नीच मनुष्यमें प्रशंसनीय' किया है (धौली और जौगड पाठके आधारपर)।
हुल्त्जने 'निचा'का अर्थ 'नीच' (=निम्न कोटिका) दिया है (दी इन्स्क्रिप्शन्स ऑव् अशोक, पृ० १४)।

अष्टम अभिलेख

(धर्मयात्रा)

१. अतिकातं अंतरं राजानो[1] विहारयातां अयासु [१] एत मगव्या अञानि च एतारिसनि[2]
२. अभीरमकानि अहुंसु [२] सो देवानंप्रियो[3] पियदसि राजा दसवर्साभिसितो[4] संतो अयाय संबोधिं [३]
३. तेनेसा धंमयाता [४] एतयं होति बाम्हणसमणानं दसणे च दाने च थैरानं दसणे च
४. हिरंण पटिविधानो च जानपदस च जनस[5] दस्पनं[6] धंमानुसस्टी च धमपरिपुछा च
५. तदोपया [५] एसा भुय रति भवति देवानंपियस प्रियदसिनो राञो भागे अंञे [६]

संस्कृतच्छाया

१. अतिक्रान्तम् अन्तरं राजानः विहारयात्राम् इयासुः । अत्र मृगया अन्यानि च एतादृशानि
२. अभिरामाणि अभूवन् । तत् देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा दशवर्षाभिषिक्तः सन् इयाय सम्बोधिम् ।
३. तेन एषा धर्मयात्रा । तत्र इदं भवति-ब्राह्मण-श्रमणानां दर्शनं च दानं च स्थविराणां दर्शनं च ।
४. हिरण्यप्रतिविधानं च जानपदस्य च जनस्य दर्शनं धर्मानुशिष्टिः च धर्मपरिपृच्छा च ।
५. तदुपेया । एषा भूया रतिः भवति देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः भागः अन्यः ।

पाठ टिप्पणी

१. यह शब्द देवाना प्रियके पर्यायके रूपमें प्रयुक्त हुआ है ।
२. 'एतारिसानि' पाठ अधिक ठीक है ।
३. 'पियो' ब्यूलरके अनुसार ।
४. सेना और ब्यूलरके अनुसार—वसाभिसितो ।
५. ब्यूलर इसको 'जानस' पढ़ते हैं ।
६. सेना : दर्सनं; ब्यूलर : दसन ।

हिन्दी भाषान्तर

१. बहुत समय व्यतीत हुआ, राजा लोग विहारयात्रा[1]में जाते थे । इसमें मृगया और अन्य इसी प्रकारके
२. आमोद होते थे । किन्तु देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा (अपने) अभिषेकके दसवें वर्षमें संबोधि[2] (बोध गया) गये ।
३. इससे (यह) धर्मयात्रा (की प्रथा आरम्भ हुई) । इसमें यह होता है :—ब्राह्मण और श्रमणोंका दर्शन तथा उनको दान, वृद्धोंका दर्शन और
४. धनसे उनके पोषणकी व्यवस्था, जनपदके लोगोंका दर्शन, धर्मका आदेश और धर्मके सम्बन्धमें परिप्रश्न ।
५. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाके (शासनके) दूसरे भागमें यह प्रचुर रति होती है ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. अर्थशास्त्र और बुद्धचरितमें विहारयात्राका उल्लेख है । जिस प्रकारके आमोद प्रमोद 'समाज' में होते थे प्रायः उसी प्रकारके विहारयात्रामें भी ।
२. वह स्थान जहाँ भगवान बुद्धको 'सम्बोधि' (=सम्यक् ज्ञान) प्राप्त हुआ था । बुद्धके जीवनकी मुख्य घटनाओंसे सम्बद्ध स्थान तीर्थ बन गये । अशोकने उन स्थानोंकी यात्रा की (देखिये लुम्बिनी वन-अभिलेख । ब्यूलरने इसका अर्थ 'सम्यक् ज्ञान' किया है और लिखा है कि अशोकने 'सम्यक् ज्ञान' प्राप्त करनेके लिए प्रस्थान किया । डॉ० द० रा० भाण्डारकरने इसका अर्थ 'महाबोधि' (=बोध गया) किया है (देखिये, इण्डियन ऐण्टिक्वेरी-१९१८ पृ० १५९) । रिस डेविड्जने इसका अर्थ 'अष्टाङ्ग मार्ग' किया था (देखिये वही, १८९८, पृ० ६१९) ।

नवम अभिलेख

(धर्म-मङ्गल)

१. देवानंपियो प्रियदसि राजा एवं आह [१] अस्ति जनो उचावचं मंगलं करोते आबाधेसु वा
२. आवाहवीवाहेसु वा पुत्रलाभेसु वा प्रवासंम्हिवा एतम्ही च अञम्हि च जनो उचावचं मंगलं करोते [२]
३. एत तु महिडायो बहुकं च बहुविधं च छुदं च निरथं च मंगलं करोते [३] त कतव्यमेव तु मंगलं[2] [४] अपफलं तु खो
४. एतरिसं[3] मंगलं [५] अयं तु महाफले मंगले य धंममंगले [६] ततेतं दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती गुरूनं अपचिति साधु
५. पाणेसु सयमो साधु बम्हणसमणानं साधु दानं एत च अञ च एतारिसं धंममंगलं नाम [७] त वतव्यं पिता व
६. पुतेन वा भात्रा वा स्वामिकेन वा इदं साधु इदं कतव्यं मंगलं आव तस अथस निस्टानाय [८] अस्ति च पि वुतं
७. साधु दर्नं इति [९] न तु एतारिसं अस्ता दानं व अनगहो व यारिसं धंमदानं व धमनुगहो व [१०] त तु खो मित्रेन व सुहृदयेन वा
८. अतिकेन व सहायनें व ओवादितव्यं तम्हि पकरणे इदं कचं इदं सार्ध इति इमिना सक
९. स्वगं आराधेतु इति [११] कि च इमिना कतव्यतरं यथा स्वगारधी [१२]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । अस्ति जनः उच्चावचं मङ्गलं करोति । आबाधे वा
२. आवाहे विवाहे वा पुत्रलाभे वा प्रवासे वा एतस्मिन् च अन्यस्मिन् च जनः उच्चावचं मङ्गलं करोति ।
३. अत्र तु महिलाः बहुकं च बहुविधं च क्षुद्रकं च निरर्थकं च मङ्गलम् कुर्वन्ति । तत् कर्तव्यं तु मङ्गलम् । अल्पफलं तु खलु
४. एतादृशं मङ्गलं । इदं तु महाफलं मङ्गलं यत् धर्ममङ्गलम् । तत् इदं दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः गुरूणाम् अपचितिः साधु
५. प्राणेसु संयमः साधु ब्राह्मणश्रमणेभ्यः साधु दानम् । एतत् च अन्यत् च एतादृशं धर्ममङ्गलं नाम । तत् वक्तव्यं पित्रा वा
६. पुत्रेण वा भ्रात्रा वा स्वामिकेन वा इदं साधु इदं कर्तव्यं मङ्गलम् यावत् तस्य अर्थस्य निष्ठानाय । अस्ति च अपि उक्तं
७. साधु दानम् इति । न तु एतादृशं अस्ति दानं वा अनुग्रहो वा यादृशं धर्म दानं वा धर्मानुग्रहो वा । तत् तु खलु मित्रेण व सुहृदयेन वा
८. ज्ञातिकेन वा सहायेन वा वक्तव्यं तस्मिन् प्रकरणे इदं कृत्यं इदं साधु इति । एतेन शक्यं
९. स्वर्गम् आराधयितुम् इति । किञ्च अनेन कर्तव्यतरं यथा स्वर्गालब्धिः ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'एवं' पढते हैं ।
२. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'मंगल' पाठ होना चाहिये ।
३. 'एतारिस' पाठ अधिक ठीक है ।
४. सेना और ब्यूलर केवल 'तत' पढते हैं । परन्तु दोनोंके बीचमे ते स्पष्ट दिखाई पड़ता है ।
५. ब्यूलर 'कतव्यं' पढते हैं ।
६. 'दान' पाठ अच्छा है ।
७. 'सहायेन' पाठ अधिक अच्छा है ।
८. 'साधु' पाठ अच्छा है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवताओंके प्रिय (देवानां प्रिय) प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा । लोग बाधाओं,
२. आवाह-विवाह,[1] पुत्र-लाभ, अथवा प्रवासमें उच्च और नीच (विविध प्रकारके) मङ्गलकार्य करते हैं । इसी प्रकारके अन्य (अवसरों) पर भी लोग उच्च और नीच (विविध प्रकारके) मङ्गलकार्य करते हैं ।
३. किन्तु ऐसे (अवसरों) पर स्त्रियाँ बहुत और विविध प्रकारके क्षुद्र और निरर्थक मङ्गलकार्य करती हैं । मङ्गलकार्य तो कर्तव्य हैं । किन्तु इस प्रकारके
४. मङ्गलकार्य अल्प फलवाले हैं । जो धर्म मङ्गल है वह महा फलवाला है । वह यह है—दास और भृतकोंके प्रति शिष्टाचार साधु है । श्रेष्ठ जनोंके प्रति आदर, साधु है ।
५. प्राणियोंके प्रति संयम साधु है । ब्राह्मण-श्रमणोंको दान देना साधु है । ये और अन्य इसी प्रकारके धर्म, मङ्गल हैं । इसलिए पिता,
६. पुत्र, भाई और स्वामी द्वारा यह कहना चाहिये—"यह साधु है । इस अर्थकी प्राप्तिके लिए यह मङ्गल कर्तव्य है ।" और ऐसा कहा गया है,
७. "दान करना साधु है ।" ऐसा कोई दान और अनुग्रह नहीं है जैसा धर्मदान और धर्म-अनुग्रह ।[2] इसलिए मित्र, सुहृद्,
८. जाति, सहायक सभी द्वारा उपदेश करना चाहिये कि अमुक अवसरोंपर यह कृत्य (कर्तव्य) है, यह साधु है । इस (आचरण) से
९. स्वर्गका प्राप्त करना शक्य है । स्वर्गकी प्राप्ति[3] से बढ़कर अन्य क्या अधिक करणीय है ?

भाषान्तर टिप्पणी

१. बौद्ध ग्रन्थों—पालि और संस्कृत–में आवाह-विवाहका साथ प्रयोग मिलता है (देखिये दिव्यावदान, महावस्तु, जातक—अंग्रेजी अनुवाद, भाग ५, पृ० १४५) पाद टि० १) तुलना, चाइल्डर्स पालि डिक्शनरी । आवाहका अर्थ है पुत्रका विवाह (कन्या बाहरसे लाना) और विवाहका अर्थ है पुत्रीका विवाह (कन्या बाहर ले जाना) ।
२. धम्मदान और धम्मानुग्गहका उल्लेख इतिवुत्तकमें मिलता है ।
३. सामान्य जनोंके लिए बौद्ध धर्ममें भी निर्वाणकी अपेक्षा स्वर्ग ही अधिक आकर्षक था ।

दशम अभिलेख

(धर्म-शुश्रूषा)

१. देवानं पियो[1] प्रियदसि राजा यसो व कीति व न महाथावहा मञते[2] अञत तदात्पनो[3] दिघाय च मे जनो
२. धंमसुस्रूसा सुस्रुसता[4] धंमवुतं च अनुविधियतां [१] एतकाय देवानं पियो पियदसि राजा यसो व किति व इछति [२]
३. यं तु किंचि[5] परिकमते[6] देवानं प्रियदसि राजा त सव पारत्रिकाय किंति सकले अपपरिस्रवे[7] अस [३] एस तु परिसवे[8] य अपुंञं [४]
४. दुकरं तु खो एतं छुदकेन व जनेन उसटेन व अञत्र अगेन पराक्रमेन[9] सवं परिचजित्या [५] एत तु खो उसटेन दुकरं [६]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्ति वा न महार्थावहां मन्यते—अन्यत्र तदात्मनः दीर्घाय च मे जनः
२. धर्म-शुश्रुषा शुश्रूषतां धर्मोक्तं च अनुविधीयताम्। एतस्मै देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्ति वा इच्छति
३. यत् च किञ्चित् प्रक्रमते देवानां प्रियदर्शी राजा तत् सर्वं पारत्रिकाय किमिति? सकलः अल्पपरिस्रव स्यात्। एषः तु परिस्रवः यत् अपुण्यम्।
४. दुष्करं तु खलु एतत् क्षुद्रकेण वा जनेन उच्छ्रितेन (उत्कृष्टेन) वा अन्यत्र अग्र्यात् पराक्रमात् सर्वं परित्यज्य। एतत् तु खलु उच्छ्रितेन दुष्करम्।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'देवान प्रियो'।
२. ब्यूलर 'मंञते' पढ़ते हैं।
३. कर्न इसको 'तदात्पने' पढ़ते हैं (फार टेलिंग, पृ० ८७)
४. ब्यूलर 'सुस्रुसा' पढ़ते हैं।
५. ब्यूलर 'किंचि' पढ़ते हैं।
६. सेनाके अनुसार 'पराकमते' अथवा 'पराकामते'।
७. ब्यूलरके अनुसार 'अप्प०'।
८. ब्यूलरके अनुसार 'परिस्रवे'।
९. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'पराकमेन'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा यश अथवा कीर्तिको बहुमूल्य नहीं मानते इसके अतिरिक्त[1] कि अपने (समयमें) और सुदूर (भविष्यमें) मेरी प्रजा (इसके द्वारा)
२. धर्माचरणके लिए प्रेरित हो और धर्मकी विहित (विधियों)का पालन करे। (केवल) इसीलिए देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा यश अथवा कीर्तिकी इच्छा करते हैं।
३. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा जो कुछ भी पराक्रम करते हैं वह सब परलोकके लिए, जिससे सब लोग अल्प-पाप वाले हों।[2] जो अपुण्य (पाप) है वही परिस्रव है।
४. उत्तम पराक्रम और अन्य (सभी कर्मोंके) परित्याग[3]के बिना क्षुद्र अथवा बड़े (उत्कृष्ट)[4] किसी व्यक्तिसे यह सम्भव नहीं। इन (दोनों)मेंसे बड़ेसे (और भी) दुष्कर है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. तदात्वनो = तदात्वम्। (तत्कालस्तु तदात्वं स्यात् उत्तरःकाल आयतिः इति अमरः।) मेदिनीके अनुसार 'आयतिस्तु क्रिया दैर्घ्ये'; दैर्घ्यका अर्थ 'सुदूर भविष्यमें'। अर्थशास्त्र (५.१): 'आयत्या च तदात्वे च क्षमावानविशंकितः'। (५.४): तदात्वे च आयत्या च।
२. अपपरिस्रव : अल्पपरिस्रव। स्रव : संस्कृत धातु 'स्रु' बहनेसे व्युत्पन्न। 'परिस्रव'का अर्थ है (मनकी कुवृत्तियोंका) विशेष प्रवाह। परिस्रवका रूढार्थ है 'पाप'। सम्पूर्ण अपाप संभव नहीं; अतः अल्प पाप (देखिये, अल्पव्ययता, अपभाण्डता)।
३. पूर्वकालिक क्रिया।
४ संस्कृत 'उच्छ्रितेन' = ऊँचे पदवालेके द्वारा।

एकादश अभिलेख

(धर्म-दान)

१. देविनं प्रियो[1] पियदसि राजा एवं आह [१] नास्ति एतारिसं दानं यारिसं धंमदानं धंमसंस्तवो वा धंमसंविभागो [वा][2] धंमसंबधो[3] व [२]

२. तत इदं भवति दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती मातरि पितरा[4] साधु सुस्रुसा मितसस्तुत आतिकानं बाम्हणस्रमणानं[5] साधु दानं

३. प्राणानं अनारंभो साधु [३] एत वतव्यं पिता व पुत्रेन व भाता व मितसस्तुतआतिकेन व आव पटिवेसियेहि[6] इदं[7] साधु इदं कतव्यं [४]

४. सो तथा करु[8] इलोकचस आरधो होति परत च अंनंतं[9] पुञं[10] भवति तेन धंमदानेन [५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। नास्ति एतादृशं दानं यादृशं धर्मदानं धर्मसंस्तवः वा धर्मसंविभागः वा धर्मसम्बन्धः वा।

२. तत् इदं भवति दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः मातरि पितरि साधु शुश्रूषा मित्र-संस्तुत-ज्ञातिकेभ्यः ब्राह्मण-श्रमणेभ्यः साधु दानं

३. प्राणानाम् अनालम्भः साधु। एतत् वक्तव्यं पित्रा वा पुत्रेण वा भ्रात्रा वा मित्र-संस्तुत-ज्ञातिकैः वा यावत् प्रतिवेश्यैः 'इदं साधु इदं कर्तव्यम्'।

४. सः तथा कुर्वन् (तस्य तथा कुर्वतः) इहलोकः आलब्धः भवति परत्र च अनन्तं पुण्यं भवति तेन धर्मदानेन।

पाठ टिप्पणी

१. सेना और ब्यूलरके अनुसार देवान०।
२. ब्यूलरके अनुसार 'व'।
३. '-सबंधो' पढ़िये।
४. 'पितरि' पढ़िये।
५. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'समणानं'।
६. हुल्त्शके अनुसार 'पटी०'
७. 'इद' शुद्ध पाठ।
८. 'करु' शुद्ध पाठ।
९. 'अनंत' शुद्ध पाठ।
१०. 'पुंञ' शुद्ध पाठ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। ऐसा कोई दान नहीं जैसा धर्मदान; (ऐसी कोई मित्रता नहीं) जैसी धर्म-मित्रता; (ऐसी कोई उदारता नहीं) जैसी धर्मकी उदारता;[1] (ऐसा कोई सम्बन्ध नहीं) जैसा धर्म-सम्बन्ध।

२. वह (धर्म) यह है—दास और भृतकों (नौकरों) के प्रति शिष्टाचार (साधु); माता-पिताकी शुश्रूषा साधु; मित्र, परिचित, जाति (और) ब्राह्मण-श्रमणोंको दान देना साधु,

३. प्राणियोंका अवध साधु। पिता, पुत्र, भ्राता, मित्र, परिचित (और) जाति तथा पड़ोसवालोंसे यह वक्तव्य है—"यह साधु है; यह कर्तव्य है।"

४. जो इस प्रकार आचरण करता है[2] (उसको) इस लोककी प्राप्ति[3] होती और परलोकमें उस धर्मदानसे अनन्त पुण्य होता है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'धम्म-दान' और 'धम्म-संविभाग'का उल्लेख इतिवुत्तकमें मिलता है। 'धम्मदान'का अर्थ है धर्मोपदेश और धर्म-संविभागका अर्थ है धर्मके लिए दानका बँटवारा।
२. कालसी संस्करणमें कलंत = संस्कृत 'कुर्वन्'।
३. आरध (= संस्कृत आलब्ध) भाववाचक संज्ञाके रूपमें।

द्वादश अभिलेख

(सार-वृद्धि)

१. देवानं पिये पियदसि राजा सव पासंडानि च पवजितानि च घरस्तानि च पूजयति दानेन च विवाधाय[1] च पूजाय पूजयति नं [१]

२. न तु तथा दानं व पूजा व देवानं पियो मंञते यथा किति सारवढी अस सवपासंडानं [२] सारवढी तु बहुविधा [३]

३. तस[2] तु इदं मूलं य वचगुती किंति आत्पपासंडपूजा व पर पासंड गरहा[3] व नो भवे अप्रकरणम्हि लहुका व अस

४. तम्हि तम्हि प्रकरणे [४] पूजेतया तु एवपर पासंडा तेन तन[4] प्रकरणेन। एवं करुं आत्मपासंडं च वढयति पासंडस च उपकरोति[५]

५. तदंञथा करोतो आत्पपासंड च छणति परपासंडस च पि अपकरोति [६] यो हि कोचि आत्पपासंडं पूजयति परपासंडं व गरहति

६. सवं आत्प पासंडभतिया किंति आत्पपासंडं दीपयेम इति सो च पुन तथ करातो आत्पपासंडं बाढतरं उपहनाति [७] त समवायो एव साधु

७. किंति अञमंञस धंमं स्रुणारु च सुसुंसेर[5] च [८] एवं हि देवानंपियस इछा किंति सवपासंडा बहुस्रुता च असुकलाणागमा च असु [९]

८. ये च तत्र तत् प्रसंना तेहि वत्तव्यं [१०] देवानंपियो नो तथा दानं व पूजां व मंञते यथा किंति सारवढी अस सर्वपासडानं [११] बहका च एताय

९. अथा व्यापता धंममहामाता च इथीझखमहामाता च वचभूमीका च अञे च निकाया [१२] अयं च एतस फल य आत्पपासंडवढी च होति धंमस च दीपना [१३]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वान् पाषण्डान् च प्रव्रजितान् च गृहस्थान् च पूजयति दानेन च विविधया च पूजया पूजयति।

२. न तु तथा दानं वा पूजां वा देवानां प्रियः मन्यते यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्वपाषण्डानाम्। सारवृद्धिः तु बहुविधाः।

३. तस्य तु इदं मूलं यत् वचोगुप्तिः किमिति ? आत्मपाषण्ड पूजा वा परपाखण्डगर्हा वा न भवेत् अप्रकरणे लघुका वा स्यात्

४. तस्मिन् तस्मिन प्रकरणे। पूजयितव्या तु एव परपाषण्डाः तस्मिन् तस्मिन् प्रकरणे। एवं कुर्वन् आत्मपाषण्डं च वर्द्धयति परपाषण्डं च उपकरोति।

५. तदन्यथा कुर्वन् आत्मपाषण्डं च क्षिणोति परपाषण्डं चापि अपकरोति। यः हि कश्चित् आत्मपाषण्डं पूजयति परपाषण्डं च गर्हयति

६. सर्वम् आत्मपाषण्डभक्त्या किमिति ? 'आत्मपाषण्डं च दीपयेम' इति सः च पुनः तथा कुर्वन् आत्मपाषण्डं बाढतरम् उपहन्ति। तत् समवायः एव साधु

७. किमिति ? अन्योन्यस्य धर्मं शृणुयुः च शुश्रूषेरन् च। एवं हि देवानां प्रियस्य इच्छा। किमिति ? सर्वे पाषण्डाः बहुश्रुताः च स्युः कल्याणागमाः च स्युः।

८. ये च तत्र तत्र प्रसन्नाः तैः वक्तव्यम। देवानां प्रियः न तथा दानं वा पूजां वा मन्यते यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्वपाषण्डानाम्। बहुका च एतस्मै

९. अर्थाय व्यापृताः धर्ममहामात्राः च स्त्र्यध्यक्षमहामात्रा च व्रजभूमिका च अन्ये च निकायाः। इदं च एतस्य फलं यत् आत्मपाषण्डवृद्धिः च भवति धर्मस्य च दीपना।

पाठ टिप्पणी

१. 'विविधाय' अच्छा पाठ है।
२. शिलापर पहले 'तम तस' खोदा गया था। प्रथम म और द्वितीय त पीछेसे खुरेद दिये गये।
३. 'पासंद'का 'सं' अक्षर पीछेसे खोदा हुआ है।
४. 'तेन' पढ़िये।
५. सेनाके अनुसार 'सुसंसेरा'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा सभी[1] धार्मिक सम्प्रदायों—प्रव्रजित (संन्यासी) और गृहस्थको पूजते हैं; दान और विविध प्रकारकी पूजासे पूजते हैं।

२. किन्तु दान और पूजाको देवानांप्रिय (उतना) नहीं मानते जितना इस बातको कि सभी सम्प्रदायोंमें (धर्मके) सार (तत्व) की वृद्धि हो। सारवृद्धि कई प्रकारकी होती है।

३. उसका मूल है वचनका संयम।[2] कैसे ? अनुचित अवसरोंपर अपने सम्प्रदायकी प्रशंसा और दूसरोंके सम्प्रदायकी निन्दा नहीं होनी चाहिये; थोड़ी होनी चाहिये

४. किसी भी अवसरपर। परन्तु उन अवसरोंपर दूसरे सम्प्रदाय पूजनीय हैं। ऐसा करता हुआ (मनुष्य) अपने सम्प्रदायकी वृद्धि करता है और दूसरे सम्प्रदायका उपकार।

५. इसके विपरीत करता हुआ अपने सम्प्रदायको क्षीण करता है और दूसरे सम्प्रदायका अपकार। जो कोई अपने सम्प्रदायकी पूजा करता है (और) दूसरे सम्प्रदायकी निन्दा करता है

६. सब अपने सम्प्रदायकी भक्तिके कारण कि किस प्रकार अपने सम्प्रदायका दीपन (प्रकाश) किया जाय। वह ऐसा करता हुआ अपने सम्प्रदायकी बहुत हानि करता है। इसलिए समवाय[1] (समन्वय) साधु है।

७. कैसे ? एक-दूसरेके धर्मको सुनना और सुनाना चाहिये । ऐसी देवानां प्रियकी इच्छा है कि सभी सम्प्रदाय बहुश्रुत[४] और शुभ-सिद्धान्तवाले हों ।

८. जो अपने-अपने सम्प्रदायमें अनुरक्त[५] हों वे (दूसरोंसे) कहें, "देवानांप्रिय दान और पूजाको उतना नहीं मानते जितना कि इस बातको कि सब सम्प्रदायोंमें (धर्म)-के सार (तत्त्व)की वृद्धि हो ।" इस प्रयोजनके लिए बहुतसे

९. धर्ममहामात्र, स्त्र्याध्यक्ष महामात्र,[६] व्रजभूमिक[७] और अन्य (अधिकारी) वर्ग नियुक्त हैं । इसका यह फल है कि (इससे) अपने सम्प्रदायकी वृद्धि और धर्मका दीपन होता है ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'सवपासंगनि'के पश्चात् च अनावश्यक है ।

२. 'वचि-गुती'के बदले अन्य संस्करणोंमें 'वच-गुति' पाया जाता है । वचनका 'गोपन' (गुप्त रखना = संयम) ।

३. सं + अव + इ (सम्यक् प्रकारसे साथ चलना) ।

४. अमरकोशके अनुसार "श्रुतं शास्त्रावधृतयोः" ।

५. बौद्ध साहित्यमें 'प्रमाद'का अर्थ 'विश्वास' अथवा 'अनुराग' है ।

६. इन अधिकारियोंकी नियुक्ति स्त्रियोंके नैतिक आचरणको देखनेके लिए हुई थी ।

७. 'व्रज' अथवा 'गोचरभूमि'में बसनेवाले गोपोंके नैतिक आचरणकी देखभाल करनेके लिए व्रजभूमिकोंकी नियुक्ति हुई थी । तुलना, अर्थशास्त्र (२'३४)में विवीताध्यक्ष । प्राकृतमें 'व्रज्' धातुका 'वच्च्' हो जाता है । देखिये 'च्चो व्रजनृत्योः' (प्राकृतप्रकाश) ।

त्रयोदश अभिलेख

(वास्तविक विजय)

१. ···ओ कलिंगा विज···[१]···वठे सत सहस्रमात्रं तत्रा बहुतावतकं मत[1] [२] तता पछा अधुना[2] लधेसु कलिंगेसु तीवो धंमवायो
२. ···सयो देवानंप्रियस वज···वधो व मरणं व अपवाहो व जनस त[3] बाढं वेदनमत[4] च गुरुमत[5] च देवानंपि···स
३. ···बाम्हणा गुरु सुसुंसा[6] मितसंस्तत[7] सहायञाति केसु दासभ···
४. ···अभिरतानं व विनिखमण [७] येसं वा प···हायञातिका व्यसनं प्रापुणति तत[8] सो पि तेस[9] उपघातो हाति[10] [८] पटीभागो चेसा सव···
५. ···स्ति इमे निकाय अञत्र योनेसु[11]···म्हि यत्र नास्ति मानुसानं[12] एकतरम्हि पासंडम्हि न नाम प्रसादो [१०] यावतको जनो तदा
६. ···स्रभागो व गरुमतो देवानं···न य सक[13] छमितवे [१२] या च पि अटवियो देवानं पियस[14] पिजित[15] पाति[16]
७. ···चते तेसं देवानंपियस···सवभूतानां अछतिं च सयमं च समचैरं च मादव च
८. ···लधो···न प्रियस इध सवेसु च···योनराज परं च तेन चत्वारो राजानो तुरमायो च अंतेकिन च मगा च
९. ···इध राजविसयम्हि योनकंबो···भ्रपारिंदेसु सवत देवानंप्रियस धंमानुसस्टि अनुवतर [१८] यत पि इति
१०. ···नं धमानुसस्टि च धमं अनुविधियरे···विजयो सवथा पुन विजयो पोतिरसो सा[17] [२०] लधा सा पीती होति धंमवीजयम्हि
११. ···प्रियो [२३] एताय अथाय अयं धंमल···वं विजयं मा विजेव्यं मंञा सरसके एव विजयं छाति च
१२. ···किको च पारलोकिको···इलोकिका च पारलोकिका च । [२४]

संस्कृतच्छाया

१. ···[रा] ज्ञः कलिङ्गाः विजि[ताः]···। ···[अप] व्यूढं शतसहस्रमात्रं तत्र हतं बहुतावत्कं मृतम् । ततः पश्चात् अधुना लब्धेषु कलिङ्गेषु तीव्रः धर्मोपायः
२. ···[अनु]शयः देवानां प्रियस्य विजि[त्य]···वधः वा मरणं वा अपवाहः वा जनस्य तत् बाढं वेदनीयमतं च गुरुमतं च देवानां प्रि[यस्य]···स···
३. ···ब्राह्मणाः···गुरुशुश्रूषा मित्र-संस्तुत-ज्ञातिकेषु दासभृ[त के षु]
४. ···अभिरक्तानां च विनिष्क्रमणम् । येषां वा अपि···[स] हायज्ञातिकाः व्यसनं प्राप्नुवन्ति । तत्र सः अपि तेषाम् उपघातः भवति । प्रतिभागः च एषः सर्व···
५. ···सन्ति इमे निकाया अन्यत्र यवनेषु···[जनप] दे यत्र नास्ति मनुष्याणाम् एकतरस्मिन् पापण्डे न नाम प्रसादः । यावान् जनः तदा···
६. ···[सह] स्रभागः वा गुरुमतः देवानं···न यत् शक्यं क्षन्तुम् । या च अपि अटवी देवानां प्रियस्य विजिते भवति···
७. ···च ते तेषां देवानां प्रियस्य···सर्वभूतानाम् अक्षति च संयमं च समाचर्यां च मार्दवं च
८. ···लब्धः···[देवा] नं प्रियस्य··· इह सर्वेषु च···यवनराजः परं च तस्मात् चत्वारः राजानः तुलमयः च अन्तेकिनः च मगः च
९. ···इह राज-विषयेषु यवन-कम्बो [अं] ध्र पुलिन्देषु सर्वत्र देवानां प्रियस्य धर्मानुशस्तिः···अनुवर्तते । यत्र अपि दूताः
१०. ···नं धर्मानुशस्ति च धर्मम् अनुविदधति विजयः सर्वथा पुनः विजयः प्रीतिरसः सः । लब्धा सा प्रीतिः भवति धर्मविजये
११. ···प्रियः । एताय अर्थाय इयं धर्म लि[पिः]···[न] वं विजयं मा विजेतव्यं मंसत । स्वके एव विजये क्षान्तिं च
१२. ··· [ऐहलौ] किकः च पारलौकिकः··· ऐहलौकिकी च पारलौकिकी च ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'मतं'।
२. ब्यूलर इसको 'अधना' पढ़ते हैं।
३. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'त'।
४. –'मत'पाठ अधिक ठीक है।
५. '–मत' पाठ अधिक ठीक होगा।
६. ब्यूलरके अनुसार 'सुसूसा'।
७. '–सस्तुत' पाठ ब्यूलर स्वीकार करते हैं।
८. सेनाके अनुसार 'तता' और ब्यूलरके अनुसार 'तत्र'।
९. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'तसं'
१०. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'होति'।
११. सेनाका सुझाव 'यो नेसु', समुचित नहीं।
१२. ब्यूलरके अनुसार 'मनु०'।
१३. ब्यूलरके अनुसार 'सक'।
१४. ब्यूलरके 'प्रियस'।
१५. 'विजिते' अधिक शुद्ध है।
१६. 'होति' अधिक शुद्ध पाठ होगा।
१७. ब्यूलरके अनुसार '–सो'।

हिन्दी भाषान्तर

१. ···राजा द्वारा कलिंग[1] जीता गया···।···अप[हृत] वहाँ एक लाख मारे गये और बहुतसे मर गये। उसके पश्चात् इस समय कलिङ्ग जीत लेनेपर धर्मका तीव्र उपाय[2]

२. ···देवानां प्रियका अनुताप (कलिङ्ग) जीतकर···(जो) जनताका वध, मरण अथवा अपवाह हुआ वह देवानांप्रियके मनमें बहुत शोककर और गम्भीर है[3]···

३. ···ब्राह्मण···गुरुकी शुश्रूषा, मित्र, परिचित, जाति, दास, भृतकों (नौकरों)के प्रति···

४. ···प्रियजनोंका निष्कासन। अथवा जिनके भी···सहायक और जाति (वाले) विपत्तिको प्राप्त होते हैं। यह विपत्ति भी उनके लिए आघात है। सभीके भाग्यमें यह है।

५. ···यवन देशके अतिरिक्त (सर्वत्र) ये निकाय (समूह) हैं···(ऐसा कोई जन)पद नहीं है जहाँ मनुष्योंका किसी सम्प्रदायमें विश्वास न हो। जितने मनुष्य उस समय···

६. ···(उसका) हजारवाँ भाग भी देवानांप्रियके लिए गम्भीर है। जो क्षमा किया जा सके। जो जंगली प्रदेश देवानांप्रियके साम्राज्यमें हैं···

७. ···और वे···देवानांप्रियके··· ··सब प्राणियोंके प्रति सुरक्षा, संयम, समुचित व्यवहार और मृदुता

८. ···प्राप्त है देवानांप्रियके और यहाँ सब सीमाप्रान्तोंमें यवनराज और उससे परे चार राजे --तुरमाय, अन्तेकिन्, मग [और अलिकसुन्दर]—···

९. ··यहाँ राजविषयोंमें यवन-कम्बो (ज) ··अन्ध्र-पुलिन्दोंमें सर्वत्र देवानांप्रियका धर्मानुशासन है···अनुसरण करते हैं। जहाँ भी दूत

१०. ···और धर्मानुशासन नहीं हैं। वहाँ भी लोग धर्मका अनुसरण करते हैं। विजय सर्वथा विजय वही है जो प्रीतिरस (स्नेह) है। वह प्रीति धर्मविजयमें प्राप्त होती है।[4]

११. ···प्रियः। इस उद्देश्यसे यह धर्मलिपि···नये विजयको जीतने (प्राप्त करने)का विचार नहीं करना चाहिये। यदि विजय चाहते हैं तो शान्ति···

१२. ···(ऐह) लौकिक ·और पारलौकिक·· ऐहलौकिकी और पारलौकिकी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. बहुतवचनान्त 'कलिङ्गा'का प्रयोग देशके अर्थमें हुआ है। बंगाल खाडीके किनारे महानदी और गोदावरीके बीचका प्रदेश। रोमन इतिहासकार प्लिनीने कलिङ्गको तीन भागोंमें बाँटा है --कलिङ्ग, मध्यकलिङ्ग और महाकलिङ्ग। राजेन्द्रलाल मित्रके अनुसार ये तीनों मिलकर 'त्रिकलिङ्ग' कहलाते थे; महाकलिङ्ग अथवा उत्कलिङ्ग-का संक्षेप 'उत्कल' है।

२. धर्मोपायः = धर्मपालनका उपाय (तुलना : शाह-'ध्रमपलन'।)

३. अर्थशास्त्र (७.११) 'व्यायामयुद्धे हि क्षयव्ययाभ्यामुभयोरवृद्धिः। जित्वापि हि क्षीणदण्डकाशः पराजितो भवति।' से तुलना कीजिये।

४. अर्थशास्त्रके अनुसार विजय तीन प्रकारका—(१) धर्मविजय (२) लोभविजय और (३) असुरविजय।

चतुर्दश अभिलेख

(उपसंहार)

१. अयं धंमलिपी देवानं प्रियेन प्रियदसिना राजा लेखापिता अस्ति एव
२. संखितेन अस्ति मझमेन अस्ति विस्ततन[1] [१] न च सर्वं सर्वत घटितं [२]
३. महालके हि विजितं बहु च लिखितं लिखापयिसं चेव [३] अस्ति च एत कं
४. पुन पुन वुतं तस तस अथस[2] माधूरताय किंति जनो तथा पटिपजेथ [४]
५. तत्र एकदा असमातं लिखितं अस देसं व सछाय कारणं व
६. अलोचेत्पा लिपिकारापरधेन व [५]

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा लेखिता। अस्ति एव
२. संक्षिप्तेन अस्ति मध्यमेन अस्ति विस्तृतेन। न च सर्वं सर्वत्र घटितम्।
३. महल्लकं हि विजितम्। बहु च लिखितं लेखयिष्यामि च नित्यम्। अस्ति च एतत्
४. पुनः पुनः उक्तं तस्य तस्य अर्थस्य माधुर्याय। किमिति? जनः तथा प्रतिपद्येत।
५. तत्र एकदा असमाप्तं लिखितं स्यात् देशं वा संक्षयकारणं वा
६. आलोच्य लिपिकरापराधेन वा।

पाठ टिप्पणी

१. 'विस्ततेन' अधिक ठीक पाठ है।
२. इसमें 'स' अक्षर पीछेसे जोड़ा गया है।

हिन्दी भाषान्तर

१. यह धर्मलिपि देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखायी गयी (यह लिखी गयी) है
२. संक्षेपसे, मध्यमरीतिसे और विस्तारसे। सभी सर्वत्र नहीं घटित[1] (सम्भव) है।
३. साम्राज्य विशाल[2] है। बहुत लिखा गया है और बराबर लिखवाऊँगा। यह है
४. पुनः पुनः कहा गया अपने अर्थके माधुर्यके कारण इसलिए कि लोग उसका प्रतिपालन करें।
५. इसमेंसे कुछ एक अपूर्ण लिखी गयी हैं स्थान, संक्षेपीकरण[3] अथवा
६. लिपिकर (लेखक अथवा उत्कीर्णक)के अपराधके कारण।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'संयोजित' अथवा 'लिखित'। कुछ लोगोंने इसका अर्थ 'उचित अथा उपयुक्त' किया है।
२. 'महल्लक'का अर्थ प्रायः 'वृद्ध' होता है। किन्तु यहाँ इसका प्रयोग 'विशाल'के अर्थमें किया गया है।
३. कुछ लोग इसे 'संक्षयकारण'को शिला-भगके अर्थमें ग्रहण करते हैं।

त्रयोदश शिलालेखके निम्नभागमें : बायीं ओर

१. ············तेष············
२. ············पिपा············

संस्कृतच्छाया

१. ·········· सेषां·· ·········
२. ····· ······पिपा······· ·

त्रयोदश शिलालेखके निम्नभागमें : दाहिनी ओर

१. ············र्वस्वेतो हस्ति सर्वलोक सुखाहरो नाम

संस्कृतच्छाया

१. ····· ······[स] र्व श्वेतः हस्ति सर्वलोक सुखाहरः नाम ।

हिन्दी भाषान्तर

१. सर्व श्वेत हस्ति[1] (बुद्ध) सम्पूर्ण विश्वको वस्तुतः सुख पहुँचानेवाले ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. श्वेत हस्ति बुद्धका प्रतीक है । पशुओंमें हस्ति बुद्धिका भी द्योतक है । भगवान बुद्धकी माता मायाने स्वप्न देखा था कि श्वेत हस्तिने उनके गर्भमें प्रवेश किया : चाइल्डर्स : पालि डिक्शनरीमें देखिये 'सब्बसेतो' ।

कालसी शिला

प्रथम अभिलेख

(जीव-दया : पशु-याग तथा मांस-भक्षणनिषेध)

१. इयं धंमलिपि देवानं पियेना पियदसिना लेखिता [१] हिदा नो[१] किछि जिवे आलभितु पजोहितविये [२]

२. नो पि चा समाजे कटविये [३] बहुका हि दोसा समाजसा'''देनानंपिये पियदसी लाजा देखति [४] अथि पि चा एकातिया समाजा[२] साधुमता देवानं पियसा पियदसिसा लाजिने [५]

३. पुले महानससि देवानं पियसा पियदसिसा लाजिने[३] अनुदिवसं बहुनि पानसहसाणि[४] अलंभियिसु[५] सुपठाये[६] [६] से इदानि यदा इयं धंमलिपि लेखिता तदा तिंनि येवा पानानि अंलंभियंति

४. दुवे मजूला[७] एके गे भिसे पि चु मिगे नो धुवे [७] एतानि पि चु तानि पानानि नो अलाभियिसंति [८]

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना लेखिता। इह न कश्चित् जीवः आलभ्य प्रहोतव्यः।

२. न अपि च समाजः कर्त्तव्यः। बहुकान् हि दोषान् समाजस्य देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा पश्यति। सन्ति अपि च एकतराः समाजाः साधुमता देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः।

३. पुरा महानसे देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः अनुदिवसं बहूनि प्राणशतसहस्राणि आलभ्यन्त सूपाथाय। तत् इदानीं यदा इयं धर्मलिपिः लेखिता तदा त्रयः एव प्राणाः आलभ्यन्ते

४. द्वौ मयूरौ एकः मृगः सः अपि च मृगः न ध्रुवः। एते अपि च त्रयः प्राणाः न आलप्स्यन्ते।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर और बसाकके अनुसार 'ना'।
२. ब्यूलर 'समाज' पठते हैं।
३. ब्यूलरके अनुसार 'लजिने'।
४. सेना 'सत सह साणि'; ब्यूलरके अनुसार—'पान-सत सहसाणि'।
५. ब्यूलरके अनुसार 'आलभियिसु'।
६. बसाक 'सुपथाये' पढ़ते हैं।
७. ब्यूलरके अनुसार 'आलिभि०'।
८. ब्यूलरके अनुसार 'मजुला'।

हिन्दी भाषान्तर

१. यह धर्मलिपि[१] देवानां प्रिय[२] (देवताओंके प्रिय) प्रियदर्शी[३] द्वारा लिखवायी गयी। यहाँ किसी जीवधारीको मारकर हवन न किया जाय।

२. और समाज[४] भी न किया जाय; क्योंकि देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजा समाजके बहुत दोषोंको देखते हैं। तथापि एक प्रकारके समाज देवताओंके प्रिय पियदर्शीके मतमें साधु हैं।

३. पहले देवताओंके प्रिय राजा प्रियदर्शीकी पाकशालामें प्रतिदिन अनेक शत सहस्र (लाख) प्राणी सूपके निमित्त मारे जाते थे किन्तु जब यह धर्मलेख लिखवा दिया गया तब केवल तीन ही प्राणी मारे जाते हैं—

४. दो मयूर तथा एक मृग और वह मृग भी निश्चित नहीं। ये तीनों प्राणी भी (भविष्यमें) नहीं मारे जायेंगे।

भाषान्तर टिप्पणी

१–४. देखिये गिरनार अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणियाँ

५. गिरनार अभिलेखका 'पछा' शब्द कालसी अभिलेखमें नहीं पाया जाता है।

द्वितीय अभिलेख

(लोकोपकारी कार्य)

४. सवता विजतसि देवानं पियस पियदसिसा लाजिने ये च अंता अथा चोडा पंडिया सातियपुतो केतलपुतो तंबपंनि
५. अंतयोग[1] नाम योनलाजा ये चा अंने तसा अंतियोगसा सामंता लाजानो सवता देवानं प्रियसा पियदसिसा लाजिने दुवे चिकिसका कटा मनुसचिकिसा पसुचिकिसा चा [१] ओसधीनि[1] मनुसोपगानि चा पसोपगानि चा[2] अतता नथि
६. सवता हालापिता चा लोपापिता[3] चा [२] एवमेवा मुलानि चा फलानि चा अतता नथि सवता हालापिता चा लोपापिता चा। मगेसु लुखानि लोपितानि उदुपानानि खानापितानि पटिभोगाये[4] पसुमुनिसानं [३]

संस्कृतच्छाया

४. सर्वत्र विजिते देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः ये च अन्ताः यथा चोडाः पाण्ड्याः सत्यपुत्रः केरलपुत्रः ताम्रपर्णी
५. अंतियोकः नाम यवनराजः ये च अन्ये तस्य अंतियोकस्य सामन्ताः राजानः सर्वत्र देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः द्वे चिकित्से कृते मनुष्यचिकित्सा च पशुचिकित्सा च। औषधानि मनुष्योपगानि च पशूपगानि च यत्र यत्र न सन्ति
६. सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च। एवं एव मूलानि च फलानि च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च। मार्गेषु वृक्षाः रोपिता उदपानानि च खानितानि प्रतिभोगाय पशुमनुष्याणाम्।

पाठ टिप्पणी

१. सना और ब्यूलरके अनुसार 'ओसधानि'।
२. वही, 'वा'।
३. वसाक, लोपापिता (अशोकन इंस्क्रिप्शन्स, पृ० ७)
४. वही, 'परिभोगाय'।

हिन्दी भाषान्तर

४. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा साम्राज्यमें सर्वत्र तथा सीमान्त राज्योंमें यथा चोड[1], पाण्ड्य[2], सतियपुत्र[3], केरलपुत्र[4], ताम्रपर्णी[5],
५. अंतियोक[6] नामक यवनराज तथा उस अंतियोकके जो पड़ोसी[7] राजा हैं सर्वत्र देवताओंके प्रिय प्रियदर्शीने दो [प्रकारकी] चिकित्सा—मनुष्योंकी चिकित्सा और पशुओंकी चिकित्सा –की (व्यवस्थाकी) है। मनुष्योपयोगी एवं पशुओंके लिए उपयोगी ओषधियाँ भी जहाँ-जहाँ नहीं थीं
६. मँगवाकर सर्वत्र रोप दी गयी हैं। इसी प्रकार जहाँ-जहाँ मूल और फल नहीं थे मँगवाये गये और सर्वत्र रोपे गये। मार्गोंमें पशुओं और मनुष्योंके उपयोगके लिए वृक्ष लगाये गये हैं और कुएँ खुदवाये गये हैं।

भाषान्तर टिप्पणी

१-६. देखिये द्वितीय गिरनार अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।
७. 'सामन्त'का अर्थ यहाँ 'अधीन' नहीं अपितु 'पड़ोसी' (समान = उभयनिष्ठ अन्तवाले) है।

तृतीय अभिलेख

(धर्मप्रचार : पञ्चवर्षीय दौरा)

६. देवानं पिये पियदसि लाजा हेवं आहा [१]

७. दुवाडसवसा भिसितेन मे इयं आनपतिये [२] सवता विजितसि मम युता लजूके[1] पादेसिके पंचसु पंचसु वसेसु अनुसंयानं[2] निखमंतु एताये वा अठाये[3] इमाय[4] धंमनुसथिया यथा अंनाये पि कंमाये [३] साधु

८. मातपितिसु सुसुसा मितसंथुत[5] नातिक्यानं चा वंभन समनानं चा साधु दाने पानानं अनालंभं साधु अपवियाता अपभंडता साधु [४] पलिसा पि च युतानि गननमि अनपयिसंति हेतुवता चा वियंजनते चा[6] [५]

संस्कृतच्छाया

६. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवं आह ।

७. द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया इदं आज्ञापितम् । सर्वत्र विजिते मम युक्ताः रज्जुकाः प्रादेशिकाः पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषुः अनुसंयानं निष्क्रामन्तु एतस्मै एव अर्थाय अस्यै धर्मानुशिष्ट्यै यथा अन्यस्मै अभिकर्मणे । साधुः

८. मातापित्रोः शुश्रूषा मित्रसंस्तुतज्ञातीनां च ब्राह्मणश्रमणानाम् च साधु दानं प्राणानां अनालम्भः साधुः अल्पव्ययता अल्पभाण्डता साधुः । परिषदः अपि च युक्तान् गणने आज्ञापयिष्यन्ति हेतुतः च व्यञ्जनतः च ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'लजुके' ।
२. सेनाके अनुसार 'अनुमियानं'; ब्यूलरके अनुसार 'अनुभयान' ।
३. बसाक, 'अथा०'
४. वही, 'इमाये' ।
५. 'ञाति' ठीक पाठ है ।
६. बसाक 'च' पढते हैं ।

हिन्दी भाषान्तर

६. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा ।

७. अभिषेकके बारहवें वर्ष मैंने यह आज्ञा दी है, "मेरे राज्यमें सर्वत्र युत[1] (युक्त) लजुक[2] (राजुक) और पादेसिक[3] (प्रादेशिक) पाँच-पाँच वर्षपर इस कामके लिए (अर्थात्) धर्मानुशासनके लिए तथा अन्यान्य कामोंके लिए (सर्वत्र यह कहते हुए) दौरा करें कि

८. माता-पिताकी सेवा करना तथा मित्र, परिचित, स्वजातीय ब्राह्मण और श्रमणको दान देना अच्छा है । जीव-वध न करना अच्छा है । थोड़ा व्यय तथा थोड़ा संचय अच्छा है । (महामात्रोंकी) परिषद्[4] भी युक्त (एक प्रकारका कर्मचारी)को हेतु (युक्ति) और व्यञ्जन (अक्षर)के अनुकूल (इन नियमोंको पालन करनेकी) आज्ञा देंगे ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. ४. देखिये तृतीय गिरनार अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी ।

चतुर्थ अभिलेख

(धर्मघोष : धार्मिक प्रदर्शन)

९. अतिकंतं अतलं[1] बहुनि वससतानि वधिते वा पानालंभे विहिसा चा भुतानं नातिना असंपटिपति समनबंभनानं असंपटिपति। से अजा[2] देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमचलनेना भेलिघोसे अहो धंमघोसे विमनदसना

१०. हथिनि अगिकंधानि[3] अंनानि चा दिव्यानि लुपानि दसयितु जनस। आदिसा बहुहि वससतेहि ना हुतपुलुवे तादिसे अजा वढिते देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमनुसथिये अनालम्भे पानानं अविहिसा भुतानं नातिनं[4]

११. संपटिपति बंभनसमनानं[5] संपटिपति मातापितिसु सुसुसा। एसे चा अने चा बहुविधे धंमचलने वधिते। वधियिसति चे वा देवानं पिये पियदसि लाज इमं धंमचलनं। पुता च कं नताले चा पनातिक्या चा देवानंपियसा पियदसिने लाजिने

१२. पवढयिसंति चेव धंमचलनं इमं आवकपं धंमसि सीलसि चा चिठितु धंमं अनुसासिसंति। एसे हि सेठे कंमं अं धंमानुसासनं। धंमचलने पि चा नो होति असिलसा। से इमसा अथसा वधि अहिनि चा साधु। एताये अथाए इयं लिखिते

१३. इमसा अथसा वधि युजंतु हिनि च मा आलोचयिसु। दुवाडसवशाभिसितेना देवानंपियेना पियदसिना लजिना लेखिता।

संस्कृतच्छाया

९. अतिक्रान्तं अन्तरं बहूनि वर्षशतानि वर्द्धितः एव प्राणालम्भः विहिंसा च भूतानां ज्ञातीनां असंप्रतिपत्तिः। तत् अद्य देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्मचरणेन भेरीघोषः अभूत् धर्मघोषः विमान दर्शनानि।

१०. ज्ञातिषु संप्रतिपत्तिः अग्निस्कन्धान् अन्यानि च दिव्यानि रूपाणि दर्शयित्वा जनस्य। यादृशः बहुभिः वर्षशतैः न भूतपूर्वः तादृशः अद्य वर्द्धितः देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्मानुशिष्ट्या अनालम्भः प्राणानाम् अविहिंसाभूतानां

११. ज्ञातिषु संप्रतिपत्तिः मातापित्रो शुश्रूषा। एतत् च अन्यत् च बहुविधं धर्मचरणं वर्द्धितम्। वर्द्धयिष्यति च एव देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा इदं धर्मचरणम्। पुत्राः च क नप्तारः च प्रनप्तारः च देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः

१२. प्रवर्द्धयिष्यन्ति च एव धर्मचरणं इदं यावत्कल्पं धर्मे शीले चस्थित्वा धर्मं अनुशासिष्यन्ति। एतत् हि श्रेष्ठं कर्म यत् धर्मानुशासनम्। धर्मचरणं अपि न भवति अशीलस्य। तत् अस्य अर्थस्य वृद्धिः अहानिः च साधुः। एतस्मै अर्थाय इदं लिखितम्।

१३. अस्य अर्थस्य वृद्धिः युञ्जन्तु हानिः च मा आरोचयेयुः। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा लिखितम्।

पाठ टिप्पणी

१. वसाक, अत०।
२. वही, अज०।
३. वही, अगि०।
४. वही नाति (सु)।
५. वही, ब्मण०।

हिन्दी भाषान्तर

९. बहुत समय व्यतीत हुआ। सैकड़ों वर्षोंसे प्राणियोंका वध, जीवोंकी हिंसा, बन्धुओंका अनादर, श्रमण और ब्राह्मणोंका अनादर बढ़ता ही गया। किन्तु अब देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्माचरणसे भेरिघोष धर्मघोष[1] हो गया है और विमान[2],

१०. हाथी[3], अग्निस्कन्ध[4] तथा अन्य दिव्य प्रदर्शन लोगोंको दिखलाये जाते हैं। जैसा पहले कई वर्षोंसे नहीं हुआ था वैसा आज देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्मानुशासनसे प्राणियोंकी अहिंसा, जीवोंकी रक्षा, बन्धुओंका

११. आदर, ब्राह्मण-श्रमणोंका आदर तथा माता-पिताकी सेवा बढ़ गयी है। ये तथा अन्य प्रकारके धर्माचरण भी बढ़ गये हैं। और देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजा इस धर्माचरणको और भी बढ़ायेंगे। देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाके पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र

१२. इस धर्माचरणको कल्पके अन्त[5] तक बढ़ायेंगे और धर्म तथा शीलका आचरण करते हुए धर्मका प्रचार करेंगे। धर्मका अनुशासन ही श्रेष्ठ कार्य है। धर्माचरण दुःशील पुरुषके लिए सम्भव नहीं है इसलिए इस लक्ष्यकी वृद्धि होना और हानि न होना अच्छा है। इसी प्रयोजनके लिए

१३. यह लेख लिखा गया है कि लोग इस लक्ष्यकी वृद्धिमें लगें और इसकी हानि न देखें। बारह वर्ष अभिषिक्त होकर देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने (यह लेख) लिखवाया।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **धर्मघोष :** वस्तुतः इस पूरे वाक्यकी व्याख्या विभिन्न विद्वानोंने विभिन्न प्रकारसे की है। विद्वान् लोग इसकी व्याख्या दो प्रकारसे करते हैं। एक प्रकारके लोग इन वर्णित वस्तुओंके भौतिक अस्तित्वको स्वीकार करते हैं, दूसरे प्रकारके विद्वान् इन्हें स्वर्गीय वस्तुएँ मानते हैं जिनके प्रदर्शनके माध्यमसे अशोक अपनी प्रजाको धर्मके मार्गपर ले जाना चाहते थे। विभिन्न व्याख्याओंके कर्ताओंमें सर्वश्री कर्न (इण्डियन एण्टिक्वेरी भाग ५, पृ० २६१), सेना (वही, भाग १०, पृ० ८४), ब्यूलर (एपि० इण्डि०, भाग २, पृ० ४६७), कृष्ण स्वामी आयंगर (ज.रा. ए. सो. १९१५, पृ० ५२१, इण्डियन एण्टिक्वेरी १९१५, पृ० २०३), टॉमस (ज. रा. ए. सो. १९१४, पृ० ३९५), भाण्डारकर (अशोक, पृ० २८२) विशेष उल्लेखनीय हैं। धर्मघोषका तात्पर्य यहाँ केवल इतना है कि पहले युद्धभेरीका शब्द होता था अर्थात् विजयके लिए युद्धके बाजोंकी आवश्यकता थी किन्तु अब विजयके लिए इनकी आवश्यकता नहीं क्योंकि अशोक उस प्रकारके विजयकी इच्छा नहीं करता। उसके

मस्तिष्कमें विजयका एक दूसरा ही स्वरूप बैठा हुआ है। वह धर्म-विजय करना चाहता है जिसका उल्लेख वह अपने अभिलेखोंमें करता है और इस कारणसे वह धर्मघोषका पक्षपाती है। 'घोष' शब्दसे ही स्पष्ट है कि वह अपने धर्मकी पताकाको फैलाना चाहता है, वह अपने धर्मका विजय चाहता है और यदि उसका धर्म बौद्ध मान लिया जाय जिसके लिए कठिनाई नहीं होगी तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि वह बौद्ध धर्मको विस्तृत करके 'धर्म-विजय' करना चाहता था। इस अर्थकी पुष्टि इसके पूर्ववर्ती वाक्यसे हो जाती है।

धर्म संबंधी जलूस जिसके स्वरूपका उल्लेख फाहियान भी करता है जिसमे विमान, हाथी आदि दिखाये जाते हैं केवल उसका बाह्य रूप है, जनताको मुग्ध करनेके लिए यह आवरण था। भाण्डारकर महोदयने इसकी व्याख्या की है जो नीचे दी गयी है।

२. **विमान :** ये देवताओंके रथ होते थे जिन्हें वे जहाँ चाहे ले जा सकते है। पृथ्वीपर सदाचरण तथा पुण्याचरणमें दिव्यत्व प्राप्त होता है स्वर्गमें दिव्य-सुखोंकी उपलब्धि होती है। अशोकका तात्पर्य यह था कि यदि कोई पुण्य करेगा वह इसी प्रकार स्वर्ग और विमानका सुख प्राप्त करेगा।

३. **हाथी :** डा० भाण्डारकरके अनुसार बुद्ध भगवान्‌की जननीने स्वप्नमें बोधिसत्त्वको श्वेत हस्तीके रूपमे गर्भमें प्रवेश करते देखा था। भरहुत, साँची तथा गान्धारमे इस तरहकी बहुत-सी मूर्तियाँ है जिनमें बोधिसत्त्वका अपनी माँके गर्भमे श्वेत-हाथीके रूपमें प्रविष्ट होना दर्शाया गया है। कालसी अभिलेखोंकी शिलापर भी हाथी खुदा हुआ है और पैरोंके मध्यमें गजतमें लिखा हुआ है। अशोकके ये कार्य केवल जनताकी श्रद्धा बौद्धधर्मकी ओर आकर्षित करनेके लिए किये गये थे।

४. **अग्निस्कन्धः :** भाण्डारकरके अनुसार अग्निस्कन्धसे और भगवान बुद्धके जीवनकी घटनासे अवश्य कोई सम्बन्ध है। खदिरागार जातकमें अग्निस्कन्धका उल्लेख हुआ है कदाचित् उसीका स्मरण दिलानेके लिए अग्निस्कन्ध किया गया हो (भाण्डारकर इण्डि० एण्टि०, १९१३, पृ० २५) आयंगरका मत कि दक्षिण भारतके दीपावली समारोहकी भाँति होता था—(इण्डि० ऐण्टि० १९१५, पृ० २०३) समीचीन नहीं प्रतीत होता।

५. **संवटकप (=संवर्तकल्प) :** द्रष्टव्य, ज० रा० ए० सो० १९११, पृ० ४८५।

पञ्चम अभिलेख

(धर्ममहामात्र)

१३. देवानंपिये पियदसि लाजा अहा [।] कयाने दुकले । ए आदिकले कयानसा[1] मे दुकलं कलेति [।] से ममया बहु कयाने कटे [।] ता ममा[2] पुता चा नताले चा[3]

१४. पल[4]चो तेहि ये अपतिये मे आवकपं[5] तथा अनुवटिसंति से सुकटं कछंति । एचु हेतो देसं पि हापयिसंति से दुकटं कछति । पापे हि नामा[6] सुपदालये [।] से अतिकंत अंतलं नो हुतपुलवं[7] धंममहामता नामा [।] तेदसवसाभिसितेना ममया धंममहामाता कटा [।] ते सबपासंसु वियापटा

१५. धंमाधिथानाये चा धंमवढिया हिदसुखाये वा[8] धंमयुतसा योनकंबोजगंधालानं ए वापि अंने अपलंता भटमयेसु बंभनिभेसु अनथेसु वुधेसु हिदसुखाये धंमयुताये अपलिबोधाये वियपटा ते [।] बंधनबधसा पटिविधानाये अपलिबोधाए मोखाये चा एयँ[9] अनुबधा पजा व ति वा

१६. कटाभिकाले ति वा महालके ति वा वियापटा ते [।] हिदा बाहिलेसु चा नगलेसु सवेसु ओलोधनेसु भातिनं च ने भगिनिना एवा पि अंने नातिक्ये सवता वियापटा । ए इयं धंमनिसिते ति वा दान सुयुते ति वा सवता विजितसि ममा धंमयुतसि वियापटा ते धंम महामाता । एताये अठाये

१७. इयं धंमलिपि लेखिता चिलथितिक्या होतु तथा च मे पजा अनुवततु ।

संस्कृतच्छाया

१३. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा आह । कल्याणं दुष्करं । यः आदिकरः कल्याणस्य सः दुष्करं करोति । तत् मया बहुकल्याणं कृतम् । तत् मम पुत्राः च नप्तारः च

१४. परं च तेभ्यः यत् अपत्यं मे यावत्कल्पं तथा अनुवर्तिष्यन्ते ते सुकृतं करिष्यन्ति । यः तु देशं अपि हापयिष्यति स दुष्कृतं करिष्यति । पापं हि नाम सुप्रदार्यम् । तत् अतिक्रान्तं अन्तरं न भूतपूर्वाः धर्ममहामात्रा नाम । त्रयोदशवर्षाभिषिक्तेन मया धर्ममहामात्रा कृताः । ते सर्व-पाषण्डेषु व्यापृताः

१५. धर्माधिष्ठानाय च धर्मवृद्ध्या हितसुखाय च धर्मयुक्तस्य यवनकम्बोजगन्धाराणां ये वा अपि अन्ये अपरान्ताः । भृतिमयेषु ब्राह्मणेभ्येषु अनाथेषु वृद्धेषु हितसुखाय धर्मयुक्ताय अपरिबाधाय व्यापृताः ते । बन्धनबद्धस्य प्रतिविधानाय अपरिबाधाय मोक्षाय च अयं अनुबन्धः प्रजावान् इति वा

१६. कृताभिकारः इति वा महल्लकाः इति वा व्यापृताः ते । इह बाह्येषु च नगरेषु सर्वेषु अवरोधनेषु भ्रातृणां च नः भगिनीनां ये वा अपि अन्ये ज्ञातयः सर्वत्र व्यापृताः । यः अयं धर्मनिश्रितः इति वा दानसंयुक्तः इति वा सर्वत्र विजिते मम धर्मयुक्ते व्यापृताः ते धर्ममहामात्राः । एतस्मै अर्थाय

१७. इयं धर्मलिपिः लेखिता चिरस्थिका भवतु तथा च मे प्रजाः अनुवर्तन्ताम् ।

पाठ टिप्पणी

१. वरुआ, '०नस' ।
२. वही, 'मम' ।
३. वही, [न ताले चा] ।
४. वही, 'पल चा' ।
५. वही, 'कंप' ।
६. वही, 'नाम' ।
७. वही, 'हुतपुलुवा' ।
८. वही, 'च' ।
९. वही ।

हिन्दी भाषान्तर

१३. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने कहा—'अच्छा काम' करना कठिन है । जो अच्छा काम आरम्भ करता है वह कठिन काम करता है । सम्प्रति मैंने बहुत-से अच्छे काम किये हैं इसलिए मेरे पुत्र-पौत्र

१४-१५. और उनके अनन्तर जो मेरी सन्तानें होंगी वे कल्पके अन्ततक (यदि) वैसा अनुसरण करेंगे तो पुण्य करेंगे किन्तु जो (इस कर्तव्य) का थोड़ा भी भंग करेगा वह पाप करेगा क्योंकि पाप करना आसान है । बहुत समय व्यतीत हो गया जबसे महामात्र नहीं होते । तेरह वर्ष अभिषिक्त होकर मैंने धर्ममहामात्रोंको नियुक्त किया । ये (धर्ममहामात्र) धर्मकी रक्षा करनेके लिए, धर्मकी वृद्धिके लिए, धर्मयुक्त[1] (नामक कर्मचारियों)के हित और सुखके लिए, सब सम्प्रदायों तथा यवन[2], कम्बोज[3], गन्धार[4] एवं पश्चिमी सीमापर (रहनेवाली) अन्य जातियोंमें व्याप्त हैं । भृत्यों-स्वामियों ब्राह्मणों-इभ्यों अनाथों वृद्धोंके बीच उनके हित और सुखके लिए

१६. व्याप्त हैं । वे बन्दियोंमें, अधिक सन्तानवालों, विपत्तिके सताये हुए अथवा वृद्धोंमें सहायतार्थ, बाधाओंको दूर करने तथा मुक्त करनेके लिए नियुक्त हैं । यहाँ (पाटलिपुत्रमें) और बाहरके सब नगरोंमें सर्वत्र हमारे भाइयों, बहनों तथा दूसरे सम्बन्धियोंके अन्तःपुरमें नियुक्त हैं । ये धर्ममहामात्र मेरे राज्यमें सर्वत्र तथा दूसरे सम्बन्धियोंके अन्तःपुरमें नियुक्त हैं । ये महामात्र मेरे राज्यमें सब जगह धर्म और दान-सम्बन्धी कार्योंके (निरीक्षण करनेके लिए) धर्मयुक्त नामक

१७. कर्मचारियोंके बीच नियुक्त हैं । यह धर्मलेख इस प्रयोजनसे लिखा गया है कि यह बहुत दिनोंतक स्थिर रहे और मेरी प्रजा इसके अनुसार आचरण करे ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **अच्छा काम :** अशोकने अच्छे कामोंकी एक तालिका दी है—द्रष्टव्य सप्तम अभिलेख।

२. **धर्ममहामात्र :** अपने राज्यत्व कालके तेरहवें वर्षमें अशोकने धर्ममहामात्र नामक नये अधिकारियोंकी नियुक्ति की थी। इनके कार्योंकी पूर्ण व्याख्याके लिए द्रष्टव्य ब्यूलर (इपि० इण्डि० भाग २, पृ० १६७), म० म० पं० गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा (अशोककी धर्मलिपियाँ, पृ० ५०, ३), स्मिथ (अशोक, पृ० १६८)।

३. **धर्मयुत :** एक प्रकारका कर्मचारी विशेष। विभिन्न व्याख्याओंके लिए द्रष्टव्य : ब्यूलर, (एपि० इण्डि० भाग २), सेना (इण्डि० एण्टि० १८९१, पृ० २३९), टॉमस (ज० रा० ए० सो० १९१५, पृ० १०२–३), स्मिथ (अशोक, पृ० १७०), मुखर्जी (अशोक, पृ० २८६–७)।

४. **यवन :** रामायणके अनुसार (१-५४-२१) वे यवन तथा शक आस-पासके ही रहनेवाले थे। किष्किन्धाकाण्डमें (४-४३-११-१२) सुग्रीवने कुरु, मद्र तथा हिमालयके बीच यवन देशका निर्देश किया है। पाणिनिने अपने अष्टाध्यायीमें (४-१-१७५) इसका उल्लेख किया है। बृहत्संहितामें यवनोंका उल्लेख म्लेच्छ शब्दसे अभिहित करके किया गया है (१४-१२)। द्रष्टव्य : मज्झिमनिकाय (२-१४९), मिलिन्दप्रश्न (ट्रेंकनर संस्करण, पृ० ३२९), महावस्तु (भाग १, पृ० १७१), डा० भाण्डारकर (कारमाइकेल लेक्चर्स १९२१, पृ० २६), डा० रायचौधुरी (पो० हि० ऑफ ऐ० इण्डिया, ४ संस्करण, पृ० २५३) इत्यादि।

५. **कम्बोज :** महाभारतमें कम्बोजोंके देशको उत्तरमें रखा गया है (भीष्मपर्व० अध्याय ९)। इनका उल्लेख पाणिनि अष्टाध्यायी (४-१-१७५), पतजलि (महाभाष्य १-१ १, पृ० ३१७; ४-१-१७५), भागवतपुराण (२-७-३५; १०-७५-१२; १०-८२, १३) मे किया गया है।

६. **गान्धार :** पूर्व पालि-साहित्यमें गान्धार षोडश महाजनपदोंमेंसे था (अंगुत्तरनिकाय, भाग १, पृ० २१३)। इसका उल्लेख अष्टाध्यायी (४-१-१६९), वीर पुरुषदत्तके नागार्जुनीकोण्डा अभिलेखमे हुआ है। मत्स्यपुराण (४५-११६), वायुपुराण (४५-११६) मे इसका वर्णन है। रामायणमें भी इसका उल्लेख (रामायण ७-११३-११) है। विशेषके लिए द्रष्टव्य (विमल चरन ला, ट्राइब्स इन एंश्येण्ट इण्डिया, पृ० ९ तथा आगे)।

षष्ठ अभिलेख

(प्रतिवेदना)

१७. देवानंपियें पियदसि लाजा हेवं आहा [।] अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुवे सवं कलं अठकंमे वा पटिवेदना वा [।] से मया हेवं कटे [।] सवं कालं अदमानसा मे

१८. ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनितसि उयानसि सवता पटिवेदका अठं जनसा···वेदेतु मे [।] सवता चा जनसा अठं कछामि हकं [।] यंपि चा किछि मुखते आनपयामि हकं दापकं वा सावकं वा ये वा पुना महामतेहि

१९. अतियायिके आलोपिते[1] होति ताये ठाये विवादे निझति वा संतं पलिसाये अनंतलियेना पटि···वियें मे सवता सवं कालं [।] हेवं आनपयिते ममया [।] नथि हि मे दोसे उठानसा अठसंतिलनाये[2] [।] कटवियमुते हि मे सवलोकहिते [।] तसा चा पुना एसे मुले उठाने

२०. अठसंतिलना चा [।] नथि हि कंमतला सव लोकहितेना [।] यं च किछि पलकमामि हकं किति भुतानं अननियं येहं हिदा च कानि सुखायामि पलत चा स्वगं आलाधयितुं [।] से एतायेठाये इयं धंमलिपि लेखिता चिलठितिं क्या होतु तथा मे पुतदाले पलकमातु सवलोकहिताये

२१. दुकले चु इयं अनता अगेना पलकमेना[3]

संस्कृतच्छाया

१७. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। अतिक्रान्तम् अन्तरं न भूतपूर्वं सर्वकालं अर्थकर्म वा प्रतिवेदना वा। तत् मया एवं कृतं सर्वकालं अदतः मे

१८. अवरोधने, गर्भागारे व्रजे [गोष्ठे] विनीते उद्याने सर्वत्र प्रतिवेदका अर्थं जनस्य प्रतिवेदयन्तु मे। सर्वत्र च जनस्य अर्थं करिष्यामि अहम्। यत् अपि च किञ्चित् मुखतः आज्ञापयामि अहं दापकं वा श्रावकं वा यत् वा पुनः महामात्रेभ्यः

१९. आत्ययिकं आरोपितं भवति तस्मै अर्थाय विवादः निध्यातिः वा सतः परिषदि आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे सर्वत्र सर्वं कालम्। एवम् आज्ञापितं मया। नास्ति हि मे तोषः उत्थाने अर्थसन्तीरणायां वा। कर्तव्यमतं हि सर्वलोकहितम्। तस्य च पुनः एतत् मूलम् उत्थानम्

२०. अर्थसन्तीरणं च। नास्ति हि कर्मान्तरं सर्वलोकहितात्। यत् च किञ्चित पराक्रमे अहं, किमिति भूतानाम् आनृण्यम् एषाम् इह च कान् सुखयामि, परत्र च स्वर्गं आराधयन्तु। तत् एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता; चिरस्थितिका भवतु तथा च मे पुत्रदाराः पराक्रमन्तां सर्व-लोकहिताय।

२१. दुष्करं च इदम् अन्यत्र अग्र्यात् पराक्रमात्।

पाठ टिप्पणी

१. बहुआ, 'आलोपित' ।
२. वही, 'ना' ।
३. वही, 'पलकमेना' ।

हिन्दी भाषान्तर

१७. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"बहुत समय बीत गया– उन सब क्षणोंमें पहले कभी न राज्य कार्य किया गया न प्रतिवेदकोंसे सूचना मिली। इसलिए मैंने ऐसा [प्रबन्ध] किया है। प्रत्येक क्षण खाते समय,

१८ अन्तःपुर, शयनगृह, व्रज (गोष्ठ), घोड़ेकी पीठपर (अथवा पालकीमें) अथवा उद्यानमें सर्वत्र प्रतिवेदक लोग मुझे प्रजाका प्रयोजन बतलावें। मैं प्रजाका कार्य सर्वत्र करूँगा, और जो कुछ मैं अपने मुखसे दापकों या श्रावकोंको आज्ञा दूँ, या फिर महामात्रोंको

१९. किसी आकस्मिक कार्यके अवसरपर आज्ञा दूँ, और उस विषयके सम्बन्धमें यदि मन्त्रि-परिषद्‌में कोई विवाद या वितर्क उत्पन्न हो तो वह मुझे शीघ्र ही प्रत्येक क्षण और स्थानपर बताना चाहिये। मैंने ऐसी आज्ञा दी है, क्योंकि मुझे अपने परिश्रम और राजकार्य करनेमें सन्तोष नहीं है, सब लोगोंका हित करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ और फिर उसका मूल है —उत्थान (परिश्रम)

२०. और राजकार्यका सम्पादन; क्योंकि सब लोगोंके हितकी अपेक्षा कोई अन्य (श्रेष्ठ) कार्य नहीं है। जो कुछ पराक्रम करता हूँ—क्यों ? भूतऋणसे उऋण होऊँ, यहाँ कुछ लोगोंको सुखी करूँ और [उन्हें] परलोकमें स्वर्गका लाभ करवाऊँ। अतः यह धर्मलेख लिखवाया गया है कि चिरस्थायी हो और मेरे पुत्र, प्रपौत्र सब लोगोंके हितके लिए पराक्रम करें।

२१. और उत्तम पराक्रमके बिना यह दुष्कर है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **प्रतिवेदक** : (गुप्तचर) मेगास्थनीजके अनुसार प्रतिवेदक लोग साम्राज्यके प्रत्येक स्थानकी प्रत्येक प्रकारकी खबर राजाको देते थे। वेश्याओंसे भी इसका कार्य लिया जाता था। विशेष जानकारीके लिए द्रष्टव्य : कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधि० १, अध्याय १२; (डा० श्यामलाल पाण्डेय, कौटिल्यकी राजव्यवस्था (सं० २०१३ विक्रमी, अध्याय ५ तथा ६ पृ० ४७-६२)। अशोकके समय नवीनता इस बातकी थी कि हर समय 'प्रतिवेदक' लोग उसे अपना समाचार सुनाते थे।

२. **वयसि :** संस्कृत वर्णसे (पुरीष)। इसका अर्थ हुआ "पाश्वानेंमें"। डा० काशीप्रसाद जायसवालने इस कौटिल्यके अर्थशास्त्रके आधारपर वयाम्हि = (संस्कृत, व्रजे) 'अस्तबलमें' अर्थ किया है (इण्डियन ऐण्टिक्वेरी १९१८, पृ० ५३)। श्री विधुशेखर भट्टाचार्य शास्त्रीने भी वयाम्हि(= स० व्रजे) लिया है, किन्तु अर्थमें भिन्नता है। उन्होंने इसका अर्थ "सड़कपर" किया है (इण्डियन ऐण्टि० १९२० पृ० ५३)।

३. **विनतसि :** श्री ब्यूलर महोदयने इसका अर्थ 'विनीतक' अर्थात् "पालकी" किया है। श्री का० प्र० जायसवाल महोदयने इसे "सैनिक विनियमन" (= कवायद) कहा है। उन्होंने भी अपनी पुष्टिमें कौटिल्य अर्थशास्त्रके एक अंशको उद्धृत किया है। डा० राधागोविन्द बसाकने इस अर्थको अमान्य ठहराया है। उन्होंने अमरकोश (२-८-४५) का आश्रय लिया है—विनीताः साधुवाहिनः। तात्पर्य यह कि "विनीत" एक प्रकारके सिखाये हुए अश्व होते थे। मेदिनीसे भी इसकी पुष्टि होती है। उसीसे 'वैनीतक' शब्द बनाया गया है। प० रामावतार शर्माने इसका अर्थ 'व्यायामशाला' किया है।

४. **परिसा :** (= परिषद्) श्री सेनाने इसका 'बौद्ध पौरोहित्य' अर्थ किया है। श्री ब्यूलर महोदयने किसी जाति अथवा सम्प्रदायका अर्थ लगाया है। विस्तृत अर्थके लिए द्रष्टव्य ज० ए० सो० बं० १९२०, पृ० ३३१ तथा आगे।

सप्तम अभिलेख

(धार्मिक समता)

२१. देवानंपिये[1] पियदसि लाजा सवता इछति सवपासंड वसेवु [।] सवे हिते ते सयमं भावसुधि चा इछंति [।] जने चु उचावुच छंदे उचावुचलागे । ते सवं एकदेसं पि कछंति [।] विपुले पि चु दाने[2] असा नथि

२२. सयमे भावसुधि किटनाता दिढभतिता चा निचे बाढं [।]

संस्कृतच्छाया

२१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वत्र इच्छति—सर्वे पाषण्डाः वसेयुः। सर्वे हिते संयमं भावशुद्धिं च इच्छन्ति। जनः तु उच्चावचच्छन्दः उच्चावचरागः। ते सर्वं एकदेशं अपि करिष्यन्ति। विपुलं अपि तु दानं यस्य नास्ति

२२. संयमः भावशुद्धिः कृतज्ञता दृढभक्तिता च नित्या बाढम्।

पाठ टिप्पणी

१. वसआ, 'पियं'।

२. वही, 'दा [नं]'।

हिन्दी भाषान्तर

२१. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजा यह इच्छा करते हैं कि सर्वत्र सब सम्प्रदायके लोग निवास करें। वे सभी संयम और भावशुद्धि चाहते हैं। किन्तु मनुष्योंकी इच्छा और अनुराग ऊँच-नीच (विविध) होते हैं। वे सम्पूर्ण रूपसे या आंशिक रूपसे (अपने कर्तव्यका) पालन करते हैं। परन्तु जो मनुष्य विपुल (प्रचुर) दान नहीं कर सकता उसमें भी

२२. संयम, भावशुद्धि, कृतज्ञता एवं दृढभक्ति नित्य आवश्यक है।[1]

भाषान्तर टिप्पणी

१. कुछ लोग 'नीचे' का अर्थ करते हैं। इस प्रकार पूरे वाक्यका भाषान्तर इस प्रकार होगा : "जिसमें संयम, भावशुद्धि, कृतज्ञता और दृढभक्ति नहीं है (उसका) विपुल दान भी अत्यन्त नीच है।"

अष्टम अभिलेख

(धर्मयात्रा)

२२. अतिकंतं अंतलं देवानंपिया विहालयातं नाम निखमिसु [।] हिदा मिगविया अंनानि चा हेडिसाना[1] अभिलामानि हुसु [।]—देवानं पिये पियदसि लाजा दसवसाभिसिते सत[2] निखमिथा संबोधि [।]

२३. तेनता धंमया[3] [।] हेता इयं होति समनबंभनानं दसने चा दाने च बुधानं दसने च हिलंन पटिविधाने चा जानपदसा जनसा दसने धंमनुसथि चा धमपलिपुछा चा ततोपया [।] एमे भुये लाति[4] होति देवानंपियसा पियदसिमा लाजिने भागे अंने [।]

संस्कृतच्छाया

२२. अतिक्रान्तं अन्तरं देवानांप्रियाः विहारयात्रां नाम निरीक्रमिषुः। इह मृगव्यं अन्यानि च ईदृशानि अभिरामाणि अभूवन्। देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा दशवर्षाभिषिक्तः सन् निरक्रमीत् सम्बोधितम्।

२३. तेन एषा धर्मयात्रा। अत्र इदं भवति श्रवणब्राह्मणानां दर्शनं च दानं च वृद्धानां दर्शनं च हिरण्य प्रति विधानं च जानपदस्य जनस्य दर्शनं धर्मानुशिष्टिः च धर्मपरिपृच्छा च तदुपेया। एषा भूयसी रतिः भवति देवानांप्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः भागः अन्यः।

पाठ टिप्पणी

१. बरुआ, ब्यूलर तथा सेना 'होदिसानि'।
२. वही, 'संत'।
३. वही, 'धंमयात्ता'।
४. वही, 'ला[ल] ति'।

हिन्दी भाषान्तर

२२. बहुत समय हुआ देवताओंके प्रिय तथाकथित विहारयात्राओंमें जाया करते थे। इनमें मृगया और इसी प्रकारके दूसरे आमोद-प्रमोद होते थे। देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने दश वर्ष अभिषिक्त होकर सम्बोधिका अनुगमन किया।

२३. इस प्रकार धर्मयात्राएँ आरम्भ की गयीं। इन (धर्मयात्राओं)में श्रमण और ब्राह्मणोंका दर्शन करना, उन्हें दान देना, वृद्धोंका दर्शन करना, और सुवर्णदान देना, जनपदके लोगोंका दर्शन, धर्मका उपदेश देना और धर्मविषयक प्रश्नोत्तर होता है। इससे देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाको अत्यन्त हर्ष होता है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **देवताओंका प्रिय** : कुछ विद्वानोंके अनुसार यह प्रारम्भ करनेकी शुभ पद्धति थी (ज० बा० ब्रा० रा० ए० सो० २१, पृ० ३९३)। चूँकि अन्य अभिलेखोंकी तुलना करनेमे पता चलता है कि किसी-किसी अभिलेखमे 'देवताओंके प्रिय'के स्थानपर 'राजा' शब्दका प्रयोग होता है। अतः कुछ विद्वानोंने इसे 'राजा'का स्थानापन्न शब्द कहा है। कुछने इसे 'व्यक्तिवाचक' बताया है जो अशोकके लिए प्रयुक्त हुआ है। परवर्ती कालमें इसके अर्थमें परिवर्तन हो गया। भट्टोजिदीक्षितने 'देवाना प्रिय इति च मूर्खे' कहा। स्पष्टतः उनकी इस व्याख्यामें प्रति-बौद्ध प्रतिक्रियाकी झलक दिखलाई पड़ती है।

२. **विहारयात्रा** : कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें विहारयात्राका नाम मिलता है। अश्वघोषने अपने बुद्धचरितमें "विहारयात्रा"का वर्णन किया है।

स्नेहस्य लक्ष्म्या वयसश्च योग्यामाज्ञापयामास विहारयात्राम्

बुद्धचरित ३।३

३. **संबोधि** : डा० भाण्डारकरने इसका अर्थ 'महाबोधि' किया है वहाँ भगवान् 'बुद्ध'ने बुद्धत्व प्राप्त किया था। डा० भाण्डारकर अशोक महाबोधि (गया) का दर्शन करने गये थे (इण्डि० ऐ० १९१३, पृ० १५९)। ब्यूलरने 'सच्चा ज्ञान' अर्थ किया है। रीज़ डेविड्सके अर्थके लिए द्रष्टव्य : ज० रा० ए० सो० १८९८, पृ० ६१९।

नवम अभिलेख

(धर्म-मङ्गल)

२४. देवानं प्रिये प्रियदसि लाजा आहा [।] जने उचावुचं मंगलं कलेति आवाधसि अवाहसि विवाहसि पजोपदाने पवाससि एताये अंनाये चा एदिसाये जने बहुमंगलं कलेति [।] हेत चु अबक अनियो बहु चा बहुविधं चा खुदा चा निलथियां चा मंगलं कलेति [।]

२५. से कटवि चेव खो मंगले [।] अपफले चु खो[1] एसे [।] इयं चुखो[2] महाफले ये धंममगले [।] हेता इयं दासभटकसि सम्यापटिपाति गुलुना अपचिति पानानं संयमे समनबंभनानं दाने एसे अंने चा हेडिसे [।] धंममंगले नामा [।] से वतविये पितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेनपि मित संथुतेना अव पटिवेसियेना पि

२६. इयं साधु इयं कटविये मगले आव तसा अथसा निबुतिया इमं कछामि ति [।] एहि इतले मगले संसयिक्ये से [।] सिया व तं अठं निवटेया सिया पुना नो [।] हिदलोकिके चेवसे [।]इयं पुना धंममलने अकालिक्ये [।] हंचे पि तं अठं नो निटेति हिद अठं पलत अनंतं पुना पवसति [।] हंचे पुन तं अठं निवतेति हिंदा ततो उभयेसं

२७. लधे होति हिद चा से अठे पलत चा अनंतं पुना पसवति तेना धंममगलेना [।]

संस्कृतच्छाया

२४. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा आह—जनः उच्चावचं मङ्गलं करोति। आबाधे आवाहे विवाहे प्रजोत्पादे प्रवासे एतस्मिन् च अन्यस्मिन् एतादृशे जनः बहुमङ्गलं करोति। अत्र तु अम्बकः जनन्यः बहु च बहुविधं च क्षुद्रं च निरर्थकं च मङ्गलं कुर्वन्ति।

२५. तत् कर्तव्यं चैव खलु मङ्गलम्। अल्पफलं तु खलु एतत्। इदं तु खलु महाफलं यत् धर्ममङ्गलम्। अत्र इदं—दासभृतकेषु सम्यक् प्रतिपत्तिः गुरुणाम् अपचितिः, प्राणानां संयमः श्रमण-ब्राह्मणेभ्यः दानम्। एतत् अन्यत् च ईदृशं तत् धर्ममङ्गलं नाम। तत् पित्रापि पुत्रेणापि भ्रात्रापि स्वामिनापि मित्रसंस्तुतेन यावत् प्रतिवेश्येनापि।

२६. इदं साधु इदं कर्तव्यं मङ्गलं यावत् तस्य अर्थस्य निवृत्त्यै इदं कथमिति? एतत् हि इतरं मङ्गलं सांशयिकं तत् भवति—स्यात् वा तत् अर्थं निर्वर्तयेत्, स्यात् पुनः न। ऐहलौकिकं च एव तत्, इदं पुनः धर्ममङ्गलम् अकालिकं तद्यत् अपि तम् अर्थं न निष्पादयति। इह अथ परत्र अनन्तं पुण्यं प्रसूते। चेत् पुनः तम् अर्थं निवर्त्तयति इह तत् उभयं

२७. लब्धं भवति—इह च सः अर्थः परत्र च अनन्तं पुण्यं प्रसूते तेन धर्ममङ्गलेन।

पाठ टिप्पणी

१. बरुआ, 'खुखो'।
२. वही, 'हुखो'।

हिन्दी भाषान्तर

२४. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने कहा—लोग बाधाओंमें, पुत्रके विवाहमें, कन्याके विवाहमें, सन्तानकी उत्पत्तिमें, प्रवासमें और इसी तरहके दूसरे अवसरोंपर अनेक प्रकारके बहुतसे मङ्गलाचार करते हैं। ऐसे अवसरोंपर स्त्रियाँ अनेक प्रकारके क्षुद्र और निरर्थक मङ्गलाचार करती हैं।

२५. मङ्गलाचार अवश्य करना चाहिये किन्तु इस प्रकारके मङ्गलाचार प्रायः अल्पफल देनेवाले होते हैं। धर्ममङ्गल महाफल प्रदान करनेवाला है। इसमें दास और भृतकोंके प्रति उचित व्यवहार, गुरुओंका आदर, प्राणियोंकी अहिंसा और श्रमण-ब्राह्मणोंको दान यह सब करना पड़ता है। ये सब कार्य तथा इसी प्रकारके अन्य-कार्य धर्ममङ्गल कहलाते हैं। इसलिए पिता, पुत्र, भाई, स्वामी, मित्र, परिचित एवं पड़ोसीको भी यह कहना चाहिये,

२६. 'यह (मङ्गलाचार) अच्छा है'। इस मङ्गलको तबतक करना चाहिये जबतक कार्यसिद्धि न हो क्योंकि इनके अतिरिक्त जो मंगल हैं वे संदिग्ध हैं। उनसे कार्य सिद्धि हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती है। और वह भी इहलौकिक (अभीष्ट सिद्धि) किन्तु धर्मके मङ्गलाचार कालसे परिच्छिन्न नहीं है। यदि इहलोकमें उनसे अभीष्टसिद्धि न भी हो तब (भी) परलोकमें अनन्त पुण्य होता है। यदि इहलोकमें अभीष्टसिद्धि हो भी गयी तो दोनों

२७. लाभ हुए (अर्थात्) यहाँ अभीष्टसिद्धि हुई और उसी धर्ममङ्गलसे अनन्त पुण्य भी प्राप्त हुआ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **आवाह विवाह** : ये दोनों शब्द एक साथ ही बौद्ध, संस्कृत तथा पालिमें पाये जाते हैं। आवाहका अर्थ विवाहमें ले आना (द्रष्टव्य रीजडेविड्ज एण्ड विलियम स्टीड : पालि इंगलिश डिक्शनरी पृ० ११२)। इन दोनों शब्दोंसे प्रतीत होता है कि विवाहकी प्रथामें लड़का भी लड़कीके घर रहनेके लिए आता था। इस प्रथामें भेद तब प्रारम्भ हुआ जब केवल लड़कियोंको ही 'वर' के घर ले जानेकी प्रथा प्रारम्भ हुई। द्रष्टव्य दीघनिकाय, १-९९।

२. **धम्ममंगल** : इसके अर्थके लिए द्रष्टव्य डा० भाण्डारकर : 'अशोक' पृ० २९६।

दशम अभिलेख

(धर्म-शुश्रूषा)

२७. देवानं[1] पिये पियदषा लजा यषो वा किति[2] वा नो महथावा मनति अनता यं पि यसो वा किति वा इछति ततत्वाये अयतिये चा जने धंमसुसुषातु मे ति धंमवतं वा अनुविधियुतं ति [।] [3]धतकाये देवानंपिये पियदसि

२८. लाजा यषो वा किति वा इछ [।] अंचा किछि[4] लकमति देवेनंपिये पियदसि[5] लजा त पवं पालंतिक्याये[6] वा किति सकले अपपलाषवे षियाति ति [।] एषेचु[7] पलिसवे ए अपुने[8] [।] दु[9]कले चु खो एषे खुदकेन वा वगेना उषु[10]टेन वा अनत अगेना पलकमेना पवं पलिटि[13] दितु [।] हेत चु खो

२९. उषटेन वा दुकले [।]

संस्कृतच्छाया

२७. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्ति वा न महार्थावहां मन्यते अन्यत्र [।] यत् अपि यशः वा कीर्ति वा इच्छति तदात्वे आयत्यां च जनः धर्मशुश्रूषा शुश्रूषतां मम इति धर्मोक्तं वा अनुविधीयतां तेन। एतत् कृते देवानां प्रियः प्रियदर्शी

२८. राजा यशः वा कीर्तिं वा इच्छति। यत् च किञ्चित् प्रकमते देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा तत् सर्वं पारत्रिकाय एव। किम् इति? सकलः (जनः) अल्पपरिस्रवः स्यात् इति। एषः तु परिस्रवः यत् अपुण्यम्। दुष्करं तु खलु एतत् क्षुद्रकेण वा वर्गेण उच्छ्रितेन वा अन्यत्र अग्र्येण (अग्र्यात्) प्रक्रमेण (प्रक्रमात्) सर्वं परित्यज्य। अत्र तु खलु

२९. उच्छ्रितेन (उत्कृष्टेन) दुष्करम्।

पाठ टिप्पणी

१. वरुआ, 'देवाण'।
२. वही, 'किवि'।
३. वही, 'एतकाये'।
४. वही, 'किचि'।
५. वही, 'देवनपिये'।
६. वही, 'प्रियदर्षि'।
७. वही, 'पालतिकाये'।
८. वही, 'एषे'।
९. वही, 'परिषवे'।
१०. वही, 'अपुत्र'।
११. वही, 'दुकरं'।
१२. वही, 'असुटेन'।
१३. वही, 'पलितिदितु'।

हिन्दी भाषान्तर

२७. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजा यश वा कीर्तिको अन्यत्र (परलोकके लिए) बहुत लाभप्रद नहीं मानते। जो कुछ यश वा कीर्ति वे चाहते हैं वह इसलिए कि वर्तमान और भविष्यकाल[1] में मेरी प्रजा धर्मकी सेवा करे और धर्मके व्रतका पालन करे। केवल इसलिए देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी

२८. राजा यश और कीर्ति चाहते हैं। देवताओंके प्रियदर्शी राजा जो कुछ भी पराक्रम (उद्यम) करते हैं वह सब परलोकके लिए करते हैं जिससे कि सब लोग पाप-रहित हो जायँ। अपुण्य ही एकमात्र पाप है। बिना उत्तम उत्साह और (बिना) प्रत्येक वस्तुका परित्याग किये छोटे या बड़े कोई भी इस पुण्यको नहीं कर सकते। यह (पुण्य)

२९. बड़े लोगोंके लिए भी दुष्कर है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **भविष्यकाल :** यद्यपि गिरनारके पाठमें इसके स्थानपर 'दिघाय' = सं० दीर्घाय है, श्री टॉमस महोदयने इसका यही अर्थ किया है (ज० रा० ए० सो० १९१६ पृ० १२०)।

एकादश अभिलेख

(धर्म-दान)

२९. देवानं पिये पियदसि लाजा हेवं हा [।] नथ[1] हेडिसे[2] दाने अदिष धंमदाने। धमष विभगे। धंमषंबधे। तत एषे दाष भटकषि षम्यापटिपति। मातापितुषु षुषुषा। मित षंथुत नातिक्यानं समनावंभनाना[3] दाने

३०. पानानं अनालंभे [।] एषे वतविये पितिना पि पुतेन पि भतिना पि षवामिक्येन पि मितशथुताना अवा पटिवेषियेना इयं षाधु इयं कटविये [।] शे तथा कलंत हिदलो[4]किक्ये च कं आलधे होति, पलत चा अनत पुना पशवति तेना धंमदानेना [।]

संस्कृतच्छाया

२९. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह—नास्ति ईदृशं धर्म्मदानं धर्म्मसंविभागः धर्म्मसम्बन्धः। तत्र एतत् दासभृतकेषु सम्यक् प्रतिपत्तिः मातापित्री शुश्रूषा। मित्रसंस्तुत-ज्ञातिकेभ्यः श्रमण-ब्राह्मणेभ्यः दानम्।

३०. प्राणानाम् अनालम्भः एतत् वक्तव्यं पित्रा अपि पुत्रेण अपि भ्रात्रा अपि स्वामिना अपि मित्रसंस्तुताभ्यां यावत् प्रतिवेश्येन—इदं साधु इदं कर्तव्यम्। सः तथा कुर्वन् ऐहिलौकिकं च कं (सुखं) आलब्धं परत्र च अनन्तं पुण्यं प्रसूते तेन धर्म्म-दानेन।

पाठ टिप्पणी

१. बरुआ, 'नथि'।
२. वही, 'हेडिषे'।
३. वही, 'समन वभनानं'।
४. वही, 'हिदनोकिक्ये'।

हिन्दी भाषान्तर

२९-३०. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा- "ऐसा कोई दान नहीं है जैसा धर्मदान, धर्मविभाग और धर्मसम्बन्ध। उसमें ये (निम्नलिखित) समाहित हैं—दास और भृतकोंके साथ उचित व्यवहार; माता और पिताकी सेवा; मित्र, परिचित, जातिवालों, श्रमण एवं ब्राह्मणोंको दान और प्राणियोंकी अहिंसा। इसलिए पिता, पुत्र, भ्राता, स्वामी, मित्र, परिचित और पड़ोसीको भी यह कहना चाहिये, 'यह अच्छा कार्य है; इसे करना चाहिये'। जो इस प्रकार आचरण करता है वह इस लोकमें (आनन्द) प्राप्त करता है। और परलोकमें उस धर्मदानसे अनन्त पुण्यका भागी होता है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. डा० भाण्डारकरके अनुसार इस अभिलेखकी व्याख्या करनेवालोंने नहीं दर्शाया है कि जिन बातोंका वर्णन बादमें किया गया है वे किस प्रकार १. धर्म्मदान, २. धर्मसंस्तव, ३. धर्मसविभाग तथा ४. धर्मसम्बन्ध हैं। जबतक इस बातको ठीक तरहसे नहीं समझ लिया जाता है तबतक अभिलेखके अभ्यर्थको ठीक-ठीक समझना अत्यन्त कठिन है। ये बातें जीवनके विभिन्न अभिव्यक्तियोंकी परिचायक हैं। इनका सम्बन्ध दान, सम्बन्ध, धनका वितरण आदिसे है। इन्हींके लिए अशोक चाहता है कि इनका परिचालन अथवा कार्य नैतिकताके आधारपर हो। यदि किसीको दान देना है तो वह श्रमणों और ब्राह्मणोंको दे जिससे वह धर्मको परिपुष्ट करे यह धर्मदान हुआ। इसी प्रकार माता-पिताके प्रति अथवा बड़ोंके प्रति उचित सम्बन्ध हो तो वह धर्म-सम्बन्ध कहलायेगा। मित्रोंका संग्रह केवल भावनामात्रके आधारपर नहीं बल्कि उदारताके आधारपर करना चाहिये। यह धर्मसंस्तव हुआ। इसी प्रकार धर्मके पुण्योंका भी दान विस्तृत रूपसे करना चाहिये जिसमें वह निम्नवर्ग, भृत्य, गूँगे, बहरे तथा पशु-पक्षियोंतक पहुँचे। यही धर्म-संविभाग है। डा० भाण्डारकरकी व्याख्यासे वस्तुतः अभिलेखका अभ्यर्थ स्पष्ट हो जाता है।

द्वादश अभिलेख

(सार-वृद्धि)

३०. देवानापिये पियदषि

३१. लाजा षावा[1] पाषंडानि पवजितानि गहथानि वा पुजेति दानेन विविधये[2] च पुजाये [।] नो चु तथा दाने वा पुजा वा देवानंपिये मनति अथा कित शालावढि शियाति शवपाश[3]डान [।] शाला[4]वढि ना बहुविधा [।] तश चु इनं[5] मूले अ वचगुति किंतिति[6] अतपशड[7] वा पुजा वा पल पाषंड गलता[8] वनो शया

३२. अपकलनशि[9] लहुका वा शियातशि[10] तशि पकलनशि [।] पुजेतितिय चु पलपाशडा तेन तेन अकालन [।] हेव कलत अतपाशडा वढं[11] वढियति पलपाशडि हि वा उपकलेति [।] तदा अनथ कलत अतपाशड च छनति पलपाशड पि वा उपकलेति[12] [।] ये हि केछ अतपाशड पुनाति

३३. पलषापड वा गलहति षवे अतपाषंड भतिया वा किति । अत पाषंड दिपयेम पे च पुना तथा कलंतं बाढतले उपहंति अत पाषंडषि । षंमवाये[13] चु बाधु किति अंनमनषा धंमं षुनेयु[14] चा षुषुषेयु चाति । हेवं हि देवानं पियषा इछा किंति

३४. सव पाषंड बहुषुता चा क्यानागा च हुवेयु ति । ए च तत तत पषंना । तेहि वतविये देवाना पिये नो तथा दानं वा पुजा वा मंनति । अथा किंति षालावढि शिया षव पाषंडति । बहुका चा एतायाठाये वियापटा धंममहामाता । इथिधियख महामाता । वचभुमिक्या अने वा निक्याया[15]

३५. इयं च एतिषा फले । यं अत पाषंडवढि चा । होति धमंष चा दिपना [।]

संस्कृतच्छाया

३०. देवानां प्रियः प्रियदर्शी

३१. सर्वान् पाषण्डान् प्रव्रजितान् गृहस्थान् वा पूजयति दानेन विविधया पूजया । न तु तथा दानं वा पूजां वा देवानां प्रियः मन्यते यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्व पाषण्डानाम् । सारवृद्धिः नाम बहुविधा । तस्या तु इदं मूलं यत् वचोगुप्तिः । किमिति ? तत् आत्मपाषण्डपूजा परपाषण्डगर्हा वा न स्यात्

३२. अप्रकरणे लघुका वा स्यात् तस्मिन् तस्मिन् प्रकरणे । पूजयितव्या तु परपाषण्डाः तेन तेन आकारेण । एवं कुर्वन् आत्मपाषण्डं बाढं वर्द्धयति परपाषण्डान् अपि वा उपकरोति । तदन्यथा कुर्वन् आत्मपाषण्डं च छिनत्ति परपाषण्डम् अपि वा अपकरोति । यो हि कश्चित् आत्मपाषण्डं पूजयति

३३. पर-पाषण्डं वा गर्हयति सर्वम् आत्मपाषण्ड-भक्त्या एव किमिति ?—आत्मपाषण्डं दीपयेम इति स च पुनः तथा कुर्वन् बाढतरं उपहन्ति आत्मपाषण्डम् । समवायः तु साधु, किमिति ? अन्योन्यस्य धर्मं श्रृणुयुः च शुश्रुषेरन् च इति । एवं हि देवानां प्रियस्य इच्छा-किमिति ?

३४. सर्वपाषण्डाः बहुश्रुताः कल्याणागमा भवेयुः इति । ये वा तत्र तत्र पाषण्डाः ते हि वक्तव्याः—देवानां प्रियः न तथा दानं वा पूजां वा मन्यते, यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्वपाषण्डानामिति । बहुका च एतस्मै अर्थाय व्यापृताः धर्ममहामात्रास्त्र्यध्यक्ष महामात्राः व्रजभूमिकाः अन्ये वा निकायाः ।

३५. इदं च एतस्य फलं यत् आत्मपाषण्डवृद्धिः भवति धर्मस्य च दीपना ।

पाठ टिप्पणी

१. बरुआ, 'पवा' ।
२. वही, 'विविधेन' ।
३. वही, 'शवपशिडना' ।
४. वही, 'सालवढि' ।
५. वही, 'इयं' ।
६. वही, 'त' ।
७. वही, 'अत पाशडे' ।
८. वही, '०गलहा' ।
९. वही, '०सि' ।
१०. वही, '०तशि' ।
११. वही, 'बाढ' ।
१२. वही, 'अपकलेति' ।
१३. वही, 'समवाये' ।
१४. वही, 'षुणेयु' ।
१५. वही, 'निकाया' ।

हिन्दी भाषान्तर

३०. देवताओंका प्रिय प्रियदर्शी

३१. सभी धर्मों (पाषण्डों) प्रव्रजितों, गृहस्थोंको दान अथवा (अन्य) विविध प्रकारकी पूजासे सन्तुष्ट करता है (पूजयति) । तथा देवताओंके प्रिय (प्रियदर्शी) दान अथवा

पूजाको (इतनी) मान्यता नहीं देते—यह क्या ? (केवल इसलिए कि) वे सभी धर्मोंकी सारवृद्धि[1] चाहते हैं। सारवृद्धि बहुत प्रकारसे होती है (किन्तु) उसका मूल तो वाक्-संयम है। वह क्या—लोग अपने धर्मको ही पूजा तथा (अकारण) दूसरे धर्मोंकी निन्दा न करें बिना किसी प्रसंगके।

३२. विशेष विशेष कारणोंमें स्वल्प निन्दा होनी चाहिये। अन्य प्रकारसे आचरण करनेपर अपना धर्म तो क्षीण होता ही है, दूसरे धर्मका भी अपकार होता है। जो कोई अपने ही धर्मकी पूजा करता है

३३. दूसरे धर्मका अनादर करता है वह सब अपने धर्मकी भक्तिके कारण ही—यह क्यों ? इसलिए कि (वह सोचता है कि इस प्रकार) "मैं अपने धर्मको प्रकाशित कर दूँगा।" इस प्रकार आचरण करता हुआ अपने धर्मको ही हानि पहुँचाता है। समवाय (मेलजोल) अच्छा है। यह क्यों ? क्योंकि अन्योन्य धर्मकी बात सुनें तथा सेवा करें। यही देवताओंके प्रिय प्रियदर्शीकी इच्छा है।—यह क्यों—

३४. क्योंकि सभी धर्म बहुश्रुत तथा कल्याणगामी हों। इसलिए जहाँ-जहाँ जो सम्प्रदायवाले हों उनसे यह कहना चाहिये कि देवताओंके प्रिय दान अथवा पूजाको इतना बड़ा नहीं समझते जितना इस बातको कि सब सम्प्रदायवालोंकी सारवृद्धि हो। इस कार्यको सम्पादित करनेके लिए धर्ममहामात्र[2] स्त्र्यध्यक्षमहामात्र[3], व्रजभूमिक[4] तथा अनेक निकाय (राजकर्मचारिगण) नियुक्त हैं।

३५. इसका फल यह है कि अपने सम्प्रदायकी वृद्धि होती है और धर्मका प्रकाश होता है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **सारवृद्धि** : धर्मके सार अंश अथवा मौलिक सिद्धान्तोका प्रसार।

२. **धर्ममहामात्र** : के लिए द्रष्टव्य गिरनार शिला-अभिलेखकी टिप्पणी।

३. **स्त्र्यध्यक्षमहामात्र** : सम्भवतः इनका कार्य अन्तःपुरमें धर्मका उपदेश देना था। कौटिल्यने स्त्र्याध्यक्षोंका वर्णन किया है। उनके अनुसार वे कामोपधाशुद्ध रहनेवाली महिलाएँ थीं जिनको स्त्रियोंकी "बाह्याभ्यन्तर विहाररक्षा" करना पड़ता था। बाह्यका वर्णन अशोकके पञ्चम शिलालेखमें मिलता है।

४. **वचभूमिक** : वच = संस्कृत "व्रज" चरागाह; भूमिका अर्थ पद। अतः शब्दसे ही स्पष्ट है कि वह अधिकारी जो चरागाह तथा उससे सम्बन्धित कार्योंको सम्पन्न करता है। यह भी कुछ विद्वानोंने संकेत किया है कि 'व्रजभूमिक' व्रजके निवासी थे जिनकी अभिरुचि धर्मयात्रा तथा धार्मिक विषयोंके विवादपर अधिक रहती थी। डा० भाण्डारकरके अनुसार व्रजभूमिकोंका कार्य पशुव्रजके अतिरिक्त वणिक्पथका भी देखभाल करना था।

त्रयोदश अभिलेख

(वास्तविक विजय)

३५. अठ वषा भिषित षा देवानांपिषय पियदषिने लजिने कलिग्या विजिता। दिपढिमिते[1] पानषतपशहशे ये तफा अपुवढे। शतसहसमिते[2] तत हते। बहुता वंतके वा मटे ततो पछा। अधुना लधष कलिग्येषु[3]। तिवे धम्मवाये।

३६. धम्मकामता। धम्मानुषथि चा। देवानं पियषा। षे अथि अनुषये देवानं पियषा विजिनितु कलिग्यानि अविजितं हि विजिन मने एतता वध वा अपवहे वा जनषा षे वाढ वेदनियमुते गुलुमुते चा। देवानं पियसा। इयं पि चु ततो गलुमततले देवानं पियषा

३७. सवता वषति बाभना व षम वा अने वा पाशंड गिहिथा वा येषु विहिता एष अगभुति षुषुषा माता पिति षुषुषा गलषुषा[4] मित संथुत षहायनातिकेषु दासभटकशि षम्यापटिपति दिढभतिता तेषं तता होति उपघाते वा वधे वा अभिलतानं वा विलिखमने

३८. येषं वापि सुविहितानं षिनेहे अविपहिने ए तानं मितसंथुतषहायनातिक्य वियषने[5] पापुनाति तता षे पि तानं एव उपघाते होति। पटिभागे चा एष षवमनुषानं गुलुमते चा देवानं पियसा। नथि चा षे जनपदे यता नथि इमे निकाया आनता योनेषु

३९. ब्रंमने च षमने चा नथि चा कुवापि जनपदषि यता नथि मनुषान। एकतलषि पि पाषडषि नो नाम पषादे। षे अवतके जने। तदा कलिंगेषु लधेषु हते चा मटेचा अपवुढे चा ततो षते भागे वा षहषभागे वा अज गुलमते वा देवानं पियसा।

(क्रमशः)

संस्कृतच्छाया

३५. अष्टवर्षाभिषिक्तेन देवानांप्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा कलिङ्गाः विजिताः। द्व्यर्धमात्रं प्राणशतसहस्रं यत् ततः अपव्यूढम्। शतसहस्रमात्रं तत्र हतम्। बहु-तावत्कं मृतम्। ततः पश्चात् अधुना लब्धेषु कलिङ्गेषु तीव्रः धर्मोपायः

३६. धर्मकामता धर्मानुशस्तिः च देवानां प्रियस्य। तत् अस्ति अनुशयः देवानां प्रियस्य विजित्य कलिङ्गान्। अविजिते हि विजीयमाने यत् तत्र वधः वा मरणं वा अपवाहः वा जनस्य तत् वाढं वेदनीयमतं गुरुमतं च देवानां प्रियस्य। इदमपि तु ततो गुरुमततरं देवानां प्रियस्य।

३७. सर्वत्र वसन्ति ब्राह्मणाः वा श्रमणाः वा अन्ये वा अन्ये वा पाषण्डा गृहस्थाः वा—येषु विहिता एषा अग्र्यभूतशुश्रूषा मातापितृशुश्रूषा गुरुशुश्रूषा मित्रसंस्तुत सहाय ज्ञातिकेषु दासभृतकेषु सम्यक् प्रतिपत्तिः दृढभक्तिता च। तेषां तत्र भवति उपघातः वा वधः वा अभिरतानां वा विनिष्क्रमणम्।

३८. येषां वापि संविहितानां स्नेहः अविप्रहीणः एतेषां मित्रसंस्तुत-सहाय-ज्ञातिकाः व्यसनं प्राप्नुवन्ति। तत्र सः अपि तेषामेव उपघातः भवति। प्रतिभागः च एषः सर्वमनुष्याणां गुरुमतः च देवानां प्रियस्य। नास्ति च सः जनपदः यत्र न सन्ति इमे निकायाः अन्यत्र यवनेभ्यः

३९. एष ब्राह्मणः श्रमणः च। नास्ति च क अपि जनपदः यत्र नास्ति मनुष्याणाम् एकतरस्मिन् अपि पाषण्डे नाम प्रसादः। तत् यावान् जनः तदा कलिङ्गेषु लब्धेषु हतः च मृतः च अपव्यूढः च ततः शतभागः वा सहस्रभागः वा गुरुमतः एष देवानांप्रियस्य।

(क्रमशः)

पाठ टिप्पणी

१. बरुआ, 'दियढमाते'।
२. वही, शतषहषमाते'।
३. वही, 'कलिग्येषु'।
४. वही, 'गुलषुषा'।
५. वही, वियषने'।

हिन्दी भाषान्तर

३५. अष्टवर्षाभिषिक्त देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने कलिङ्गका विजय किया। वहाँसे डेढ़ लाख मनुष्योंका अपहरण हुआ। वहाँ सौ सहस्र (एक लाख) मारे गये। उससे भी अधिक मरे। इस समय कलिङ्ग प्राप्त होनेपर अब तीव्र धर्मोपाय (धर्मविस्तार),

३६. धर्मकामना तथा धर्मानुशिष्टि हुई। इसपर कलिङ्गोंपर विजय करनेवाले देवताओंके प्रियको अत्यन्त पश्चात्ताप हो रहा है। क्योंकि अविजितपर विजय होनेपर लोगोंकी हत्या अथवा मृत्यु अवश्य होती है। कितने जनोंका अपहरण होता है। देवताओंके प्रियको इससे बहुत खेद हुआ। इससे भी गुरुतर खेद यह है कि यहाँ ब्राह्मण-श्रमण तथा अन्य

३७. सम्प्रदायके लोग रहते हैं, जहाँ ब्राह्मणोंकी सेवा, माता-पिताकी सेवा, गुरुओंकी सेवा, मित्र-परिचित, सहायक, जाति, दास और सेवकोंके प्रति अच्छा व्यवहार किया जाता है तथा दृढ़भक्ति भी है। वहाँ उनका भी वध अथवा मृत्यु हो जाती है अथवा (प्रियजनोंका) वियोग हो जाता है।

३८. जो बच भी जाते हैं पर जिनके मित्र, परिचित, सहायक, और सम्बन्धी विपत्तिमें पड़ जाते हैं उन्हें भी अत्यन्त स्नेहके कारण बड़ी पीड़ा होती है। और यह (विपत्ति) सभीके पल्ले पड़ती है? देवताओंके प्रियको यह (खेद) और भी गम्भीर है। कोई ऐसा जनपद नहीं है जहाँ ये सम्प्रदाय न हों

३९. (और) श्रमण-ब्राह्मण नहीं हैं। कोई ऐसा जनपद नहीं है जहाँ मनुष्य एक-न-एक सम्प्रदाय मानते हैं। जितने मनुष्य कलिङ्ग देशके प्राप्त करनेमें मारे गये हैं। और अपहरण किये गये हैं, उसका सौवाँ अथवा हजारवाँ भाग भी देवताओंके प्रियको दुःखका कारण होगा।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **कलिङ्ग :** महाभारत (३-११४-४) के अनुसार प्रतीत होता है कि यह प्राचीन कालमें वैतरिणी नदीके दक्षिणी प्रदेशसे लेकर विजगापट्टमतक सम्भवतः फैला हुआ था। इसमे अमरकण्टकका भी प्रदेश सम्मिलित रहा होगा (तुलना कीजिये, महाभारत वनपर्व ११४; कूर्मपुराण, २,३९-१९)। मत्स्यपुराणमें जालेश्वरका वर्णन जो कलिङ्गमें अमरकण्टक पहाड़ीपर स्थित है (१८६-१५-३८; १८७-३५२)। भागवत पुराण (९-२३-५; १०-६१-२९,३७)में भी इनका वर्णन है। बृहत्संहितामें भी कलिङ्गका वर्णन है (१४,८)। अभिलेखोंमें भी कलिङ्गका वर्णन पर्याप्त मात्रामें मिलता है। एक अभिलेखमें कलिङ्गकी राजधानी दन्तपुर नगर था (एपि० इण्डि० १४)। गंजाममें भी कलिङ्गकी राजधानीका वर्णन प्राप्त होता है (एपि० इण्डि ४-१८७)। लक्ष्मणसेनके इण्डिया आफिस प्लेटमें कलिङ्गका उल्लेख है। (एपि० इण्डि० २६ भाग १; भाग २५ भाग ५ जनवरी १९४०)। गुणार्णवके पुत्र देवेन्द्रवर्मनके त्रिलिङ्ग अभिलेखमे इसका वर्णन है।

विस्तारके लिए द्रष्टव्य : वि० चरन लॉ ज्योग्राफी ऑफ दि अर्ली बुद्धिज्म (पृ० ६३-६४) तथा वही, हिस्टॉरिकल ज्योग्राफी ऑफ एंश्येण्ट इण्डिया (पृ० १५६-१५७)।

दक्षिणाभिमुख

१. ....
२. ....
३. ....नेयु । इछ......
४. षवयु......षयम षमचलियं मदव ति इयं गु मु......
५. देवानं पियेषा ये धंम विजये । षे च पुना लघे देवानं पि......च
६. षवेषु च अतेषु अषषु पि योजनषतेषु अत अतियोगे नाम योन ला......पलं चा तेना
७. अतियोगेना चतालि ४ लजाने तुलमये नाम अंतेकिने नाम मका ना
८. म अलिक्यषुदले नाम निचं चोड पंडिया अवं तंबपंनिया हेवमेवा । हेवमेवा
९. हिदा ला[1]जविशवषि योनकंबोजेषु नाभके[2] नाभपंतिषु भोजपितिनिक्येषु
१०. अधपालदेषु[3] षवता देवानंपियसा धंमानुषथि अनुवतंति । यत पि दुता[4]
११. देवानं पियसा[5] नो यंति ते पि सुतु देवानं पिनंय धंमवुतं विधनं
१२. धंमानुसथि धंमं अनुविधियंअ अनुविधिथि संअं[6] चा । ये से लधे
१३. एतकेना होति सवता विजये पितिलसे से । गधा सा होति पिति पिति धंमविजय
१४. पि । लहुका वु खो सा पिति पालंतिक्यमेवे महफला मंनंति देवेन पिने
१५. एताये चा अठाये इयं धंमलिपि लिखिता किति पुता पपोता मे असु
१६. नवं विजयम् विजयम विजयतविय मनिषु षयकषि नो विजयषि खंति चा ल हु–
१७. दंडता चा लोचेतु तमेव चा विजयं मनतु ये धंमविजये । षे हिदलोकिक्य पल लो
१८. किये[10] । षवा च क निलति होतु उयामलति । षा हि हिदलोकिक पललोकिक्या ।

संस्कृतच्छाया

१. ....
२. ....
३. ....हन्येरन् । इच्छति..........
४. सर्व (भूतानां)......संयमं समचर्यां मार्दवम् इति । एषः च मु (ख्यमतः)
५. देवानां प्रियस्य यः धर्मविजयः । सः च पुनः लब्धः देवानां प्रि(यस्य) ......च
६. सर्वेषु च अन्तेषु आषट्सु अपियोजनशतेषु यत्र अन्तियोकः नाम यवनराजः......परं च तस्मात्
७. अन्तियोकात् चत्वारः ४ राजानः तुरमयः नाम अन्तिकिनिः नाम मक ना
८. म अलिकसुन्दरः नाम नीचाः चोळाः पाण्ड्याः यावत् ताम्रपर्णीयाः । एवम् एव
९. हिद राजविषये विषवज्रिषु यवनकम्बोजेषु नाभके नाभपंक्तिषु भोजपितिनिकेषु
१०. अन्ध्रपुलिन्देषु सर्वत्र देवानां प्रियस्य धर्मानुशस्तिं अनुवर्तन्ते । यत्र अपि दूताः
११. देवानां प्रियस्य न यान्ति (व्रजन्ति) ते अपि श्रुत्वा देवानां प्रियस्य धर्मोक्तं विधानं
१२. धर्मानुशिष्टिं धर्मं अनुविदधति अनुविधास्यन्ति च । यः सः लब्धः
१३. एतकेन भवति सर्वत्र विजयः प्रीतिरसः सः । लब्धा सा भवति प्रीतिः । प्रीतिः धर्मविजये
१४. लघुका तु खलु सा प्रीतिः । पारत्रिकं एव महाफलं मन्यते देवानांप्रियः ।
१५. एतस्मै च अर्थाय इयं धर्मलिपिः लिखिता-किमिति ? पुत्राः प्रपौत्राः मे स्युः (ते)
१६. नवं विजयं मा विजेतव्यं मन्येरन् । स्वके एव विजये क्षान्तिं च लघु
१७. दण्डतां च रोचयन्ताम् । तम् एव च विजयं मन्यन्तां यः धर्मविजयः । सः ऐहलौकिकः पारलौ-
१८. किकः । सर्वा च निरतिः भवतु उद्यमरतिः । सा हि लौकिकी पारलौकिकी ।

पाठ टिप्पणी

१. बरुआ, 'राज०' ।
२. वही, 'नाभके' ।
३. वही, 'अधपालदेषु' ।
४. वही, 'दूता' ।
५. वही, 'देवानं पियषा' ।
६. वही, '०भियंति' ।

७. वही, '०संति च'।
८. वही, 'ग (ल) धा'।
९. वही, 'विजयंतविय'।
१०. वही, 'कये'।

हिन्दी भाषान्तर

१. ....
२. ....
३. मारे जावें। (देवताओंके प्रियकी) इच्छा है।
४. सब प्राणियों (में)·········संयम, समचर्या (तथा) मार्दव (बढ़े।) यह प्रमुख माना गया है।
५. देवताओंके प्रियके अनुसार धर्मविजय ही विजय है। और वह देवताओंके प्रियको यहाँ पुनः प्राप्त हुआ है।
६. सभी सीमान्त देशोंमें, छ सौ योजनोंमेंतक जहाँ अन्तियोक नामक यवनराजा (है) तथा उससे
७. अन्तियोकसे भी परे जो चार राजा, हैं यथा तुरमाय, अन्तिकिन, मक (मग)
८. तथा अलिकसुन्दर नामके यवन राजागण तथा नीचे चोल, पाण्ड्य तथा ताम्रपर्णीवाले; ऐसे ही
९. इधर विषवृजियों यवन-कम्बोजों, नाभकों, नाभपंक्तियों, भोज, प्रातिष्ठानिक,
१०. आन्ध्रपुलिन्दोंमें सर्वत्र देवताओंके प्रियकी धर्मानुशिष्टिको अनुसरण करते हैं। जहाँ भी
११. देवताओंके प्रियके दूत नहीं पहुँच पाते हैं वे (वहाँ के लोग) भी देवताओंके प्रियके धर्मवृत्त, विधान,
१२. (तथा) धर्मानुशिष्टिको सुनकर धर्मका अनुसरण करते हैं और अनुसरण करेंगे।
१३. इनमेंसे ही सर्वत्र जो विजय हो जाता है वह है प्रीतिरस। वह प्रीति प्राप्त होती है। धर्मविजयमें प्रीति होती है।
१४. वह प्रीति छोटी होनेपर भी देवानां प्रिय उसको पारलौकिक लाभके लिए अत्यन्त महान् मानते हैं।
१५. इस प्रयोजनके लिए धर्मलिपि लिखवायी गयी। क्यों? इसलिए कि मेरे पुत्र, पौत्र जो हों वे
१६. नये (इसी) प्रकारके विजयको विजय न मानें। यदि उन्हें विजयकी इच्छा हो तो शान्ति
१७. तथा लघुदण्डताकी रुचि करें और उसीको धर्मविजय मानें। जो धर्मविजय है वह इहलौकिक-पार-
१८. लौकिक है। सबका आनन्द उद्यमका आनन्द है। वही इहलौकिक और पारलौकिक है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. **अंतियोक :** सम्भवतः इसीका वर्णन अशोकने अपने द्वितीय शिलालेखमें किया है। इसका समीकरण विद्वान अण्टियोकस द्वितीयसे करते हैं जो सीरिया तथा पश्चिमी एशियाका अधीश्वर था। यह सिकन्दरके प्रसिद्ध सेनानी सेल्यूकस निकेटरका पोता था। उसका राज्यकाल २६१ ई० पूर्वसे लेकर २४६ ई० पू० तक बतलाया जाता है।

२. **तुरमय :** यह मिस्रका बादशाह टालेमी फिलाडेल्फस था जिसका राज्यकाल २८५ ई० पूर्वसे लेकर २४७ ई० पूर्वतक था।
(द्रष्टव्य : भाण्डारकर 'अशोक', आंग्ल संस्करण, पृ० ४६)।

३. **अन्तिकिनि :** अशोकके अभिलेखमें इसे कहीं-कहीं 'अन्तेकिने' कहा गया है (द्रष्टव्य कालसी संस्करण) और कहीं अतेकिना (गिरनार)। श्री ब्यूलर महोदयने इसका समीकरण ऐण्टिगोनेस नामक ग्रीक राजासे किया (द्रष्टव्य जेड० डी० एम० जी०, भाग ४०, पृ० १३७) किन्तु इस नामका कोई नरेश इस युगके इतिहासमें नहीं प्राप्त होता अतः इसका समीकरण विद्वानोंने ऐन्टीगोनस जोनटससे किया है। इसका राज्यकाल २७७ ई० पूर्वसे लेकर २३९ ई० पूर्वतक था।

४. **मक :** यह साइरीनिका राजा मॉगस ही था और टालेमी फिलाडेल्फसका सौतेला भाई था। स्मिथ महोदयके अनुसार उसकी अन्तिम तिथि २५८ ई० पूर्व थी। हुल्जके अनुसार उसने २५० ई० पूर्वतक राज्य किया। यदि हुल्ज महोदयकी बात मान ली जाय तो उसका राज्यकाल ३०० ई० पूर्वसे लेकर २५० ई० पूर्वतक था।

५. **अलिकसुन्दर :** इसके समीकरणके सम्बन्धमें विद्वानोंमें मतभेद है। ब्यूलर, विन्सेन्ट स्मिथ आदि कुछ विद्वानोंके अनुसार वह एपिरसका अलेक्जेण्डर था जिसका राज्यकाल २७२ ई० पूर्वसे लेकर २५२ ई० पूर्वतक था। हुल्जके अनुसार वह कॉरिन्थ देशका राजा एलेक्जेन्डर था जिसने २५२ ई० पूर्वसे लेकर २४४ ई० पूर्वतक राज्य किया। ध्यान देने योग्य बात यह है कि दोनों अशोकके समकालीन पड़ते हैं। निश्चित नहीं कहा जा सकता कि उनमेंसे किसका अशोकने अपने धर्मलेखमें उल्लेख किया।

६. **चोल :** पाणिनिने 'चोल' का अपनी अष्टाध्यायीमें उल्लेख किया है। (अष्टा० ४-१-१७५)। रामायण (४, अध्याय ४१ बम्बईका संस्करण), मार्कण्डेयपुराण (अध्याय ५७, श्लोक ४५), वायु (४५-१२४) तथा मत्स्य (११२-४६)में चोल देशका उल्लेख है। वराहमिहिरने अपनी बृहत्संहितामें इसका उल्लेख किया है। महावंश (१६६, १९७ तथा आगे)में इसका उल्लेख मिलता है। इसमें आधुनिक तजौर तथा त्रिचनापल्लीका प्रदेश सम्मिलित था।

७. **पाण्ड्य :** पाणिनिने अपनी अष्टाध्यायीमें (४-१-१७१) इसका उल्लेख किया है। इसमें मदुरा तथा टिनैवेलीके प्रदेश सम्मिलित थे (मैकिंडिल ऐन्स्येण्ट इंडिया ऐज डिस्काइब्ड बाई टॉलेमी, मजूमदारका संस्करण, पृ० १८३)। महाभारत (सभा० अध्याय ३१-१७), मार्कण्डेय पुराण (५७-४५), वायुपुराण (४५-१२४), मत्स्यपुराण (११२ ४६)में पाण्ड्य देशका उल्लेख पाया जाता है। विस्तारके लिए द्रष्टव्य वि० च० लॉ : ट्राइब्ज इन एंश्येण्ट इण्डिया, पृ० १९० तथा आगे।

८. **ताम्रपर्णी :** कौटिल्यके अर्थशास्त्र (२-११)में इसका उल्लेख है। भागवतपुराण (४,२८-३५; ५-१९-१८; १०-७९-१६; ११-५-३९)में इसका उल्लेख नदीके रूपमें हुआ है। बृहत्संहिता (१४-१६; ८१-२, ३)में इसका उल्लेख है। इसका समीकरण अधिकतर विद्वान् लोग 'श्रीलंका'से करते हैं। विस्तारके लिए द्रष्टव्य (वि० च० लॉ : इण्डो लॉजिकल स्टडीज, खण्ड १, पृ० ५९-६०)।

९. **विवराज :** ये कौन थे इसका पता अभीतक नहीं लगा। इसीके साथ यह भी नहीं पता लगा कि विषवज्रि जाति कौन है। श्री ब्यूलर महोदयके अनुसार सम्भवतः ब्रिप आजकलके वैश राजपूत तथा वज्रि कदाचित् वैशालीके प्राचीन वृजि लोग हैं।

१०. **कम्बोज :** इसका उल्लेख अष्टाध्यायी (४-१-१७५), महाभाष्य (१-१-१ पृ० ३१७; ४-१-१७५), भागवत पुराण (२-७-३५; १०-७५-१२; १८-२२-१०-२२-१३), ह्वेन्त्सांग (वाटर्स ऑन हु आन च्वांग, भाग १, पृ० २८४ तथा आगे)में इसका उल्लेख है। सिन्धु नदीके उत्तर-पश्चिमी प्रदेशका समीकरण इससे विद्वान करते हैं। विस्तारके लिए द्रष्टव्य (वि० च० लॉ : ज्योग्रफी ऑफ अर्ली बुद्धिज्म, पृ० ५०-५१)।

चतुर्दश अभिलेख

(उपसंहार)

१९. [१] इयं धंमलिपि देवानं पियेना पियदसिना लजिना लिखापिता अथि येवा सुखि
२०. तेना अथि मझिमेना अथि विथटेना[1] [२] नो हिसवता सवे घटिते [३] महालके हि वि
२१. जिते बहु च लिखिते लेखापेशामि चेव निक्यं [४] अथि चा हेता पुन पुना लपि
२२. ते तष तषा अथषा मधुलियाये येन जने तथा पटि पजेया [५] पे षाया[2] अत किछि अ-
२३. समति लिखिते दिषा वा षंखेये कालनं वा आलोचयितु लिपिकलपलाधेन वा ।

संस्कृतच्छाया

१९. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा लेखिता । अस्ति एव संक्षि-
२०. प्तेन अस्ति मध्यमेन अस्ति विस्तृतेन । नहि सर्वत्र सर्वं घटितम् । महल्लकं हि वि-
२१. जितम् । बहु च लिखितम् लेखयिष्यामि च एव नित्यम् । अस्ति च अत्र पुनः लपि
२२. तं तस्य तस्य अर्थस्य माधुर्याय येन जनः प्रतिपद्येत । तत् स्यात् अत्रकिञ्चित् अ-
२३. समाप्तं लिखितं देशं वा संक्षयकारणं वा आलोच्य लिपिकरापराधेन वा ।

पाठ टिप्पणी

१. कआ, 'विथटेना' ।
२. वही, 'पिया' ।

हिन्दी भाषान्तर

१९. [१] यह धर्मलिपि देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखवायी गयी । यह कभी संक्षेप से,
२०. कभी मध्यम रूपसे, कभी विस्तार से (लिखवायी गयी) हैं [२] क्योंकि सर्वत्र सब घटित नहीं होता [३] साम्राज्य बहुत विशाल है
२१. अतः बहुतसे लेख लिखवाये गये हैं । (वहीं) बहुतसे नित्य लिखवाये जायेंगे । और फिर
२२. बातोंकी मधुरताके कारण पुनरुक्ति की गयी है जिससे लोग उसके अनुसार आचरण करें । इस लेखमें
२३. जो कुछ अपूर्ण लिखा गया हो उसका कारण स्थानका अभाव, संक्षेपीकरण या लेखकका अपराध समझना चाहिये ।

शहबाजगढ़ी शिला

प्रथम अभिलेख

(जीवदया : पशुयाग तथा मांस-भक्षण निषेध)

१. अय[1] ध्रमदिपि देवनप्रिअस रञो लिखपितु[2] [१] हिद नो किचि जिवे अरभितु प्रयुहोतवे [२] नो पि च समज कटव [३] बहुक हि दोष समयस्पि देवणप्रिये[3] प्रियद्रशि रय दखति

२. [४] अस्ति पि चु एकतिअ[4] समये ससुमते देवनपिअस[5] प्रियद्रशिस रञो [५] पुर महनससि देवनप्रियस प्रियद्रशिस रञो अनुदिवसो बहुनि प्रणशतसहसनि[6] अरिभियिसु सुपठये [६] सो इदनि यद अय

३. ध्रमदिपि लिखित तद त्रयो वो प्रण हंञंति मजुर दुवि २ म्रुगो १ सोपि म्रुगो नो ध्रुवं [७] एत पि प्रण त्रयो पच न अरभिशंति [८]

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण राज्ञा लेखिता। इह न कश्चित् जीवः आलभ्य प्रहोतव्यः। न अपि च समाजः कर्तव्यः। बहुकान्

२. हि दोषान् सामजस्य देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा द्रक्षति (पश्यति)।

३. अस्ति अपि तु एकतमः समाजः साधुमतः देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः। पुरा महानसे देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः अनुदिवसं बहूनि प्राणशतसहस्राणि आलभ्यन्त सूपार्थाय। तत् इदानीं यदा इयं

४. धर्मलिपिः लिखिता तदा त्रयः एव प्राणाः हन्यन्ते—द्वौ मयूरौ एकः मृगः। सः अपि च मृगः न ध्रुवम्। एते अपि च त्रयः प्राणाः पश्चात् न आलप्स्यन्ते।

पाठ टिप्पणी

१ ब्यूलरके अनुसार 'अय'।
२. 'लिखपित' पाठ अधिक शुद्ध है।
३. ब्यूलरके अनुसार 'दोष मम · स देवन प्रियो'।
४. ब्यूलरके अनुसार 'च एकतिए'।
५. हुल्त्जके अनुसार 'साधुमत'; ब्यूलरके अनुसार 'सेस्त मति'।
६. 'प्रिअस' पाठ ब्यूलरको मान्य है।
७. 'सहस्रान' पाठ अधिक ठीक है।

हिन्दी भाषान्तर

१. यह धर्मलिपि[1] देवानां प्रिय राजा द्वारा लिखायी गयी। यहाँ कोई जीव मारकर हवन न किया जाय।[2] और न समाज[3] किया जाय। क्योंकि बहुतसे दोष [समाजके] देवानां प्रियदर्शी राजा देखते हैं।

२. ऐसे भी एक प्रकारके समाज हैं जो देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके मतमें साधु हैं। पहले देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाकी पाकशालामें प्रतिदिन कई लाख प्राणी सूपके लिए मारे जाते थे। परन्तु इस समय जब यह

३. धर्मलिपि लिखी गयी है तब तीन ही प्राणी मारे जाते हैं, दो (२) मयूर और एक (१) मृग। मृग भी निश्चित नहीं। ये भी तीन प्राणी पश्चात् नहीं मारे जायेंगे।

भाषान्तर टिप्पणी

१. पश्चिमोत्तर भारतके शिला अभिलेखोंमें 'लिपि'के स्थानमें 'दिपि' शब्द पाया जाता है। यह भारत ईरान सम्पर्कका प्रभाव है।
२. यहाँ पशुयागका निषेध है।
३. देखिये गिरनार अभिलेख।
४. शब्द और अङ्क साथ उत्कीर्ण हैं। यह प्रयोग असन्दिग्धताके लिए है।

द्वितीय अभिलेख

(लोपोपकारी कार्य)

३. सत्रत्र विजिते देवनंप्रियस प्रियद्रशिस ये च अंत पथ चोड

४. पंडिय सतियपुत्रो केरडपुत्रो[1] तंबपंणि[2] अंतियोको नम योनरज ये च अंञें तस अंतियोकस समंत रजनो सत्रत्र देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो दुवि २ चिकिस क्रिट[3] मनुशचिकिस···पशु चिकिस च

५. [१] ओपढनि मनुशोपकनि च पशोपकनि च यत्र यत्र नस्ति सवत्र हरपित च वुत च [२] कुप च खनपित प्रतिभोगये पंशुमनुशनं [३]

संस्कृतच्छाया

३. सर्वत्र विजिते देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः ये च अन्त्याः यथा चोळः

४. पाण्ड्यः सत्यपुत्रः केरलपुत्रः ताम्रपर्णिः अन्तियोकः नाम यवनराजः ये च अन्ये तस्य अन्तियोकस्य सामान्ताः राजानः सर्वत्र देवानां प्रियस्य राज्ञः द्वे चिकित्से कृते मनुष्यचिकित्सा पशुचिकित्सा च

५. औषधानि (ओषधयः) मनुष्योपगानि पशूपगानि च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र हारितानि च एवं च कूपः खानितः प्रतिभोगाय पशुमनुष्याणाम् ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'सतियपुत्र केरलपुत्र' पढ़ते हैं ।

२. ब्यूलरके अनुसार '०पंनि' ।

३. ब्यूलरके अनुसार 'किट्ट' ।

हिन्दी भाषान्तर

३. देवानांप्रिय प्रियदर्शीके राज्यमें सर्वत्र और इसी प्रकार प्रत्यन्तोंमें[1], यथा चोळ,

४. पाण्ड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र, ताम्रपर्णि, अन्तियोक नाम यवन राजा और उस अन्तियोकके जो अन्य पड़ोसी राजा हैं[2], देवानांप्रिय प्रियदर्शी द्वारा सर्वत्र दो (प्रकारकी) चिकित्सा (की व्यवस्था)की गयी है, मनुष्य-चिकित्सा और पशु-चिकित्सा ।

५. मनुष्योपयोगी और पशूपयोगी जो ओषधियाँ जहाँ जहाँ नहीं हैं (वे) सर्वत्र लायी गयी हैं एवं पशु और मनुष्योंके उपयोगके लिए कुएँ खोदे गये हैं ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. सीमापरके पड़ोसी राज्य ।

२. इन राज्यों तथा राजाओंके समीकरणके लिए देखिये गिरनार अभिलेख ।

तृतीय अभिलेख

(धर्मप्रचार : पञ्चवर्षीय योजना)

५. देवनंप्रियो प्रियद्रशि रज अहति । बदयवषभिसितेन[1]......अणपितं[2] । सवत्र मअ[3]

६. विजिते युत रजिको प्रदेशिक[4] पंचषु पंचषु ५ वषेषु अनुसंयनं निक्रमतु एतिस वो करण इमिस ध्रंमनुशस्तिये थ[5] अअये पि क्रमये[6] ।
सधु मतपितुषु सुश्रुष मित्रसंस्तुतञतिकनं ब्रमणश्रमणनं......प्रणनं अनरंभो सधु

७. अपवयत अपभंडत सधु । परि[7] पि युतनि गणनसि अणपेशंति हेतुतो च वंजनतो च ।

संस्कृतच्छाया

५. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा आह इति । द्वादशवर्षाभिषिक्तेन...आज्ञापितम् । सर्वत्र मम

६. विजिते युक्तः रज्जुकः प्रादेशिकः पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु अनुसंयानं निष्क्रामन्तु एतस्मै एव कारणाय अस्यै धर्मानुशिष्टये (य)था अन्यस्मै अपि कर्मणे । साधु मातापित्रोः शुश्रूषा मित्रसंस्तुतज्ञातिकेभ्यः ब्राह्मणश्रमणेभ्यः (दानं साधु) । प्राणिनाम् अनारम्भो साधु ।

७. अल्पव्ययता अल्पभाण्डता साधु । परिषदः अपि युक्तान् गणने आज्ञापयिष्यन्ति हेतुतः च व्यञ्जनतः ।

पाठ टिप्पणी

१. इस पदका पहला शब्द वास्तवमें **बदस** होना चाहिये। 'य' और 'स' अक्षरोंके चिह्न प्राय: एक-दूसरेसे मिलते-जुलते हैं। देखिये पार्जिटरकी टिप्पणी (एपिग्राफिका इण्डिका, जिल्द ३, पृ० २०३)।

२. ब्यूलरने इन दो शब्दोंको छोड़ दिया है।

३. ब्यूलरके अनुसार पाठ 'प्रदेशिके' होना चाहिये।

५. 'यथ' पढ़िये।

६. हुल्त्श इसे 'क्रमये' पढ़ते हैं।

७. 'परिश' पढ़िये।

हिन्दी भाषान्तर

५. देवानां प्रिय (देवताओंके प्रिय) प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। अभिषेकके बारह वर्ष [पश्चात्] मेरे द्वारा ऐसी आज्ञा दी गयी। सर्वत्र मेरे]

६. राज्यमें युक्त, रज्जुक, प्रादेशिक[1] पाँच-पाँच (५) वर्षपर इस कार्यके लिए, इस धर्मानुशिष्टिके[2] लिए य(त)था अन्य कार्यके लिए दौरेपर जायँ। माता-पिताकी शुश्रूषा साधु है। मित्र, परिचित, जाति, ब्राह्मण और श्रमणको (दान देना साधु है)। प्राणियोंका अवध साधु है।

७. अल्पव्ययता और अल्पभाण्डता साधु है। परिषदें युक्तों को हेतु (कारण) और व्यञ्जन (अक्षरशः अर्थ)के साथ गणना करनेके लिए आज्ञा देंगी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. इन अधिकारियोंके समीकरणके लिए देखिये गिरनार-अभिलेख।

२. धर्मानुशासन अथवा धार्मिक उपदेश।

चतुर्थ अभिलेख

(धर्मघोष : धार्मिक प्रदर्शन)

७. अतिक्रतं अंतरं बहुनि वषशतनि वढितो वो प्रणरंभो विहिस च भुतनं जतिनं[1] असंपटिपति[2] श्रमणब्रमणनं असंपटिपति ।
[१] सो अज देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो

८. ध्रमचरणेन भेरिघोष अहो ध्रमघोष विमननं द्रशनं अस्तिन[3] जतिकंधनि अञनि च दिवनि रूपनि द्रशयितु जनस
[२] यदिशं बहुहि वषशतेहि न भुतप्रुवे तदिशे अज वढिते देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो धंमनुशस्तिय अनरंभो प्रणनं अविहिस भुतनं जतिनं संपटिपति[4] ब्रमण-

९. श्रमणन[5] संपटिपति मतपितुषु वुढनं सुश्रुष [३] एत अञं च बहुविधं ध्रमचरणं वढितं [४] वढिशति च यो देवनंप्रियस प्रिय-द्रशिस रञो ध्रमचरणो इम पुत्र पि च कं नतरा[6] च प्रानतिक च देवनंप्रियस प्रियदशिस रञो प्रवढेशंति यो ध्रमचरणं इमं अवकप ध्रमे शिले च

१०. तिठिति धमं अनुशशिशंति [५] एत हि स्रेठं क्रमं यं ध्रमनुशशनं [६] ध्रमचरणं पि च न भोति अशिलस । [७] सो इमिस अठस वढि युजंतु हिनि च म लोचेषु [८] बदयवषभिसितेन देवनंप्रियेन प्रियद्रशिन रञ अनं हिद निपेसितं [९]

संस्कृतच्छाया

७. अतिक्रान्तम् अन्तरं बहूनि वर्षशतानि (बहुवर्षशतानां) वर्द्धित एव प्राणालम्भः विहिंसा च भूतानां ज्ञातिषु असम्प्रतिपत्तिः श्रमणब्राह्मणेषु असम्प्रतिपत्तिः । तत् अद्य देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः

८. धर्माचरणेन भेरिघोषः अभूत धर्मघोषः । विमानानां दर्शनं हस्तिनां (च) ज्योतिःस्कन्धान् अन्यानि च दिव्यानि रूपाणि दर्शयित्वा जनं यादृशं बहुभिः वर्षशतैः न भूतपूर्वं तादृशं अद्य वर्द्धितं देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिन राज्ञः धर्मानुशास्त्या—अनालम्भः प्राणानाम् अविहिंसा भूतानां ज्ञातीनां सम्प्रतिपत्तिः ब्राह्मण-

९. श्रमणानां सम्प्रतिपत्तिः मातरि पितरि वृद्धेषु च शुश्रूषा । एतत् अन्यं च बहुविधं धर्माचरणं वर्द्धितम् । वर्द्धयिष्यति च एव देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्माचरणम् इदम् । पुत्रा अपि च किम् नप्तारश्च प्रणप्तारश्च देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः प्रवर्द्धयिष्यन्ति इदं धर्मा-चरणम् यावत्कल्पम् धर्मशीले च

१०. तिष्ठन्तः धर्मम् अनुशासिष्यन्ति । एतत् श्रेष्ठं कर्म यत् धर्मानुशासनम् । धर्माचरणम् अपि न भवति अशीलस्य । तत् अस्य अर्थस्य वृद्धिं युंजन्तु हानिञ्च न अवलोकयेयुः । द्वादशवर्षाभिषिक्तेन देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा ज्ञानं इहत्र निपेसितम् ।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्ह्ज 'अतिन' पढ़ते हैं ।
२. ब्यूलर 'असंप्रटि' पढ़ते हैं ।
३. ब्यूलरके अनुसार '[ह]स्तिनो' ।
४. ब्यूलर 'सप्रटि' पढ़ते हैं ।
५. ब्यूलरके अनुसार 'स्रमणन'
६. ब्यूलर 'कु' पढ़ते हैं ।

हिन्दी भाषान्तर

७. बहुत सैकड़ों वर्षोंका अन्तर बीत चुका । प्राणियोंका वध, जीवधारियोंके प्रति विशेष हिंसा, जातिके लोगोंके साथ अनुचित व्यवहार, (और) ब्राह्मण-श्रमणोंके साथ अनुचित व्यवहार बढ़ता ही गया । परन्तु आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके

८. धर्माचरणसे भेरी-घोष[1] (युद्धका बाजा) धर्म-घोष (धर्मप्रचार) हो गया है—विमान-दर्शन,[2] हस्तिदर्शन,[3] ज्योति-स्कन्धों[4] तथा अन्य दिव्य रूपोंको जनताको दिखा कर (इसी प्रकार) बहुत सैकड़ों वर्ष बीत चुके जैसा भूतपूर्व (भूतकाल)में नहीं हुआ वैसा आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्मानुशासनसे प्राणियोंका अवध, भूतों (जीवधारियों)के प्रति विशेष अहिंसा, जातिके लोगोंके प्रति उचित व्यवहार, ब्राह्मण

९. श्रमणोंके प्रति उचित व्यवहार और माता, पिता और वृद्धोंकी शुश्रूषा बढ़ी है । इस प्रकार आज बहुविध धर्माचरणकी वृद्धि हुई है । देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा इस धर्माचरणको और बढ़ायेंगे । देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके पुत्र, नाती और परनाती[5] इस धर्माचरणको विशेष रूपसे बढ़ायेंगे और कल्पान्ततक शील और धर्मका

१०. आचरण करते हुए धर्मका अनुशासन करेंगे । जो धर्मानुशासन है वही श्रेष्ठ कर्म है । शीलरहित (व्यक्ति)से धर्माचरण नहीं होता । इसलिए इस अर्थ (धर्माचरण)की वृद्धि करें और हानि न देखें (सोचें) । राज्याभिषेकके बारह वर्ष पश्चात देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा यह (धर्मलेख) लिखाया गया ।

भाषान्तर टिप्पणी

१–३. देखिये गिरनार अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी ।
४. गिरनार अभिलेखमें 'अग्न-स्कंध' पाठ है विशेष व्याख्याके लिए उसीकी टिप्पणी देखिये ।
५. गिरनार अभिलेखमें 'पुत्र, पौत्र' शब्द पाये जाते हैं ।

पंचम अभिलेख

(धर्म महामात्र)

११. देवनप्रियो प्रियद्रसि रय एवं अहति[1] [१] कलणं दुकरं [२] यो अदिकरो कलणस सो दुकरं करोति [३] सो मय बहु कलं[2] किट्रं [४] तं मअ[3] पुत्र च नतरो च परं च तेन ये[4] मे अपच व्रक्षन्ति[5] अवकपं तथ ये अनुवटिशंति[6] ते सुकिटं[7] कषंति [५] यो चु अतो......कं पिं[8] हपेशदि[9] सो दुकटं कषति [६] पपं हि सुकरं [७] स अतिक्रतं अतर नो[10] भुतप्रुव ध्रंम[11] महमत्र नम [८] सो तोदश[12] वषभिसितेन

१२. मम ध्रममहमत्र किट[13] [९] ते सव्र प्रषंडेषु वपट धंमधिथनये च धमवढिय हिदसुखये च ध्रमयुतस योन कंबोय गंधरनं रठिकनं[14] पितिनिकनं ये व पि अपरंत [१०] भटमयेषु व्रमणिभेषु अनथेषु वुढेषु हितसुखये धंमयुतस[15] अपलिगोध[16] वपट ते

१३. बधनबधस पटिविधनये अपलिबोधये मोक्षये अथि अनुब...प्रजव किटभिकरो वा महलके व वियपट ते [११] इअ बहिरेषु च गरेषु सव्रेषु ओरोधनेषु भ्रतुन च मे स्वसन च ये व पि अंञे ञतिक सवत्र वियपुट [१२] ये अयं धमनिशिते ति व ध्रमधिथने ति व दनसयुते ति व सवत विजिते मअ ध्रमयुतसि वियपट ते ध्रममहमत्र [१३] एतये अठये अयि ध्रमदिपि निपिस्त चिरथितिक भोतु तथ च मे प्रज अनुवततु [१४]

संस्कृतच्छाया

११. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवं आह इति। कल्याण दुष्करम्। यः आदिकरः कल्याणस्य सः दुष्करं करोति। तत् मया बहु कल्याणं कृतम्। तत् मम पुत्राश्च नप्तारश्च परं च तेभ्यः ये मे अपत्या व्रजयिष्यन्ति यावत्कल्पम् तथा ये अनुवर्तिष्यन्ते ते सुकृतं करिष्यन्ति। यश्च अत्र (देशे) कम् अपि हापयिष्यति सः दुष्कृतं करिष्यति। पापं हि सुकरम्। तत् अतिक्रान्तम् अन्तरं न भूतपूर्वाः धर्ममहामात्राः नाम। तत् त्रयोदशवर्षाभिषिक्तेन

१२. मया धर्ममहामात्राः कृताः। ते सर्वपाषण्डेषु व्यापृताः धर्माधिष्ठानाय च धर्मवृद्ध्या हितसुखाय च धर्मयुक्तस्य—यवनकम्बोज-गान्धाराणां राष्ट्रिकानां पैतृकानां ये वा अपि अपरान्ताः। भृत्यमयेषु ब्राह्मणेभ्येषु अनाथेषु वृद्धेषु हितसुखाय धर्मयुक्तस्य अपरिगोधाय व्यापृता ते।

१३. बन्धनबद्धस्य परिविधानाय अपरिबाधाय मोक्षाय च अयं अनुबद्धप्रजावान् कृताभिकारः इति वा महल्लकः वा व्यापृता ते। इह बाह्येषु च नगरेषु सर्वेषु अवरोधनेषु भ्रातृणाञ्च मे स्वसानां च ये वा अपि अन्ये ज्ञातयः सर्वत्र व्यापृताः। यः अयं धर्मनिश्रितः इति वा धर्माधिष्ठानः इति वा दानसंयुक्तः इति वा सर्वत्र विजिते मम धर्मयुक्त व्यापृता ते धर्ममहामात्रा। एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपि लेखिता चिरस्थितिका भवतु तथा च मे प्रजा अनुवर्त्तन्ताम्।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्हर 'हहति' पढ़ते हैं।
२. 'कलण' पाठ अभिप्रेत है।
३. ब्यूलरके अनुसार 'म[ह]'।
४. 'य' पाठ ब्यूलरके मतमें।
५. ब्यूलरके अनुसार '[अ]च्छन्ति'।
६. 'अनुवतिशंति' पाठ अधिक ठीक।
७. ब्यूलरके अनुसार 'सुकिट्र'।
८. 'एकं' पूर्ण पाठ है।
९. ब्यूलरके अनुसार 'हपेशति'।
१०. वही, 'अतिक्रतं अतरं न'।
११. 'ध्रम-' पाठ अधिक शुद्ध है।
१२. ब्यूलरके अनुसार 'तिदश'।
१३. वही, 'किट्र'।
१४. वही, 'रस्तिकन'।
१५. 'ध्रम-' अधिक शुद्ध पाठ है।
१६. 'गोधये' पढ़िये।

हिन्दी भाषान्तर

११. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। जो कल्याणका प्रारम्भ करता है वह दुष्कर कार्य करता है। किन्तु मुझसे बहुत कल्याण किया गया। यदि मेरे पुत्र, नाती और उनके परे मेरे अपत्य कल्पके अन्ततक (इसका) अनुसरण करेंगे वे कुछ सुकृत करेंगे। जो यहाँ (इस देशमें) इसका एक अंश भी नष्ट करेगा वह दुष्कृत करेगा। पाप सुकर है। बहुत समय बीता भूतकालमें धर्ममहामात्र[1] नाम(क अधिकारी) नहीं थे। परन्तु राज्याभिषेकके तेरह वर्ष पश्चात्

१२. मेरे द्वारा धर्ममहामात्र (नियुक्त) किये गये। धर्मकी स्थापना, धर्मवृद्धि और धर्मयुक्तों के हित-सुखके लिए वे सभी पापण्डों (धार्मिक सम्प्रदायों)में व्याप्त हैं; जो यवन, कम्बोज, गन्धार, राष्ट्रिक, प्रतिष्ठानिक (अथवा पैत्रयणिक) तथा अन्य अपरान्तों (पश्चमी सीमाप्रान्तों) भृतकों तथा आर्यों, ब्राह्मणों, वैश्यों,[2] अनाथों, वृद्धोंमें उनके हित-सुखके लिए और धर्मयुक्तोंमें लोभसे उनकी मुक्ति[3] के लिए व्याप्त हैं।

११. बन्धन-बद्ध (बन्दी = कैदी) को सहायता, अपरिबाधा[5] और मुक्तिके लिए भी, बाल-बच्चोंवालों, जादू-टोनासे आविष्ट[6] लोगों और बड़े लोगोंमें वे व्याप्त हैं। यहाँ (पाटलिपुत्र) और बाहरके नगरोंमें, सब अवरोधनोंमें, भाइयों, बहनों और अन्य ज्ञातिके लोगोंमें वे सर्वत्र व्याप्त हैं। मेरे राज्यमें सर्वत्र धर्ममहामात्र धर्मयुक्तोंकी (सहायताके लिए नियुक्त हैं) जिससे धर्मके प्रति श्रद्धा,[8] धर्मकी स्थापना, अथवा दानका विभाजन हो। इस प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि अंकित हुई जिससे कि यह चिरस्थायी हो और मेरी प्रजा इसका अनुसरण करे।

भाषान्तर टिप्पणी

१. देखिये गिरनार अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।

२. कुछ विद्वान 'इभ'का अर्थ 'क्षत्रिय' (इभ्य आढ्यो धनी। अमरकोश) और 'भटमयेषु'में 'अर्य'का अर्थ 'वैश्य' करते हैं। [देखिये, नगा कः अशोकन इसक्रिप्शन्स, पृ० २९, टि० (१२)]

३. धर्ममहामात्रकी भाँति धर्मयुक्त भी एक प्रकारके अधिकारी थे जो धर्ममहामात्रोंकी अध्यक्षतामें कार्य करते थे। अशोकके प्रशासकीय सुधारोंमें एक यह भी था।

४. पालि 'गिद्धि'का अर्थ 'लोभ' है। देखिये संस्कृत 'गृध्' (= लोभपूर्वक प्रयत्न करना)।

५. 'परिबाधा'का अर्थ है 'चारों तरफसे बाधा (कठिनाई)।' 'अपरिबाधा'का अर्थ है 'कठिनाइयोंका अभाव'।

६. यहाँ अभिकार = अभिचार (जादू-टोना)।

७. देखिये, गिरिनार अभिलेखकी टिप्पणी।

८. देखिये, पालि 'निस्सित' संस्कृत नि + श्रि (= अवलम्बित अथवा अनुरक्त होना)।

षष्ठ शिलालेख

(प्रतिवेदना)

१४. देवनं प्रियो प्रियद्रशि रय एव[1] अहति [१] अतिक्रतं अंतर[2] न भुतप्रुवं सवं[3] कलं अठ[4]क्रमं व पटिवेदन व [२] तं मय एवं किटं [३] सत्रं कलं अशमनस मे ओरोधनस्पि ग्रभगरस्पि व्रचस्पि विनितस्पि उयनस्थि सवत्र[5] पटिवेदक अठं जनस पटिवेदेतु मे [४] सवत्र च जनस अठ करोमि [५] यं पि च किचि मुखतो अणपयमि अहं दपकं[6] व श्रवकं[7] व ये व पन महमत्रन अचयिक अरोपितं भोति तये अठये विवदे[8] निरुति व सतं परिषये अनंतरियेन प्रटिवेदेत वो मे [६]

१५. [9]सवत्र च अठं जनस करोमि अहं [७] यं च किचि मुखतो अणपेमि अहं दपकं व श्रवक व ये व पन महमत्रनं अचयिकं अरोपितं भोति तये अठये विवदं संतं निजति व परिषये अनंतरियेन पटिवेदेत वो मे सवत्र सवं कलं [८] एव अणपितं मय [९] नस्ति हि मे तोषो उठनसि अठसंतिरणये च [१०] कटवमतं हि मे सव[10] लोकहितं [११] तस च मुलं एत्र उथनं अठमंतिरण च [१२] नस्ति हि क्रमतरं

१६. सव[11] लोकहितेन [१३] यं च किचि परक्रममि किति भुतनं अनणियं व्रचेयं इअ च ष सुखयमि परत्र च स्पग्रं[12] अरधेतु [१४] एतये अठये अयि ध्रम निपिस्त चिरथितिक भोतु तथ च मे पुत्र नतरो परक्रमंतु सवलोकहितये [१५] दुकर तु खो इमं अञत्र अग्रे परक्रमेन [१६]

संस्कृतच्छाया

१४. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवं आह इति। अतिक्रान्तं अन्तरं न भूतपूर्वं सर्वं काल अर्थकर्म वा प्रतिवेदना वा। तत् मया एवं कृतम्। सर्वं कालं अश्नतः मे अवरोधनेषु गर्भागारेषु व्रजे विनीते उद्याने सर्वत्र प्रतिवेदकाः अर्थं जनस्य प्रतिवेदयन्तु मे। सर्वत्र च जनस्य अर्थं करोमि। यत् अपि च किञ्चित् मुखतः आज्ञापयामि अहं दापकं वा श्रावकं वा ये वा पुनः महामात्रेभ्यः आत्ययिकम्। आरोपितं भवति तस्मै अर्थाय विवादः निध्यातिः वा स्तः परिषदि आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे।

१५. सर्वत्र च अर्थं जनस्य करोमि अहम्। यच्च किञ्चित् मुखतो आज्ञापयामि अहं दापकं वा श्रावकं वा यत् वा पुनः महामात्रेभ्यः आत्ययिकम् आरोपितं भवति तस्मै अर्थाय विवादः स्तः निध्यातिः वा परिषदि आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे सर्वत्र सर्वं कालम्। एवम् आज्ञापितं मया। नास्ति हि मे तोषः उत्थाने अर्थ-सन्तीरणायां च। कर्तव्यमतं हि मे सर्वलोकहितम्। तस्य च मूलम् एतत् उत्थानम् अर्थसन्तीरणं च। नास्ति हि कर्मान्तरं।

१६. सर्वलोकहितेन (तात्)। यच्च किञ्चित् प्रक्रमे किमिति भूतानाम् आनृण्य व्रजेयम् इह च सुखयामि परत्र च स्वर्गम् आराधयन्तु। एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः चिरस्थितिका भवतु तथा च मे पुत्राः नप्तारः प्रक्रमन्तां सर्वलोकहिताय। दुष्करं च खलु एतत् अन्यत्र अग्रेण प्रक्रमेण (अग्र्यात् प्रक्रमात्)।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार एव।
२. वही, 'अन्तर'।
३. वही, 'सत्र'।
४. वही, 'अथक्रम'।
५. 'सम्रत्र पट्टि' पाठ ब्यूलरके अनुसार होना चाहिये।
६. ब्यूलरके अनुसार 'दपक'।
७. वही, 'श्रवक'।
८. इसके अन्तमें ब्यूलर 'व' जोड़ते हैं।
९. वाक्यसंख्या ७ और ८ (तीन अन्तिम शब्दोंको छोड़कर) की मूलमें पुनरावृत्ति हुई है।
१०. ब्यूलरके अनुसार 'सत्र'।
११. वही, 'सत्र'।
१२. वही, 'स्पग'।

हिन्दी भाषान्तर

१४. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। बहुत समय व्यतीत हुआ भूतकालमें सब समय अर्थकर्म[1] अथवा प्रतिवेदना[2] नहीं (होती थी)। इसलिए मेरे द्वारा ऐसा किया गया। सब काल (चाहे) मैं भोजन करता रहूँ, अवरोधन[3] (अन्तःपुर), गर्भागार (शयनगृह), व्रज[4] (पशुशाला)में रहूँ; पालकीपर[5] रहूँ; उद्यानमें रहूँ सर्वत्र प्रतिवेदक जनताके कार्यकी प्रतिवेदना करें। (मैं) सर्वत्र जनताका कार्य करता हूँ। जो कुछ भी मैं मौखिक आज्ञा दूँ स्वयं दान[6] अथवा विज्ञप्तिके सम्बन्धमें अथवा कोई आवश्यक कार्य महामात्रोंको सौंप दूँ और इसके बारेमें परिषद्में[7] विवाद अथवा पुनर्विचारके लिए प्रस्ताव उठ खड़ा हो तो इसकी प्रतिवेदना मुझे अविलम्ब होनी चाहिये।

१५. मैं सर्वत्र जनताका कार्य करता हूँ। और जो कुछ मौखिक आज्ञा करता हूँ स्वयं दान अथवा[1] विज्ञप्तिके सम्बन्धमें अथवा कोई आवश्यक कार्य महामात्रोंको सौंप दूँ और इसके बारेमें परिषद्में विवाद पुनर्विचारके लिए प्रस्ताव उपस्थित हो तो इसकी प्रतिवेदना मुझे अविलम्ब होनी चाहिये। इसी प्रकार मेरे द्वारा आज्ञा की

गयी। उत्थान और कार्यके सम्पादनमें मुझे सन्तोष नहीं। सर्वलोकहित मेरा कर्तव्य है, ऐसा मेरा मत है। और उसका मूल है उत्थान और कार्य-सम्पादन। दूसरा कोई कर्म नहीं है

१६. सर्वलोकहितसे (बढ़कर)। और जो कुछ पराक्रम करता हूँ इसलिए कि भूतऋणसे मुक्त हो जाऊँ, (उनको) यहाँ सुखी बनाऊँ और वे परलोकमें स्वर्ग प्राप्त कर सकें। इस प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि (उत्कीर्ण हुई इसलिए कि यह) चिरस्थायी हो तथा मेरे पुत्र, तथा (पौत्र) सर्वलोकहितके लिए पराक्रम करें। किन्तु यह दुष्कर है उत्तम पराक्रमके बिना।

भाषान्तर टिप्पणी

१. व्यावहारिक कार्य।
२. विवरण अथवा सूचना।
३. शाब्दिक अर्थ है 'घेरा' = रनिवास, जो चारों ओरसे घिरा और सुरक्षित होता था।
४. कुछ लोग 'वचभिह'का अर्थ 'पाखानेमें' लगाते हैं। वे इसको 'वर्चसि' (= पुरीष) का अपभ्रंश मानते हैं।
५. 'विनीत'का प्रयोग 'पालकी' और घोड़ा दोनों अर्थमें पाया जाता है।
६. 'दत्तं' अथवा 'दानं' का प्राकृत 'दापकं' है।
७. काशीप्रसाद जायसवालने 'निझती'का अर्थ 'अस्वीकृति' की है। उनके मतमें यह 'निक्षिप्ति'का अपभ्रंश है (देखिये, इंडियन एंटिक्वेरी १९१३, पृ० २८८)।
८. कुछ लोगोंने 'परिषद्' शब्दको बौद्ध सघके अर्थमें ग्रहण किया है जो ठीक नहीं।

सप्तम शिलालेख

(धार्मिक समता : संयम, भावशुद्धि)

१. देवनंपियो प्रियशि[1] रज सवत्र इछति सव्र[2]—
२. प्रषंड वसेयु [१] सवे हि ते सयमे[3] भवशुधि च इछंति [२]
३. जनो चु उचवुच छंदो उचवुचरगो [३] ते सव्रं व एक देशं व
४. पि कषंति [४] विपुले पि चु दने यस नस्ति सयम भव-
५. शुधि किद्रञत द्रिढभतित[4] निचे पढं

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वत्र इच्छति सर्वे-
२. पाषण्डाः वसेयुः। सर्वे हि ते संयमं भावशुद्धिञ्च इच्छन्ति।
३. जनः तु उच्चावचच्छन्दः उच्चावचरागः। ते सर्वम् एकदेशं वा
४. अपि करिष्यन्ति। विपुलम् अपि तु दानं यस्य नास्ति संयमः भाव-
५. शुद्धिः कृतज्ञता दृढ भक्तिता नित्यं वाढम्।

पाठ टिप्पणी

१. 'प्रियद्रशि' पढ़िये।
२. ब्यूलरके अनुसार 'सत्र'।
३. वही, 'सयम'।
४. वही, 'द्रिट'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा सर्वत्र इच्छा करते हैं (कि) सभी
२. सम्प्रदाय बसें। क्योंकि वे सभी संयम और भावशुद्धिकी कामना करते हैं।
३. किन्तु लोगोंके ऊँचनीच (विविध) विचार और ऊँचनीच भाव होते हैं। वे सम्पूर्ण अथवा एक अंश (का)
४. भी पालन करते हैं। जो बहुत दान नहीं कर सकता (उसमें भी) संयम, भाव-
५. शुद्धि, दृढभक्ति नित्य आवश्यक है।[1]

भाषान्तर टिप्पणी

१. देखिये, गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।

अष्टम अभिलेख

[अ] पूर्वाभिमुख (क्रमशः)

(धर्मयात्रा)

१. अतिक्रतं अंतरं[1] देवनंप्रिय हिरयत्र नम निक्रमिषु । अत्र म्रुगय अञनि च एदिशनि[2] अभिरमनि अभुवसु । सो देवनंप्रियो प्रियद्रशि रज दशवष विसितो सतं[3] निक्रमि सबोधि[4] । तेनद[5] धंमयत्र । अत्र इयं होति श्रमणब्रमणनं द्रशने दनं वुहनं दशनं[6] हिरञप्रटिविधने च जनपदस जनस द्रशन ध्रमनुशस्ति ध्रमपरिप्रुछ च । ततो पयं एषे भुवे रति भोति । देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो भगो अंञि ।

संस्कृतच्छाया

१. अतिक्रान्तम् अन्तरं देवानां प्रियः विहारयात्रां नाम निरक्रमिषुः । अत्र मृगया अन्यानि च इदृशानि अभिरामाणि अभूवन् । तत् देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा दशवर्षाभिषिक्तः सन् निरक्रमीत् सम्बोधिम् । तेन एषा धर्मयात्रा । अत्र इदं भवति श्रमणब्राह्मणानां दर्शनं दानं वृद्धानां दर्शनं हिरण्यप्रतिविधानं च जानपदस्य जनस्य दर्शनं धर्मानुशिष्टिः धर्मपरिपृच्छा च । तदुपेया एषा भूयसी रतिः भवति । देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः भागः अन्यः ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'अतिक्रतन अतर' ।
२. वही, 'हेदिशिनी' ।
३. वही, 'सतो' ।
४. 'सबोधि' पाठ अधिक शुद्ध है ।
५. ब्यूलरके अनुसार 'तेनद' ।
६. वही, 'दशने' ।

हिन्दी भाषान्तर

१. बहुत समय व्यतीत हुआ देवताओंके प्रिय (राजा लोग)[1] विहार यात्रा[2] पर निकलते थे । इसमें मृगया तथा अन्य इसी प्रकारके आमोद-प्रमोद होते थे । किन्तु देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा अपने अभिषेकके दसवें वर्ष सम्बोधि[3] गये । इससे धर्मयात्रा (प्रारम्भ हुई) । इसमें यह होता है :—श्रमणब्राह्मणोंका दर्शन, दान, वृद्धोंका दर्शन, धनसे उनके पोषण की व्यवस्था[4], जनपदके लोगोंका दर्शन, धर्मका आदेश और धर्मके सम्बन्धमें परिप्रश्न[5] । देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाके शासनके दूसरे भागमें यह प्रचुर रति होती है ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'देवाना प्रिय' यहाँ 'राजा'का पर्याय है ।
२. देखिये गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी ।
३. बोधगया जहाँ बुद्धको सम्बोधि प्राप्त हुई थी ।
४. यहाँ 'हिरण्य' धनका प्रतीक है ।
५. 'परि-पृछ' = पूछ-ताछ, जिज्ञासा ।

नवम अभिलेख

(धर्म-मङ्गल)

१८. देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एवं अहति [१] जनो उचवुचं मंगलं करोति। अबधे अवहे विवहे पजुपदने प्रवसे अतये[1] अञये च एदिशियो जनो ब[2] मंगलं करोति [२] अत्र तु स्त्रियक बहु च बहुविधं च पुतिक[3] च निरठियं च मंगलं करोति [३] सो कटवो च व खो मंगल [४] अपफलं तु खो एत [५] इमं तु खो महफल ये ममंगल[4] [६]

१९. अत्र इम दसभटकस सम्मपटिपति[5] गरुन अपचिति प्रणनं संयमो श्रमणब्रमणन[6] दन। एतं अञं ध्रममंगलं नम [७] सो वतवो पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतन[7] पि स्पमिकेन पि मित्रसस्तुतेन अव प्रतिवेशियेन इमं सधु इयं कटवो। मंगलं यव तस अठ्रस निवुटिय निवुटिस्प व पुन

२०. इयं कषं[8] [८] ये हि एतके मगले शसयिके[9] तं [९] सिय वो तं अठं निवटेयति सिय पुन नो [१०] इअलोक च वो तं [११] इद पुन ध्रममंगलं अकलिकं [१२] यदि पुन तं अठं न निवटे इअ अथ परत्र अनंतं पुञं प्रसवति [१३] हंचे पुन तं ठं निवटेति ततो उभयेस लधं भोति इअ च सो अवो परत्र च अनंतं पुञं प्रसवति तेन ध्रंमगलेन[10] [१४]

संस्कृतच्छाया

१८. देवानां प्रियदर्शी राजा एवम् आह इति। जनः उच्चावचं मङ्गलं करोति। आबाधे आवाहे विवाहे प्रजोत्पादे प्रवासे—एतस्मिन् अन्यस्मिन् च एतादृशे जनः बहु मङ्गलं करोति। अत्र तु स्त्रियः बहु च बहुविधं च पूतिकं च निरर्थकं च मङ्गलं करोति। तत् कर्तव्यं चैव खलु मङ्गलम्। अल्पफलं तु खलु एतत्। महाफलं यत् धर्ममङ्गलं।

१९. अत्र इदं दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः गुरुणाम् अपचितिः प्राणानां संयमः श्रमणब्राह्मणेभ्यः दानम्। एतत् अन्यच्च धर्ममङ्गलं नाम। तत् वक्तव्यं पित्रा अपि भ्रात्रा अपि स्वामिकेन अपि मित्रसंस्तुतेन यावत् प्रतिवेश्येन इदं साधु इदं कर्तव्यम्। मङ्गलं यावत् तस्य अर्थस्य निवृत्तये निवृत्तौ वा पुनः

२०. इदं करिष्यामि? यत् हि एतत् मङ्गलं सांशयिकं तत्। स्यात् वा तत् अर्थं निर्वर्त्तयेत स्यात् पुनः न। ऐहिलौकिकं च एव तत्। इदं पुनः धर्ममङ्गलम् आकालिकं। यदि पुनः तम् अर्थं न निर्वर्त्तयति इह अथ परत्र अनन्तं पुण्यं प्रसूते। तच्चेत् पुनः तम् अर्थं निर्वर्तयति इह तत् उभयं लब्धं भवति इह च स अर्थः परत्र च अनन्तं पुण्यं प्रसूते तेन धर्ममङ्गलेन।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'एतये'।
२. 'बहु' पढ़िये।
३. ब्यूलरके अनुसार 'पुतिकं'
४. 'ध्रममंगल' पढ़िये।
५. पटियति'।
६. ब्यूलर इसे 'श्रमण—' पढ़ते हैं।
७. 'भ्रतुन' पाठ अधिक शुद्ध है।
८. ब्यूलरके अनुसार 'केष'।
९. वही, 'सशयिके'।
१० 'ध्रमगलेन' पाठ अधिक उपयुक्त है।

हिन्दी भाषान्तर

१८. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—लोग ऊँच-नीच (विविध) मङ्गल करते हैं। आबाधा,[1] आवाह,[2] विवाह,[3] प्रजोत्पत्ति, प्रवास और इसी प्रकारके अन्य (अवसरोंपर) लोग मङ्गल करते हैं। किन्तु स्त्रियाँ इनपर बहुत और विविध प्रकारके घृणास्पद[4] और निरर्थक मङ्गल कार्य करती हैं। मङ्गल कार्य तो कर्त्तव्य हैं। किन्तु इस प्रकारके मङ्गलकार्य अल्पफल (वाले) हैं। जो धर्ममङ्गल है वह निश्चित महाफलवाला है।

१९. वह यह है—दास और भृतक (नौकरों) के साथ शिष्टाचार, गुरुजनोंके प्रति आदर, प्राणियोंके प्रति संयम (और) श्रमण-ब्राह्मणोंको दान। ये और अन्य धर्म-मङ्गल होते हैं। पिता, पुत्र, भ्राता, स्वामी, मित्र, संस्तुत (परिचित) और पड़ोसी द्वारा कहना चाहिये—"यह साधु है। यह कर्तव्य है। यह मङ्गल (अभीष्ट) अर्थकी प्राप्तितक (करना चाहिये)। (अभीष्ट) अर्थकी प्राप्तिके पश्चात् भी पुनः

२०. यह करूँगा। क्योंकि इस प्रकारके मङ्गल सन्दिग्ध फलवाले होते हैं। इनसे अभीष्ट फलकी प्राप्ति हो भी सकती है और नहीं भी। ये इहलौकिक हैं। किन्तु धर्ममङ्गल समयसे बाधित नहीं है। हो सकता है कि इससे इस लोकमें वांछित फलकी सिद्धि न हो किन्तु परलोकमें इससे अनन्त पुण्य होता है। परन्तु यदि इससे (इस लोकमें भी) सिद्धि होती है तब तो दोनों लाभ प्राप्त होते हैं अर्थात् इस लोकमें इससे अर्थकी प्राप्ति होती है और परलोक इस धर्ममङ्गलसे अनन्त पुण्य उत्पन्न होता है।'

भाषान्तर टिप्पणी

१. विपत्ति, कठिनाई।
२. पुत्रका विवाह। 'बहूको ले आना'।
३. कन्याका विवाह। 'कन्याको ले जाना'।
४. अन्य संस्करणोंमें 'छुद' (क्षुद्र) पाठ है।

दशम अभिलेख

(धर्म-शुश्रूषा)

२१. देवनप्रिये प्रियद्रशि रय यशो व किट्रि व नो महठवह मञति अञत्र यो पि यशो किट्रि व इछति तदत्वये[1] अयतिय च जने ध्रमसुश्रष[2] सुश्रुषतु मे ति ध्रमवुतं च अनुविधियतु [१] एतकये देवनप्रियं[3] प्रियद्रशि रय यशो किट्रि व

२२. इछति [२] यं तु किचि परक्रमति देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय तं सव्रं परत्रिकये व किति सकले अपरिश्रवे[3] सियति [३] एषे तु परिसवे यं अपुञं [४] दुकरे[4] तु खो एषे खुद्रकेन वग्रेन उसटेन व अञत्र अग्रेन परक्रमेन सवं परितिजितु [५] अत्र खु उसटे·········

संस्कृतच्छाया

२१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्तिं वा न महार्थावहां मन्यते अन्यत्र यत् अपि यशः वा कीर्तिं वा इच्छति तदात्वे आयत्यां च जनः धर्मशुश्रूषां शुश्रूषतां मम इति धर्मोक्तं (धर्मवृत्तं वा) च अनुविधीयताम्। एतस्मै देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्तिं वा

२२. इच्छति। यत् च किञ्चित् प्रक्रमते देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा तत् सर्वं पारत्रिकाय एव। किमिति? सकलः अल्पपरिस्रवः स्यात्। एषः तु परिस्रवः यत् अपुण्यम्। दुष्करं तु खलु एतत् क्षुद्रकेण वा वर्गेण उच्छ्रितेन वा अन्यत्र अग्रेण (अग्र्यात्) प्रक्रमेण (प्रक्रमात्) सर्वं परित्यज्य। अत्र तु खलु उच्छ्रितेन······

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार अनुसार 'तदत्वये'।
२. 'ध्रमसुश्रुष' अधिक शुद्ध पाठ है।
३. ब्यूलरके अनुसार 'देवनंप्रिये'।
४. वही, 'दुकरं'।

हिन्दी भाषान्तर

२१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा यश अथवा कीर्तिको बहुमूल्य नहीं मानते इसके अतिरिक्त कि (वे) यश अथवा कीर्तिकी इच्छा करते हैं कि वर्तमान[1] और सुदूर भविष्यमें[2] लोग धर्मकी शुश्रूषा (सेवा) करें और मेरे द्वारा उक्त (उपदिष्ट) धर्मका पालन। इसी प्रयोजनके लिए देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा यश अथवा कीर्तिकी

२२. इच्छा करते हैं। देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा जो कुछ पराक्रम करते हैं वह सब परलोकके लिए ही। किस प्रकार? सब (लोक) अल्पपापवाले हों। जो अपुण्य है वही पाप (परिस्रवः) है। यह (अल्पपाप) निश्चित ही दुष्कर है क्षुद्र अथवा श्रेष्ठ वर्गके द्वारा उत्तम पराक्रमके बिना और सब (अन्य प्रयोजनोंको) छोड़े बिना।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'तदात्वे'का शाब्दिक अर्थ है 'उस समय'।
२. 'अयतिय' (आयत्यां) का शाब्दिक अर्थ है 'दीर्घ काल'।
३. 'परिस्रवः'का अर्थ है 'चित्तवृत्तियोंका बहाव'। अशोकके विचारमें मनुष्य पूर्णतः पापरहित नहीं हो सकता किन्तु अल्प पापवाला हो सकता है।

एकादश अभिलेख

(धर्म-दान)

२३. देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एवं हहति[1] [१] नस्ति एदिशं दनं यदिशं ध्रमदन[2] ध्रमसंस्तवे धमसंविभगो ध्रमसंबंध[3] [२] तत्र एतं दसभटकनं सम्मपटिपति[4] मतपितुषु सुश्रुष मित्र संस्तुतञतिकनं श्रमणब्रमणन[5]

२४. दन प्रणनं[6] अनरंभो [३] एतं वतवो पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि मित्रतंस्तुतन अव प्रतिवेशियेन इमं सधु इमं कटवो [४] सो तथ करतं इअलोक च अरधेति परत्र च अनतं पुञ प्रसवति

२५. तेन ध्रमदनेन [५]

संस्कृतच्छाया

२३. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवं आह—नास्ति ईदृशं दानं यदृशं धर्मसंस्तवः धर्मसंविभागः धर्मसम्बन्धः। तत्र एतत् दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः मातृपित्रोः शुश्रूषा मित्रसंस्तुज्ञातिकेभ्यः श्रमणब्राह्मणेभ्यः

२४. दानम्। प्राणिनाम् अनारम्भः। एतत् वक्तव्यं—पित्रा अपि भ्रात्रा अपि स्वामिना अपि, मित्रसंस्तुताभ्यां यावत् प्रतिवेश्येन—इदं साधु इदं कर्तव्यम्। सः तथा कुर्वन् (तस्मिन् तथा कुर्वति) ऐहलौकिकं च कं (सुखं) आराधितं भवति, परत्र अनन्तं पुण्यं प्रसवति

२५. तेन धर्मदानेन।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'अह ति'।
२. वही, '—दन'।
३. वही, '—सबंधो'।
४. वही, '—प्रटिपति'।
५. वही, '—श्रमणन'।
६. वही, 'प्रणनं'।

हिन्दी भाषान्तर

२३. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा (इति):—ऐसा कोई दान नहीं है जैसा धर्मदान, (ऐसी कोई मित्रता नहीं जैसी) धर्मसंस्तुति, (ऐसी कोई उदारता नहीं जैसा) धर्मसम्बन्ध।[1] वह (धर्म) यह है—दास और भृतकों (नौकरों) के प्रति शिष्टाचार साधु है; माता-पिताकी शुश्रूषा (सेवा) साधु; मित्र, परिचित, जाति और ब्राह्मण-श्रमणको दान देना साधु है;

२४. प्राणियोंका अवध साधु है। पिता, भ्राता, स्वामी, मित्र, परिचित तथा प्रतिवेशी (पड़ोसी) द्वारा यह वक्तव्य है—"यह साधु है; यह कर्तव्य है। जो इस प्रकार आचरण करता है[2], उसको इस लोककी प्राप्ति होती है और परलोकमें अनन्त पुण्य उत्पन्न होता है[3]

२५. उस धर्मदानसे।"

भाषान्तर टिप्पणी

१. देखिये, गिरनार शिला-अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।
२. देखिये, वही।
३. गिरनार अभिलेखमें 'प्रसवति'के स्थानपर 'भवति' है। दोनोंका एक ही अर्थ है।

द्वादश अभिलेख

[आ] पृथक्

(सारवृद्धि)

१. देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय सत्र प्रषंडमि प्रव्रजितनि[1] ग्रहथनि[2] च पुजेति दनेन विविधये च पुजये [१] नो चु तथ दन[3] व पुज व
२. देवनं प्रियो मञति यथ किति सलवढि सिय सत्र प्रषंडनं [२] सलवढि तु बहुविध [३] तस तु इयो मुल यं वचगुति
३. किति अत प्रषंडपुज व परपषंड गरन व नो सिय अपकरणसि[4] लहुक व सिय तसि तसि प्रकरणे [४] पुजेत विय व चु परप्रषं-
४. ड तेन तेन अकरेन [५] एवं करतं[5] अत प्रषंडं वढेति परप्रषंडस[6] पि च उपकरोति [६] तद अञथ करमिनो[7] अत प्रषंड
५. क्षणति पर प्रषडस[8] च अपकरोति [७] यो हि कचि अतप्रषडं पुजेति परप्रषंड गरहति सत्रे अत प्रषडभतिय व किति
६. अत प्रषंडं दिपयमि ति सो च पुन तथ करंतं सो च पुन तथ करंतं[9] बढतरं उपहंति अतप्रषडं [८] सो समयो वो सधु किति अञमञस ध्रमो
७. श्रुणेयु च सुश्रुषेयु च ति [९] एवं हि देवनंप्रियस इछ किति सव्रप्रषंड बहुश्रुत च कलणगम च सियसु [१०] ये च तत्र तत्र
८. प्रसन तेषं वतवो [११] देवनंप्रियो न तथ दनं व पुज व मञति यथ किति सलवढि सियति सत्रप्रषडनं [१२] बहुक च एतये अठ······
९. वपट ध्रममहमत्र इस्त्रिधियक्षमहमत्र व्रचभुमिक अञे च निकये [१३] इमं च एतिस फलं यं अतपषडवढि भोति
१०. ध्रमस च दिपन [१४]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वपाषण्डान् प्रव्रजितान् गृहस्थान् च पूजयति दानेन विविधया च पूजया। न तु तथा दानं वा पूजां वा
२. देवानां प्रियः मन्यते यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्वपाषण्डानाम्। सारवृद्धिः तु बहुविधाः। तस्याः तु इदं मूलं यत् वचोगुप्तिः।
३. किमिति ? आत्मपाषण्ड-पूजा वा परपाषण्डगर्हा वा न स्यात् अप्रकरणे, लघुकं वा स्यात् तस्मिन् तस्मिन् प्रकरणे। पूजयितव्याः वा तु पर-पाष-
४. ण्डाः तेन तेन आकारेण। एवं कुर्वन् आत्मपाषण्डं वर्धयति परपाषण्डम् अपि च उपकरोति, ततः अन्यथा कुर्वन् आत्मपाषण्डं
५. क्षिणोति परपाषण्डं च अपकरोति। यः हि कश्चित् आत्म-पाषण्डं पूजयति परपाषण्डं वा गर्हति सर्वम् आत्मपाषण्ड-भक्त्या एव किमिति ?
६. आत्म-पाषण्डं दीपयामि इति सः च पुनः तथा कुर्वन् बाढतरम् उपहन्ति आत्म-पाषण्डम्। तत् संयमः एव साधु। किमिति ? अन्यो-न्यस्य धर्मं
७. शृणुयुः शुश्रूषेरन् इति। एवं हि देवानां प्रियस्य इच्छा। किमिति ? सर्वपाषण्डाः बहुश्रुता च कल्याणागमाः च स्युः। ये च तत्र तत्र
८. प्रसन्नाः तेभ्यः वक्तव्यम्। देवानां प्रियः न तथा दानं वा पूजां वा मन्यते यथा किमिति ? सारवृद्धि स्यात् सर्वपाषण्डानाम्। बहुकाश्च एतस्मै अर्थाय
९. व्यापृताः धर्ममहामात्राः स्त्र्यध्यक्षमहामात्राः व्रजभूमिकाः अन्यश्च निकायः। इदं च एतस्य फलं यत् आत्मपाषण्डवृद्धिः भवति
१०. धर्मस्य च दीपना।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'प्रव्रजित'।
२. वही, 'ग्रह[थि]नि'।
३. वही, 'दन'
४. वही, 'अप्रकरणमि'।
५. वही, 'करत'।
६. वही, '—डम'।
७. वही, 'करत च'।
८. वही, '—प्रषंडम'।
९. 'सो करतं'तककी भूलसे पुनरावृत्ति हो गयी है।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा सब धार्मिक सम्प्रदायों—प्रव्रजितों और गृहस्थों—की विविध प्रकारके दान और आदर (पूजा)के साथ पूजा करते हैं। किन्तु उतना दान और पूजाको नहीं
२. मानते हैं देवानांप्रिय जितना इस बातको कि सभी सम्प्रदायोंमें सारवृद्धि[1] हो। परन्तु सारवृद्धि कई प्रकारकी होती है। उसका यह मूल है जो वचनका संयम है।[2]
३. कैसे ? अनुचित अवसरोंपर आत्म-पाषण्ड-पूजा और परपाषण्ड-गर्हा नहीं होना चाहिये; किसी भी अवसरपर थोड़ी होनी चाहिये। पूजित होने चाहिये दूसरे सम्प्र-
४. दाय उस उस प्रकार से। जो ऐसा करता है वह अपने सम्प्रदायकी वृद्धि करता है और दूसरे सम्प्रदायका उपकार। इसके विपरीत आचरण करता हुआ अपने सम्प्रदायकी

५. हानि करता है और दूसरे सम्प्रदायोंका अपकार। जो कोई अपने सम्प्रदायकी पूजा और दूसरे सम्प्रदायकी निन्दा करता है वह अपने सम्प्रदायकी भक्तिसे कि वह कैसे

६. अपने सम्प्रदायको प्रकाशित करे। परन्तु जो ऐसा करता है वह अपने सम्प्रदायकी बहुत हानि करता है। इसलिए समन्वय साधु है। कैसे ? एक-दूसरेके धर्मको

७. सुनना और सुनाना चाहिये। देवानांप्रियकी ऐसी इच्छा है। कैसी ? सभी सम्प्रदाय बहुश्रुत और शुभ सिद्धान्तवाले[4] हों। जो भिन्न भिन्न

८. सम्प्रदाय हैं उनसे कहना चाहिये— "देवानां प्रिय उतना दान और पूजाको नहीं मानते जितना इस बातको कि सभी सम्प्रदायोंकी सारवृद्धि हो। इस प्रयोजनके लिए

९. धर्ममहामात्र, स्त्री-अध्यक्ष-महामात्र, व्रजभूमिक[5] और अन्य (अधिकारि-) वर्ग नियुक्त हैं। इसका यह फल है कि इससे अपने सम्प्रदायकी वृद्धि होती है

१०. और धर्मका दीपन[6]।

भाषान्तर टिप्पणी

१. धर्मका वास्तविक तत्त्व, केवल बाहरी पूजापाठ नहीं।

२. देखिये, गिरनार शिला-अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।

३. सभी सम्प्रदायोंका सामञ्जस्य।

४. यहाँ 'आगम'का अर्थ 'शास्त्र' अथवा 'सिद्धान्त' है।

५. देखिये, गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।

६. प्रकाश अथवा विस्तार।

त्रयोदश अभिलेख

[ड] पश्चिमाभिमुख

(वास्तविक विजय)

१. अठवस अभिसितस देवन प्रिअस प्रिअद्रशिस रञो कलिग विजित [१] दिअढमत्रे प्रणशतसहस्रे ये ततो अपवुढे शतसहश्रमत्रे तत्र हते बहु तवतके व मुटे [२]

२. ततो पच अधुन लधेषु कलिगेषु तिव्रे ध्रमशिलन ध्रमकमत ध्रमनुशस्ति च देवनप्रियस [३] सो अस्ति अनुसोचन देवनप्रिअस विजिनिति कलिगनि [४]

३. अविजितं हि विजिनमनो यो तत्र वध व मरणं व अपवहो व जनस तं बढं वेदनियमतं गुरुमतं च देवनंप्रियस [५] इदं पि चु ततो गुरुमततरं देवनंप्रियस [६] ये तत्र

४. वसति ब्रमण व श्रमण व अंञे व प्रषंड ग्रहथ व येषु विहित एष अग्रभुटि सुश्रुष मतपितुषु सुश्रुष गुरुन सुश्रुष मित्र संस्तुत सहय—

५. ञतिकेषु दसभटकनं सम्मप्रतिपति द्रिढभतितं तेष तत्र भोति अपग्रथो व वधो व अभिरतन व निक्रमणं [७] येष वपि सुविहितनं सिहो अविप्रहिनो ए तेष मित्र संस्तुत सहयञतिक वसन

६. प्रपुणति तत्र तंपि तेष वो अपग्रथो भोति [८] प्रतिभगं च एतं सव्रमनुशनं गुरुमतं च देनवनंपियस [९] नस्ति च एकतरे पि पषडस्पि न नम प्रसदो [१०] सो यमत्रो जनो तद कलिगे हतो च मुटो च अपवुढ च ततो

७. शतभगे व सहस्रभगं व अज गुरुमतं वो देवनंपियस [११] यो पि च अपकरेयति क्षमित वियमते व देवनंपियस यं शको क्षमनये [१२] य पि च अटवि देवनंपियस विजिते भोति तपि अनुनेति अनुनिजपेति [१२] अनुतपे पि च प्रभवे

८. देवनंपियस वुचति तेष किति अवत्रपेयु न च हंञेयसु [१४] इछति हि देवनंप्रियो सव्रभुतन अक्षति सयमं समचरियं रभसिये [१५] अयि च मुखमुत विजये देवनंप्रियस यो ध्रमविजयो [१६] सो च पुन लधो देवनंप्रियस इह च सवेषु च अंतेषु

९. अ षषु पि योजनशतेषु यत्र अंतियोको नम योनरज परं च तेन अतियोकेन चतुरे ४ रजनि तुरमये नम अंतिकिनि नम मक नम अलिकसुदरो नम निच चोडपंड अव तंबपणिय [१७] एवमेव हिद रजविषवस्पि योनकंबोयेषु नभकनभितिन

१०. भोजपितिनिकेषु अंधपलिदेषु सवत्र देवनंप्रियस ध्रमनुशस्ति अनुवटंति [१८] यत्र पि देवनंप्रियस दुत न व्रचंति ते पि श्रुतु देवनंप्रियस ध्रमवुटं विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रमं अनुविधियंति अनुविधियिशंति च [१९] यो स लधे एतकेन भोति सवत्र विजयो सवत्र पुन

११. विनयो प्रितिरसो सो [२०] लध भोति प्रिति ध्रमविजयस्पि [२१] लहुक तु खो स प्रिति [२२] परत्रिकमेव महफल मेञति देवनंप्रियो [२३] एतये च अठये अयि ध्रमदिपि निपिस्त किति पुत्र पपोत्र मे असु नवं विजयं म विजेत विअ मञिसु स्पकस्पि यो विजये क्षति च लहुदंडत च रोचेतु तं च यो विज मञतु

१२. यो ध्रमविजयो [२४] सो हिदलोकिको परलोकिको [२५] सव चतिरति भोतु य ध्रंमरति [२६] सहि हिदलोकिक परलोकिक [२७]

संस्कृतच्छाया

१. अष्टवर्षाभिषिक्तेन देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा कलिङ्गाः विजिताः। द्व्यर्द्धमात्रं प्राणशतसहस्रं यत् ततः अपोढम् शतसहस्रमात्रम् तत्र हतं बहुतावत्कं वा मृतम्।

२. ततः पश्चात् अधुना लब्धेषु कलिङ्गेषु तीव्रं धर्मशीलनं धर्मकामता धर्मानुशास्तिश्च देवानां प्रियस्य। तत् अस्ति अनुशोचनं देवानां प्रियस्य विजित्य कलिङ्गान्।

३. अविजिते हि विजियमाने यः तत्र वधः वा मरणं वा अपवाहः वा जनस्य, तत् बाढं वेदनीयमतं गुरुमतं च देवानां प्रियस्य। इदम् अपि तु ततः गुरुमततरं देवानां प्रियस्य। ये तत्र

४. वसन्ति ब्राह्मणाः वा श्रमणाः वा अन्ये वा पाषण्डाः गृहस्थाः वा येषु विहिता एषा अग्रभूतिशुश्रूषा मातृपित्रोः शुश्रूषा गुरूणां शुश्रूषा मित्र-संस्तुत-सहायः

५. ज्ञातिकेषु दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः दृढभक्तिता च तेषां तत्र भवति अपग्रथः वा वधः वा अभिरतानां च निष्क्रामणम्। येषां वा अपि सुविहितां स्नेहः अविप्रहीनः यत् तेषां मित्र-संस्तुत-ज्ञातिकाः व्यसनं

६. प्राप्नुवन्ति तत्र तत् अपि तेषाम् एव अपग्रथो भवति। प्रतिभागः च एतत् सर्वमनुष्याणां, गुरुमतं च देवानां प्रियस्य। नास्ति च एकतरे अपि पाषण्डे न नाम प्रसादः। तत् यन्मात्रः जनः तदा कलिङ्गे हतः च मृतः च अपवृढः च ततः

७. शतभागः वा सहस्रभागः वा अद्य गुरुमतः एव देवानां प्रियस्य। यः अपि च अपकुर्यात् क्षन्तव्य मतं वा देवानांप्रियस्य यत् शक्यं क्षमणाय। या अपि च अटवी देवानां प्रियस्य विजिते भवति ताम् अपि अनुनयति अनुनिध्याययति। अनुतापे अपि च प्रभावः

८. देवानां प्रियस्य। उच्यते तेभ्यः। किमिति? अवत्रपेरन् न च हन्येरन्। इच्छति हि देवानां प्रियः सर्वभूतानाम् अक्षतिं संयमं समाचर्यं राभस्ये। अयं च मुख्यमतः विजयः देवानां प्रियस्य यः धर्मविजयः। सः च पुनः लब्धः देवानां प्रियेण इह च सर्वेषु च अन्तेषु

९. आ षड्भ्यः अपि योजनशतेभ्यः यत्र अन्तियोकः नाम यवनराजः परं च तस्मात् अन्तियोकात् चत्वारः ४ राजानः तुरमायः नाम, अन्तेकिनः नाम, मकः नाम, अलिकसुन्दरः नाम, नीचाः चोल-पाण्ड्याः यावत् ताम्रपर्णीयान्। एवम् एव इह राजविषये यवन-कम्बोजेषु नाभक-नामपंक्तिषु

१०. भोजपैत्र्ययणिकेषु अन्ध्र-पुलिन्देषु सर्वत्र देवानां प्रियस्य धर्मानुशस्तिः अनुवर्तते। यत्र अपि देवानां प्रियस्य दूताः न व्रजन्ति ते अपि श्रुत्वा देवानांप्रियस्य धर्मोक्ति विधानं धर्मानुशस्ति च धर्मम् अनुविधति अनुविधास्यन्ति च। यः सः लब्धः एतकेन भवति सर्वत्र विजयः सर्वत्र पुनः

११. विजयः प्रीतिरसः सः। लब्धा भवति प्रीतिः धर्मविजये। लघुका तु खलु सा प्रीतिः। पारत्रिकम् एव महाफलम् मन्यते देवानांप्रियः। एतस्मै च अर्थाय इयं धर्मलिपिः निवेशिता। किमिति ? पुत्राः प्रपौत्राः (च)मे स्युः (ये ते) नवं विजयं मा विजेतव्यं मंसत, स्वके अपि विजये क्षान्तिः च लघुदण्डता च (तेभ्यः) रोचताम्। तं च एव विजयं मन्यतां

१२. यः धर्मविजयः। सः ऐहलौकिकः पारलौकिकश्च। सर्वा च अतिरतिः भवतु या धर्मरतिः। सा ऐहलौकिकी पारलौकिकी च।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'द्रियध'।
२. ब्यूलरके पाठमें 'व' लुप्त है।
३. वही, 'पछ'।
४. वही, 'कलिंगेषु'।
५. वही, 'अनुसोचन'।
६. वही, 'वधो'।
७. वही, 'दि्ढ०'।
८. वही, 'सत्र' मनुशनं'।
९. वही, '—निक्षपेति'।

हिन्दी भाषान्तर

१. अष्टवर्षाभिषिक्त देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा कलिंग जीता गया। डेढ़ लाख प्राणी (मनुष्य) वहाँसे अपहृत, एक लाख हत और उससे कई गुना मृत हुए।

२. इसके पश्चात् आज जीते हुए कलिङ्गमें देवानां प्रिय द्वारा प्रचुर धर्मका व्यवहार, धर्मका प्रेम तथा धर्मका उपदेश (किया गया है।) कलिङ्ग पर विजय करके देवानां प्रियको अनुताप (पश्चात्ताप) है।

३. क्योंकि जब कोई अविजित (देश) जीता जाता है तब लोगोंका वध, मरण अथवा अपहरण होता है; यह देवानांप्रियके लिए अत्यन्त वेदनीय और गम्भीर है। इससे भी गम्भीर बात देवानांप्रियके लिए है। जो यहाँ

४. ब्राह्मण, श्रमण अथवा दूसरे सम्प्रदाय और गृहस्थ बसते हैं और जिनमें अग्रणी लोगोंकी शुश्रूषा; माता-पिताकी शुश्रूषा; गुरुजनोंकी शुश्रूषा; मित्र, परिचित,

५. जातिवालों, दास-भृतकोंके प्रति सम्यक् व्यवहार; और दृढ़ भक्ति पायी जाती है उनमें भी आघात, वध और प्रियजनोंका निष्कासन पाया जाता है। और जो जीवनमें सुव्यवस्थित हैं और जिनका स्नेह कुछ भी हीन नहीं हुआ है उनके भी मित्र-परिचित, जातिवाले

६. व्यसनको प्राप्त होते हैं और उनके ऊपर आघात होता है, सब मनुष्योंकी जो यह दशा होती है वह देवानांप्रियके लिए गम्भीर है। ऐसा एक भी सम्प्रदाय नहीं है जिसमें प्रसाद न हो। इसलिए जितने भी मनुष्य उस समय कलिङ्गमें हत, मृत और अपहृत हुए हैं उनका

७. शतभाग अथवा सहस्र भाग भी आज देवानांप्रियके लिए गम्भीर है। और यदि कोई अपकार करता है तो वह देवानांप्रियके लिए क्षन्तव्य है, जहाँतक क्षमा करना सम्भव है। और जो अटवी (जांगल प्रदेश) देवानांप्रियसे जीता जाता है उसपर भी वह अनुनय (अनुग्रह) करता है और ध्यान देता है। अनुतापमें भी प्रभाव है

८. देवानांप्रियका। उनसे कहना चाहिये। क्या ? "अनुताप करना चाहिये और हत्या नहीं करना चाहिये।" देवानांप्रिय सब प्राणियोंके कल्याण, संयम, समाचर्या और[१] सौजन्यकी कामना करते हैं। देवानांप्रियके अनुसार वही प्रधान विजय है। वह देवानांप्रिय द्वारा प्राप्त हुआ है—यहाँ (अपने राज्यमें) सभी पड़ोसी राज्यमें

९. छ सौ योजनतक जहाँ अन्तियोक नामक यवनराज और उस अन्तियोकके परे ४ राजे तुरमय नामक, अन्तिकिन नामक, मक नामक (और) अलिकसुन्दर नामक (राज्य करते हैं। तथा) नीचे (दक्षिण)की ओर चोल, पाण्ड्य, ताम्रपर्णीतक। इसी प्रकार हिद-राजविषयों, यवन, कम्बोज, नाभक, नाभपंक्ति,

१०. पितनिक, आन्ध्र और पुलिन्दोंमें सर्वत्र धर्मानुशासनका पालन होता है। जहाँ भी देवानांप्रियके दूत नहीं पहुंचते वहाँ भी देवानांप्रियकी धर्मोक्ति, विधान और धर्मानुशीलनको सुनकर धर्मका आचरण करते हैं और करते रहेंगे। इस प्रकार सर्वत्र जो विजय हुआ है वह सर्वत्र पुनः

११. प्रीतिरस (देनेवाली) विजय है। प्राप्त होती है प्रीति धर्मविजयमें। परन्तु वह प्रीति बहुत छोटी है। देवानांप्रिय परमार्थको ही महाफल (देनेवाला) मानते हैं इस प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि निवेशित हुई। किसलिए ? (इसलिए कि) मेरे पुत्र और पौत्र जो हों वे नये (शस्त्र) विजयोंको विजय न मानें। यदि वे नये विजयमें प्रवृत्त हों तो उन्हें क्षान्ति और लघुदण्डतामें ही रुचि रखना चाहिये। उनको तो उसीको विजय मानना चाहिये

१२. जो धर्मविजय है। वह ऐहलौकिक और पारलौकिक है। जो धर्मरति है वही सम्पूर्णतः अति आनन्द देनेवाली है। वही ऐहलौकिकी और पारलौकिकी है।

भाषान्तर टिप्पणी

देखिये, गिरनार शिलालेखके भाषान्तरकी टिप्पणी।

चतुर्दश अभिलेख

(उपसंहार)

१३. अयि[1] धमदिपि[2] देवनंप्रियेन प्रिशिन[3] रञ निपेसपितं[4] अस्ति वो संक्षितेन[5] अस्ति यो विस्रिटेन [१] न हि सवत्रं[6] स सव्रे[7] गटितें[8] [२] महलके हि विजिते बहु लिखिते लिख पेशमि चेव [३] अस्ति खु[9] अत्र पुन पुन लपितं तस तस अठस मधुरियो येन जन तथ

१४. पटिपजेयति[10] [४] सो सिय व अत्र किचे[11] असमत लिखित देशं व संखय[12] करण व अलोचेति दिपिकरस व अपरधेन

संस्कृतच्छाया

१३. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा निवेशिता । अस्ति एव संक्षिप्तेन अस्ति मध्यमेन अस्ति विस्तृतेन । न दि सर्वत्र सर्वं घटितम् । महालकं हि विजितम् बहु च लिखितं लेखयिष्यामि च एव नित्यम् । अस्ति च यत्र पुनः पुनः लपितं तस्य तस्य अर्थस्य माधुर्याय, येन जनः तथा

१४. प्रतिपद्येत । तत्र स्यात् वा अत्र किञ्चित् असमातं लिखितं देशं वा संक्षयकारणं वा आलोच्य, लिपिकरापराधेन वा ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'अयो' ।
२. म और दिके बीचमें अन्तराल है ।
३. 'प्रियद्रशिन' पाठ होना चाहिये । 'यद्र' लुप्त हो गया है ।
४. ब्यूलरके अनुसार 'दिपपितो' होना चाहिये ।
५. वही 'संखितेन' ।
६. 'सव्रत्र' पाठ होना चाहिये ।
७. 'सव्रे' होना चाहिये । एक स अनावश्यक है ।
८. 'घटितें' पाठ अधिक शुद्ध है ।
९. ब्यूलरके अनुसार 'च' ।
१०. वही, '—प्रति' ।
११. 'किचि' अधि सगत पाठ है ।
१२. 'संखये' पाठ ब्यूलरके अनुसार ।

हिन्दी भाषान्तर

१३. यह धर्मलिपि देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा निवेशित[1] (उत्कीर्ण) हुई । (कहीं) संक्षेपसे, (और कहीं) विस्तारसे है । क्योंकि सर्वत्र सब घटित[2] (उचित) नहीं है । साम्राज्य भी विशाल है और बहुत लिखा गया है और बहुत नित्य लिखवाऊँगा । यहाँ (ऐसा भी है जो) बार-बार कहा गया है अपने अपने-अर्थके माधुर्यके कारण जिससे लोग उसी प्रकारसे

१४. पालन करें । इसमें यहाँ कुछ हो सकता है जो अपूर्ण अथवा एकाङ्गीण[3] लिखा गया है (शिला-)भंग[4] देखकर अथवा लिपिकरके अपराधसे ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. शिलामें खोदाई द्वारा प्रविष्ट ।
२. सीधा शब्दार्थ है 'हुआ' ।
३. कोई-कोई 'देशं'को 'आलोच्य'का कर्म मानते है और अर्थ करते है 'देशको देखकर' ।
४. संखय (= संक्षय) का अर्थ है 'पूर्ण क्षय' । यहाँ इसका प्रयोजन है शिलाखण्डके क्षय अथवा भङ्गसे ।

मानसेहरा शिला

प्रथम अभिलेख

अ : प्रथम उत्कीर्ण शिला

(जीवदया : पशुयाग तथा मांस-भक्षण निषेध)

१. अयि ध्रमदिपि देवनंप्रियेन[1] प्रियद्रशिन रजिन लिखपित [१] हिद नो किछि[2] जिवे अरभितु प्रजोहि—
२. तविये[3] [२] नो पि समजे कटविये[4] [३] बहुकहि दोष समजस देवनंप्रिये प्रियद्रशि रज दखति [४] अस्ति पि चु
३. एकतिय समज सधुमत देवनप्रियस प्रियद्रशिस[5] रजिने [५] पुर महनससि देवनप्रियस प्रियद्रशिस र
४. जिने अनुदिवस बहुनि प्रणशतसहस्रनि अरभिसु सुपथये [६] से···द अयि ध्रमदिपि लिखित तद तिनि येव प्रणनि अरभियंति दुवे २ मजु—
५. र एके[6] म्रिगे से पि चु म्रिगे नो ध्रुवं [७] एतनि ति चु तिनि प्रणनि पच नो अरभि······

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः देवानांप्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा लेखापिता । इह न कश्चित् जीवः आलभ्य प्रहो-
२. तव्यः । न च समाजः कर्तव्यः । बहुकान् हि दोषान् समाजे देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा पश्यति । अस्ति अपि तु
३. एकतरः समाजः साधुमतः देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः । पुरा महानसे देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः
४. राज्ञः अनुदिवसं बहूनि प्राणशतसहस्राणि आलप्सत सूपार्थाय । तत् इदानीं यदा इयं धर्मलिपिः लेखिता तदा त्रय एव प्राणा आलभ्यन्ते— द्वौ २ मयू—
५. रौ एकः मृगः । सः अपि च मृगः न ध्रुवम् । एते अपि च त्रयः प्राणाः न आलप्स्यन्ते ।

पाठ टिप्पणी

१. इसमें 'दे' और 'प्रि' अक्षर प्रायः लुप्त हैं ।
२. ब्यूलरके अनुसार 'किंचि' ।
३. वही, 'प्रयुहोतविये' ।
४. वही, 'कटविए' ।
५. वही, 'प्रयद्रशिने' ।
६. 'एके' के पश्चात् ब्यूलर १ अङ्क भी पढ़ते हैं ।

हिन्दी भाषान्तर

१. यह धर्मलिपि देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखायी गयी । यहाँ[1] न कोई जीव मार कर हवन[2]
२. करना चाहिये । और न समाज[3] करना चाहिये । बहुतसे दोष समाजमें देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा देखते हैं । किन्तु है
३. एक प्रकारका[4] समाज (जो) साधुमत (अच्छा) है देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाका । पहले[5] देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाकी पाकशालामें
४. प्रति दिवस बहुत (कई) सौ सहस्र प्राणी सूपके लिए मारे जाते थे । किन्तु इस समय जब यह धर्मलिपि लिखवायी गयी है तब तीन ही प्राणी मारे जाते हैं— दो २ मयू—
५. र[6] (और) एक मृग । वह मृग भी निश्चित रूपसे नहीं[7] । ये भी तीन प्राणी (भविष्यमें) नहीं मारे जायेंगे ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. कालसी 'हिदा'; गिरनार 'इध' (=संस्कृत 'इह') । इसका अर्थ राजधानी अथवा अशोकका पूरा साम्राज्य हो सकता है ।
२. यहाँ राज्य द्वारा पशुबलिका निषेध किया गया है ।
३. देखिये, गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी ।
४. पालि 'एकच्च' अथवा 'एकच्चिय' ।
५. कालसी 'पुले'; गिरनार 'पुरा'; धौली 'पुलुवं' (=संस्कृत 'पुरस्') ।
६. देखिये, गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी ।
७. 'ध्रुवं' का प्रयोग अव्ययके रूपमें हुआ है, मृगके विशेषणरूपमें नहीं ।

द्वितीय अभिलेख

(लोकोपकारी कार्य)

५. सवत्र विजितसि देवन प्रियस प्रियद्रशिस रजिने ये च अत[1] अथ

६. चोड पंडिय सतियतुत्र केरलपुत्र[2] तंबपणि अतियोगे[3] नम योनरज येच अ···स···गस समत रजने सव्रत्र···प्रियस प्रियद्रशिस रजिने

७. दुवे २ चिकिस कट मनुसचिकिस च पशुचिकिस च [१] ओषढनि[4] मनु······कनि च प···कनि च अत्र अत्र[5] नस्ति सव्रत्र हरपित च रोपपित च [२]

८. एवमेव मुलनि च फलनि च अत्र अत्र नस्ति सव्रत्र रोपपित च [३] मगेषु रुछनि[6] रोपपितनि[7]······पितनि पटिभोगये पशु मुनिशनं

संस्कृतच्छाया

५. सर्वत्र विजिते देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः ये च अन्ताः—यथा

६. चोडाः पाण्ड्याः सत्यपुत्रः केरलपुत्रः ताम्रपर्णिः अन्तियोकः नाम यवनराजः ये च अन्ये तस्य अन्तियोकस्य सामन्ताः राजानः सर्वत्र देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः

७. द्वे २ चिकित्से कृते मनुष्यचिकित्सा च पशुचिकित्सा च। ओषधयः मनुष्योपगा च पशूपगाः च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र हारिताः च रोपिताः च।

८. एवमेव मूलानि च फलानि च यत्र तत्र न सन्ति सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च। मार्गेषु वृक्षाः रोपिताः उदपानानि च खनितानि प्रतिभोगाय पशुमनुष्याणाम्।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार, 'अत'।
२. वही, 'केरलपुत्रे'।
३. वही, 'अतियोके'।
४. वही, ओषधिनि'।
५. वही, 'यत्र यत्र'।
६. वही, 'रुछ'।

हिन्दी भाषान्तर

५. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके साम्राज्यमें सर्वत्र और सीमावर्ती राज्योंमें यथा

६. चोल, पाण्ड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र, ताम्रपर्णि; अन्तियोक नामक यवन राजा (के राज्यमें) और दूसरे राज्योंमें जो अन्तियोकके पड़ोसी अथवा सामन्त हैं[1] सर्वत्र देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा

७. दो (२) प्रकारकी चिकित्सायें की गयी हैं—मनुष्य-चिकित्सा और पशु-चिकित्सा। ओषधियाँ[2] जो मनुष्योपयोगी और पशूपयोगी जहाँ-जहाँ नहीं हैं (वहाँ) सर्वत्र लायी गयी और रोपी गयी (हैं)।

८. इसी प्रकार मूल और फल जहाँ-जहाँ नहीं हैं (वहाँ-वहाँ) सर्वत्र लाये गये और रोपे गये (हैं)। मार्गोंमें वृक्ष रोपे गये, कुएँ खोदे गये पशु और मनुष्योंके प्रतिभोग[3]के लिए।

भाषान्तर टिप्पणी

१. देखिये, गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।
२. 'ओषधियाँ' जिनसे 'औषध' तैयार होता है। प्राकृतमें दोनों शब्दोंका असावधान प्रयोग पाया जाता है।
३. उपयोग अथवा उपभोग।

तृतीय अभिलेख

(धर्मप्रचार : पञ्चवर्षीय दौरा)

९. देवनंप्रिये प्रियद्रशि रज एव अह [१]दुवडशवषभिषितेन[1] मे इयं[2] अणपयिते [२] सव्रत्र विजितसि······त[3] रजु···प्रदेशिके पंचसु ५ वषेषु

१०. अनुसंयनं निक्रमतु[4] एतये व[5] अथ्रये इमये ध्रमनुशस्तिये यथ अञये पि क्रमणे[3] [३] सधु मतपितुष सुश्रुष मित्रसंस्तुत···

११. ञतिकिनं च ब्रमणश्रमणनं[7] सधु दने प्रणन अनरभे सधु अपवयत अपभडत सधु [४] परिष पि च युतनि गणनसि अणपयिशति हेतुने च वियंज······

१२. नते च

संस्कृतच्छाया

९. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया इदम् आज्ञापितम्। सर्वत्र विजिते मम युक्ताः रज्जुकाः प्रादेशिकाः पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु।

१०. अनुसंयानं निष्कामन्तु एतस्मै एव अर्थाय अस्यै धर्मानुशस्तये यथा अन्यस्मै अपि कर्मणे। "साधुः मातापित्रोः शुश्रूषा मित्र-संस्तुत—

११. ज्ञातिकेभ्यः ब्राह्मणश्रमणेभ्यः साधु दानं। प्राणानाम् अनालम्भः साधु। अल्पव्ययता अल्पभाण्डता साधु।" परिषदः अपि च युक्तान् गणने आज्ञापयिष्यन्ति हेतुतः च व्यञ्जनतः च।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्श, '० भिसितेन'।
२. ब्यूलर, 'अयं'।
३. वही, [मे]·····त।
४. वही, 'निक्रमंतु'।
५. वही, 'वं'।
६. वही, 'क्रमने'।
७. वही, 'श्रमनन'।

हिन्दी भाषान्तर

९. देवताओंके प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा। द्वादशवर्षाभिषिक्त मुझसे ऐसा आज्ञप्त हुआ—"राज्यमें सर्वत्र मेरे युक्त, रज्जुक, प्रादेशिक[1] (नामक राज-कर्मचारी) पाँच-पाँच (५) वर्षोंमें

१०. दौरेपर निकलें इस प्रयोजनके लिए, इस धर्मानुशासनके लिए तथा अन्य भी कार्यके लिए। "माता-पिताकी शुश्रूषा साधु है; मित्र, परिचित,

११. जातिके लोग, ब्राह्मण, श्रमणको दान देना साधु है; प्राणियोंका अवध साधु; अल्पव्ययता (तथा) अल्पभाण्डता साधु है। परिषदें युक्तोंको हेतु (कारण) और व्यञ्जन (अक्षरशः अर्थ)के साथ (इन नियमोंको) गणना[1] करनेके लिए आज्ञा देंगी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. देखिये, गिरनार शिला अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।
२. देखिये, वही।
३. मान अथवा पालन।

चतुर्थ अभिलेख

(धर्मघोषः धार्मिक प्रदर्शन)

१२. अतिक्रतं अतरं[1] बहुनि वषशतनि वधिते वो[2] प्रणरंभे विहिस च भुतनं ञतिन असपटिपति श्रमण ब्रमणनं[3] असंपटिपति [१]

१३. से अज देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने ध्रमचरणेन भेरिघोषे अहो धमघोषे[4] विमनद्रशन अस्तिने[5] अगिकंधनि अञनि च दिवनि रुपनि द्रशेति जनस [२]

१४. अदिशे बहुहि वषशतेहि न हुतपुवे तदिशे अज वढिते देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने ध्रमनुशस्तिय अनरभे प्रणन[6] अविहिस भुतन अतिन

१५. संपटिपति बमणश्रमणनं[7] संपटिपति मतपितुषु[8] सुश्रुव बुध्रन सुश्रुव [३] एषे अञे च बहुविधे ध्रमचरणे[9] वध्रिते [४] वध्रयिशति येव देवनप्रिये

१६. प्रियद्रशि रज ध्रमचरण इमं[10] [५] पुत्र पि च क[11] नतरे च पणतिक देवनप्रियस[12] प्रियदशिने रजिने पवढयिशंति यो[13] ध्रमचरण इमं अवकपं ध्रमे शिले च

१७. चिठितु[14] ध्रमं अनुशशिशंति [६] एषे हि स्रेठे अं ध्रमनुशशन [७] ध्रमचरणे पि च न होति अशिलस [८] से इमस अध्रस वध्रि अहिनि च सधु [९] एतये

१८. अध्रए इयं[15] लिखिते एतस अध्रस वध्र[16] युजंतु हिनि च म अलोचयिसु [१०] दुवदशवषभिषितेन देवनप्रियेन प्रियद्रशिन रजिन इयं लिखपिते [११]

संस्कृतच्छाया

१२. अतिक्रान्तम् अन्तरं बहूनां वर्षशतानां वर्द्धितः एव प्राणालम्भः विहिंसा च भूतानां ज्ञातिषु असम्प्रतिपत्तिः श्रमणब्राह्मणेषु असम्प्रतिपत्तिः।

१३. तत् अद्य देवानांप्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्माचरणेन भेरिघोषः अभूत धर्मघोषः। विमानदर्शनानि हस्तिनः अग्निस्कन्धान् अन्यानि च दिव्यानि रूपाणि दर्शयित्वा जनेभ्यः।

१४. यादृशः बहुभिर्वर्षशतैः न भूतपूर्वः तादृशः अद्य वर्द्धितः देवानांप्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्मानुशिष्ट्या अनालम्भः प्राणानाम् अविहिंसा भूतानां ज्ञातिषु।

१५. सम्प्रतिपत्तिः ब्राह्मणश्रमणेषु सम्प्रतिपत्तिः मातृपित्रोः शुश्रूषा वृद्धानां शुश्रूषा। एतत् च अन्यत् च बहुविधं धर्माचरणं वर्द्धितम्। वर्द्धयिष्यति एव देवानांप्रियः।

१६. प्रियदर्शी राजा धर्माचरणम् इदम्। पुत्राः अपि च के नप्तारः च प्रणप्तारः च देवानांप्रियस्य राज्ञः प्रवर्द्धयिष्यन्ति एव धर्माचरणम् इदं यावत्कल्पं, धर्मे शीले च।

१७. स्थित्वा धर्मम् अनुशासयिष्यन्ति। एतत् हि श्रेष्ठं यत् धर्मानुशासनम्। धर्माचरणम् अपि च न भवति अशीलस्य। तत् अस्य अर्थस्य वृद्धिः अहानिः च साधुः। एतस्मै

१८. अर्थाय इदं लिखितम्। अस्य अर्थस्य वृद्धिः युजन्तु हानिः च मा आरोचयेयुः। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा इदं लिखितम्।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर, 'अतरं'।
२. वही, 'वढिते व'।
३. वही, 'ब्रमणनं'।
४. वही, 'ध्रमगोषे'।
५. वही, 'हस्तिने'।
६. वही, 'प्रणनं'।
७. वही, 'श्रमणनं'।
८. वही, 'मतुपितुषु'।
९. हुल्त्ज, 'धमचरण'।
१०. ब्यूलर, 'इम'।
११. ब्यूलर, 'कु'।
१२. वही, 'देवनं'।
१३. ब्यूलरने इसका लोप कर दिया।
१४. वही, 'तिस्तितु'।
१५. वही, 'इमं'।
१६. 'वध्रि' पाठ अधिक शुद्ध है।

हिन्दी भाषान्तर

१२ बहुत सौ वर्षोंका अन्तर बीत चुका प्राणियोंका वध, भूतोंके प्रति विशेष हिंसा[1], जातिके लोगोंके प्रति असद्व्यवहार, श्रमण तथा ब्राह्मणोंके प्रति असद्व्यवहार बढ़ता ही गया।

१३. किन्तु आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्माचरणसे भेरिघोष (रणभेरी) धर्मघोष[3] हो गया। विमान-दर्शन, हस्ति (-दर्शन), अग्नि-स्कन्ध तथा अन्य दिव्य प्रदर्शनों[4]को जनताको दिखाकर

१४. जैसा सैकड़ों वर्षोंसे पहले नहीं हुआ था वैसा आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्मानुशासनसे आज वर्द्धित हुआ—"प्राणियोंका अवध, भूतोंकी अविहिंसा, जातिवालोंके साथ

१५. सद्व्यवहार, ब्राह्मण-श्रमणके साथ सद्व्यवहार, माता-पिताकी शुश्रूषा और वृद्धोंकी शुश्रूषा। यह और अन्य भी बहुत प्रकारका धर्माचरण वर्द्धित हुआ। बढ़ावेंगे ही देवानांप्रिय

१६. प्रियदर्शी राजा इस धर्माचरण को। पुत्र और नाती और पनाती देवानांप्रिय राजाके बढ़ावेंगे ही इस धर्माचरणको कल्पान्त तक और धर्म और शीलमें

१७. स्थित होकर धर्मका अनुशासन करेंगे। क्योंकि यही श्रेष्ठ है जो धर्मानुशासन (है)। धर्माचरण सम्भव नहीं अशीलके लिए। इसलिए इस अर्थ (धर्माचरण)की वृद्धि और अहानि साधु है। इस

१८. प्रयोजनके लिए यह लिखित (है)। (जिससे वे) इस अर्थकी वृद्धिमें लगें (और इसकी) हानिकी बात न करें।[5] द्वादशवर्षाभिषिक्त देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा यह लिखाया गया।

भाषान्तर टिप्पणी

१. विहिसा = सं० विहिंसा, जीवधारियोंके प्रति विशेष अथवा विविध प्रकारकी हिंसा।

२. भेरिघोषे = सं० भेरिघोषः, नगाड़ेका घोष जो किसी भी राजाज्ञाके प्रचारके समय किया जाता था। किन्तु प्रस्तुत सन्दर्भमें इसका अर्थ 'रण-भेरी' ही उपयुक्त है।

३. धर्मघोषे = सं० धर्मघोषः, धार्मिक उपदेशकी घोषणा।

४. देखिये गि० शि० ४।

५. आलोचयिसु : पालि 'आरोचेति' का अर्थ होता है 'कहना', 'सूचना देना', 'घोषणा करना', 'व्याख्या करना' आदि। सं० 'आलोचना' से इसका कोई सम्बन्ध नहीं।

पञ्चम अभिलेख

(धर्म महामात्र)

१९. देवनंप्रिये' प्रियद्रशि रज एवं अह [१] कलणं दुकरं [२] ये अदिकरे कयणस से दुकरं करोति [३] तं मय बहु कयणे कटे [४] तं मअ पुत्र च

२०. नतरे च' परं' च तेन ये अपतिये मे अवकपं तथ अनुवटिशति से सुकट कषति [५] ये तु अत्र देश पि हयेशति से दुकठ कषति [६]

२१' पपे हि नम सुपदरवे' [७] से अतिकतं अंतरं न भुतप्रुव ध्रममहमत्र नम [८] से त्रेडशवषभिसितेन मय ध्रम महमत्र कट [९] ते सव्रपषडेषु'

२२. वपुट ध्रमधियनये च ध्रमवध्रिय हिदसुखये च ध्रमयुतस योनकंबोजगधरनं रठिकपितिनिकन ये व पि अञे अपरत [१०] भटमये

२३. षु ब्रमणिभ्येषु अनथेषु वुध्रेषु हिदसुखये ध्रमयुतअपलिबोधये वियपुट ते [११] बधनवधस पटिविधनये अपलिबोधये मोक्षये च इयं

२४. अनुबध प्रज ति व कटभिकर ति व महलके ति व वियप्रट ते [१२] हिद' बहिरेषु च नगरेषु सव्रेषु ओरोधनेषु भतनं' च स्पसुन च

२५. ये व पि अञे ञतिके सव्रत्र वियपट [१३] ए इयं ध्रमनिशितो तो' व ध्रमधियने ति व दनसंयुते ति व सव्रत्र विजतसि मअ ध्रमयुतसि वपुट ते

२६. ध्रममहमत्र [१४] एतये अथ्रये अयि ध्रमदिपि लिखित चिरठितिक होतु तथ च मे प्रज अनुवटतु [१५]

संस्कृतच्छाया

१९. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा एवम् आह। कल्याणं दुष्करम्। यः आदिकरः कल्याणस्य सः दुष्करं करोति। तत् मया बहु कल्याणं कृतम्। तत् मम पुत्राश्च

२०. नप्तारश्च परं च तेभ्यः यत् अपत्यं मे यावत्कल्पं तथा अनुवर्तिष्यन्ते, तत् सुकृतं करिष्यति। यः तु अत्र देशमपि हापयिष्यति सः दुष्कृतं करिष्यति।

२१. पापं हि नाम सुप्रदार्य्यम्। तत् अतिक्रान्तम् अन्तरं न भूतपूर्वाः धर्ममहामात्रा नाम। तत् त्रयोदशवर्षाभिषिक्तेन मया धर्ममहामात्रा कृताः। ते सर्वपाषण्डेषु

२२. व्यापृताः धर्माधिष्ठानाय च धर्मवृद्धया हितसुखाय च धर्मयुक्तस्य। यवन-कम्बोज-गन्धाराणां राष्ट्रिकपैत्र्यणिकानां ये वा अपि अन्ये अपरान्ता। भृत्यमये-

२३. षु ब्राह्मणेभ्येषु अनाथेषु वृद्धेषु हितसुखाय धर्मयुक्ताय अपरिबाधाय व्यापृताः ते। बन्धनबद्धस्य प्रतिविधानाय अपरिबाधाय मोक्षाय च अयम्

२४. अनुबद्धः प्रजावान् इति कृताभिकारः इति वा महल्लकः इति वा व्यापृता ते। इह बाह्येषु च नगरेषु सर्वेषु अवरोधनेषु भ्रातृणां च स्नुषाणां च

२५. ये वा अपि अन्ये ज्ञातयः सर्वत्र व्यापृताः। यः अयं धर्मनिश्रितः इति वा धर्माधिष्ठानः इति वा दानसंयुक्तः इति वा सर्वत्र विजिते मम धर्मयुक्ते व्यापृताः ते

२६. धर्ममहामात्राः। एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता चिरस्थितिका भवतु तथा च मे प्रजाः अनुवर्तन्ताम्।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्त्ज इसे 'प्रियेन' पढ़ते हैं, किन्तु ब्यूलर 'प्रिये' जो प्रथमा एकवचनका शुद्ध रूप है।
२. कुछ लोग पढ़नेमे 'च'का लोप कर देते हैं जो वाक्य-संयोजनकी दृष्टिसे आवश्यक है।
३. ब्यूलर 'परं' पढ़ते हैं।
४. वही, 'सुपदरे व'।
५. वही, 'पपडेषु'।
६. वही, 'गंधरनं'।
७. वही, 'हिदं'।
८. 'भतुन' अधिक अच्छा पाठ है।
९. ब्यूलर 'ति' पढ़ते हैं।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी शिलालेख ५ का भाषान्तर।)

षष्ठ अभिलेख

(प्रतिवेदना)

२६. देवनप्रिये[1] प्रियद्रशि रज एवं अत्र[2] [१] अतिक्रतं[3] अतरं[4]

२७. न हुतप्रुवे सत्रं कल अथ्रक्रम व पटिवेदन व [२] त मय एवं किटं [३] सत्र कलं अशतस मे ओरोधने ग्रभगरसि व्रचस्पि विनितस्पि उयनस्पि सव्रत्र पटिवेदक अथ्र जनस

२८. पटिवेदेतु मे [४] सव्रत च जनस अथ करोमि अहं [५] यं पि च किछि मुखतो अणपेमि अहं दपकं व श्रवकं व ये व पुन महमत्रेहि अचयिके अरोपितं[5] होति

२९. तये अथ्रये विवदे निजति[6] व संत परिषये अनतलियेन पटिवेदेतवियो[7] मे सव्रत्र सत्र कल [६] एवं अणपित मय [७] नस्ति हि मे तोषो तोषे उठनसि अथसंतिरणये च

३०. कटवियमते हि मे सव्रलोकहिते [८] तस चु पुन एषे मुले उठने अथ्रसतिरण च [९] नस्ति हि क्रमतर सव्रलोकहितेन [१०] यं च किछि परक्रममि अहं[8] किति भुतनं

३१. अणणियं[9] येहं इअ च पे[10] सुखियमि परत्र च स्पग्र[11] अरधेतु ति [११] से एतये अथ्रये इयं ध्रमदिपि लिखित चिरठिकित होतु तथ च मे पुत्र नतरे परक्रमते सत्र—

३२. लोकहितये [१२] दुकरे च खो अजत्र अग्रेन परक्रमेन[12] [१३]

संस्कृतच्छाया

२६. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवं आह। अतिक्रान्तम् अन्तरं।

२७. न भूतपूर्वं सर्वं कालम् अर्थकर्म वा प्रतिवेदना वा। तत् मया एवं कृतम्। सर्वं कालं अश्नतः मे अवरोधने, गर्भागारे, व्रजे, विनीते, उद्याने सर्वत्र प्रतिवेदकाः अर्थे जनस्य

२८. प्रतिवेदयन्तु मे। सर्वत्र च जनस्य अर्थं करोमि अहम्। यत् अपि च किञ्चित् मुखतः आज्ञापयामि अहं दापकं वा श्रावकं वा यत् वा पुनः महामात्रेभ्यः आत्ययिकम् आरोपितं भवति

२९. तस्मै अर्थाय विवादः निध्यातिः वा सतः परिषदि आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे सर्वत्र सर्वं कालम्। एवम् आज्ञापितं मया। नास्ति हि मे तोषः उत्थाने अर्थसन्तीरणायाः च

३०. कर्तव्यमतं हि मे सर्वलोकहितम्। तस्य तु पुनः एतत् मूलम् उत्थानम् अर्थसन्तीरणं च। नास्ति हि कर्मान्तरं सर्वलोकहितात्। यत् च किञ्चित् प्रक्रमे वा अहम्। किमिति? भूतानाम्

३१. आनृण्यं एयाम् इह च कान् सुखयामि परत्र च स्वर्गम् आराधयन्तु। तत् एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता चिरस्थितिका भवतु तथा च मे पुत्राः नप्तारश्च प्रक्रमन्तां सर्व—

३२. लोकहिताय। दुष्करं च खलु अन्यत्र अग्र्यात् प्रक्रमात्।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'देवनं प्रिये'।
२. वही, 'अह'।
३. वही, 'अतिक्रत'।
४. वही, 'अंतर'।
५. वही, 'अरोपित'।
६. वही, 'निझति'।
७. वही, 'पटियदितविये'।
८. वही, 'अह'।
९. वही, 'अनणियं।
१०. वही, 'प'।
११. वही, 'स्पग्र'।
१२. ब्यूलरके पाठान्तर प्रायः शब्दोंके संस्कृतरूपमें प्रभावित हैं; उनमें पैशाची प्राकृतका ध्यान कम है।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये शहबाजगढ़ी शिलालेख ६ का भाषान्तर।)

सप्तम अभिलेख

(धार्मिक समता : संयम, भावशुद्धि)

३२. देवनप्रियो[1] प्रियद्रशि रज सव्रत्र इछति सव्रपषड वसेयु [१] सव्रे हि ते सयम भवशुधि च

३३. इछंति [२] जने चु उचवुचछदे[2] उचवुचरगे [३] ते सव्रं एकदेशं व पि कषति [४] विपुले पि चु दने यम नस्ति सयेमे[3] भवशुति[4] किटनत द्रिढमतित[5] च

३४. निचे बढं [५]

संस्कृतच्छाया

३२. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वत्र इच्छति सर्वे पाषण्डाः वसेयुः । सर्वे हि ते संयमं भावशुद्धिं च

३३. इच्छन्ति । जनः तु उच्चावचच्छन्दः उच्चावचरागः । ते सर्वम् एकदेशम् अपि करिष्यन्ति । विपुलम् अपि तु दानं यस्य नास्ति संयमः भावशुद्धिः कृतज्ञता दृढभक्तिता च

३४. नित्या बाढम् ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर, 'देवनप्रियें' ।
२. वही, 'उचवुचचदे' ।
३. वही, 'सयमे' ।
४. अधिक सम्भव पाठ है 'शुधि' ।
५. ब्यूलरके अनुसार 'द्रिढ़' ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये शाहबाजगढ़ी शिलालेख ७ का भाषान्तर ।)

अष्टम अभिलेख

(धर्म-यात्रा)

३४. अतिक्रतं अतरं' देवनप्रिय विहरयत्र नम निक्रमिषु [१] इअ' म्रिगविय अञनि च एदिशनि अभिरमनि हुसु [२] से देवनप्रिये प्रियद्रशि

३५. रज दशवषभिसितें संतं निक्रमि सबोधि [३] तेनद् ध्रमयद्' [४] अत्र इय होति श्रमणब्रमणनं' द्रशने दने च वुध्रनं' द्रशने च हिरं-पटिविधने च

३६. जनपदश जनस द्रशने ध्रमनुशस्ति च ध्रमपरिपुछ च ततोपय [५] एषे भुये रति होति देवप्रियस प्रियद्रशिस

३७. रजिने भगे अणे [६]

संस्कृतच्छाया

३४. अतिक्रान्तम् अन्तरम् देवानां प्रियः विहारयात्रां नाम निरक्रमिषुः। तत्र मृगया अन्यानि च ईदृशानि अभिरामाणि अभूवन्। तत्र देवप्रियः प्रियदर्शी

३५. राजा दशवर्षाभिषिक्तः सन् निरक्रंस्त (निरक्रमीत् वा) सम्बोधिम्। तेन अत्र धर्मयात्रा। अत्र इदं भवति श्रमणब्राह्मणानां दर्शनं दानं च वृद्धानां दर्शनं च हिरण्य-प्रतिविधानं च

३६. जानपदस्य जनस्य दर्शनं धर्मानुशस्तिः च धर्मपरिपृच्छा च। तदुपेया एषा भूयसी रतिः भवति। देवप्रियस्य प्रियदर्शिनः

३७. राज्ञः भागः अन्यः।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'अतिक्रंत अतर'।
२. वही, 'इह'।
३. वही, 'ध्रमयद्र'।, हुल्त्जके अनुसार 'द'के नीचेका लटका हुआ भाग 'रेफ' न होकर 'द'का वही वैकल्पिक अंग है।
४. वही, 'श्रमण—'।
५. वही, 'वभ्रन'।
६. 'हिरञ—' पाठ अधिक शुद्ध जान पड़ता है।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी शिलालेख ८ का भाषान्तर।)

नवम अभिलेख

(द्वितीय शिलाका उत्तर मुख)

(धर्म-मङ्गल)

१. देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह [१] जने उचवुचं मगलं करोति
२. अबधसि अवहसि विवहसि प्रजोपदये प्रवसस्पि एतपे अञये च एदिशये जने
३. बहुमंगलं करोति [२] अत्र तु अबकजनिक[1] बहु च बहुविधि च खुद च निरथ्रिय च मंगलं करोति [३] से कटविये चेव[2] खो
४. मगले [४] अपफले चु खो एषे [५] इयं चु खो महफले ये ध्रममगले[3] [६] अत्र इयं दसभटकसि सम्यपटिपति गुरुनं अपचिति
५. प्रणन सयमे श्रमणब्रमणन दने एषे अणे च एदिशे ध्रममगले नम [७] से वतविये पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतुनु[4] पि स्पमिकेन पि
६. मित्रसंस्तुतेन अव पटिवेशियेन पि इयं सधु इयं कटविये मगले[3] अव तस अथ्रस निवुटिय निवुटसि व पुन इम कषमि[5] ति [८] ए हि इतरे मगले
७. शशयिके से [९] सिय व तं अथ्रं निवटेय सिय पन नो [१०] हिदलोकिके चेव से [११[इयं पुन ध्रममगले अकलिके [१२] हचे तं अथ्रं नो निवटेति हिद अथ परत्र
८. अनत पुण[6] प्रसवति [१३] हचे पुन तं अथ्रं निवटेति हिद ततो उभयेस अरधे होति हिद च से अथ्रे परत्र च अनत पुणं[7] प्रसवति तेन ध्रममगलेन [१४]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजः एवम् आह। जनः उच्चावचं मङ्गलं करोति।
२. आबाधे आवाहे विवाहे प्रजोत्पादे प्रवासे एतस्मिन् अन्यस्मिन् च जनः
३. बहु मङ्गलं करोति। अत्र तु अम्बिकाजन्यः बहु च बहुविधं च क्षुद्रं च निरर्थकं च मङ्गलं करोति। तत् कर्तव्यं चैव खलु
४. मङ्गलम्। अल्पफलं तु खलु एतत्। इदं तु खलु महाफलं यत् धर्ममङ्गलम्। अत्र इदं दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः गुरुणाम् अपचितिः
५. प्राणानां (प्राणेषु वा) संयमः श्रमणब्राह्मणेभ्यः दानम्। एतत् अन्यत् च ईदृशं धर्ममङ्गलम् नाम। तत् वक्तव्यं पित्रा अपि पुत्रेण अपि भ्रात्रा अपि स्वामिकेन अपि
६. मित्र-संस्तुतेन अपि यावत् प्रतिवेश्येन अपि— इदं साधु इदं कर्तव्यं मङ्गलं यावत् तस्य अर्थस्य निवृत्तये। निवृत्तौ वा पुनः इदं कथमपि इति। यत् हि इतरं मङ्गलं
७. सांशयिकं तत् भवति—स्यात् वा तम् अर्थं निर्वर्तयेत्। ऐहलौकिकं चैव तत्। इदं पुनः धर्ममङ्गलं आकालिकम्। तच्चेत् अपि तं अर्थं न निर्वर्त्तयति इह, अथ परत्र
८. अनन्तं पुण्यं प्रसूते। तच्चेत् पुनः तं अर्थं निर्वर्त्तयति इह ततः उभयं लब्धं भवति। इह च सः अर्थः परत्र च अनन्तं पुण्यं प्रसूते तेन धर्ममङ्गलेन।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'बलिक जनिक'।
२. वही, 'च'।
३. वही, 'मंगले'।
४. वही, 'भतुन'।
५. वही, 'केषमिति'।
६. वही, 'अनंत पुञ'।
७. वही, 'अनंतं पुञं'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी अभिलेख ९ का भाषान्तर।)

दशम अभिलेख

(धर्म-शुश्रूषा)

९. देवनप्रिये प्रियद्रशि रज यशो व किटि व नो[1] महध्रवहं मञति अणच यं पि यशो व किटि व इछति तदत्वये[2] अयतिय च जने ध्रम-सुश्रुष सश्रुषतु[3] ये ति

१०. ध्रमवुतं च अनुविधियतु ति [१] एतकये देवनप्रिये प्रियद्रशि रज यशो व किटि व इछति [२]···किछि परक्रमति देवनप्रिये प्रिय-द्रशि रज तं सव्रं परत्रिकये व किति

११. सकले अपपरिसवे सियति ति [३] एषे चु[4] परिसवे ए अपुणे [४] दुकरे[5] चु खो एषे खुदकेन व वग्रेन उसटेन व अनत्र अग्रेन पर-क्रमेन सव्रं परितिजितु [५] अत्र तु खो उसटेनेव दुकरे[6] [६]

संस्कृतच्छाया

९. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्तिं वा न महार्थावहां मन्यते—अन्यत्र यत् अपि यशः वा कीर्तिं वा इच्छति—तदात्वे आयत्यां च जनः धर्म्मशुश्रूषा शुश्रूषतां मम इति

१०. धर्मोक्तं (धर्मव्रतं वा) अनुविधीयताम् इति । एतस्मै देवप्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्ति वा इच्छति । यत् च किञ्चित् प्रक्रमते देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा तत् सर्वं पारत्रिकाय एव । किमिति ?

११. सकलः अल्पपरिस्रवः स्यात् इति । एषः तु परिस्रवः यत् अपुण्यम् । दुष्करं तु खलु एषः क्षुद्रकेण वा वर्गेण उच्छ्रितेन वा अन्यत्र अग्र्यात् प्रक्रमात् सर्वं परित्यज्य । अत्र तु खलु उच्छ्रितेन वा दुष्करम् ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'न' पाठ होना चाहिये ।
२. वही, 'तत्त्तये' ।
३. शिलामें एक गढा पहलेसे ही था जिसमे 'श्र' उत्कीर्ण है ।
४. ब्यूलर 'तु' पढ़ते हैं ।
५. वही, 'दुकर' ।
६. वही, 'दुकर' ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी अभिलेख १० का भाषान्तर ।)

एकादश अभिलेख

(धर्म-दान)

१२. देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह [१] नस्ति एदिशे दने अदिशे ध्रमदने ध्रमसंथवे धमसंविभग[1] धमसंबंधे [२] तत्र एषे दसभटकसि सम्यपटिपति[2] मतपितुषु सुश्रुष

१३. मित्र संस्तुतञतिकन श्रमणब्रमणन दने प्रणन अनरमे[3] [३] एषे वतविये पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतु[4] पि स्पमिकेन पि मित्रसंस्तुतेन अव पटिवेशियेन

१४. इयं सधु इयं कटविये[5] [४] से तथ करतं हिदलोके च कं अरधे होति परत्र च अनंतं पुणं प्रसवति तेन ध्रमदनेन [५]

संस्कृतच्छाया

१२. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। नास्ति ईदृशं दानं यादृशं धर्मदानं धर्मसंस्तवः धर्मसंविभागः धर्मसम्बन्धः। तत्र एतत्—दासभृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः मातापित्रोः शुश्रूषा

१३. मित्र-संस्तुत-ज्ञातिकेभ्यः श्रमणब्राह्मणेभ्यः दानं प्राणानाम् अनालम्भः। एतत् वक्तव्यं—पित्रा अपि पुत्रेण अपि भ्राता अपि स्वामिकेन अपि मित्र-संस्तुताभ्यां यावत् प्रतिवेश्येन-

१४. 'इदं साधु, इदं कर्तव्यम्।' सः तथा कुर्वन् ऐहलौकिकं च कं (सुखं) आराधितम् भवति, परत्र अनन्तं पुण्यं प्रसूते तेन धर्मदानेन।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'संविभगे' पढ़ते है।
२. वही, 'संपटिपति'।
३. वही, 'अनरमे'।
४. वही, 'भतुन'।
५. वही, 'कटविये'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी अभिलेख ११ का भाषान्तर।)

द्वादश अभिलेख

[इ] द्वितीय शिला दक्षिणमुख

(सारवृद्धि)

१. देवनप्रिये प्रियद्रशि रज सव्रपषडनि प्रवजितनि गेहथनि[1] च पुजेति दनेन विविधये च पुजये[2] [१] नो चु तथ दन व पुज व
२. देवनंप्रिये मञति अथ किति सलवढि सिय सव्रपषडन ति [२] सलव्रुढि तु बहुविध [३] तस चु इयं मुले अं वचगुति
३. किति अत्व प्रषडपुज[3] व परपषडगरह व नो सिय अपकरणसि ऌहुक व सिय तसि तसि पकरणसि [४] पुजेतविय व चु परप्रषड तेन तेन
४. अकरेन [५] एवं करतं अत्वपषड बढं वढयति परपषडस पि च उपकरोति [६] तदंञथ[4] करतं अतपषड च छणाति परपषडस पि च
५. अपकरोति [७] ये हि केछि अत्वपषड[5] पुजेति परपषड व गरहति सव्रे अत्वपषडभतिय व किति अत्वपषड दिपयम ति···पुन तथ करतं
६. वढतरं उपहंति अत्वपषडं[6] [८] से समवये वो सधु किति अणमणस ध्रमं श्रुणेयु च सुश्रुषेयु च ति [९] एवं हि देवनप्रियस इछ किति सव्रपषड बहुश्रुत च
७. कयणगम च हुवेयु ति [१०] ए च तत्र तत्र प्रसन तेहि वतविये [११] देवनप्रिये नो तथ दनं व पुजं व मणति अथ किति सल-वढि सिय सव्रपषडन [१२]
८. बहुक च एतये अथ्रये वपुट ध्रममहमत्र इस्त्रिध्रक्षमहमत्र व्रचभुमिक अनि च निकये [१३] इयं च एतिसफले
९. यं अत्वैपषडवढि च भोति ध्रमस च दिपन [१४]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वपाषण्डान् प्रव्रजितान् गृहस्थान् वा पूजयति दानेन विविधया च पूजया। न तु तथा दानं वा पूजां वा
२. देवानां प्रियः मन्यते यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्वपाषण्डानाम् इति। सारवृद्धिस्तु बहुविधा। तस्याः तु इदं मूलम् यत् वचागुप्तिः।
३. किमिति ? आत्म-पाषण्ड-पूजा वा पर-पाषण्ड-गर्हा वा न स्यात् अप्रकरणे, लघुका वा स्यात् तस्मिन् तस्मिन् प्रकरणे। पूजयितव्याः तु परपाषण्डा तेन तेन
४. आकारेण। एवं कुर्वन् आत्मपाषण्डं वर्द्धयति परपाषण्डम् अपि वा उपकरोति। ततः अन्यथा कुर्वन् आत्मपाषण्डं च क्षिणोति परपाषण्डम् अपि च
५. अपकरोति। यः हि कश्चित् आत्म-पाषण्डं पूजयति परपाषण्डं वा गर्हते (गर्हति) सर्वम् आत्म-पाषण्ड-भक्त्या एव। किमिति ? 'आत्म-पाषण्डं दीपयेम' इति सः च पुनः तथा कुर्वन्
६. बाढतरम् उपहन्ति आत्म-पाषण्डम्। तत् समवायः एव साधुः। किमिति ? अन्योन्यस्य धर्मं श्रृणुयुः च शुश्रूषेरन् च इति। एवं हि देवप्रियस्य इच्छा—किमिति ? सर्वे पाषण्डाः बहुश्रुताः च
७. कल्याणागमाः च भवेयुः इति। ये वा तत्र तत्र प्रसन्नाः तैः वक्तव्यं—'देवानां प्रियः न तथा दानं वा पूजां वा मन्यते, यथा किमिति ? सारवृद्धिः स्यात् सर्वपाषण्डानां
८. बहुका च एतस्मै अर्थाय व्यापृता धर्ममहामात्रा स्त्र्यध्यक्षमहामात्राः व्रजभूमिका अन्ये च निकायाः। इदं च एतस्य फलं
९. यत् आत्मपाषण्डवृद्धिः च भवति धर्मस्य च दीपना।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'गहथनि'।
२. वही, 'पुजय'।
३. वही, 'अत्मपषड'। पिशेलके 'प्राकृत व्याकरण' (ग्रामेटिक २७७)के अनुसार 'अत्र—' होना चाहिये। हुल्त्श इसीको मानते हैं।
४. ब्यूलर, 'ततञथ'।
५. वही, 'अत्म—'।
६. वही, 'अत्म—'।
७. वही, 'अत्म—'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी अभिलेख १२ का भाषान्तर।)

त्रयोदश अभिलेख

(वास्तविक विजय)

१. अठवषभिषितस देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने कलिग विजित [१] दियढमत्रे प्रणशतस······

२. मटे [२] ततो पच' अधुन लधेषु कलिगेषु तिव्रे ध्रमवये···ध्रमनुशस्ति च देवनप्रि···[३]······

३. मरणे व अपवहे व जनस से बढं वेदनियमते गुरुमते च देवनप्रियस [५] इयं पि चु ततो······

४. येसु विहित एष अग्रभुटि सुश्रुष मतपितुषु सुश्रुष गुरुसुश्रुष मित्रसंस्तु······

५. वधे व अभिरतनं विनक्रमणि [७] येषं व पि सुविहितनं सिनेहे अविपहिने[3] ए तनं मित्रसं···[८]······

६. ······एष सव्रमनुषनं' गुरुमते च देवनंप्रियस [९] नस्ति च से जनपदे यत्र नस्ति इमे निकय अन्नत्र योनेषु ब्रमणे च श्रमणे···पि जनपदसि यत्र······

७. नं नम प्रसदे [१०] से यवतके जने तद कलिगेषु हते च···अपवुढे च ततो शतभगे व सहस्रभगे व अज गुरुमते व देवनप्रियस [११] कि···पक···मितवि···[१२]

८. ···पि च अटवि देवनप्रियस विजितसि होति त पि अनुनयति अनुनिझपयति[6] [१३] अनुतपे पि च प्रभवे देवनप्रियस वुचति तेष कि···[१४]···छ···वनप्रिय······[१५]

९. ···मुखमुते विजये देवनप्रियस' ये ध्रमविजये [१६] से च पुन लधे देवनप्रियस हिद च सव्रेषु च अंतेषु अ षषु पि योजन शतेषु··· तियोगे नम योनरज······

१०. अंते···नम मक नम अलिकपुदरे नम निच' चोडपंडिय अतंबपंणिय [१७] च एवमेव हिद रजविषवसि योनकंबोजेषु नभकनभपंतिषु भोजपितिनिकेषु अधप···[१८]

११. यत्र पि दुत देवनप्रियस' न यंति ते पि श्रुतु देवनप्रियस ध्रमवुत[10] विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रमं अनुविधियंति अनुविधियिशंति च [१९] ये से लधे एतकेन होति सव्रत्र विजये···[२२]

१२. परत्रिकमेव महफल मणति देवनप्रिये [२३] एतये च अथ्रये इयं ध्रमदिपि[11] लिखित किति पुत्र प्रपोत्र मे असु नवं वि···तवियं मणिषु सय···]२४]

१३. ···हिदलोके परलोकिके [२५] सव[12] च क निरति होतु य ध्रमरति [२६] स हि इअलोकिक परलोकिक [२७]

संस्कृतच्छाया

१. अष्टवर्षाभिषिक्तेन देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा कलिङ्गाः विजिताः। द्व्यर्द्धमात्रं प्राणशतसहस्रं [तत्र हत बहुतावत्कं]

२. मृतम्। ततः पश्चात् अधुना लब्धेषु कलिङ्गेषु तीव्रः धर्मोपायः [धर्मकामता] धर्मानुशस्तिः च देवानां प्रि [यस्य]। [तत् अस्ति अनुशयः देवप्रियस्य विजित्य कलिङ्गान्। अविजिते हि विजीयमाने यत् तत्र वधः वा]

३. मरणं वा अपवाहः वा जनस्य, तत् बाढं वेदनीयमतं गुरुमतं देवानां प्रियस्य। इदम् अपि तु ततः······

४. येषु विहिता एषा अग्रभक्तिः शुश्रूषा मातृपित्रोः शुश्रूषा गुरुषु शुश्रूषा मित्र संस्तुत···

५. वधः वा अभिरतानाम विनिष्क्रामणम्। येषां वा अपि संविहितानां स्नेहः अविप्रहीनः एतेषां मित्रसंस्तुत······

६. ·········एषः सर्वमनुष्याणां गुरुमतः च देवानां प्रियस्य। नास्ति च सः जनपदः यत्र नास्ति इमे निकायाः अन्यत्र यवनेभ्यः—एषः ब्राह्मणः च श्रमणः च·········नास्ति क अपि जनपदे यत्र······

७. न नाम प्रसादः। तत् यावान् जनः तदा कलिङ्गेषु हतः च मृतः च अपव्यूढः च ततः शतभागः वा सहस्रभागः वा अद्य गुरुमतः एव देवानां प्रियस्य।···

८. या अपि च अटवी देवप्रियस्य विजिते भवति ताम् अपि अनुनयति अनुनिध्यायति। अनुतापयति अपि च प्रभावः देवानां प्रियस्य। उच्यते तेषां किमिति···········(इ)च्छति···(दे) वानां प्रियः······।

९. ······मुख्यमतः विजयः देवानां प्रियस्य यः धर्मविजयः। सः च पुनः लब्धः देवानां प्रियस्य इह च सर्वेषु च अन्तेषु आषड्भ्यः अपि योजनशतेभ्यः······अंतियोकः नाम यवनराजः······

१०. ···अंतेकिनः नाम मकः (मग) नाम अलिकसुन्दरः नाम। नीचा चोडाः पाण्ड्याः यावत् ताम्रपर्णीयाः। एवमेव इह राजविषये—यवन-कम्बोजेषु नाभक-नाभपंक्तिषु भोजपितिनिकेषु अन्ध्रपुलिन्देषु······

११. यत्र अपि दूताः देवानां प्रियस्य न यान्ति, ते अपि श्रुत्वा देवानां प्रियस्य धर्मोक्तं विधानं धर्मानुशिष्टं च धर्मम् अनुविदधति अनुविधास्यन्ति च। यः स लब्धः एतकेन भवति सर्वत्र विजयः······

१२. पारत्रिकम् एव महाफलं मन्यते देवानां प्रियः। एतस्मै च अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता, किमिति ? पुत्राः प्रपौत्राः (च) मे स्युः नव वि······ विजेतव्यं मंसत स्व······

१३. ···सः ऐहलौकि-पारलौकिकः। सर्वा च निरतिः भवतु यः धर्मरतिः। सा हि ऐहलौकिकी-पारलौकिकी।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'पछ'।
२. वही '० मणे'।
३. वही 'अविप्रहिने'।
४. वही 'सम्र मनुषनं'।
५. वही 'नो'।
६. वही 'अनुनिझपये ति'।
७. वही 'देवनप्रियस'।
८. वही 'निचं च'।
९. वही 'देवनंप्रियस'।
१०. वही 'वुत'।
११. वही 'भ्रमदिपि'।
१२. वही 'सम्र'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये, शहबाजगढ़ी अभिलेख १३ का भाषान्तर।)

चतुर्दश अभिलेख

(उपसंहार)

१३. इयं ध्रमदिपि देवनप्रियेन प्रिय[1]···जिन लिखपित···

१४. लिखिते लिख पेशमि चेव नि[2]···[३] अस्ति चु अत्र पुन पुन लपिते तस तम अथ्रम मधुरियये येन जने तथ पटिपजेयति [४] से सिय अत्र किछि···ति लिखित···व संखय···

संस्कृतच्छाया

१३. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण प्रिय [दर्शिना] [रा] राज्ञा लेखिता ।

१४. लिखितं लेखयिष्यामि च नित्यम्। अस्ति च अत्र पुनः पुनः लपितं तस्य तस्य अर्थस्य माधुर्याय येन जनः तथा प्रतिपद्येत । **तत् स्यात् अत्र किञ्चित् असमाप्तं लिखितम्··· ···वा संक्षयकारणं···**

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरकी पूर्ति इस प्रकार है : 'देवाना प्रियेन प्रियद्रशिन'।

२. हुल्ट्जके अनुसार इसकी पूर्ति 'निखं' है। कालसी अभिलेखमें 'निक्य' पाठ मिलता है।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये शहबाजगढ़ी अभिलेख १४ का हिन्दीभाषान्तर ।)

धौलीशिला

प्रथम अभिलेख

(जीवदया : पशुयाग तथा मांस-भक्षण निषेध)

१. सि' पवतसि देवनंपिये [१] लाजिना लिखा इ जीवं आलभितु पजोह [२]
२. नो पि च समाजे···[३] दोसं···[४]···पिचु···तिया समाजा साधुमता देव···
३. पियदसिने लाजिने [५]···मह···पिय···नि पानसत···आलभियिसु सूपठाये [६]
४. से अज अदा इयं धंमलिपि लिता तिं···आलभिय···तिंनि पानानि पछा नो आलंभियिसंति

संस्कृतच्छाया

१. ···[कपिङ्ग] ले पर्वते देवानां प्रिये [ण]······। राज्ञा···लेखि[ता]···इ[ह] [न] जीवं आलभ्य प्रहो [तव्यः]।
२. न अपि च समा [जः]···।······[अ] पि तु···[एक] तराः समाजाः साधुमताः देव···
३. प्रियदर्शिनः राज्ञः। ······मह[ान से]···प्रिय···[बहू]नि प्राण शत···आलप्सत सूपार्थाय।
४. से अद्य यदा इयं धर्मलिपिः लेखिता त्र[यः]·· आलभ्यन्ते ··त्रयः प्राणाः पश्चात् न आलप्स्यन्ते।

पाठ टिप्पणी

१. कनिगहमने इसे 'खेपिगलमि' पढ़ा था।
परन्तु खेपिंगल जौगड़ शिला (दि० पंक्ति १) का नाम था। अतः यह शब्द अभीतक अनिर्णीत है। हो सकता है कि यह पर्वतका नाम 'कपिङ्गल' हो।
२. ब्यूलर 'आलभि–', सेना 'आलाभि–'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड अभिलेख १ का भाषान्तर।)

द्वितीय अभिलेख

(लोकोपकारी कार्य)

१. सवत[1] विजितसि देवानंपियस पियदसिने ल···अथा···तियोके[2] नाम योनलाजा
२. ए वा पि तस अंतियोकस सामंता लजाने सवत देवानंपियेन पियदसिना···सा च पसुचिकिसा च [१]···धानि
३. आनि मुनिसोपगानि पसुओपगानि च अतत नथि सवत हालापिता च लोपापिता च [२] मूल···वत[3] हालापिता च
४. लोपापिता च [३] मगेसु उदुपानानि खानापितानि लुखानि च लोपापितानि पटिभोगाये···नं···

संस्कृतच्छाया

१. सर्वत्र विजिते देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः रा··· ··· यथा···[अं]तियोकः नाम यवनराजः
२. ये वा [अ]पि तस्य अंतियोकस्य सामन्ताः राजानः सर्वत्र देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना···त्सा च पशुचिकित्सा च ।···औषधानि
३. याः मनुष्योपगानि पशूपगानि च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च । मूला···[स]र्वत्र हारितानि च
४. रोपितानि च । मार्गेषु उदपानानि खानितानि वृक्षाः च रोपिताः प्रतिभोगाय···[पशुमनुष्या]णाम् ।

पाठ टिप्पणी

१. राधागोविन्द वसाक इसको 'स(व)ता' पढ़ते हैं। किन्तु आ की मात्रा स्पष्ट नहीं है। जौगडमें 'सवत' पाठ स्पष्ट होनेसे यहां भी 'सवत' पाठ समीचीन है।
२. वही '०तियोगे'।
३. वही 'वता'।

हिन्दी भाषान्तर

(धौली संस्करण बहुत भग्न है। देखिये जौगड अभिलेख २ का भाषान्तर।)

तृतीय अभिलेख

(धर्मप्रचार : पञ्चवर्षीय दौरा)

१. देवानंपियसे पियदसी लाजा हेवं आहा [१] दुवादसवसाभिसितेन मे इयं आनापयि[1]···[२] त विजितसि मे युता लजुके···
२. पंचसु पंचसु वसेसु अनुसयानं निखमावू अथा अनाये पि कंमने हेवं इमाये धंमानुसाथिये [३] साधु मातापितुसु सुसूसा म···
३. नातिसु च बंभनसमनेहि साधु दाने जीवेसु अनालंभे साधु अपवियता[2] अपभंडता[3] साधु [४] पलिसा पि च···नसि युतानि आनपयिसति हेतुते च वियंज···

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया इदम् आज्ञापितम्···। [सर्व]त्र विजिते मम युक्ताः रज्जुकाः
२. पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु अनुसंयानं निष्क्रामन्तु। [अस्मै] अर्थाय अन्यस्मै अपि कर्मणे हि एवम् अस्यै धर्मानुशिष्ट्यै साधु मातृपित्रोः शुश्रूषा म···
३. ज्ञातिकेभ्यः च ब्राह्मण-श्रमणेभ्यः साधु दानं जीवानाम् अनालम्भः साधु अल्पव्ययता अल्पभाण्डता साधु। परिषत् अपि च [गण]ने युक्तान् आज्ञापयिष्यति हेतुतः व्यञ्ज[नतः]।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'आनपयि'।
२. ब्यूलर, सेना और बसाक 'अपवियति' पढ़ते हैं। अगले शब्द 'अपभंडता' को देखते हुए 'अपवियता' अधिक शुद्ध जान पड़ता है। त में इ की मात्रा स्पष्ट नहीं है।
३. बसाक 'अपभंडत'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिए जौगड़ अभिलेख ३ का भाषान्तर।)

चतुर्थ अभिलेख

(धर्मघोष : धार्मिक प्रदर्शन)

१. अतिकंत अंतलं बहूनि वससतानि वढिते व पानालंभे विहिसा च भूतानं नातिसु असंपटिपति समनबाभनेसु[1] असंपटिपति [१]
२. से अज देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमचलनेन भेलिघोसं अहो धंमघोस विमानदसनं हथीनि अगकंधानि अंनानि च दिवियानि
३. लूपानि दसयितु मुनिसानं [२] आदिसे बहूहि वससतेहि नो हूतपुलुवे तादिसे अज वढिते देवानं पियस पियदसिने लाजिने धंमानुसाथिया
४. अनालंभे पानानं अविहिसा भूतानं नातिसु संपटिपति समनबाभनेसु[1] संपटिपति मातिपितुसुस्रसा वुड सुस्रसा [३] एस अंने च बहुविधे
५. धंमचलने वढिते [४] वढयिसति चेव देवानंपिये पियदसी लाजा धंमचलनं इमं [५] पुना पि चु[2] नति पनति...[3] च देवानंपियस पियदसिने लाजिने
६. पवढयिसंति येव धमंचलनं इमं आकपं धंमसि सीलसि च चिठितु धंमं अनुसासिसंति [६] एस हि सेठे कंमे या धंमानुसासना [७] धंमचलने पि चु
७. नो होति असीलस [८] से इमस अठस वढी[4] अहीनि च साधू[5] [९] एताये अठाये इयं लिखिते इमस अठस वढी युजंतू हीनि च मा अलोचयिसू[6] [१०]
८. दुवादस वसानि अभिसितस देवानंपियस पियदसिने लाजिने यं[7] इध लिखिते [११]

संस्कृतच्छाया

१. अतिक्रान्तम् अन्तरं बहूनां वर्षशतानाम्। वर्द्धितः च प्राणालम्भः विहिंसा च भूतानां ज्ञातिषु असम्प्रतिपत्तिः। श्रमण-ब्राह्मणेषु असम्प्रतिपत्तिः।
२. तत् अद्य देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्माचरणेन भेरिघोषः अभूत् धर्मघोषः विमानदर्शनं हस्तिनः अग्नि-स्कन्धान् अन्यानि च दिव्यानि
३. रूपाणि दर्शयित्वा मनुष्येभ्यः। यादृशः बहुभिः वर्षशतैः न भूतपूर्वं तादृशः अद्य वर्द्धितं देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्मानुशष्ट्या
४. अनालम्भः प्राणानाम् अविहिंसा भूतानां ज्ञातिषु सम्प्रतिपत्तिः श्रमण–ब्राह्मणेषु सम्प्रतिपत्तिः मातृपित्रोः सुश्रूषा वृद्धानां शुश्रूषा। एतत् अन्यं बहुविधं
५. धर्माचरणं वर्द्धितम्। वर्द्धयिष्यति चैव देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा धर्माचरणम् इदम्। पुत्राः अपि तु नप्तारः च प्रणप्तारः देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः
६. प्रवर्द्धयिष्यन्ति एव धर्माचरणम् इदम् यावत्कल्पं धर्मे शीले च तिष्ठन्तः धर्मम् अनुशासयिष्यन्ति। एतत् हि श्रेष्ठं कर्म यत् धर्मानुशासनम्। धर्माचरणम् अपि तु
७. न भवति अशीलस्य। तत् अस्य अर्थस्य वृद्धिः अहानिः च साधु। एतस्मै अर्थाय इदं लिखितम् अस्य अर्थस्य वृद्धिं युञ्जन्तु हानिं च मा आरोचयेयुः।
८. द्वादशवर्षाभिषिक्तेन देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा इदम् इह लिखितम्।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'समनभभनेसु'।
२. ब्यूलर और सेना 'च'।
३. कालसी अभिलेखमें 'पनातिक्या' पाठ है।
४. ब्यूलर 'वुढी'।
५. सेना और ब्यूलर 'साधु'।
६. वही '० यिसु'।
७. 'इय' पाठ अधिक संभव है।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड अभिलेख ४ का भाषान्तर।)

पंचम अभिलेख

(धर्म महामात्र)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] कयाने दुकले [२]···कयानस से दुकलं कलेति [३] से मे बहुके कयाने कटे [४] तं ये मे पुता व

२. नती[1] व···च तेन ये अपतिये मे आवकपं तथा अनुवतिसंति से सुकटं कछंति [५] ए हेत देसं पि हापयिसति से दुकटं कछति [६] पापे हि नाम

३. सुपदालये [७] से अतिकंतं अंतलं नो हूतपुलुवा धंममहामाता नाम [८] से तेदसवसाभिसितेन मे धंममहामाता नाम कटा [९] ते सवपासंडेसु

४. वियापटा धंमाधियानाये धंमवढियें हितसुखाये च धंमयुतस योनकंबोचगंधालेसु लठिकपितेनिकेसु ए वा पि अंने आपलंता[2] [१०] भटिमयेस

५. बाभनियेसु अनाथेसु महाकलेसु च हिदसुखाये धंमयुताये अपलिबोधाये वियापटे से[3] [११] बंधनबधस पटिविधानाये अपलिबोधाये मोखाये च

६. इयं अनुबंध पजा[4] ति व कटाभीकाले ति व महालके ति व वियापटे से [१२] हिद च बाहिलेसु च नगलेसु सवेसु सवेसु ओलोधनेसु मे ए वा पि भातीनं[5] मे भगिनीनं व

७. अंनेसु वा नातिसु सवत वियापटा [१३] ए इयं धंमनिसिते ति व धंमाधियाने ति व दानसयुते व सवपुठवियं धंमयुतसि वियापटा इमे धंममहामाता [१४] इमाये अठाये

८. इयं धंमपिलपी लिखिता चिलठितीका होतु तथा च मे पजा अनुवततु [१५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। कल्याणं दुष्करम्।···कल्याणस्य सः दुष्करं करोति। तत् मे बहुकं कल्याणं कृतम्। तत् ये मे पुत्राः वा

२. नप्तारः वा···च तेभ्यः यत् अपत्यं मे यावत्कल्पं तथा अनुवर्तिष्यन्ति ते सुकृतं करिष्यन्ति। यः देशम् अपि हापयिष्यति सः दुष्कृतं करिष्यति। पापं हि नाम

३. सुप्रदाप्यम्। तत् अतिक्रान्तम् अन्तरम् न भूतपूर्वाः धर्ममहामात्रा नाम। तत् त्रयोदशवर्षाभिषिक्तेन मया धर्म महामात्रा नाम कृताः। ते सर्वेषु पाषण्डेसु

४. व्यापृताः धर्माधिष्ठानाय धर्मवृद्ध्या हितसुखाय च धर्मयुक्तस्य यवन-कम्बोज-गांधारेषु राष्ट्रिकपैत्र्यणिकेषु ये वा अपि अन्ये अपरान्ताः। (तेषु)। भृतमयेषु

५. ब्राह्मणेषु अनाथेषु महल्लकेषु च हितसुखाय धर्मयुताय अपरिबाधाय मोक्षाय च

६. अयम् अनुबद्धप्रजावान् इति कृताभिकारः इति वा महल्लकः इति वा व्यापृताः ते। इह च बाह्येषु च नगरेषु सर्वेषु सर्वेषु अवरोधनेषु मे एव अपि मातृषु मे भगिन्याः

७. अन्येषु ज्ञातिषु सर्वत्र व्यापृताः। यः अयं धर्मनिसृतः इति वा धर्माधिष्ठानः इति वा दानसंयुक्तः वा सर्वपृथिव्यां धर्मयुक्ते व्यापृताः इमे धर्म-महामात्राः। अस्मै अर्थाय

८. इयं धर्मलिपिः लेखिता चिरस्थितिका भवेत् तथा च मे प्रजाः अनुवर्तन्तु।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'नति'।
२. वही, 'आपलन्त'।
३. एल् फैके (वी० ओ० जे० ९·३४९ पा० टि०) के अनुसार पाठ बहुवचनान्त 'वियापटासे' होना चाहिये। परन्तु अन्य सस्करणोंमें 'ते' पाठ मिलता है। अतः 'से' को अलग रखना ही ठीक है।
४. ब्यूलर 'पज'।
५. वही, 'भातिन'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये गिरनार अभिलेख ५ का भाषान्तर।)

षष्ठ अभिलेख

(प्रतिवेदना)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] अतिकंतं अंतलं नो हूतपुलुवे सवं कालं अठकंमे व पटिवेदना व [२] से ममया कटे [३] सवं कालं···मानस[1] मे

२. अंते ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनीतसि उयानसि च सवत पटिवेदका जनस अठं पटिवेदयंतु मे ति [४] सवत च जनस अठं कलामि हकं [५]

३. अंपि च किंचि मुखते आनपयामि दापकं वा सावकं वा ए वा महामातेहि अतियायिके आलोपिते हेति तसि अठसि विवादे व निझती वा संतं पलिसाया[2]

४. आनंतलियं पटिवेदेतवियं मे ति सवत सवं कालं [६] हेवं में अनुसथे [७] नथि हि मे तोसे उठानसि अठसंतीलनाय च [८] कट-वियमते हि मे सवलोकहिते [९]

५. तस च पन इयं मूले उठाने च अठसंतीलना च [१०] नथि हि कंमत···सव लोकहितेन [११] अं च किछि पलकमामि हकं किंति भूतानं आननियं येहं ति

६. हिद च कानि सुखयामि पलत च स्वगं आलाधयंतू ति [१२] एताये अठाये इयं धंमलिपी लिखिता चिलठिकीता होतु तथा च पुता पपोता मे पलकमंतू[3]

७. सवलोकहिताये [१३] दुकले चु इयं अंनत अगेन पलकमेन [१४]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। अतिक्रान्तम् अन्तरम् न भूतपूर्वं सर्वं कालम् अर्थकर्म वा प्रतिवेदना वा। तत् मया कृतम्। सर्वं कालं भुञ्जमानस्य मे

२. अवतः अवरोधने गर्भागारे, व्रजे, विनीते, उद्याने च सर्वत्र प्रतिवेदकाः जनस्य अर्थं प्रतिवेदयन्तु मे इति। सर्वत्र च जनस्य अर्थं करोमि अहम्।

३. अपि च किञ्चित् मुखतः आज्ञापयामि दापकं वा श्रावकं वा एव यत् वा पुनः महामात्रेभ्यः आत्ययिकम् आरोपितं भवति तस्मै अर्थाय विवादः निध्यातिः वा सतः परिषदि

४. आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे इति सर्वत्र सर्वं कालम्। अयं मया अनुशस्तः। नास्ति मे तोषः उत्थाने अर्थसंतीरणायां च। कर्तव्यमतं हि मे सर्वलोकहितम्।

५. तस्य च पुनः इदं मूलम् उत्थानं च अर्थसंतीरणा च। नास्ति हि कर्मान्तरं···सर्वलोकहितात्। यत् किञ्चित् प्रक्रमे वा अहं किमिति? भूता-नाम् आनृण्यं एयम् इति।

६. इह च कान् सुखयामि परत्र च स्वर्गम् आराधयन्तु इति। एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता चिरस्थितिका भवतु तथा च पुत्रा प्रपौत्रा मे प्रक्रमन्तां

७. सर्वलोक हिताय। दुष्करं तु इदम् अन्यत्र अग्र्यात् प्रक्रमात्।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'मीनस'।
२. बरुआ, 'पलिसाय'।
३. सेना 'मातु'; ब्यूलर '०मंतु'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड अभिलेख ६ का भाषान्तर।)

सप्तम अभिलेख

(धार्मिक समता : संयम, भावशुद्धि)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा सवत इछति सवपासंडा वसेवू[1] ति [१] सवे हि ते सयमं भावसुधी च इछंति [२] मुनिसा च
२. उचावुचछंदा उचावुचलागा [३] ते सवं वा एकदेसं व कछंति [४] विपुले पि चा[2] दाने अस नथि सयमे भावसुधी च नीचे बाढं [५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा सर्वत्र इच्छति सर्वे पाषण्डाः वसेयुः इति। सर्वे हि ते संयमं भावशुद्धिं च इच्छन्ति। मनुष्या च
२. उच्चावचच्छन्दाः उच्चावचरागाः। ते सर्वं वा एकदेशं वा कांक्षन्ति। विपुलम् अपि च दानं यस्य नास्ति संयमः भावशुद्धिः च नित्यं बाढम्।

पाठ टिप्पणी

१. तु० गिर० 'वसेयु' = स० 'वसेयुः'।
२. ब्यूलर 'च'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड़ अभिलेख ७ का भाषान्तर।)

अष्टम् अभिलेख

(धर्म-यात्रा)

१. अतिकंतं अंतलं लाजाने विहालयातं नाम निखमिसु [१]···त मिगविया अंनानि च एदिसानि अभिलामानि हुवंति नं [२] से देवानंपिये

२. पियदसी लाजा दसवसाभिसिते निखमि संबोधि[1] [३] तेनता धंमयाता [४] ततेस होति समनबाभनानं दसने च दाने च वुढानं दसने च

३. हिलंनपटिविधाने[2] च जानपदस जनस दसने च धंमानुसथी च···पुछा च तदोपया[3] [५] एसा भुये[4] अभिलामे होति देवानंपियस पियदसिने लाजिने भागे अने [६]

संस्कृतच्छाया

१. अतिक्रान्तम् अन्तरं राजानः विहारयात्रां नाम निरक्रमिषुः।···[त] त्र मृगव्यम् अन्यानि च इदृशानि अभिरामाणि भवन्ति। तत् देवानां प्रियः

२. प्रियदर्शी राजा दशवर्षाभिषिक्तः (सन्) निरक्रंस्त सम्बोधिम्। तेन एषा धर्मयात्रा। तत्र इदं भवति—श्रमणब्राह्मणानां दर्शनं च दानं च वृद्धानां दर्शनं च

३. हिरण्यप्रतिविधानं च जानपदस्य जनस्य दर्शनं च धर्मानुशिष्टिः च···(धर्मपरि) पृच्छा च। तदुपेया एषा भूयसी अभिरामः भवति। देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः भागः अन्यः।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'संबोधी'।
२. ब्यूर 'हीलन—'; 'स० हिरण्यप्रतिविधान'।
३. सं० तदुपेया (तत्+उप+एय)
४. ब्यूलर 'एस भूये'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड अभिलेख ८ का भाषान्तर।)

नवम अभिलेख

(धर्म-मङ्गल)

१. देवानंप्रिये पियदसी लाजा हवं आहा [१] अथि जने उचावुचं मंगलं कलेति आबाध[1]···वीवाह···जुपदाये[2] पवाससि
२. एताये अंनाये च हेदिसाये जने बहुकं मंगलं क···[२]···चु[3] इथी बहुकं च बहुविधं च खुदं[4] च निलठियं च मंगलं कलेति [३]
३. से कटविये चेव खो मंगले [४] अपफले चु खो एस हेदिसे मंग···[५]···यं चु[5] खो महाफले ए धंममंगले [६]
४. गुलूनं अप···मे समनबाभनानं दाने एस अंने च···धंममंगले नाम [७] से[6] वतिविये पितिना पि पुतने पि भातिना पि
५. सुवामिकेन पि···ले आव तस अठस निफतिया [८] अथि च[7] हेवं वुते दाने साधू ति [९] से नथि···अनुगहे वा
६. आदिसे धंमदाने धंमानुगहे[8]···[१०]···मि···तिकेन सहायेन पि वियोवदित···तिसि पकलनसि इयं···
७. ···लाधयितवे [१]···टव···स्वगस आलधी

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। अथ जनः उच्चावचं मङ्गलं करोति। आबाधे [आवाहे] विवाहे···[प्र] जोत्पादे प्रवासे
२. एतस्मिन् अन्यस्मिन् च एतादृशे जनः बहुकं मङ्गलं करोति।···तु अथ बहुकं च बहुविधं च क्षुद्रं च निरर्थकं च मङ्गलं करोति।
३. तत् कर्तव्यं च एव खलु मङ्गलम्। अल्पफलं तु खलु एतत् मङ्ग[लम्]। [इ]दं तु खलु महाफलम् एतत् धर्ममङ्गलम्।
४. गुरुणाम् अप[चितिः] [प्राणानां संय] मः श्रमण-ब्राह्मणेभ्यः दानम्। एतत् अन्यच्च [इदृशं तत्] धर्ममङ्गलं नाम। तत् वक्तव्यं पित्रा अपि पुत्रेण अपि भ्रात्रा अपि
५. स्वामिकेन अपि······[मङ्ग]लं यावत् तस्य अर्थस्य निर्वृत्तये। अस्ति च हि एवम् उक्तं दानं साधु इति। तत् नास्ति···अनुग्रहः वा
६. यादृशः धर्मदानं धर्मानुग्रहः।···मि[त्रेण]···[ज्ञा] तिकेन सहायेन अपि व्यववदितव्यं···तस्मिन् प्रकरणे इदं···
७. ······आराधयितुम्।······[क]र्तव्य···स्वर्गस्य आलब्धिः।

पाठ टिप्पणी

१. सेना और ब्यूलर 'आबाधे'।
२. ब्यूलर '०जो पदाये'।
३. वही, 'एस तु'।
४. वही, 'खुदकं'।
५. वही, 'च'।
६. सेना 'ता'; ब्यूलर 'त'।
७. सेना 'प'; ब्यूलर 'पि'।
८. सेना 'धंमनु०'।
९. हुल्त्जका सुझाव 'वियोवदितविये'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड अभिलेख ९ का भाषान्तर।)

दशम अभिलेख

(धर्म-शुश्रूषा)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा यसो वा किटी वा न···हं मंनते···पिसो वा किटी वा इछति तदत्वाये आ···अने
२. ···सुसं सुसुसतु मे धंम···मे [१] एतकाये यसो वा किटी वा इ···पिलकमति देवानंपिये पालतिकाये···
३. किंति सकले अपलिसवे हुवेया ति [२] पलिस···[४] दुकले···त अगेन···न सवं च पलितिजितु
४. खुदकेन वा उसटेन वा [५] उसटेन चु दुकलतले [६]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा यशः वा कीर्तिं वा न [महार्थाव] हां मन्यते···[अ] पि यशः वा कीर्तिं वा इच्छति तदात्वे आ [यत्यां च] जनः
२. [धर्म) शुश्रूषां शुश्रूषतां मे धर्म···मे। एतस्मै यशः वा कीर्तिं वा इ[च्छति] [किञ्चित्] प्रक्रमते देवानां प्रियः पारत्रिकाय···
३. किमिति ? सकलः अल्पपरिस्रवः स्यात् इति। परिस्र[व]:·······। दुष्करं······[प त] तु अग्रयात्···· न सर्वं च परित्यज्य
४. क्षुद्रकेण वा उच्छ्रितेन तु दुष्करतरम्।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये जौगड अभिलेख १० का भाषान्तर।)

चतुर्दश अभिलेख

(उपसंहार)

१. इयं धंमलिपी देवानंपियेन पियदसिना लाजिना लिखा···अथि मझिमेन···हि सवे सवत घटिते [२]
२. महंते हि विजये बहुके च लिखितं लिखियिस[1]···[३] अथि···वुते तस···याये
३. किंति च जने तथा पटिपजेया ति[2] [४] ए पि चु हेत असमति लिखिते स[3]···सं ···लोचयितु···कला···ति

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा लेखिता।······अस्ति मध्यमेन···[न] हि सर्वं सर्वत्र घटितम्।
२. महत् हि विजितम्, बहु च लिखितं लेखयिष्यामि······। अस्ति······उक्तं तस्य···[माधु]र्याय
३. किमिति ? च जनः तथा प्रतिपद्येत इति। तत् अपि तु स्यात् असमाप्तं लिखितं तत्···सं [क्षयकारणं वा] आलोच्य···[लिपि] करा [पराधेन] [वा इ]ति।

पाठ टिप्पणी

१. पूर्ति 'लिखियिसामि'।
२. 'पटिपजेयाति' एक साथ पढ़ा जा सकता है।
३. सेना और ब्यूलर 'म'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये गिरनार अभिलेख १४ का भाषान्तर।)

धौलीके षष्ठ अभिलेखके अन्तमें

१. सेतो

संस्कृतच्छाया

१. श्वेत [हस्तिः]

हिन्दी भाषान्तर

१. श्वेत हाथी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. धौली शिलाके शिखरपर एक हाथीकी प्रतिकृति खचित है। बौद्ध-साहित्यमे हस्ति बुद्धका प्रतीक है (दे० ब्यूलर : जेड० डी० एम० जी०, ३९.४९०)।

धौली

प्रथम पृथक् अभिलेख[1]

(राजनीतिक आदर्श)

१. देवानं पियस वचनेन तोसलियं महामात नगलवियोहालका
२. वतविय [१] अं किछि दखामि हकं तं इछामि किंति कंमन पटिपादयेहं[1]
३. दुवालते च आलभेहं [२] एस च मे मोख्यमत दुवाल एतसि अठसि अं तुफेसु
४. अनुसथि [३] तुफे हि बहूसु पानसहसेसु[2] ध्यायत[3] पनयं गछेम सु मुनिसानं [४] सवे
५. मुनिसे पजा ममा [५] अथा पजाये इछामि हकं किंति सवेन हितसुखेन हिदलोकिक-
६. पाललोकिकेन[4] यूजेवू ति तथा···मुनिसेसु[5] पि इछामि हकं [६] नो प पापुनाथ आवग-
७. मुके[6] इयं अठे [७] केछ व एक पुलिसे···नाति एतं[7] से पि देसं नो सवं। देखत हि तुफे एवं
   वा पापुनाति [८] तत होति
८. सुविहिता पि नितियं 'एक पुलिसे पि अथि ये बंधनं वा पलिकिलेसं
९' अकस्मा तेन बधनंतिक' अंने च···हु जने दविये दुखीयति [९] तत इछितविये
१०. तुफेहि किंति मझं पटिपादयेमा ति [१०] इमेहि चु जातेहि नो संपटिपजति इसाय आसुलोपेन
११. निठूलियेन[10] तूलनाय अनावूतिय आलसियेन किलमथेन [११] से इछितविये किंति[11] एते
१२. जाता नो हुवेवु ममा ति [१२] एतस च सवस मूले अनासुलोपे अतूलना च [१३] नितियं ये किलंते सिया
१३. न ते उगछ[12] संचलितविये तु वटितविये एतविये वा [१४] हेवंमेव ए दखेय[13] तुफाक तेन वतविये
१४. आनंने[14] देखत हेवं च हेवं च देवानं पियस अनुसथि [१५] से महाफले ए तस संपटिपाद
१५. महा अपाये असंपटिपति [१६] विपटिपादयमीने हि [15]"एतं नथि स्वगस आलधि नो लाजालधि [१७]
१६. दुआहले हि इमस कंमस मे कुते मनो अतिलेके[16] [१८] संपटिपजमीने चु एतं स्वगं
१७. आलाधयिसथ मम च[17] अननियं एहथ [१९] इयं च लिपि[18] तिस नखतेन सोतविया[19] [२०]
१८. अंतला पि च तिसेन[20] खनसि खनसि एकेन पि सोतविय [२१] हेवं च कलंतं तुफे
१९. चघथ संपटिपादयितविये [२२] एताये अठाये[21] इयं लिपि लिखित हिद एन
२०. नगलवियोहालका सस्वतं समयं यूजेवू[22] ति···नस[23] अकस्मा पलिबोधे व
२१. अकस्मा पलिकिलेसे व नो सिया ति [२३] एताये च अठाये हकं···मते[24] पंचसु पंचसु वसे-
२२. सु निखामयिसामि ए अखखसे अचंडे सखिनालंभे होसति एतं अठं जानितु······तथा
२३. कलंति अथ मम अनुसथी ति [२४] उजेनिते पि चु कुमाले एताए व अठाये निखामयिस···
२४. हेदिसमेव[25] वगं नो च अति कामयिसति तिंनि वसानि [२५] हेमेव तखसिलाते पि [२६] अदा अ···
२५. ते महामाता निखमिसंति अनुसयानं तदा अहापयितु अतने कंमं एतं पि जानिसंति
२६. तं पि तथा कलंति अथ लाजिने अनुसथी ति [२७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियस्य वचनेन तोसल्यां महामात्राः नगर-व्यवहारकाः (एवं)
२. वक्तव्याः। यत् किञ्चित् पश्यामि अहं तत् इच्छामि किमिति ? कर्मणा प्रतिपादये अहम्
३. द्वारतः च आरभे अहम्। एतत् च मे मुख्यमतम् द्वारम् एतस्मिन् अर्थे यत् युष्मासु
४. अनुशिष्टिः। यूयं हि बहुषु प्राणसहस्रेषु आयताः—'प्रणयं गच्छेम स्वित् मनुष्याणाम्'। सर्वे
५. मनुष्याः प्रजाः मम। यथा प्रजायै। इच्छामि अहम् किमिति ? सर्वेण हितसुखेन इहलौकिक-

---

१. धौली (उड़ीसाका पुरी जिला) और जौगड (आन्ध्रका गंजाम जिला)के दोनों पृथक् शिला-लेख प्रायः एक ही रूपमें पाये जाते हैं। उपर्युक्त दोनों स्थानोंपर चतुर्दश शिलालेखोंमेंसे एकादशसे त्रयोदशतक नहीं पाये जाते हैं। उनके बदलेमें ये ही दो पृथक् शिला-लेख उत्कीर्ण हैं। इनको 'अतिरिक्त शिला-लेख' भी कहा जाता है। किसी-किसीने इन्हें सीमान्त लेख भी कहा है। इनकी विशेषता यह है कि इनमें अशोकके पूरे विरुद 'देवानांप्रियः प्रियदर्शी'के स्थानपर केवल 'देवानांप्रिय' पाया जाता है। इनमें अशोककी राजनीतिका उच्चतम आदर्श वर्णित है।

१२

६. पारलौकिकेन युज्येरन् इति तथा [सर्व] मनुष्येषु इच्छामि अहम्। न च प्राप्नुथ यावद्ग-
७. मकः। कश्चित् वा एकः पुरुषः मन्यते एतत् सः अपि देशं न सर्वम्। पश्यति हि यूयं एतत्
८. 'सुविहिता अपि नीतिः इयम्।' एकः पुरुषः अपि अस्ति यः बन्धनं वा परिक्लेशं वा प्राप्नोति। तत्र भवति
९. अकस्मात् तेन बन्धनान्तकम् अन्यः च [तत्र च] हु जनः दवीयः दुःखायते। ततः एष्टव्यं
१०. युष्माभिः— किमिति? 'मध्यं प्रतिपादयेमहि' इति। एभिः तु जातैः नो सम्प्रति पद्यते—ईर्ष्यया आशुलोपेन
११. नैष्ठुर्येण त्वरया अनावृत्या आलस्येन क्लमथेन (च)। तत् एष्टव्यम् किमिति? 'एतानि
१२. जातानि नो भवेयुः मम' इति। एतस्य तु सर्वस्य मूलम् अनाशुलोपः अत्वरा च। नीत्यां यः क्लान्तः स्यात्
१३. न सः उद्गच्छेत्; [तत्] सञ्चलितव्यं तु वर्त्तितव्यम् एतव्यं वा। एवम् एव यः पश्येत्, युष्मभ्यं ते न वक्तव्यम्—
१४. "अन्योन्यं पश्यत एवं च देवानां प्रियस्य अनुशिष्टिः। तत् महाफलः एतस्य सम्प्रतिपादः
१५. महापाया असम्प्रतिपत्तिः। विप्रतिपद्यमानैः एतत् नास्ति स्वर्गस्य आलब्धिः न राजालब्धिः।
१६. द्विफलः हि अस्य कर्मणः मया कृतः मनोऽतिरेकः। सम्प्रतिपद्यमाने तु अत्र स्वर्गम्
१७. आराधयिष्यथ मम च आनृण्यम् एष्यथ। इयं च लिपिः तिष्य-नक्षत्रे श्रोतव्या
१८. अन्तरा अपि च तिष्यं क्षणे क्षणे एकेन अपि श्रोतव्या। एवं च कुर्वन्तः यूयं
१९. शक्ष्यथ सम्प्रतिपादयितुम्। एतस्मै अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता येन
२०. नगरव्यवहारकाः शाश्वतं समयं युज्येरन् इति···[नगरज] नस्य अकस्मात् परिबाधः वा
२१. अकस्मात् परिक्लेशः वा न स्यात् इति। एतस्मै अर्थाय अहम् [महा]मात्रान् पञ्च तु पञ्चसु वर्षे-
२२. षु निष्क्रामयिष्यामि ये अकर्कशाः अचण्डाः श्लक्ष्णारम्भाः वा भविष्यन्ति। एतत् अर्थं ज्ञात्वा···तथा
२३. कुर्वन्ति यथा मम अनुशिष्टिः। उज्जयिनीतः अपि तु कुमारः एतस्मै एव अर्थाय निष्क्रामयिष्यति···
२४. ईदृशम् एव वर्गं न च अतिक्रामयिष्यति त्रीणि वर्षाणि। एवम् एव तक्षशिलातः अपि। यदा···
२५. ते महामात्रा निष्क्रमयिष्यन्ति अनुसंयानं तदा अहापयित्वा आत्मनः कर्म एतत् अपि ज्ञास्यन्ति
२६. तत् अपि तथा कुर्वन्ति यथा राज्ञः अनुशिष्टिः इति।

पाठ टिप्पणी

१. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'पटिवेद०'।
२. वही, '०सेसु'।
३. वही, 'आयता'।
४. वही, '०लोकिकाये'।
५. पूर्ति 'सवमुनिसेसु'।
६. सेना और ब्यूलर 'आवागमके'।
७. पूर्ति 'पापुनाति'।
८. सेना और ब्यूलर 'निति इयं'।
९. वही, 'बंध–'।
१०. वही, 'निथुलि–'।
११. सेना 'किति'; ब्यूलर 'किति'।
१२. हुल्त्ज़का सुझाव 'उगछे'।
१३. सेना और ब्यूलर 'देखिये'।
१४. वही, 'अंनं ने'।
१५. वही, '०मिनेहि'। हुल्त्ज़् 'हि' को अलग पढ़ते हैं।
१६. सेना 'मन–', ब्यूलर 'मने-'।
१७. सेना 'मम च'।
१८. ब्यूलर 'लिपि'।
१९. सेना '०विय'; ब्यूलर '०विय'।
२०. ब्यूलर 'तिसे'।
२१. सेना और ब्यूलर 'अथाये'।
२२. वही, 'युजेव'।
२३. पूर्ति 'एन जनेस'; सेना 'नगल जनस'।
२४. पूर्ति 'महामातं'; सेना 'धमते'।
२५. सेना और ब्यूलर 'देहिसंमेव'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रियके वचन (आज्ञा)से तोसलीमें महामात्रोंको (जो) नगर व्यावहारक' (भी हैं) (इस प्रकार)
२. कहना चाहिये : "जो कुछ भी मैं (उचित) समझता हूँ उसको कर्म द्वारा प्रतिपादन करता हूँ
३. और उपायसे प्रारम्भ करता हूँ। और मेरे मनमें यह मुख्य उपाय है जो इस प्रयोजनमें आप लोगोंको
४. आदेश (दिया गया है)। क्योंकि आप बहुत सहस्र प्राणियोंके बीच नियुक्त हैं (इस उद्देश्यसे कि) मनुष्योंका प्रणय (प्रेम) प्राप्त कर सकें। सभी
५. मनुष्य मेरी प्रजा (सन्तानके समान) हैं। जिस प्रकार मैं अपनी प्रजा (सन्तान)के लिए कामना करता हूँ कि वह सभी हित और सुख–इहलौकिक (और)
६. पारलौकिक—को प्राप्त करे उसी प्रकार (सभी) मनुष्योंके लिए भी कामना करता हूँ। आप नहीं समझते हैं कि मेरा उद्देश्य कहाँतक

७. आता है। कोई एक पुरुष केवल इतना ही समझता, वह भी पूरा नहीं, उसके एक अंशको। अब इसपर आप पूरा ध्यान दें,
८. क्योंकि यह नीति अच्छी तरहसे स्थापित है। ऐसा भी कोई पुरुष हो सकता है जिसको बन्धन (कारागार) अथवा परिक्लेश (शारीरिक कष्ट) का दण्ड मिला हो, किन्तु इस सम्बन्धमें
९. अकस्मात् (बिना उचित कारणके) भी बन्धन हो सकता है और फलतः अन्य व्यक्ति बहुत दुःखी हो सकते हैं। इसलिए इच्छा करनी चाहिये
१०. आपको कि आप मध्यम (निष्पक्ष) मार्गका अनुसरण करें। किन्तु इन (निम्नांकित) प्रवृत्तियोंसे सफलता नहीं मिलती है, यथा ईर्ष्या, आशुलोप,[२]
११. नैष्ठुर्य, त्वरा, अनावृत्ति,[३] आलस्य और क्लमथ (तन्द्रा)। इसलिए आप लोगोंको इच्छा करनी चाहिये कि इस प्रकारके
१२. दोष आप लोगोंमें न हों। इस सबके मूलमें है अनाशुलोप और अत्वरा। जो बराबर क्लान्त होते रहते हैं
१३. वे उत्कर्षकी ओर न चल सकते हैं और न प्रयत्न कर सकते हैं किन्तु आपको चलना है, आगे बढ़ना है और लक्ष्य प्राप्त करना है। इसको इस प्रकारसे आप देखें जिससे आपको कहा जाय
१४. "आप परस्पर देखें कि देवानां प्रिय (राजा)की इस इस प्रकारकी आज्ञा है।" इन आज्ञाओंका पालन महाफलवाला है और
१५. (उनकी अवज्ञा) महा हानिकर। जो आज्ञापालनमें असमर्थ हैं उनको न तो स्वर्गकी प्राप्ति होती है और न राज्य (कृपा)।
१६. क्योंकि मेरे मतमें इस कार्यमें अत्यधिक मनोयोगके दो फल[४] हैं। (मेरे) इस (अनुशासन)का पालन करते हुए स्वर्ग
१७. (आप) पायेंगे और मुझसे उऋण भी होंगे। यह (धर्म-) लिपि तिष्य नक्षत्रमें सुननी चाहिये,
१८. तिष्य नक्षत्रके बीचमें भी और (किसी) एक पुरुष द्वारा क्षण-क्षणमें भी सुननी चाहिये। ऐसा करते हुए आप
१९. (आज्ञाके) सम्पादनमें समर्थ होंगे। इस प्रयोजनसे यह (धर्म-)लिपि लिखायी गयी जिससे यहाँके
२०. नगर-व्यावहारक निरन्तर (सब) समय चेष्टा करें जिससे बिना किसी कारणके परिबाध (कारागृह) अथवा
२१. बिना किसी कारणके परिक्लेश (शारीरिक कष्ट)का दण्ड न मिले। इस प्रयोजनके लिए मैं महामात्रोंको पाँच-पाँच वर्षों
२२. के अन्तरसे दौरेपर भेजूँगा जो अकर्कश, अचण्ड, श्लक्ष्णारम्भ[५] (सरल) हैं और मेरे उद्देश्यको जानते हुए वे ऐसा
२३. करेंगे जैसा मेरा आदेश है। किन्तु उज्जयिनीसे कुमार (राज्यपाल) इस प्रयोजनके लिए दौरेपर भेजेंगे
२४. इसी प्रकारके वर्गको जो तीन वर्षसे अधिक समय नहीं बीतने देंगे। इसी प्रकार तक्षशिलासे भी। जब
२५. महामात्र अनुसंयान[६] (दौरे) पर निकलेंगे तब वे अपने कर्तव्योंकी अवहेलना न करते हुए मेरे इस आदेशको जानेंगे
२६. और ऐसा कार्य भी करेंगे जैसा राजाका अनुशासन है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. नगल वियोहालका-नगर-न्यायाधीश। संस्कृत भाषामें 'व्यवह्'का अर्थ होता है व्यापार, व्यवहार अथवा न्याय करना। अर्थशास्त्र (द्वितीय अधिकरण)में वर्णित नागरक अथवा नागरिक नामक कार्याधिकारीसे इसका समीकरण हो सकता है।
२. मानसिक सन्तुलनका शीघ्र लोप हो जाना = क्रोध।
३. विवेक अथवा कार्यका प्रयोग नहीं करना।
४. दुयाहले = सं० द्विफलः। किसी-किसीके मतमें 'द्वयाहारः' जो ठीक नहीं जान पड़ता।
५. सखिनालंभेका सं० रूप किसीके अनुसार 'सक्षीणालम्भा' 'जिसकी प्रवृत्ति यज्ञीय पशुहिंसाकी ओरसे लुप्त हो गयी है'।
६. सं० सयान = यात्रा। अनुसंयान = निरीक्षणके लिए यात्रा = दौरा।

धौलीका द्वितीय पृथक् अभिलेख

(सीमान्त नीति)

१. देवानंपियस वचनेन तोसलियं कुमाले महामाता च वतविय [१] अं किछि दखामि हकं तं इ······
२. दुवालते च आलभेहं [२] एस च मे मोख्यमत दुवाला एतसि अठसि अंतुफेसु···मम···[४]
३. अथ पजाये इछामि हकं किंति सवेन हितसुखेन हिदलोकिक पाललोकिकाये[१] पूजेवू ति हेवं···[५]
४. सिया अंतानं अविजितानं किछंदे सुलाजा अफेसु···[६]···मव[२] इछ मम अंतेसु···[३] पापुनेवु ते इति देवानंपिय···अनुविगिन ममाये ।
५. हुवेवू ति अस्वसेवु च सुखमेव लहेवु ममते नो दुखं हेवं···[४]नेवू इति खमिसतिने देवानंपिये अफाका[५] ति ए चकिये खमितवे मम निमितं व च धंमं चलेवू
६. हिदलोकिक पललोकं च आलाधयेवू [७] एतसि अठसि हकं अनुसासामि तुफे अनने एतकेन हकं अनुसासितु छंदं च वेदितु आ हि धिति पटिंना च ममा
७. अजला [८] से हेवं कटु कंमे चलितविये अस्वास···चितानि एन पापुनेवू इति अथ पिता तथ देवानंपिये अफाक अथा च अतानं हेवं देवानंपिये अनुकंपति अफे
८. अथा च पजा हेवं मये देवानंपियस [९] से हकं अनुसासितु छंदं च वेदितु तुफाक देसावुतिके होसामि एताये अठाये [१०] पटिबला हि तुफे अस्वासनाये हितसुखाये च तेस
९. हिदलोकिक पाललोकिकाये [११] हेवं च कलंतं तुफे स्वगं आलाधयिसथ मम च आननियं एहथ [१२] एताये च अठाये इयं लिपि लिखिता हिद एन महामाता स्वसतं सम[६]
१०. पुजिसंति अस्वासनाये धंमचलनाये च तेस अंतानं [१३] इयं च लिपि अनुचातुंमासं तिसेन नखतेन सोतविया [१४] कामं चु खणसि खनसि[७] अंतला पि तिसेन एकेन पि
११. सोतविय [१५] हेवं कलंतं तुफे चघथ संपटिपादयितवे [१६]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियस्य वचनेन तोसल्यां कुमारः महामात्रा च वक्तव्याः । यत् किञ्चित् पश्यामि अहं तत् इ [च्छामि]
२. द्वारतः च आरभे एतत् च मे मुख्यमतम् द्वारम् एतस्य अर्थस्य यत् युष्मासु···मम [अनुशिष्टिः] ।
३. अथ प्रजायै इच्छामि अहम् किमिति ? सर्वेण हितसुखेन इहलौकिपारलौकिकेन युज्येरन् इति एवं···।
४. स्यात् अन्तानाम् अविजितानाम् (इयं जिज्ञासा)—"किं छन्दः स्वित् राजा अस्मासु ?" इति ।···एतका एव मे इच्छा अन्तेषु···प्राप्णुयुः इति देवानां प्रियः [इच्छति] अनुद्विग्नाः मया
५. भवेयुः आश्वस्युः सुखम् एव च लभेरन् मत्तः न दुःखम् । एवं [प्रा] प्णुयुः इति"—"क्षमिष्यते नः देवानां प्रियः यत् शक्यं क्षन्तुम् ।" मम निमित्तं च धर्मं चरेयुः
६. इहलौकिकं पारलौकिकं च आराधयेयुः । एतस्मै अर्थाय अहं युष्मान् अनुशास्मि । अनृणः अहम् एतकेन । युष्मान् अनुशिष्य छन्दं च वेद-यित्वा या हि धृतिः प्रतिज्ञा च मम
७. अचला । तत् एवं कृत्वा कर्म चरितव्यम् । आश्वासनीयाः च ते—येन प्राप्नुयुः—"यथा पिता तथा देवानां प्रियः युष्माकम् । यथा च आत्मानम् एव देवानां प्रियः अनुकम्पते
८. यथा प्रजाः एवं वयं देवानां प्रियस्य । तत् अहम् [युष्मान्] अनुशिष्य छन्दं च वेदयित्वा देश्यायुक्तिकः भविष्यामि एतस्मिन् अर्थे । प्रतिबलाः हि यूयम् आश्वासनाय हितसुखाय च तेषाम्
९. ऐहलौकिक-पारलौकिकाय । एवं च कुर्वन्तः यूयं स्वर्गम् आराधयिष्यथ मम च आनृण्यम् एष्यथ । एताय च अर्थाय इयं लिपिः लेखिता इह येन महामात्राः शाश्वतं समयं
१०. युज्येरन् आश्वासनाय च धर्माचरणाय च तेषाम् अन्तानाम् । इयं च लिपिः अनुचातुर्मासं तिष्ये नक्षत्रे श्रोतव्या । कामं तु क्षणे क्षणे अन्तरा अपि तिष्यात् एकेन अपि
११. श्रोतव्या । एवं कुर्वन्तः यूयं शक्यथ सम्प्रतिपादयितुम् ।

पाठ टिप्पणी

१. 'पाललोकिकेन' पढ़ा जा सकता है, जैसा कि प्रथम पृथक् अभिलेखमें पाया जाता है।
२. ब्यूलर 'मवे' । 'हेवमेव' भी पढ़ा जा सकता है ।
३. पूर्ति 'किंति' ।
४. पूर्ति 'पापुनेवू' ।
५. सेना और ब्यूलर 'अफाकं' ।

६. 'सस्वतं समयं' पाठ अधिक युक्त है।
७. 'सि' शब्दखण्ड पंक्तिके ऊपर उत्कीर्ण है।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रियके वचन (आज्ञा)से तोसलीमें कुमार[1] (राज्यपाल) और महामात्रोंको ऐसा कहना चाहिये : "जो कुछ भी मैं उचित समझता हूँ उसकी मैं इच्छा करता हूँ

२. और विविध उपायोंसे उसका सम्पादन करता हूँ। यह मेरे मतमें मुख्य उपाय है इस प्रयोजनकी सिद्धिके लिए जो आप लोगोंमें मेरा अनुशासन है।

३. जिस प्रकार मैं अपनी सन्तानोंके लिए इच्छा करता हूँ कि वे सभी हित-सुख—इहलौकिक और पारलौकिक—से युक्त हों इसी प्रकार''''''।

४. शायद[2] मेरे अविजित अन्तों (सीमावर्ती प्रदेशों अथवा जातियों)को यह जिज्ञासा हो सकती है—"हम लोगोंके सम्बन्धमें राजाकी क्या इच्छा[3] है ? इति।" यही मेरी इच्छा है अन्तोंके बारेमें कि वे जानें कि देवानां प्रिय यह चाहते हैं वे मुझसे अनुद्विग्न

५. होवें, आश्वस्त होवें, सुख प्राप्त करें, दुःख नहीं।" वे इसी प्रकार जानें—"देवानां प्रिय हम लोगोंको क्षमा करेंगे जहाँतक क्षमा करना शक्य है।" और मेरे निमित्त वे धर्मका आचरण करें

६. और इहलौकिक और पारलौकिक (सुख) की प्राप्ति करें। इस प्रयोजनके लिए मैं आपको आज्ञा देता हूँ जिससे मैं उऋण हो जाऊँ आपको आज्ञा देकर और अपनी इच्छा बताकर जो मेरी धृति और मेरी अचल प्रतिज्ञा है।

७. अतः इस प्रकार करके कर्तव्यका पालन करना चाहिये। उनको आश्वासन देना चाहिये जिससे वे जानें—"जैसे पिता वैसे देवानां प्रिय हमारे लिए। जैसे अपने पर वैसे देवानां प्रिय हमारे ऊपर अनुकम्पा करते हैं;

८. जैसी (अपनी) सन्तान वैसे हम देवानां प्रियके।" इसलिए मैं आप लोगोंको आज्ञा देकर और अपनी इच्छा बतलाकार इस प्रयोजनसे सभी प्रदेशोंमें आयुक्तक[4] (नामक अधिकारी) उपदिष्ट (नियुक्त) करूँगा। क्योंकि आप उनको आश्वासन देनेमें समर्थ हैं और उनके हित ओर सुख—

९. इहलौकिक तथा पारलौकिक—प्राप्त करानेमें भी। ऐसा करते हुए आप स्वर्ग प्राप्त करेंगे और मुझसे उऋण भी हो जायेंगे। इस प्रयोजनके लिए यह (धर्म-) लिपि लिखायी गयी जिससे महामात्र शाश्वत् काल (निरन्तर)[5]

१०. प्रयत्न करें उन अन्तोंके आश्वासन और धर्माचरणके लिए। यह धर्मलिपि प्रति चातुर्मास्य तिष्य नक्षत्रमें सुनी जानी चाहिये। किन्तु इच्छानुसार क्षण-क्षणमें तिष्य-के अन्तरमें भी

११. सुनी जानी चाहिये। ऐसा करते हुए आप (मेरी आज्ञाका) सम्पादन करनेमें समर्थ[6] होंगे।

भाषान्तर टिप्पणी

१. राजाकी प्रधान रानीको 'महिषी' और उसके पुत्रको 'कुमार' कहा जाता था। ये राजकुमार प्रमुख प्रदेशोंके राज्यपाल नियुक्त होते थे।

२. यह इस वाक्यका प्रथम शब्द है न कि इसके पहलेके वाक्यका अन्तिम जैसा कि कुछ विद्वानोंने माना है। तु० दिल्ली-टोपरा स्तम्भ लेख, प० ४-५।

३. कर्न (ज० रा० ए० सो०, १८८०-३८१)के अनुसार 'सु' स० 'स्वित्'का रूपान्तर है। तु० धौली प्रथम पृथक् अभिलेख, पं० ४ मे 'गच्छेम सु' और दिल्ली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख १, पं० ६,७,८ मे 'किनसु'।

४. देसावुतिके = सं० देश्यायुक्तिकः। यह बहुव्रीहि समास 'अहं'का विशेषण है। इसका अर्थ है 'जिसके आयुक्तक (अधिकारी) दिष्ट [उपदिष्ट] हो चुके हों। 'आयुक्तक' के लिए देखिये अर्थशास्त्र ५.४ (आयुक्त-प्रदिष्टाया भूमावनुज्ञतिः प्रविशेत्)।

५. स्वसतं समं = स० शाश्वतीः समाः। 'समा' और 'समय' दोनों एक ही मूल धातुसे व्युत्पन्न हैं।

६. 'चघथ' शब्दके कई अर्थ किये गये है। तु० छत्तीसगढी 'चघ्' और हिन्दी 'चाह'। किन्तु इसका अधिक प्रकृत अर्थ 'चक्' (= स० 'शक्') से निकलता है।

जौगड शिला

प्रथम अभिलेख

(जीवदया : पशुयाग निषेध)

१. इयं धंमलिपी खेपिंगलसि पवतसि देवानंपियेन पियदसिना लाजिना लिखापिता [१] हिद नो किछि जीवं आलभितु पजोहितविये[२]

२. नो पि च समाजे कटविये [३] बहुकं हि दोसं[1] समाजस[2] द्रखति[3] देवानंपिये पियदसी लाजा [४] अथि पि चु एकतिया समाजा साधुमता देवानंपियस

३. पिय दसिने[4] लाजिने [५] पुलुवं महानससि देवानंपियसि पियदसिने लाजिने अनुदिवसं बहूनि पानसतसहसानि आलभियिसु सूपठाये [६]

४. से अज अदा इयं धंमलिपी लिखिता तिंनि येव पानानि आलंभियंति[5] दुवे मजूला एके मिगे से पि चु मिगे नो धुवं [७] एतानि पि चु तिंनि पानानि

५. पछा नो आलभियिसंति

संस्कृतच्छाया

१. इयं धर्मलिपिः कपिङ्गले पर्वते देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा लेखिता। इह न किञ्चित् जीवम् आलभ्य प्रहोतव्यम्।

२. न अपि च समाजः कर्तव्यः। बहुकं हि दोषं समाजे पश्यति देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा। सन्ति अपि तु एकतराः समाजाः साधुमताः देवानां प्रियस्य

३. प्रियदर्शिनः राज्ञः। पूर्वं महानसे देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः अनुदिवसं बहूनि प्राणशतसहस्राणि आलप्सत सूपार्थाय।

४. तत् अद्य यदा इयं धर्मलिपिः लेखिता त्रयः एव प्राणाः आलभ्यन्ते द्वौ मयूरौ एकः मृगः सः अपि च मृगः न ध्रुवम्। एते अपि च त्रयः प्राणाः

५. पश्चात् न आलप्स्यन्ते।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'खपिंगलसि'। परन्तु शिलापर 'ख'की 'ए' मात्रा स्पष्ट उत्कीर्ण है।

२. वही 'समाजसि'।

३. 'द'के ऊपर और नीचे दोनों ओर एक आड़ी रेखा (संभवतः रेफका द्योतक) उत्कीर्ण है। उत्कीर्णकके असमञ्जसके कारण ऐसा हुआ। सेना और ब्यूलर केवल 'दखति' पढ़ते हैं।

४. सेना और ब्यूलर 'पियदसिने'।

५. वही 'आलभियंति'।

हिन्दी भाषान्तर

१. यह धर्मलिपि[1] खेपिंगल पर्वतपर देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखायी गयी। यहाँ किसी जीवको मारकर होम नहीं करना चाहिये।

२. और न समाज करना चाहिये। क्योंकि बहुत-से दोष समाजमें देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा देखते हैं। किन्तु है एक समाज जो साधु (अच्छा) है देवानां प्रिय

३. प्रियदर्शी राजाके मतमें। पूर्व कालमें देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाके महानस (पाकशाला)में प्रतिदिन लाखों जीवधारी सूपके लिए मारे जाते थे।

४. परन्तु आज अब यह धर्मलिपि लिखायी गयी केवल तीन जीवधारी मारे जायेंगे—दो मोर (और) एक मृग—और वह मृग भी निश्चित रूपसे नहीं। किन्तु ये तीन प्राणी भी

५. पीछे नहीं मारे जायेंगे।

भाषान्तर टिप्पणी

१. यह पर्वतका नाम है। इसका भात्वर्थ है 'जो आकाशमे पीला दिखायी पड़े'।

द्वितीय अभिलेख

(मानव और पशुओंकी चिकित्सा)

१. सवत विजितसि देवानंपियस पियदसिने लाजिने ए वा पि अंता अथा चोडा पंडिया सतियपुते······ी अंतियोके नाम
२. योन लाजा ए वा पि तस अंतियोकस सामंता लाजाने सवत देवानंपियेन पियदसिना लाजि······चिकिसा च
३. पसुचिकिसा च [१] ओसधानि आनि मुनिसोपगानि पसुओपगानि च अतत नथि सवत······च अतत नथि
४. सवत्र' हालापिता च लोपापिता च [२] मगेसु उदुपानानि खानापितानि लुखानि च······

संस्कृतच्छाया

१. सर्वत्र विजिते देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः ये वा अपि अन्ताः—यथा चोडाः पाण्ड्याः सत्यपुत्रः···[ताम्रपर्णी]ी अन्तियोकः नाम
२. यवनराजः ये वापि तस्य अन्तियोकस्य सामन्ताः राजानः सर्वत्र देवानां प्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा···[मनुष्य] चिकित्सा च
३. पशुचिकित्सा च । औषधानि (ओषधयः) यानि मनुष्योपगानि पशूपगानि च यत्र यत्र न सन्ति सर्वत्र···च यत्र यत्र न सन्ति
४. सर्वत्र हारितानि च रोपितानि च । मार्गेषु उदपानानि खानितानि वृक्षाश्च (रोपिताः)

पाठ टिप्पणी

१. सेना 'सावत'; ब्यूलर 'सवत' ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके साम्राज्यमें सर्वत्र और सीमावर्ती राज्योंमें भी, यथा चोल, पाण्ड्य, सत्यपुत्र···अन्तियोक नाम
२. यवन राजा और उस अन्तियोकके सामन्त[1] (पड़ोसी) यवन राजाओं (के देशमें भी) सर्वत्र देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा (द्वारा) [दो प्रकारकी चिकित्सायें—मनुष्य-] चिकित्सा और
३. पशुचिकित्सा [स्थापित की गयीं] ओषधियाँ जो मनुष्योपयोगी और पशूपयोगी जहाँ-जहाँ नहीं हैं (सर्वत्र···जहाँ-जहाँ नहीं हैं)
४. सर्वत्र बाहरसे मँगायी गयी हैं और रोपी गयी हैं । मार्गोंमें कुएँ खोदे गये हैं और वृक्ष [रोपे गये हैं पशु और मनुष्योंके उपयोगके लिए ।[3]]

भाषान्तर टिप्पणी

१. यहाँ सामन्तका अर्थ 'अधीन' नहीं अपितु 'पड़ोसी' है ।
२. भूलसे दो बार उत्कीर्ण है ।
३. धौली शिला-लेखमें कोष्ठान्तरित शब्द सुरक्षित है जब कि जौगडमें टूट गये हैं ।

तृतीय अभिलेख

(धर्मप्रचार : पञ्चवर्षीय दौरा)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] दुवादस वसाभिसितेन मे इयं आ······च पादेसिके च
२. पंचसु पंचसु वसेसु अनुसयानं निखमावू अथा अंनाये पि कंमने······सा मित संथुतेस······
३. नातिसु च बंभनसमनेहि साधु दाने जीवेसु अनालंभे साधु······यि······
४. हेतुते च वियंजनते च

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया इदम् आज्ञापितं···च प्रादेशिकाः च
२. पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु अनुसंयानं निष्कामन्तु (एतस्मै एव) अर्थाय अन्यस्मै अपि कर्मणे···[शुश्रूषा मित्र-संस्तुत-
३. ज्ञातिकेभ्यः च ब्राह्मण-श्रमणेभ्यः साधु दानं जीवानाम् अनालम्भः साधु···[आज्ञापयिष्यति]···
४. हेतुतः च व्यञ्जनतः च।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा : "द्वादश वर्षाभिषिक्त[1] मेरे द्वारा यह [आज्ञप्त हुआ—" युक्त, रज्जुक और प्रादेशिक
२. पाँच-पाँच वर्षोंमें अनुसंयान (दौरे) पर निकले, जैसे अन्य कार्योंके लिए, [वैसे ही निम्नांकित नैतिक उपदेशके लिए भी—"माता-पिताकी शुश्रूषा साधु है] मित्र और परिचित [के साथ सम्यक् व्यवहार साधु है।]
३. ज्ञाति, ब्राह्मण और श्रमणको दान देना साधु है। जीवोंका अवध साधु [है] अल्प संग्रह और अल्प व्यय साधु है।" और परिषद् युक्तोंको आज्ञा देगी युक्तोंको इन (नैतिक उपदेशों)के पञ्जीकरणके लिए
५. हेतु (कारण) और व्यञ्जन (अक्षर)के साथ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. यह 'मे (मेरे)'का विशेषण है। इसी रूपमें रखा गया है। दूसरा भाषान्तर 'अभिषेकके बारह वर्ष पश्चात्' अव्यय रूप है। इससे अर्थ निकलता है किन्तु यह अविकल भाषान्तर नहीं है।

चतुर्थ अभिलेख

(धर्मानुष्ठान)

१. अतिकंतं अंतलं बहूनि वससतानि वढिते व पानालंभे·········[१]
२. से अज देवनंपियस पियदसिने लाजिने धंमचलनेन भेल······
३. दिवियानि लुपानि दसयितु[1] मुनिसानं [२] आदिसे बहूहि वससते······
४. धंमानुसथिया अनालंभे पानानं अविहिसा भूतानं नातिसु संप······[३]
५. एस अंने च बहुविधे धंमचलने वढिते [४] वढयि·········
६. पियदसिने लाजिने पवढयिसंति येव धंमचल············[५]
७. धंमचलने पि चु नो होति·········
८. हीनि च मा आलोचयि·········

संस्कृतच्छाया

१. अतिक्रान्तम् अन्तरं बहूनां वर्षशतानां वर्द्धितः वा प्राणालम्भः··· ·· ।
२. तत् अद्य देवानां प्रियस्य प्रियदर्शिनः राज्ञः धर्माचरणेन भेरी [घोषः]·· ·
३. दिव्यानि रूपाणि दर्शयित्वा मनुष्येभ्यः । यादृक् बहुभिः वर्षशतैः
४. धर्मानुशिष्ट्या अनालम्भः प्राणानाम् अविहिंसा भूतानां ज्ञातिषु संप्र[तिपत्तिः]······।
५. एतत् अन्यं बहुविधं धर्माचरणं वर्द्धितम् । वर्द्धयि [ष्यति]·· ·
६. प्रियदर्शिनः राज्ञः प्रवर्द्धयिष्यन्ति एव धर्माचरणं······
७. धर्माचरणम् अपि तु न भवति····· [अ]
८. हानिः च मा आरोचयेयुः ।

पाठ टिप्पणी

१ सेना 'दुसयितु'; ब्यूलर 'दसयितुः' ।

हिन्दी भाषान्तर

१. बहुत सौ वर्षोंका अन्तर व्यतीत हुआ बढ़ता ही गया जीवोंका वध [प्राणियोंके प्रति हिंसा, जातिके प्रति अशिष्ट व्यवहार, श्रमण और ब्राह्मणोंके प्रति अशिष्टता ।]
२. किन्तु आज देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाके धर्माचरणसे भेरी-[घोष धर्मघोषमें परिवर्तित हो गया जनताको स्वर्गीय विमान, हस्ति, अग्नि-स्कन्ध और अन्य]
३. दिव्य रूपोंको दिखानेसे । जैसे कि पहले बहुत सौ वर्षोंतक [नहीं हुआ आज देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाके]
४. धर्मानुशासनसे प्राणियोंका अवोध, जीवधारियोंके प्रति अहिंसा, जातिके प्रति सद्व्यवहार, श्रमण और ब्राह्मणके प्रति सद्व्यवहार, माता-पिताकी शुश्रूषा, वृद्धोंकी शुश्रूषा बढ़ी है ।
५. ऐसे और अन्य विविध उपायोंसे धर्माचरण बढ़ा है । और बढ़ायेंगे ही देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा इस धर्माचरणको । [पुत्र, नाती और पनाती देवानां प्रिय
६. प्रियदर्शी राजाके बढ़ायेंगे इस धर्माचरणको कल्पान्ततक और धर्म और शीलमें स्थित रहते हुए धर्मका अनुशासन करेंगे । यह श्रेष्ठ कर्म है जो धर्मानुशासन है ।]
७. किन्तु धर्माचरण नहीं होता है अशील द्वारा । [इसीलिए इस अर्थ (धर्माचरण) की वृद्धि और अहानि साधु है । इस प्रयोजनके लिए यह लिखाया गया कि इस उद्देश्यकी वृद्धिमें लोग लगें]
८. और इसकी हानि न स्वीकार करें । [द्वादशवर्षाभिषिक्त देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा यहाँ यह लिखाया गया ।]

भाषान्तर टिप्पणी[1]

१. द्रष्टव्य, गिरनार अभिलेखकी टिप्पणी ।

पञ्चम अभिलेख

(धर्म महामात्रोंकी नियुक्ति)

१. देवानं पिये पियद·········[१]
२. नती[1] व पलं च ते······
३. सुपदालये [७] से अ······
४. धंमाधियाना[2]······
५. ······भनिमि······
६. मोखाये······
७. ए वा······
८. ············

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियद[र्शी]·········
२. नप्तारः वा परं च ते [भ्यः]
३. सुप्रदार्यम्। तत् अ [तिक्रान्तम्]······
४. धर्माधिष्ठानाय·········
५. ·········
६. मोक्षाय
७. ······
८. ······

पाठ टिप्पणी

१. सेना 'नति' ; ब्यूलर 'नति'।
२. ब्यूलर 'ष्ठाना'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी [राजाने ऐसा कहा : "कल्याण दुष्कर है। जो कल्याणका प्रारम्भ करता है वह दुष्कर कर्म करता है। किन्तु मेरे द्वारा बहुत कल्याण हुआ है। इसलिए जो मेरे पुत्र]
२. नाती अथवा उनके परे [सन्तान होगी वह कल्पान्ततक जो (इस धर्मका) अनुसरण करेगी वह सुकृत करेगी। जो इसके एक अंशको हानि पहुँचायेगा वह दुष्कृत करेगा। क्योंकि पाप निश्चय ही
३. शीघ्रतासे बढ़ता है।[1] किन्तु अन्तराल व्यतीत हुआ [पूर्वकालमें धर्म महामात्र (नामक अधिकारी) नहीं थे। आज त्रयोदश वर्षाभिषिक्त मेरे द्वारा धर्ममहामात्र नामक अधिकारी नियुक्त हुए। वे सब पाषण्डों (धार्मिक सम्प्रदायों) में व्याप्त हैं]
४. धर्मकी स्थापनाके लिए, [धर्मवृद्धिके लिए और धर्मयुक्तके हित-सुखके लिए, यहाँतक कि यवन, कम्बोज, गान्धारोंमें; राष्ट्रिक-पैत्र्यणिकोंमें अथवा अन्य जो अपरान्त हैं उनमें भी; भृतकों और स्वामियोंमें
५. ब्राह्मण और वैश्योंमें अनाथ और श्रीमन्तोंमें धर्मयुक्तके हित-सुख और निर्विघ्नताके लिए और (जीवनके बन्धनोंसे उनकी)
६. मुक्तिके लिए। [यह बाल-बच्चेवाला है; आतुरसे आविष्ट है अथवा वृद्ध है—ऐसे लोगोंमें वे नियुक्त और व्याप्त हैं। यहाँ और बाहरके सब नगरोंमें, और सब अवरोधनोंमें भी मेरे भाइयों और बहनोंके]
७. अन्य [ज्ञातिवालोंमें सर्वत्र व्याप्त है। ये धर्ममहामात्र सर्वत्र नियुक्त हैं यह निश्चय रूपसे जाननेके लिए कि कौन धर्ममें अनुरक्त है, कौन धर्ममें स्थित है अथवा कौन दान युक्त है। इस प्रयोजनके लिए
८. यह धर्मलिपि लिखायी गयी जिससे यह चिरस्थायी होवे और मेरी प्रजा इसका अनुसरण करे।]

भाषान्तर टिप्पणी

१. ब्यूलर 'सुपदालये' को सं० 'सुप्रदार्ये' का प्राकृत रूप समझते हैं। गिरनार और शहबाजगढ़ीमें इसका पर्याय 'सुकरं' (=करनेमें सरल) दिया हुआ है। ऐसा लगता है कि 'पदालये' 'पद' से बना हुआ है। तु प्राकृत महालय (महत्से)।

षष्ठ अभिलेख

(प्रतिवेदना)

१. ···नंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] अतिकंतं अंतलं नो हूतपुलुवे सवं कालं अठकंमे पटिवेदना व [२] से ममया कटे [३] सवं कालं
२. ······स मे अंते ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनीतसि उयानसि च सवत पटिवेदका जनस अठं प्रतिवेदयंतु[1] मे ति [४] सवत च जनस
३. ······कं [५] अं पि किंछि मुखते आनपयामि दापकं वा सावकं वा ए वा महामाते हि अतियायिके आलोपिते होति तसि अठसि विवादे व
४. ······लिसायं[2] आनंतलियं पटिवेदेतवियं मे ति सवत सवं कालं [६] हेवं मे अनुसथे [७] नथि हि मे तोसे उठानसि अठसंतीलनाय च [८]
५. ······मे सवलोकहिते [९] तस च पन इयं मूले उठाने च अठसंतीलना च [१०] नथि हि कंमतला···नियं येहं ति हिद च कानि सुखयामि पलत स स्वगं आलाधयंतू ति [१२] एताये अठाये इयं धंमलिपी खिखिता चिलठिकीता होत[3]
६. ······नियं येहं ति हिद च कानि सुखयामि पलत सस्वगं आलाधयंतू ति [१२] एताये अठाये इयं धंमलिपी लिखिता चिलठिकीता होतु[3]
७. ······ता[4] मे पलकमंतु सवलोकहिताये [१३] दुकले चु इय अंनत अगेन पलकमेन [१४]

संस्कृतच्छाया

१. [देवा]नां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । अतिक्रान्तम् अन्तरं न भूतपूर्व सर्वं कालम् अर्थ-कर्म प्रतिवेदना वा । तत् मया कृतम् । सर्वं कालं
२. [भुञ्जमान]स्य मे अन्ते अवरोधने गर्भागारे व्रजे विनीते उद्याने च सर्वत्र प्रतिवेदकाः जनस्य अर्थं प्रतिवेदयन्तु मे इति । सर्वत्र च जनस्य
३. [अर्थं करिष्यामि] अहम् । यत् अपि किञ्चित् मुखतः आज्ञापयामि दापकं वा श्रावकं वा; यत् वा पुनः महामात्रेभ्यः आत्ययिकम् आरोपितं भवति तस्मै अर्थाय विवादः वा
४. [निध्यातिः वा प] रिषदि आनन्तर्येण प्रतिवेदयितव्यं मे इति सर्वत्र सर्वं कालम् । एवम् मे अनुशिष्टिः । नास्ति हि मे तोषः उत्थाने अर्थ-संतीरणायां च ।
५. [कर्तव्यमतं हि] मे सर्वलोक हितम् । तस्य च पुनः इदं मूलम् उत्थानम् अर्थसंतीरणा च । नास्ति हि कर्मान्तरं सर्वलोकहितात् । यत् च किञ्चित् प्रक्रमे अहं
६. [किमिति ? भूतानाम् आ] नृण्यम् एयाम् इति इह च कान् सुखयामि परत्र च स्वर्गम् आराधयन्तु इति । एतस्मै अर्थाय इयं धर्म लिपि लेखिता चिरस्थितिका भवतु
७. [तथा च मे पुत्राः च पौ] त्राः मे प्रक्रमन्तां सर्वलोकहिताय । दुष्करं तु इदम् अन्यत्र अग्र्यात् प्रक्रमात् ।

पाठ टिप्पणी

१. 'प्र'में 'र' बाँयी ओर एक आधारवत् रेखासे व्यक्त किया गया है। जिसके कारण 'प्र' 'पे' पढ़ा जा सकता है।
२. सेना और ब्यूलर '०साय' पढ़ते हैं।
३. ब्यूलर 'होत' पढ़ते हैं।
४. 'ता'के पहले 'पो' शब्दखण्डके कुछ अंश दिखायी पड़ते हैं।

हिन्दी भाषान्तर

१. [देवा] नां प्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"अन्तराल व्यतीत हुआ पहले सब समय अर्थकर्म (राज्यका आवश्यक कार्य) अथवा प्रतिवेदना (सूचना) नहीं होती थी। इसलिए मैंने (ऐसा) किया (जिससे) सब समय
२. मुझको भोजन करते हुए,[1] अन्तःपुर, अवरोधन (स्त्रियोंके लिए घिरा हुआ स्थान), गर्भागार, व्रज, विनीत (पालकी) और उद्यानमें सर्वत्र प्रतिवेदक जनताके कार्यकी सूचना दें। सर्वत्र जनताका
३. (कार्य करता हूँ। मैं। जो कुछ मैं मुखसे आज्ञा करता हूँ (स्वयं) दान अथवा विज्ञप्तिके सम्बन्धमें, अथवा यदि कोई आवश्यक कार्य महामात्रोंको सौंप दूँ और इस सम्बन्धमें परिषद्में कोई विवाद खड़ा हो अथवा
४. पुनर्विचारके लिए प्रस्ताव हो तो अविलम्ब मुझे सर्वत्र सब समय इसकी सूचना मिलनी चाहिये। ऐसी मेरी आज्ञा है। उत्थान और कार्य-सम्पादनमें मुझे सन्तोष नहीं होता।
५. मेरे विचारसे सर्वलोकहित मेरा कर्तव्य है, और उसका मूल है उत्थान और कार्य-सम्पादन। सर्वलोकहितसे बढ़कर दूसरा कोई कर्म नहीं। जो कुछ भी मैं पराक्रम करता हूँ इसलिए कि
६. (जिससे प्राणियोंके प्रति कर्तव्यसे) उऋण हो जाऊँ, कुछ लोगोंको इस लोकमें सुख पहुँचा सकूँ और वे परलोकमें स्वर्ग प्राप्त कर सकें। इस प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि लिखायी गयी जिससे यह चिरस्थायी होवे
७. तथा मेरे पुत्र, पौत्र सर्व लोकहितके लिए पराक्रम करें। उत्तम पराक्रमके बिना यह दुष्कर है।

भाषान्तर टिप्पणी

१. हुल्श्जने इसका अर्थ किया है 'जब मैं अवरोधनके भीतर भोजन करता रहूँ'। परन्तु 'अन्त' और 'अवरोधन' दोनों शब्द अधिकरण कारकमें हैं, अतः हुल्श्जका अर्थ ठीक नहीं बैठता।

सप्तम अभिलेख

(धार्मिक समता : संयम, भावशुद्धि)

१. ······दसी[1] लाजा सवत इछति सव पासंडा वसे···ति [१] सवे हि ते समयं भावसुधी च इछंति [२] मुनिसा च उचावुच छंदा उचावुच लागा [३]

२. ······सं[2] व कछंति [४] विपुले पि चा[3] दाने···धी च नीचे बाढं [५]

संस्कृतच्छाया

१. [देवानांप्रियः प्रिय] दर्शी राजा सर्वत्र इच्छति सर्वे पाषण्डाः वसे [युः] इति। सर्वे हि ते संयमं भावशुद्धिं च इच्छन्ति। मनुष्याः च उच्चावच-छन्दाः उच्चावचरागाः।

२. [ते सर्वम् एक दे) शं वा करिष्यन्ति। विपुलम् अपि च दानं [यस्य नास्ति संयमः भावशु]द्धिः च नित्या बाढम्।

पाठ टिप्पणी

१. 'दसी'के पूर्व शब्दखण्ड 'पिय'के कुछ अंश दिखायी पड़ते हैं।
२. पूर्ति 'एक-देसं'।
३. सेना और ब्यूलर 'च'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा इच्छा करते हैं (कि) सभी (धार्मिक) सम्प्रदाय सर्वत्र बसें, क्योंकि ये सभी आत्म-संयम और भावशुद्धि चाहते हैं। मनुष्य (विविध प्रकारकी) ऊँची-नीची इच्छाओंवाले और राग (आसक्ति) वान् होते हैं।

२. (वे सम्पूर्ण अथवा) आंशिक रूपसे (धर्मका पालन) करेंगे। जो बहुत अधिक दान [नहीं कर सकता उसमें भी संयम औव भाव-शु]द्धि नित्य बढ़ना चाहिये।[1]

भाषान्तर टिप्पणी

१. ब्यूलरने 'नीचे बाढं'का अर्थ 'नीचम् प्रशंसनीय' किया है।

अष्टम अभिलेख

(धर्मयात्रा)

१. ······विया अंनानि च एदि···मानि हुवंति नं [२] से देवानंपिये
२. पिय···दस[1]···ता [४] ततेस होति स···च दाने[2] च बुढानं दसने च
३. हिलंनपटि विधाने च···धंम पलिपुछा[3]···लामे होतिं देवानंपियस
४. पियदसिने लाजिने भाजे अ······

संस्कृतच्छाया

१. [अतिक्रान्तम् अन्तरं राजानः विहारयात्रां निरक्रमिषुः। तत्र मृग] व्यम् अन्यानि च ईद [शानि अभिरा] माणि भवन्ति। तत् देवानां प्रियः
२. प्रिय [दर्शी राजा] दश [वर्षाभिषिक्तः सन् निरक्रंस्त सम्बोधिम्। तेन अत्र धर्म या] त्रा। तत्र इदं भवति श्र [मण ब्राह्मणानां दर्शनं] च दानं च वृद्धानां दर्शनं च
३. हिरण्य-प्रतिविधानं च [जानपदस्य जनस्य दर्शनं धर्मानुशिष्टिः च] धर्मपरिपृच्छा [च। तदुपेयः एषः अ] भिरामः भवति देवानां प्रियस्य
४. प्रियदर्शिनः राज्ञः भागः अन्यः।

पाठ टिप्पणी

१. पूर्ति 'पियदसी लाजा दसवसाभिसित-'।
२. यह शब्द 'दानो'की तरह दिखायी पड़ता है।
३. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'पालिपुछा'।

हिन्दी भाषान्तर

१. (बहुत) अन्तराल बीता राजा लोग विहारयात्रापर जाया करते थे। उसमें मृगया तथा अन्य इसी प्रकारके मनोविलास निश्चित रूपसे होते थे।[1] किन्तु देवानां प्रिय
२. प्रियदर्शी राजा दश वर्षाभिषिक्त होनेपर सम्बोधि (बोधगया) गये। उनके द्वारा धर्मयात्रा (प्रचलित हुई)। उसमें यह होता है—श्रमण-ब्राह्मणोंका दर्शन और उनको दान, वृद्धोंका दर्शन और
३. धन द्वारा उनकी सहायता तथा जनपदके लोगोंका दर्शन और उनके लिए धर्मानुशासन एवं धार्मिक प्रश्न-परिप्रश्न। इसके अनुकूल यह बहुत सुन्दर है देवानां प्रिय
४. प्रियदर्शी राजाके (शासनका) दूसरा भाग।

भाषान्तर टिप्पणी

१. पिशेल (ग्रामेटिक पृ० १५०) के अनुसार 'न' सं. 'नूनं' का प्राकृत रूप है। शौरसेनी प्राकृतमें 'णं' का प्रयोग 'ननु' के अर्थमें होता है।

नवम अभिलेख

(धर्म मङ्गल)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा···पजुपदाये पवाससि एताये अंनाये च
२. हेदिसाये जने बहुकं···च मंगलं कलेति [३] से कटविये चेव खो मंगले [४]
३. अपफले चु खो एस हेदिसे म···[५] इयं चु[1]···सभटकसि संम्यापटिपति गुलून अपचिति पानेसु सयमे
४. समन बाभनानं दाने एस अंने···पितिना पि पुतेन पि यातिना पि सुवामिकेन ति इयं साधु इयं कटविये
५. ······से दाने अनुगहे वा आदिसे धंमदाने धंमानुगहे च [१०] से चु खो मितेन
६. ······यं साधु इमेन सकिये स्वगे आलाधयितवे [११] किं हि इयेन कटवियतला [१२]
७. ·········

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा·········प्रजोत्पादे प्रवासे एतस्मिन् अन्यस्मिन् च
२. एतादृशं जनः बहुकं·········च मङ्गलं कुर्वन्ति। तत् कर्तव्यं चैव खलु मङ्गलम्।
३. अल्पफलं तु खलु एतत् मङ्गलम्। इदं तु·········[दा] स भृतकेषु सम्प्रतिपत्तिः गुरूणाम् अपचितिः प्राणानां संयमः
४. श्रमण-ब्राह्मणेभ्यः दानम्। एतत् अन्य [त्]·········पित्रा अपि पुत्रेण अपि भ्रात्रा अपि स्वामिकेन अपि इदं साधु इदं कर्तव्यं।
५. [न तु एतादृ]शम् दानं वा अनुग्रहः वा यादृशं धर्मदानं धर्मानुग्रहश्च। तत् तु खलु मित्रेण
६. ·········[इ]दं साधु। अनेन शक्यः स्वर्गम् आराधयितुम्। किञ्च अनेन हि कर्तव्यतरम् ?
७. ·········

पाठ टिप्पणी

१. यह शब्द मूल प्रतिलिपिमें साफ दिखायी नहीं पड़ता।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजाने [इस प्रकार कहा—"लोग विविध प्रकारके ऊँच-नीच माङ्गलिक कृत्य करते हैं। बाधा, आवाह, विवाह, प्रजोत्पत्ति, प्रवासमें।] ऐसे ही अन्य अवसरोंपर
२. लोग इसी प्रकारके विविध मङ्गल कार्य करते हैं। और स्त्रियाँ तो बहुत और अनेक प्रकारके क्षुद्र और निरर्थक मङ्गल-कार्य करती हैं। तो मङ्गल कार्य तो निश्चय ही करना चाहिये।
३. किन्तु इस प्रकारके मङ्गल अल्पफलवाले होते हैं। परन्तु निम्नलिखित अर्थात् सदाचरण बहुत फलवाला होता है। इसमें निम्नाङ्कित सम्मिलित हैं, यथा, दास और नौकरके साथ उचित व्यवहार, गुरुजनोंके प्रति श्रद्धा, प्राणियोंके साथ संयम
४. श्रमण और ब्राह्मणोंको दान ये और इसी प्रकारके अन्य सद्गुण सदाचरण कहलाते हैं। इसलिए पिता, पुत्र, भाई और स्वामी द्वारा भी कहना चाहिये—"यह साधु है। यह कर्तव्य है।"
५. [इस प्रकारका कोई] दान अथवा अनुग्रह नहीं है जिस प्रकारका धर्मदान और धर्मानुग्रह। इसलिए निश्चित रूपसे मित्र
६. [जाति] और सहायक सभीको दूसरोंको उपदेश करना चाहिये—यह (धर्माचरण) साधु है। इससे स्वर्गकी प्राप्ति करना शक्य है। इससे बढ़कर और क्या कर्तव्य हो सकता है ?
७. ······

भाषान्तर टिप्पणी[1]

१. द्रष्टव्य, गिरनार अभिलेखकी टिप्पणी।

दशम अभिलेख

(धर्मशुश्रूषा)

१. ······यसो वा किटी वा इछति तदत्वाये आयतिये च जने धंमसुसूसं सुसूसतु मे
२. ······ति देवानंपिये पालतिकाये वा किंति सकले अपपलिसवे हुवेया ति [२]
३. ······लितिजितु[३] खुदकेन वा उसटेन वा [५] उसटेन चु दुकलतले

संस्कृतच्छाया

१. ·········यशः वा कीर्तिं वा इच्छति तदात्वे आयत्यां च जनः धर्मशुश्रूषां शुश्रूषतां मम
२. ·········देवानां प्रियः पारत्रिकाय वा किमिति ? सकलः अल्पपरिस्रवः स्यात् इति ।
३. ·········[प] रित्यज्य क्षुद्रकेण वा उच्छ्रितेन वा । उच्छ्रितेन तु दुष्करम् ।

हिन्दी भाषान्तर

१. [देवानां प्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा नहीं मानते कि यश अथवा कीर्तिसे विशेष लाभ होता है। वे केवल जो कुछ] यश और कीर्ति चाहते हैं [इस उद्देश्यसे कि] वर्तमान और भविष्यमें[१] लोग धर्मकी शुश्रूषाका व्यवहार करें ।

२. [इस कारणसे वे यश और कीर्ति चाह]ते हैं। देवानां प्रिय [जो कुछ] प्रयत्न करते हैं वह परलोकके लिए, जिससे कि लोग अल्प पाप करें।[२]

३. [वह पाप दुराचरण है। इस स्थितिको प्राप्त करना कठिन है] क्षुद्र अथवा उच्चके लिए [उत्तम उत्साहके बिना और दूसरे सभी उद्देश्योंको छोड़े बिना।] परन्तु उच्च वर्गके मनुष्यके लिए इसका सम्पादन और भी कठिन है ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. तदत्वाये आयतिये च = स. तदात्वे आयत्या च (तत्कालस्तु तदात्व स्यात् उत्तरः काल आयतिः। अमरकोश, आयत्या च तदात्वे च क्षमावानविशङ्कितः। कौटिल्य, ५. १.)

२. कई विद्वानोंने 'पलिसवे' को पालि 'परिस्सय' (= सं. परिश्रयः = पीडा, कष्ट, विपदा आदि) का रूप माना है। किन्तु सं. 'स्रु' (= प्रवाहित होना) से इसकी व्युत्पत्ति अधिक समीचीन है; इसका अर्थ वासनाका प्रवाह अथवा पाप ।

३. सं. परित्यज्य ।

चतुर्दश अभिलेख

(उपसंहार)

१. ······मझिमेन अथि विघटेन [१] नो हि सवे सवत घटिते [२] महंते हि विजये
२. ······स माधुलियाये किंति च जने तथा पटिपजेया [४] ए पि चु हेत
३. ·········

संस्कृतच्छाया

१. ···········मध्यमेन अस्ति विस्तृतेन। न हि सर्वं सर्वत्र घटितम्। महल्लकं हि विजितम्
२. ···········तत् माधुर्याय किमिति ? च जनः तथा प्रतिपद्येत। एतत् अपि तु स्यात्
३. ···········

हिन्दी भाषान्तर

१. [देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने इस धर्मलिपिको लिखवाया संक्षेपमें,] मध्यम रूपमें अथवा विस्तारसे। सब सर्वत्र नहीं घटित (उत्कीर्ण) है। साम्राज्य विशाल है।
२. [बहुत लिखा गया है और अधिक मैं लिखाऊँगा।······वर्णित है (विषयके)] माधुर्यके कारण जिसमे लोग इसका अनुसरण कर सकें। किन्तु जो कुछ भी अपूर्ण रूपसे लिखा है······
३. ·········

भाषान्तर टिप्पणी[१]

१. द्रष्टव्य, गिरनार अभिलेखकी टिप्पणी।

जौगडका प्रथम पृथक् अभिलेख

(राज्यका आदर्श : प्रजाके प्रति वात्सल्य)

१. देवानंपिये हेवं आहा [१] समापायं महामाता नगलवियोहलक हेवं वतविया [२] अं किछि दखामि हकं तं इछामि किंति कं कमन पटिपातयेहं

२. दुवालते च आलभेहं [३] एस च मे मोखियमत दुवालं अं तुफेसु अनुसथि [४] के हि बहुसु पानसहसेसु आयत पनयं गछेम सु मुनिसानं [५] सवमुना मे

३. पजा [६] अथ पजाये इछामि किंति मे सवेन हितसुखेन युजेयू ति हिदलोकिक पाललोकिकेन हेमेव मे इछ सवमुनिसेसु [७] नो चु तुफे एतं पातु पापुनाथ आवगमुके

४. इयं अठे [८] केचा एक मुनिसे पापुनाति से पि देसं नो सवं [९] दखथ हि तुफे पि सुवितापि [१०] बहुत अठि ये एति एकमुनिसे बंधनं पलिकिलेसं पि पापुनाति [११] तत होति अक—

५. स्मा ति तेन बधनंतिक अन्ये च वगे वेदयति [१२] तत तुफेहि इछितये किंति मझं पटिपाटयेम [१३] इमेहि जातेहि नो पटिपजति इसाय आसुलोपेन निठूलियेन

६. तुलाय अनावुतिय आलस्येन किलमिथेन [१४] हेवं इछितविये किंति मे एतानि जातानि नो हेयू ति [१५] सवस चु इयं मूले अनासुलोपे अतुलना च [१६] नितियं एयं किलंते सिय······

७. संचलितु उथाया संचलितव्ये तु वटितविय पि एतविये पि नीतियं [१७] एवे दखेया आनंने निझपेतविये हेवं हेवं च देवानंपियस अनुसथि ति [१८] एतं संपटिपातयं······

८. तं महाफले होति असंपटिपति महापाये होति [१९] विपटिपातयंतं नो स्वगआलधि नो लाजाधि [२०] दुआहले एतस कंमस स मे कुते मनोअतिलेके [२१] एतं संपटिपजमीने मम

९. च आननेयं एसथ स्वगं च आलाधयिसथा [२२] इयं चा लिपी अनुतिसं सोतविया [२३] अला पि खनेन सोतविया एककेन पि [२४]······मीने चघथ

१०. तवे [२५] एताये च अठाये इयं लिखिता लिपी एन महामाता नगलक सस्वतं समयं एतं युजेयु ति एन मुनिसानं अ···ने पलिकि······ ये

११. पंचसु पंचसु वसेसु अनुसयानं निखामयिसामि महामातं अचंडं अफलुसं त···पि कुमाले वि···त······मयि···लाते······

१२. ······वचनिक अद अनुसयानं निखमिसंति अतने कंमं······यितु तं पि तथा कलंति अथा······

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः एवम् आह। समापायां महामात्राः नगरव्यवहारकाः एवं वक्तव्याः। यत् किञ्चित् पश्यामि अहं तत् इच्छामि। किमिति? कर्मणा प्रतिपादये

२. द्वारतः च आरभे। एतत् च मे मुख्यमतं द्वारम् यत् युष्मासु अनुशिष्टिः। यूयं हि बहुसु प्राणसहस्रेषु आयताः प्रणयं गच्छेम स्वित् मनुष्याणाम्। सर्वमनुष्याः मे

३. प्रजाः। यथा प्रजायै इच्छामि अहं—किमिति? सर्वेण हितसुखेन युज्येरन् इति ऐहलौकिक-पारलौकिकेन, एवम् एव मे इच्छा सर्वमनुष्येषु। न च यूयं एतत् प्राप्नुथ यावद्गामकः

४. अयम् अर्थः। कश्चित् एकः मनुष्यः प्राप्नोति एतत् अपि देशं नो सर्वम्। पश्यत् हि यूयम् अपि सुविहिताः। बहुकः अस्ति······एकः मनुष्यः बन्धनं परिक्लेशमपि प्राप्नोति। तत्र भवति अक—

५. स्मात् इति तेन बन्धनान्तकम् अन्यः च वर्गः वेदयति। तत्र युष्माभिः इच्छितव्यम् किमिति? मध्यं प्रतिपादयेमहि। एभिः जातैः न संप्रतिपद्यते ईर्ष्यया, आशुलोपेन, नैष्ठुर्येण,

६. त्वरया, अनावृत्या, आलस्येन क्लमथेन। तत् इच्छितव्यं किमिति?—मे एतानि जातानि न भवेयुः। सर्वस्य तु इदं मूलम् अनाशुलोपः अत्वरया च। नीत्या यः क्लान्तः स्यात् न सः [उद्गच्छेत् तत्]

७. सञ्चलितव्यं उत्थातव्यं········वर्तयितव्यम् अपि एतव्यं नीत्याम्। एतम् एव यः पश्येत्······एवम् एवम् च देवानां प्रियस्य अनुशिष्टिः इति। एतस्य सम्प्रतिपादः

८. सः महाफलः भवति असम्प्रतिपत्तिः महापापः भवति। विप्रतिपाद्यमाने न स्वर्गस्य आलब्धिः न राजालब्धिः। द्व्याहरः अस्य कर्मणः स मे कुतः मनोऽतिरेकः। एतस्मिन् प्रतिपद्यमाने मम

९. च आनृण्यं एष्यथ स्वर्गं च आराधयिष्यथ। इयं च लिपिः अनुतिष्यं श्रोतव्या। अन्तरा अपि क्षणेन श्रोतव्या एकेन अपि श्रो—

१०. तव्या। एतस्मै अर्थाय इयं लेखिता लिपिः येन महामात्राः नागरकाः शाश्वतं समयम् एतत् युञ्ज्युः इति येन मनुष्याणां अ [कस्मात् परिबन्धनं परिक्ले[शः वा न स्यात् इति] एतस्मै च अर्थाय अहं

११. पञ्चसु पञ्चसु वर्षेषु अनुसंयानं निष्कामयिष्यामि महामात्रं अचण्डं अफरुषं तत् अपि कुमार ······वि······त······लाते
१२. ·········

पाठ टिप्पणी

१. सेना और ब्यूलरने अपने पाठमें 'क'का लोप कर दिया है।
२. ब्यूलर 'कमन'।
३. शुद्ध पाठ है—'मुनिसामें'; सेना और ब्यूलर—'मुनिसे मे'।
४. ब्यूलर 'च'।
५. वही 'आवा'; सेना और ब्यूलर '—गमके'।
६. सेना और ब्यूलर '—पुलिसे'।
७. सेना 'पि नति'; ब्यूलर 'पि मनाति'।
८. ब्यूलर 'हि'।
९. सेना और ब्यूलरने 'ति'का लोप कर दिया है।
१०. वही 'बन्धन०'।
११. वही 'तुलाये'।
१२. ब्यूलर 'उधाये'।
१३. 'लाजालधि' अधिक शुद्ध पाठ है।
१४. 'अंतल्स' पढ़िये।
१५. पूर्ति 'अकस्मा बधने पलिकिलेसे'।
१६. सेना और ब्यूलर 'अनुसंयान'।
१७. ब्यूलर 'लाजावचनिक'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रियने ऐसा कहा—"समापा[1] में महामात्र नगर-व्यवहारकों[2] को ऐसा करना चाहिये 'जो कुछ मैं (उचित) समझता हूँ उसकी इच्छा करता हूँ। उसका कर्म द्वारा प्रतिपादन करता हूँ

२. और उचित उपायों द्वारा उसकी प्राप्ति। मेरे विचारमें आप लोगोंके लिए धर्मानुशासन ही मुख्य उपाय है। आप बहुसंख्यक लोगोंके ऊपर नियुक्त हैं इस उद्देश्य-से कि आप मनुष्योंका स्नेह निश्चित रूपसे प्राप्त कर सकें। सभी मनुष्य मेरी

३. प्रजा (सन्तान) हैं। जिस प्रकार मैं अपनी प्रजा (सन्तान) के लिए इच्छा करता हूँ कि सभी हित और सुख ऐहलौकिक और पारलौकिक—से वह संयुक्त हो इसी प्रकार मेरी इच्छा है सब मनुष्योंके लिए।[3] आप इस बातको नहीं समझ सकते कि किस सीमा तक

४. इस अर्थ (उद्देश्य) को ग्रहण करना चाहिये। कोई व्यक्ति इस अर्थको समझ सकता है, परन्तु वह भी आंशिक रूपसे समझता है, पूर्ण रूपसे नहीं। आप इसको देखें, यह नीति अच्छी तरहसे विहित (स्थापित) है। ऐसा होता है (कि) अक—

५. स्मात् (किसी कारणके बिना) कोई व्यक्ति कारागारको प्राप्त होता है।[4] जो उसकी मृत्युका कारण बन जाता है। इससे अन्य वर्गको वेदना होती है। ऐसी परिस्थितिमें आपको इच्छा करनी चाहिये, क्यों, कि आप मध्यम मार्ग (निष्पक्ष) का अनुसरण करें। किन्तु निम्नाङ्कित वासनाओंके कारण सफलता नहीं मिल सकती है—ईर्ष्या, आशुलोप (असन्तुलन), नैष्ठुर्य,

६. त्वरा, अनावृत्ति (अप्रयोग, अविवेक), आलस्य और थकावट। इसलिए आपको इच्छा करनी चाहिये, क्या, कि ये वासनाएँ आपमें न उत्पन्न हों। सबका यह मूल है—अनाशुलोप (सन्तुलन) और अत्वरा। जो नैतिक दृष्टिसे शिथिल रहना है वह ऊपर (विकास) की ओर न ही जा सकता (किन्तु)

७. आपको चलना है, उत्थान करना है और (नीतिको) व्यवहारमें लाना है। इस प्रकारसे आपको देखना है। (इस प्रयोजनके लिए आप लोगोंसे कहना है—) "आप लोगोंको परस्पर देखना है कि देवानांप्रिय प्रियदर्शीका यही धर्मानुशासन है। इसका सम्पादन

८. महाफलवाला है। इसका असम्पादन महापाप है। इसका सम्पादन न होनेसे न तो स्वर्गकी प्राप्ति होती है और न राज-कृपाकी उपलब्धि।" मेरे विचारमें इसपर अत्यधिक ध्यान देनेके दो परिणाम होते हैं। इसका सम्पादन होनेसे मेरे

९. ऋणसे आप मुक्ति प्राप्त करेंगे[5] और स्वर्गकी उपलब्धि। यह धर्मलिपि प्रत्येक तिष्य नक्षत्रको सुनी जानी चाहिए। बीचमें भी और प्रत्येक क्षण सुनी

१०. जानी चाहिये। इस प्रयोजनके लिए यह (धर्म—)लिपि लिखायी गयी कि महामात्र, नागरक निरन्तर इसका पालन करें, जिससे मनुष्योंको अकारण कारावास और परि[क्लेश] न हो। इस उद्देश्यके लिए मैंने

११. पाँच-पाँच वर्षोंमें सौम्य, अपरुष (मधुर)······महामात्रको अनुसंयान (दौरे)पर भेजा।······इसी प्रकार कुमार·········

१२. ················

भाषान्तर टिप्पणी

१. यह शिला-लेख कलिङ्गके तोमली और समापा नगरीके उच्चकर्मचारियोंको सम्बोधन करके लिखवाया गया था। समापा नगरी जौगडके निकट स्थित थी।

२. महामात्रका मूल अर्थ है 'बड़ी मात्रा(माप)वाले' (= उच्चकर्मचारी)। नगल-वियोहालक = पौर-व्यावहारिक (अर्थ. १. १२)। यह नगरका मुख्य अधिकारी होता था।

३. तु. 'निवृत्तपरिहारान् पितेवानुगृह्णीयात्' (जिनको छूट मिल चुकी है उनके ऊपर राजा पिताके समान अनुग्रह करे [अर्थ. २.१]; 'सर्वत्र चोपहतान् पितेवानुगृह्णीयात्' (सभी स्थानोंमें दुःखी लोगोंके ऊपर राजा पिताके समान अनुग्रह करे) [अर्थ. ४. ३]; महाभारत, शान्तिपर्व, राजधर्म अ. ५६. ४४, ४६ राजाकी तुलना मातासे की गयी है जो अपनी सन्तानके लिए अपना सर्वस्व निछावर कर देती है। बुद्धचरित (२. ३५.): स्वाभ्यः प्रजाभ्यो हि यथा तथैव सर्वप्रजाभ्यः शिवमाशशाने।

४. बधनन्तिक : वह व्यक्ति जिसका बन्धन उसका अन्त बन जाता है। हुल्त्जने इसे "बन्धनान्तिक' (जिसके बन्धनके अन्तकी आशा मिल चुकी है) के अर्थमें ग्रहण किया है,

५. ब्यूलरने 'आनंने' को अं नं ने = सं. आशा नः के अर्थमें लिया था।

जौगडका द्वितीय पृथक् अभिलेख

(सीमान्त नीति)

१. देवानंपिये हेवं आह [१] समापायं महमता लाजवचनिक[1] वतविया [२] अं किछि दखामि हकं तं इछामि हकं किंति कं कमन
२. पटिपातयेहं दुवालते च आलमेहं [३] एस च मे मोखियमत[2] दुवाल एतस अथस अं तुफेसु अनुसथि [४] सवमुनि
३.[3] सा मे पजा [५] अथ पजाये इछामि किंति मे सवेणा हितसुखेन युजेयू अथ पजाये इछामि किंति मे सवेन हितसु—
४. खेन युजेयू[3] ति हिदलोगिक पाल लोकिकेण[4] हेवंमेव मे इछ सवमुनिसेसु [६] सिया अंतानं अविजिता—
५. नं किंछांदे सुलाजा अफेसु ति [७] एताका वा मे इछ अंतेसु पापुनेयु लाजा हेवं इछति अनुविगिन हेयू[5]
६. ममियाये अस्वसेयु च मे सुखंमेव च लहेयू मम ते नो खं[6] हेवं च पापुनेयु खमिसति ने लाजा
७. ए सकिये खमितवे ममं निमितं च धंमं चलेयू ति हिदलोगं च पललोगं च आलाधयेयू [८] एताये
८. अठाये हकं तुफेनि अनुसासामि अनने एतकेन हकं तुफेनि अनुसासितु इदं च वेदि—
९. तु आ मम धिति पटिंना च अचल [९] स हेवं कटू[7] कंमे चलितविये अस्वासनिया च ते एन ते पापुने—
१०. यु अथा पित हेवं ने लाजा ति अथ अतानं अनुकंपति हेवं अफेनि अनुकंपति अथा पजा हे—
११. वं मये लाजिने]१०] तुफेनि हकं अनुसासित छांदं च वेदित आ मम धिति पटिंना चा अचल सकल—
१२. देसा आयुतिके होसामी एतसि अथसि [११] अलं हि तुफे अस्वासनाये हितसुखाये च तेसं हिद—
१३. लोगिक पाललोकिकाये [१२] हेवं च कलंत स्वगं च आलाधयिसथ मम च आननेयं एसथ [१३] ए—
१४. ताये च अथाये इयं लिपी लिखित हिद एन महामाता सास्वतं समं[8] युजेयु अस्वासनाये च
१५. धंमचलनाये च अंतानं [१४] इयं च लिपी अनुचातुंमासं सोतविया तिसेन [१५] अंतला पि च सोतविया [१६]
१६. खने संतं एकेन पि सोतविया [१७] हेवं च कलंतं चघथ संपटिपातयितवे [१८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः एवम् आह। समापायां महामात्राः राजवाचनिकं वक्तव्याः। यत् किञ्चित् पश्यामि अहं तत् इच्छामि अहं—किमिति ? कं कर्मणा
२. प्रतिपादये द्वारतः च आरभे। एतत् च मे मुख्यमतं द्वारम् एतस्य अर्थस्य या युष्मासु अनुशिष्टिः। सर्वे मनु-
३. ष्याः मे प्रजाः। यथा प्रजायै इच्छामि किमिति ? मे सर्वेण हितसुखेन युज्येरन् (प्रजाः) तथा प्रजायै इच्छामि किमिति ? मे सर्वेण हितसु-
४. खेन युज्येरन् इति इहलौकिक-पारलौकिकेन, एवम् एव मे इच्छा सर्वमनुष्येषु। स्यात् अन्तानाम् अविजिता-
५. नां—'किं-छन्दः स्वित् राजा अस्मासु इति ?' एतकाः वा मे इच्छाः अंतेषु प्राप्नुयुः—"राजा एवम् इच्छति-'अनुद्विग्नाः भवेयुः
६. मया आश्वस्युः च। मया सुखम् एव च लभेरन् मत्तः न दुःखम्।" एवं च प्राप्नुयुः-"क्षमिष्यते नः राजा यत्
७. शक्यं क्षन्तुम्। मम निमित्तं च धर्मं चरेयुः इति। इहलोकं च परलोकं च आराधयेयुः (इति) एतस्मै च
८. अर्थाय अहं युष्मासु अनुशास्मि। अनृणः एतकेन अहम्—युष्मान् अनुशिष्य इदं च वेद-
९. यित्वा, या मम धृतिः प्रतिज्ञा च अचला। तत् एवं कृत्वा कर्म चरितव्यम्; आश्वासनीयाः च ते येन ते प्राप्नु-
१०. युः, "यथा पिता एवं नः राजा इति; यथा आत्मानम् अनुकम्पते एवम् अस्मान् अनुकम्पते; यथा प्रजा ए
११. वं वयं राज्ञः" इति। युष्मान् अहम् अनुशिष्य छन्दं च वेदयित्वा या मम धृतिः प्रतिज्ञा च अचला—सकल-
१२. देशायुतिकः भविष्यामि एतस्मिन् अर्थे। अलं हि यूयम् आश्वासनाय हितसुखाय च तेषाम् इह-
१३. लौकिकाय। एवं च कुर्वन्तः स्वर्गं च आराधयिष्यथ मम च आनृण्यम् एष्यथ। ए-
१४. तस्मै च अर्थाय इयं लिपिः लेखिता इह येन महामात्राः शाश्वतं समयं युञ्ज्युः आश्वासनाय च
१५. धर्माचरणाय च अन्तानाम्' इयं च लिपिः अनुचातुर्मासं श्रोतव्या तिष्येण। अन्तरा अपि च श्रोतव्या।
१६. क्षणे सति एकेन अपि श्रोतव्या। एवं च कुर्वन्तः चेष्टध्वं सम्प्रतिपादयितुम्।

पाठ टिप्पणी

१. सेना और ब्यूलर 'लजवचनिक'।
२. सेना 'मते'; ब्यूलर 'मतं'।
३. उत्कीर्णकने भूलसे अथसे लेकर युजेयू तक' आठ शब्दोंकी पुनरावृत्ति कर दी है।
४. सेना और ब्यूलर '०केन'।
५. वही 'हेयु'।
६. 'दुखं' पढ़िये।
७. सेना और ब्यूलर 'कटु'।
८. ब्यूलर '०सासितु'।

९. सेना और ब्यूलर 'सस्वतं'।
१०. 'समर्थं' पढ़िये।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रियने ऐसा कहा—समापामें महामात्रोंको राजाके सन्देशरूपमें[1] कहना चाहिये, "जो कुछ मैं (उचित) समझता हूँ उसकी इच्छा करता हूँ कि उसको कर्म द्वारा

२. सम्पादित करूँ और (आवश्यक) उपायों द्वारा प्रारम्भ करूँ। मेरे मतमें इस प्रयोजनका मुख्य उपाय है आपलोगोंमें धर्मानुशासन।

३. सभी मनुष्य मेरी सन्तान हैं। जैसे मैं अपनी सन्तानके लिए कामना करता हूँ कि वह सभी हित और सुखसे युक्त हो उसी प्रकार सभी मनुष्योंके लिए इच्छा करता हूँ कि वे सभी हित और सु—

४. ख—इहलौकिक और पारलौकिक—से युक्त हों। सब मनुष्योंके लिए यही मेरी इच्छा है। जिज्ञासा हो सकती है सभी सीमावर्ती लोगोंकी जो अविजित

५. हैं : हमलोगोंके प्रति राजाका क्या मत है? ये मेरी इच्छा सीमावर्ती लोगोंतक पहुँचानी चाहिये—"राजा इस प्रकार इच्छा करते हैं। आप अनुद्विग्न हों

६. मुझसे आश्वस्त हों। मुझसे सुख प्राप्त करें, दुःख नहीं।" यह सन्देश भी पहुँचाना चाहिये—"क्षमा करेंगे राजा जहाँतक

७. क्षमा करना शक्य होगा। मेरे लिये उनको धर्मका आचरण करना चाहिये। उनको इस लोक और परलोककी प्राप्ति करनी चाहिये। और इस

८. प्रयोजनके लिए मैं आपलोगोंको धर्मोपदेश करता हूँ। इस प्रकार मैं (अपनी प्रजासे) उऋण होता हूँ। आपलोगोंको उपदेश करके और इसको विदि-

९. त कराके जो मेरी धृति और प्रतिज्ञा है यह अचल है। ऐसा करके कर्मका आचरण करना चाहिये। उनको आश्वासन देना चाहिये; जिससे वे सम-

१०. झें—"जैसे पिता वैसे हमारे लिए राजा हैं। जैसे वे अपने ऊपर अनुकम्पा करते हैं, वैसे हमारे ऊपर। जैसे उनकी सन्तान वै-

११. से हम राजाके।" आपलोगोंको उपदेश करके और अपनी इच्छा विदित कराके जो मेरी धृति और प्रतिज्ञा है वह अचल है। सब

१२. प्रादेशिक (अथवा उपदिष्ट) अधिकारियोंको नियुक्त करूँगा इस प्रयोजनके लिए। आप पर्याप्त हैं आश्वासन देनेके लिए उनके हित और सुखके लिए। इह

१३. लौकिक (कल्याण)के लिए। ऐसा करते हुए आपलोगोंको स्वर्गकी प्राप्ति करना चाहिये और मुझसे उऋण होना चाहिये। इ-

१४. स प्रयोजनके लिए यह (धर्म-) लिपि लिखायी गयी जिससे महामात्र सब काल प्रयुक्त हों आश्वासनके लिए और

१५. धर्म प्रचारके लिए सीमावर्ती लोगोंमें। यह (धर्म-) लिपि प्रत्येक चातुर्मास्यमें तिष्य नक्षत्रके अवसरपर सुनी जानी चाहिये। बीचमें भी सुननी चाहिये।

१६. (मनुष्यको) प्रत्येक क्षण[2] सुननी चाहिये। ऐसा करते हुए चेष्टा करें कार्य-सम्पादनके लिए।

भाषान्तर टिप्पणी

१. लाज वचनिक = धौलीके दो पृथक् अभिलेख तथा इलाहाबादके रानी स्तम्भ-अभिलेखके 'देवानांपियम वचनेन'।
२. 'खने संतं'।

बम्बई सोपाराका आंशिक अष्टम शिला अभिलेख

(धर्मयात्रा)

५. निखमिठ स[1]······[४]
६. हेत इयं होति बंभ······
७. वुढानं दसने[2] च हिरंन पटिविधाने च······
८. धंमानुसथि[3] धंम······
९. ···ये रती[4] होति दे······
१०. ···ने भागे अं······

संस्कृतच्छाया

५. निरक्रमिषुः
६. अत्र इदं भवति ब्राह्म [ण श्रमणानं]
७. वृद्धानां दर्शनं च हिरण्य-प्रतिविधानं च
८. धर्मानुशिष्टिः धर्म······
९. ······भूयसी रतिः भवति दे [वानांप्रियस्य]
१०. ····[रा]ज्ञः भागः अ[न्यः]

पाठ टिप्पणी

१. भगवान लाल इन्द्रजी 'निखमिथा स'।
२. ये दोनों शब्द पंक्तिके ऊपर उत्कीर्ण है।
३. भगवान लाल इन्द्रजी '०सठि'।
४. वही 'रति'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये गिरनारके अष्टम शिला-लेखका भाषान्तर।)

४. चिरस्थायी हो। यह प्रयोजन अधिकाधिक बढ़ेगा, विपुल बढ़ेगा, (कमसे कम) आधा बढ़ेगा। इस विषयको (आप) अवसरके अनुकूल पर्वतपर उत्कीर्ण करावें। और यहाँ (साम्राज्यमें) जहाँ भी हों

५. शिला-स्तम्भ (वहाँ) शिला-स्तम्भोंपर लिखवावें। (इस धर्मलिपिके) व्यञ्जन (अक्षर)के अनुसार आप सर्वत्र एक अधिकारी भेजें जहाँतक आपके आहार[6] (अधिकार-क्षेत्र)का विस्तार हो। यह श्रावण यात्रा (व्युष्ट)[7]के समय किया गया जब २५६

६. पड़ाव (विवास)[8] बीत चुके थे।

भाषान्तर टिप्पणी

१. अशोक 'अढतिय' = पालि 'अड्ढतिय' = ढाई।

२. हुल्ट्ज 'सके' को 'शाक्य' (= बौद्ध)के रूपमें ग्रहण करते हैं। किन्तु सहसराम, बैराट और सिद्दापुर संस्करणोंमें स्पष्ट रूपसे 'उपासक' पाया जाता है। इसका अर्थ है बौद्ध धर्मका गृहस्थ अनुयायी। कोई-कोई 'सके' को 'श्रावक' का अपभ्रंश मानते है जो बौद्ध 'उपासक' का जैन पर्याय है।

३. ब्यूलरने इसका अर्थ 'सङ्घमे प्रविष्ट हुआ' किया है। हुल्ट्जने 'सङ्घकी यात्राकी'। परन्तु इसका समुचित अर्थ है 'सङ्घमे प्रविष्ट होनेके लिए उन्मुख होना। बौद्ध साहित्यमें ऐसे व्यक्तिको 'भिक्षुगतिक' कहते हैं। पुनः देखिये सेना (इंडियनएंटिक्वेरी जि. २० पृ० २३९)।

४. सिलवां लेवीने 'देब' शब्दका अर्थ 'राजा' किया है। परन्तु अशोकके किसी भी अन्य अभिलेखमें 'देव' शब्द राजाके अर्थमें प्रयुक्त नहीं हुआ है। बौद्ध धर्म और साहित्यमें देवता मरे नहीं, बौद्ध शासनाधीन हुए थे।

५. वैदिक कर्मकाण्ड और देववाद, के विरुद्ध बौद्ध प्रतिक्रियाको ध्यानमें रखकर पहले कुछ विद्वानोंने इसका अर्थ किया था 'जो देवता अमृषा (सत्य) थे वे मृषा (असत्य) किये गये।' परन्तु पालि या प्राकृतमें सं० 'मृषा' का रूप 'मुसा' होगा, 'मिसा' नही। इस वाक्यका तात्पर्य यह है कि अशोकने अपने धर्माचरणसे जम्बु-द्वीप (भारत)को ऐसा पवित्र बना दिया कि यह देवलोक सदृश हो गया और देव तथा मानवका अन्तर मिट गया। विशेष द्रष्टव्य जर्नल एशियाटिक, जन०-फर० १९११; ज० रा० ए० सो० १९११ पृ० १११४, ११००; इण्डियन एंटिक्वेरी १९१२ पृ० १७०)

६. साम्राज्यका प्रशासकीय विभाजन (= परवर्ती 'विषय' = जिला)

७. विशेष प्रकारका प्रवास अथवा यात्रा।

८. ब्यूलरने पहले इसका भाषान्तर 'बुद्ध-निर्वाणके २५६ वें वर्ष' किया था। परन्तु सहसराम संस्करणमें इसके साथ 'लाति' (= सं० रात्रि) शब्द प्रयुक्त है। अतः इसका अर्थ है 'रात्रिमें टिकना' या पडाव।

द्वितीय खण्ड : लघु शिला अभिलेख

रूपनाथ अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. देवानंपिये हेवं आहा [१] सातिरकेकानि[1] अढतियानि व[2]य सुमि प्रकास सके[3] [२] नो चु बाढि पकते [३] सातिलेके चु छवछरे[4] य सुमि हकं सघ उपेते

२. बाढि च पकते [४] य इमाय कालाय जंबुदिपसि अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसा कटा [५] पकमसि[5] हि एस फले [६] नो च एसा महतता पापोतवे खुदकेन

३. पि पकममिनेना सकियो पिपुले पा[6]स्वगे आरोधेवे [७] एतिय अठाय च सावने कटे खुदका च उडाला च पकमतु ति अता पि च जानंतु इय पकरा व

४. किति चिरठितिके सिया [८] इय हि अठे वढि वढिसिति विपुल च वढिसिति अपलधियेना दियढिय वढिसत[7] [९] इय च अठे पवतिसु लेखापेत वालत [१०] इध च अथि

५. सालाठभे सिलाठंमसि लाखापेतवय[8] त [११] एतिना च वयजनेना यावतक तुपक अहाले सवर विवसेतवाय ति [१२] व्युठेना सावने कटे [१३] २०० ५०६ स—

६. त विवासा त[9] [१३]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः एवम् आह। सातिरेकाणि अर्द्धतृतीयानि वर्षाणि प्रकाशं उपासकः। न तु बाढं प्रक्रान्तः। सातिरेकं तु संवत्सरं यत् अस्मि अहं संघम् उपेतः

२. वाढं च प्रक्रान्तः। ये अस्मै कालाय (इयन्तं कालं) जम्बुद्वीपे अमिश्राः देवाः आसन् ते इदानीं मिश्रा कृताः। प्रक्रमस्य हि एतत् फलम्। न च एतत् महता प्राप्तव्यं क्षुद्रकेन

३. अपि प्रक्रममाणेन शक्यः विपुलः स्वर्गः आराधयितुं। एतस्मै अर्थाय च श्रावणं कृतम्। क्षुद्रकाः च उदाराः च प्रक्रमन्ताम् इति। अन्ताः अपि च जानन्तु 'अयं प्रक्रमः एव'

४. किमिति ? चिरस्थितिकः स्यात्। अयं हि अर्थः वृद्धिं वर्द्धिष्यते विपुलं च वर्द्धिष्यते। अयं च अर्थः पर्वतेषु लेखयेत वारतः। इह च अस्ति

५. शिलास्तम्भः। शिलास्तम्भे लेखयितव्यः इति। एतेन च व्यञ्जनेन यावत् युष्माकम् आहारः सर्वत्र विवासयितव्यः इति। व्युष्टेन श्रावणं कृतम्। २०० ५० ६ (= २५६) श—

६. तानि विवासाः इति।

पाठ टिप्पणी

१. शुद्ध पाठ 'मातिरेकानि' है। सेना और ब्यूलर इसको 'सातिलेकानि' पढ़ते हैं।
२. यह 'वसानि'का संक्षिप्त रूप है।
३. यह 'उपासक' का अपभ्रष्ट एवं संक्षिप्त रूप है। हुल्त्ज 'सके' को 'शके' (= सं० शाक्य = बौद्ध) का रूपान्तर मानते हैं।
४. 'सवछरे' (सं० संवत्सर)का रूपान्तर है।
५. अन्य संस्करणोंमें 'पकमस' पाठ मिलता है।
६. शुद्ध पाठ 'पि'।
७. शुद्ध पाठ 'वढिसिति'।
८. सेना '०-विय'।
९. शुद्ध पाठ 'नि'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रियने ऐसा कहा—"ढाई वर्ष[1] और कुछ अधिक व्यतीत हुए मैं प्रकाश रूपसे उपासक[2] था। किन्तु मैंने अधिक पराक्रम नहीं किया। किन्तु एक वर्ष और कुछ अधिक व्यतीत हुए जब कि मैंने संघकी शरण ली है[3] (तबसे)

२. अधिक पराक्रम करता हूँ। इस कालमें जम्बुद्वीपमें जो देवता[4] (मनुष्योंसे) अमिश्र[5] थे वे इस समय मिश्र किये गये हैं, पराक्रमका ही यह फल है। यह केवल उच्च पदवाले व्यक्तिसे प्राप्त नहीं होता। क्षुद्र (छोटे)से

३. भी पराक्रम द्वारा विपुल स्वर्गकी प्राप्ति शक्य है। इस प्रयोजनके लिए श्रावण (धार्मिक कथा-वार्ता)की व्यवस्था की गयी जिससे क्षुद्र और उदार (सभी) पराक्रम करें और मेरे सीमावर्ती लोग भी जानें कि यही पराक्रम

सहसराम अभिलेख

(पराक्रम का फल)

१. देवानंपिये हेवं [आ][1]···[ियानि सवछला]नि । [१] अं उपासके सुमि [२] न चु बाढं पलकंते [३]
२. सवछले[2] साधिके । अं···ते [४] एतेन च अंतलेन । जंबुदीपसि । अंमिसं देवा[3] । संत[4]
३. मुनिसा मिसं देव कटा [५] पल···इयं फले [६] नो···यं महतता व चकिये पावतवे । खुदकेन पि पल–
४. कममीनेना विपुले पि सुअगं···किये आला···वे । [७] से एताये अठाये इयं सावाने[6] । खुदका च उडाला चा प–
५. लकमंतु अंता पि च जानंतु । चिलठिकीते च पलाकमे[7] होतु [८] इयं च अठे वढिसति । विपुलं पि च वढिसति
६. दियाढियं अवलधियेना दियढियं वढिसति [९] इयं च सवने विवुथेन [१०] दुवे सपंना लाति—
७. सता विवुथा ति २०० ५० ६ [११] इम च अठं पवतेसु लिखापयाथा [१२] य···वा अ–
८. थि हेता सिलाथंमा तत पि[8] लिखा पयाथा ति [१३]

संस्कृतच्छाय

१. देवानां प्रियः एवम् आ[ह] ।·····[अर्द्ध] तृतीयानि संवत्सराणि । अहम् उपासकः अस्मि । न तु वाढं प्रक्रान्तः ।
२. संवत्सरं सार्द्धकम् । अहं···[उपे] तः । एतेन अन्तरेण जम्बुद्वीपे अमिश्रा देवाः आसन्
३. मनुष्यैः मिश्राः देवाः कृताः । प्रक [मस्य] इदं फलम् । न···एतत् महता वा शक्यः प्राप्तुम् । क्षुद्रकेण अपि प्र–
४. क्रममाणेन विपुलः अपि स्वर्गः [श]क्यः आलब्धुं । तत् एतस्मै अर्थाय इदं श्रावणम् । क्षुद्रकाः च उदाराः च प्र–
५. क्रमन्ताम् । अन्ताः अपि च जानन्तु (अयं प्रक्रमः एव । किमिति ?) चिरस्थितिकः च प्रक्रमः भवतु । अयं च अर्थः वर्द्धिष्यति । विपुलम् अपि च वर्द्धिष्यति ।
६. द्व्यर्द्धम् आरब्ध्या द्व्यर्द्धं वर्द्धिष्यति । इदं च श्रावणं व्युष्टेन । द्विषट्पञ्चाशत्-
७. शताः व्युष्टा इति २०० ५० ६ (=२५६) । अयम् अर्थः पर्वतेषु लेखयेत । यत्र···षा···स-
८. न्ति एताः शिलास्तम्भाः तत्र अपि लेखयेत इति ।

पाठ टिप्पणी

१. बड़े कोष्ठके भीतरके अक्षर टूटे हुए हैं, किन्तु इनके कुछ अंश दिखायी पड़ते हैं ।
२. कनिंगहैम '०विं–' और ब्यूलर '०ह्व' । ये पाठ अब असिद्ध हो चुके हैं ।
३. 'अमिस—' पाठ ।
४. ब्यूलर 'संता' ।
५. पूर्ति 'सुअग चकिये' ।
६. शुद्ध पाठ 'सावने' ।
७. सेना और ब्यूलर 'पलकमे' ।
८. यह अक्षर पंक्तिके ऊपर लिखा है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रियने ऐसा कहा—"ढाई वर्ष और कुछ अधिक व्यतीत हुए मैं उपासक रहा । अधिक पराक्रम नहीं किया ।
२. एक वर्ष और कुछ अधिक व्यतीत हुए जब कि मैंने संघकी शरण ली । इस कालके बीचमें जम्बुद्वीपमें जो देवता (मनुष्योंसे) अमिश्र थे वे सब
३. मनुष्योंसे मिश्र किये गये । पराक्रमका यह फल है । केवल महान् पदवालोंसे ही यह प्राप्त करनेके लिए शक्य नहीं । क्षुद्र (छोटे)से भी परा–
४. क्रम द्वारा विपुल स्वर्ग प्राप्त करना शक्य है । इस प्रयोजनके लिए यह श्रावण (धर्मोपदेश) किया गया । क्षुद्र और उदार प–
५. राक्रम करें और सीमावर्ती लोग भी जानें । यह पराक्रम चिरस्थायी होवे । यह अर्थ (प्रयोजन) बढ़ेगा । प्रचुर रूपसे बढ़ेगा ।
६. ड्योढ़ा बढ़ाया जायेगा, प्रारम्भसे ड्योढ़ा । यह श्रावण व्युष्ट[2] (प्रवास-यात्रा)के समय किया गया । दो
७. सौ छप्पन व्युष्ट २०० ५० ६ (=२५६) । इस प्रयोजनको आप पर्वतोंपर लिखवायें । और जहाँ मेरे साम्राज्यमें
८. शिला-स्तम्भ हों उनपर भी लिखवायें ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. 'चक्' धातु 'शक्' का रूपान्तर है ।
२. तु. विवुथा (=व्युष्टं [अर्थशास्त्र, पृ० ६०, शामशास्त्री]=एक काल-खण्ड=एक दिन और रात) । परन्तु 'विवास' (=प्रवास) से इसका समीकरण अधिक उचित है ।

बैराट अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. देवानांपिये आहा [१] सति······
२. वसानि य हकं[1] उपासके [२] नो चु बाढं······
३. अं ममया सघे[2] उपयाते बाढ च······
४. जंबुदिपसि[3] अमिसा न देवेहि···मि···कमस एस···ले [६]
५. नो हि ऐसे महतनेव चकिये···कममिनेना
६. विपुले पि स्वगे चक्ये आलाधेतवे [७]···का च उडाला चा[4] पलकमतु ति
७. अंता पि च जानंतु ति चिलठित···लं पि वढिसति······
८. दियढियं वढिसति······

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः आह। साति···
२. वर्षाणि अहम् उपासकः। न तु बाढं···
३. यत् मया संघः उपेतः बाढं च···
४. जम्बुद्वीपे अमिश्रा देवाः···मि [श्राः]···। एतत् पराक्रमस्य फलम्।
५. न हि एतत् महता एव शक्यः···[प्र] क्रममाणेन
६. विपुलः अपि स्वर्गः शक्यः आलुब्धुं। [क्षुद्र] काः च उदाराः च प्रक्रमन्ताम् इति
७. अन्ताः अपि च जानन्तु इति। चिरस्थितिकः पराक्रमः भवतु।···[विपु] लम् अपि वर्द्धिष्यति···
८. द्व्यर्द्धं वर्द्धिष्यति···।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'हक'।
२. वही 'संघे'।
३. वही 'जंबुदीपसि'।
४. वही 'चं'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रियने कहा—"कुछ अधिक···
२. वर्षोंतक मैं उपासक रहा। किन्तु बहुत अधिक···
३. जो मैंने संघकी शरण ली। बहुत अधिक···
४. जम्बुद्वीपमें अमिश्र देवता···मिश्र···। यह पराक्रमका फल है।
५. यह केवल महान् व्यक्ति द्वारा ही शक्य नहीं।···पराक्रम करनेवाले द्वारा
६. विपुल स्वर्ग प्राप्त करना शक्य है। क्षुद्र और उदार पराक्रम करें।
७. सीमावर्ती लोग भी जानें। पराक्रम चिरस्थायी होवे।···बहुत बढ़ेगा।
८. डेढ़ा बढ़ेगा·····।

कलकत्ता-बैराट अभिलेख

(धर्म-पर्याय)

१. पियदसि[1] लाजा मागधं[2] संघं अभिवादेतूनं[3] आहा अपाबाधतं च फासु विहालतं चा [१]
२. विदिते वे भंते आवतके हमा बुधसि धंमसि संघसी ति गालवे[4] च प्रसादे[5] च [२] ए केचि भंते
३. भगवता बुधेन भासिते सर्वे[6] से सुभासिते वा [३] ए चु खो भंते हमियाये दिसेया हेवं सधंमे
४. चिलठिकीते होसती ति अलहामि हकं तं वातवे[7] [४] इमानि भंते धंम पलियायानि विनयसमुकसे
५. अलिय वसाणि[8] अनागतभयानि मुनिगाथा मोनेयसूते उपतिसपसिने ए चा लाघुलो—
६. वादे मुसावादं अधिगिच्य[9] भगवता बुधेन भासिते एतानि भंते धंमपालियायानि इछामि
७. किंति बहुके भिखुपाये चा भिखुनिये चा अभिखिनं सुनेयु चा उपधालयेयू चा (५)
८. हेवंमेवा उपासका चा उपासिका चा [६] एतेनि भंते इमं लिखापयामि अभिप्रेतं मे जानंतू[10] ति [७]

संस्कृतच्छाया

१. प्रियदर्शी राजा मागधं संघम् अभिवाद्य आह अल्पाबाधतां च सुखविहारतां च।
२. विदितं वः भदन्ताः यावत् मम बुद्धे धर्मे संघे इति गौरवं च प्रसादः च। यत् किञ्चित् भदन्ता
३. भगवता बुद्धेन भाषितं सर्वं तत् सुभाषितं वा। यत् च खलु भदन्ताः मया देश्यं—एवं सद्धर्मः
४. चिरस्थितिकः भविष्यति इति—अर्हामि अहं तत् वक्तुम्। इमे भदन्ताः धर्मपर्यायाः—विनय-समुत्कर्षः,
५. आर्यवंशाः, अनागत-भयानि, मुनिगाथा, मौनेयसूत्रम्, उपतिष्यप्रश्नः यश्च राहुल—
६. वादे मृषावादम् अधिकृत्य भगवता बुद्धेन भाषितम्। एतान् भदन्ता धर्मपर्यायान् इच्छामि
७. किमिति? बहुकाः भिक्षुपादाः च भिक्षुण्यः च अभिक्षणं शृणुयुः च उपधारयेयुः च।
८. एवमेव उपासकाः च उपासिकाः च। एतेन भदन्ताः इदं लेखयामि—अभिप्रेतं मे जानन्तु इति।

पाठ टिप्पणी

१.. हुल्त्स 'प्रियदसि'।
२. वही 'मागधे'। अनुस्वारका चिह्न लम्बा होनेसे 'ए' की मात्राकी तरह मे दिखायी पड़ता है।
३. सेना 'अभिवादनं'।
४. वही 'गलवे।
५. वही 'पसादे'।
६. वही 'सवे'।
७. वही 'वतवे'।
८. वही '०वसानि'।
९. मिकलसन 'अधिगिध्य'।
१०. सेना 'म जानतु'।

हिन्दी भाषान्तर

१. प्रियदर्शी राजाने मागध[1] संघको अभिवादन करके (उसमें रहनेवाले भिक्षुओंकी) निर्विघ्नता और सुख विहार (आराम)के बारेमें कहा (पूछा)।
२. यह आप लोगोंको विदित है कि बुद्ध, धर्म और संघमें कितनी प्रगाढ़ मेरी श्रद्धा और विश्वास है।[2] भदन्त, जो कुछ भी
३. भगवान् बुद्ध द्वारा भाषित है वह सब अच्छी तरह सुभाषित है। किन्तु, भदन्त, जो कुछ मुझे निश्चित रूपसे लगता है (और धर्मग्रंथोंमें जिसका संकेत है कि) "धर्म
४' चिरस्थायी होगा"[3] उसकी घोषणा करना मेरा कर्तव्य है। भदन्त! ये धर्म-पर्याय[4] हैं—विनयसमुकस,[5]
५. अलियवस, 'अनागतभय'[6], मुनिगाथा[8], मोनेय-सूत[9], उपतिस-पसिन,[10] ऐसे ही लाघुलो—
६. वाद में मृषावादका विवेचन करते हुए भगवान् बुद्ध द्वारा जो कहा गया है।[11] भदन्त! मैं चाहता हूँ कि इन धर्म पर्यायोंको-
७. क्या कि-बहुसंख्यक भिक्षुपाद और भिक्षुणियाँ प्रतिक्षण सुनें और उनका मनन करें।
८. इसी प्रकार उपासक और उपासिकायें भी। भदन्त! इसी प्रयोजनके लिए इसे लिखाता हूँ कि (लोग) मेरे उद्देश्यको जानें।

भाषान्तर टिप्पणी

१. हुल्त्ज आदि विद्वानोंने 'मागध' को राजाका विशेषण माना है। हुल्त्जने अपने समर्थनमें विनयपिटक (राजा मागधो सेनियो बिम्बिसारो); महापरिनिब्बान-सुत्तान्त (राजा मागधो अजातसत्तु) और भर्हुत अभिलेख [इं० ऐ० २१, २३२, सं० ५८] (राजा पसेनजी कोसलो) उद्धृत किया है। परन्तु अशोक अभिलेखोंमें 'राजा'के विशेषण प्रायः पूर्वगामी है; अतः 'मगध' 'संघ' के विशेषणके रूपमें ही ग्रहण करना चाहिये।
२. यह संघ-शरण स्वीकार करनेका औपचारिक प्रव्रज्या-मंत्र है। इससे इस तथ्यमें सन्देह नहीं रह जाता कि अशोकने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया था।
३. महाव्युत्पत्ति और अंगुत्तरनिकायमें यह वाक्य मिलता है।
४. नित्य पारायणके लिए धर्मग्रंथ अथवा धर्मग्रंथोंसे चयन।

५. सं० विनय-समुत्कर्षः । डॉ० वेणीमाधव बरुआके अनुसार = सिगालोवाद-सुत्तान्त [दीघनिकाय, ३. १८०-१९४]; जनार्दन भट्टके अनुसार पातिमोक्ख ।
६. सं० आर्यवंशाः । [अंगुत्तर, भाग २]
७. सं० अनागतभयानि]अंगुत्तर, भाग ३]
८. सं० मुनिगाथा । [सुत्तनिपात, मुनिसुत्त भाग १]
९. सं० मौनेयसूत्रम् । [सुत्तनिपात, नालक सुत्त, भाग ३]
१०. सं० उपतिष्य प्रश्नः । [सुत्तनिपात, भाग ४, सारिपुत्त सुत्त]
११. राहुलवादः [मज्झिम निकाय, भाग १, राहुलोवाद सुत्त]

गुजर्रा अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. देवानंपियस असोक राजस [।] अ [ड] तियानि सवछरानि···उपासक [स्मि ।]···साधिके सवछरे य च मे सं [घे] [या] ते ती [अहं] वा—
२. [ढं] च परकंतेती [आ] हा । एतेना अंतरेना जंबुदीपसि देवानंपिय[स] अमिसं देवा संतो मुनिस मिसं देवा कटा । परकमस इयं फले [।] नो [च इयं] महतेनातिव
३. चकिये पापोतवे । खुदाकेण पी परकममीनेना धंमं चरमीनेना पानेसू संयतेना[1] विपुले पी स्वगे चकिये आराधयितवे । [से] एताय
४. अठा [ये] इयं [ये] इयं सावणे [।] खुदाके च उडारे चा धंमं चरंतू [यो] गं युंजंतू [।] अंता पि जानंतू किंति च चिलथि [ति] के धंम च···
५. [सि] ति [द्व] एनं वा धंमं च [रं] अति [यो][3] इयं च सावन विवुथे[न] [२००] ५० ६ [।]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियस्य अशोकराजस्य । अर्द्धतृतीयानि संवत्सराणि [अहं] उपासको [ऽस्मि] [न तु बाढं प्रक्रान्तः ।] सार्द्धकं संवत्सरं यत् च अहं सं [घं] यातः [अहं] वा—
२. [ढं] च प्रक्रान्तः । एतेन अन्तरेण जम्बुद्वीपे देवानां प्रियेण[ये] अमिश्राः देवाः आसन् [ते] मनुष्येभ्यः मिश्राः देवाः कृताः । प्रक्रमस्य इदं फलम् । न [च इदं] महतैव
३. शक्यः प्राप्तुम् । क्षुद्रकेणापि परक्रममाणेन धर्मं चर्यमाणेन प्राणेषु संयतेन विपुलोऽपि स्वर्गः शक्यः आलब्धुम् । तत् एतस्मै
४. अर्था [य] इदं श्रावणम् [।] क्षुद्रकाः च उदाराः च धर्मं चरन्तु [च] युञ्जन्तु [स्व] अन्ताः अपि जानन्तु [।] किम् इति ? चिरस्थि [ति] कम् धर्मा[चरणं] च [भवि]
५. [ष्य] ति । एतत् वा धर्माच [रणं] अति [योगम् ।] इदं च श्रावणं व्युष्टेन २५६ (कृतम्) ।

पाठ टिप्पणी

१. 'धम···संयतेना' अन्य ल० शि० अ० में नहीं मिलता ।
२. '[यो] गं युजतू' दूसरे ल० शि० अ० में नहीं मिलता ।
३. 'अति [यो] दूसरे ल० शि० अ० में नहीं मिलता ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय अशोक[1] राजाकी (यह विज्ञप्ति है) । "ढाई वर्ष बीत गये मैं उपासक था । (किन्तु अधिक पराक्रम नहीं किया ।) डेढ़ वर्ष हुए मैंने संघकी शरण ली । मैंने अ–
२. धिक पराक्रम किया । (ऐसा) कहा 'इस बीचमें जम्बुद्वीपमें जो देवता अमिश्र थे वे देवता मनुष्योंसे मिश्र किये गये । यह पराक्रमका फल है । न यह केवल महानूसे ही
३. प्राप्त होने शक्य है । पराक्रम करनेवाले, धर्माचरण करनेवाले और प्राणियोंमें संयम करनेवाले[2] क्षुद्र (छोटे व्यक्ति)से भी विपुल स्वर्ग प्राप्त करना शक्य है । अतः इस
४. प्रयोजनके लिए यह श्रावण किया गया । क्षुद्र और उदार धर्मका आचरण करें और योगको प्राप्त हों ।[3] सीमावर्ती लोग भी जानें । क्या ? धर्माचरण चिरस्थायी
५. होगा । यह धर्माचरण अत्यन्त बढ़ेगा । यह श्रावण २५६ वें पड़ाव (प्रवास)में (सुनाया गया) ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. सर्व प्रथम मास्की लघु शिला-अभिलेखमें अशोकका नाम स्पष्ट रूपसे मिला था : 'देवाना पियस असोकस' । गुर्जरा अभिलेखमे अशोकके आगे 'राज' शब्द भी जोड़ दिया है । अशोक द्वारा इन अभिलेखोंके प्रवर्तनका मत और अधिक पुष्ट प्रस्तुत अभिलेख द्वारा हो जाता है ।
२. पिछले दो विशेषण पहले विशेषण 'पराक्रम करनेवाले'की व्याख्या करते हैं ।
३. 'योगं युञ्जन्तु' अन्य संस्करणोंमे नहीं पाया जाता । इसका अर्थ है 'इहलौकिक तथा पारलौकिक कल्याणको प्राप्त करना' अथवा 'यौगिक स्थितिको प्राप्त करना' ।

मास्की अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. देवानंपियसा असोकस······[1] अढति—
२. ···नि वषानि। अं सुमि बुधशके[2] [२]···तिरे···
३. ···मि[3] संघं उपगते उठ···मि उपगते[4] [३] पुरे जंबु···
४. ···सि[5] ये अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसिभूता [४] इय अठे खुद—
५. केन पि[6] धमयुतेन सके अधिगतवे [५] न हेवं दखितविये उडा—
६. लके व इम अधिगछेया ति [६] खुदके च उडालके च वत—
७. विया हेवं वे कलंतं भदके से अ[7]···तिके च वढि—
८. सिति चा दियढियं हेवं ति[8]।

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियस्य अशोकस्य···अर्द्धतृ [तीयानि]
२. [सातिरेका] नि वर्षाणि। अहम् अस्मि बुद्ध-श्रावकः। [न तु वाढं प्रक्रान्तः। सा] तिरे
३. [कं तु संवत्सरं अ] स्मि संघम् उपगतः उत्···अस्मि उपगतः। पुरा जम्बु—
४. [द्वीपे]' ये अमिश्रा देवाः अभूवन् ते इदानीं मिश्रीभूताः। अयम् अर्थः क्षुद्र—
५. केण अपि धर्मयुक्तेन शक्यः अधिगन्तुम्। न एवं द्रष्टव्यम्—उदारः
६. एव इदम् अधिगच्छेत् इति। क्षुद्रकाः च उदाराश्च वक्त—
७. व्याः। एवम् एव भद्रं कुर्वतः तत् अधिकं च वर्द्धि—
८. ष्यति च द्वयर्द्ध एवम् इति

पाठ टिप्पणी

१. सेनाके अनुसार पूर्ति 'वचनेन अधिकानि'। हुल्त्ज 'शासने' और दूसरी पक्तिमें 'अधिकानि'।
२. कृष्ण शास्त्री और बसाक 'बुपाशके'।
३. पूर्ति 'मातिरेके अ सुमि'।
४. पूर्ति 'उठान च सुमि उपगते'।
५. पूर्ति 'अंबुदीपस्मि'।
६. कृष्णस्वामी 'हि'।
७. वही '[थि ति]'।
८. वही 'हेसति'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय अशोक[1]के [वचनसे···महामात्योंका आरोग्य पूछना चाहिये और उनको सूचित करना चाहिये कि देवानांप्रियने ऐसा [कहा—] "[कुछ अधिक] ढाई
२. वर्ष [व्यतीत हुए] मैं बुद्ध-श्रावक[2] था। [अधिक पराक्रम नहीं किया। कुछ अधिक एक संवत्सर बीता]
३. मैंने संघकी शरण ली। उत्था [न को] मैं प्राप्त हुआ। पहले [जम्बु-
४. द्वीप]में जो अमिश्र देवता थे वे इस समय मिश्रीभूत किये गये। यह प्रयोजन क्षुद्र
५. द्वारा भी, यदि वह धर्मयुक्त हो[3], प्राप्त होने शक्य है। यह कभी नहीं सोचना चाहिये कि उदार-
६. द्वारा ही यह अधिगम्य है। क्षुद्र और उदारसे कहना
७. चाहिये 'ऐसा भद्र कार्य करते हुए आप उसे अधिक बढ़ा—
८. येंगे, डेढ़ा इसी प्रकार।'

भाषान्तर टिप्पणी

१. यह पहले केवल एक ही अभिलेख था जिसमें अशोकके नामका स्पष्ट उल्लेख है। अब गुर्जरा ल० शि० अ०में भी अशोकका नाम मिला है। इससे निश्चित हो जाता है कि इन अभिलेखोंका प्रवर्तक अशोक था।
२. बुद्धका गृहस्थ अनुयायी। अन्य सस्करणोंमें 'उपासक' शब्द मिलता है जिसका अर्थ भी यही है।
३. अन्य संस्करणोंमें 'पलकममीनेन' मिलता है। परकम अथवा पराक्रम करना और धर्मयुक्त होना दोनोंका एक ही अर्थ है।

ब्रह्मगिरि अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. सुवंण गिरीते[1] अयपुतस महामाताणं च वचनेन इसिलसि महामाता आरोगियं वतविया हेवं च वतविया [१] देवाणं पिये आणपयति [२]
२. अधिकानि अढातियानि वसानि य हकं···सके[2] [३] नो तु खो बाढं प्रकंते[3] हुसं एकं सवछरं [४] सातिरेके तु खो संवछरें
३. यं मया संघे उपयीते बाढं च मे पकंते [५] इमिना चु कालेन अमिसा समाना मुनिसा जंबुदीपसि
४. मिसा देवेहि [६] पकमस हि इयं फले [७] नो हीयं सक्ये महात्पेनेव पापोतवे कामं तु खो खुदकेन पि
५. पकमि···णेण[4] विपुले स्वगे सक्ये आराधेतवे [८] एताय ठाय इयं सावणे सावापिते
६. ···महात्पा[5] च इमं पकमेयु ति अंता च मे जानेयु चिरठितीके च इयं
७. पक···[६][6] इयं च अठे वढिसिति विपुलं पि च वढिसिति अवरधिया दियढियं
८. वढिसिति [१०] इयं स सावणे सावापिते व्यूथेन २०० ५० ६ [११] से हेवं देवाणंपियं
९. आह [१२] मातापितिसु सुस्रुसितविये हेमेव गरुसु प्राणेसु द्रहितव्यं सचं
१०. वतवियं से इमे धंमगुणा पवतितविया [१३] हेमेव अंतेवासिना
११. आचरिये अपचायितविये ञातिकेसु च कं य···रहं पवतितविये [१४]
१२. एसा पोराणा पकिति दीघावुसे च एस [१५] हेवं एस कटिविये [१६]
१३. चपडेन लिखिते[7] लिपिकरेण[8] ।

संस्कृतच्छाया

१. सुवर्णगिरितः आर्यपुत्रस्य महामात्राणां च वचनेन ऋषिले महामात्राः आरोग्यं वक्तव्याः । देवानां प्रियः आज्ञापयति ।
२. अधिकानि अर्द्धतृतीयानि वर्षाणि यत् अहम् [उपा] सकः । न तु खलु बाढं प्रक्रान्तः अभूवम् एकं संवत्सरम् । सातिरेकः तु खलु संवत्सरः
३. यत् मया संघः उपेतः । बाढं च मया प्रक्रान्तम् । अमुना तु कालेन अमिश्रा समानाः मनुष्याः जम्बुद्वीपे
४. मिश्राः देवैः । प्रक्रमस्य इदं फलम् । नहि इदं शक्यं महात्मनैव प्राप्तम् । कामं तु खलु क्षुद्रकेण अपि
५. प्रक्रममाणेन विपुलः स्वर्गः शक्यः आराधयितुम् । एतस्मै अर्थाय इदं श्रावणं श्रावितम् ।
६. [क्षुद्रकाः च] महात्मानः च इमं प्रक्रमेरन् इति अन्ताः च मे जानन्तु चिरस्थितिकः च अयं
७. प्रक्र [मः भवतु] । अयं च अर्थः वर्द्धिष्यति विपुलम् अपि च वर्द्धिष्यति आरब्ध्या द्व्यर्द्धं
८. वर्द्धिष्यति । इदं च श्रावणं श्रावितम् व्युष्टेन २०० ५० ६ (२५६) । तत् एवं देवानां प्रियः
९. आह । मातृपित्रोः शुश्रूषितव्यम् । गुरुत्वं प्राणेषु द्रढयितव्यम् । सत्यं
१०. वक्तव्यम् । ते इमे धर्मगुणाः प्रवर्त्तयितव्याः । एवमेव अन्तेवासिना
११. आचार्यः अपचेतव्यः । ज्ञातिकेषु च कुले यथार्हं प्रवर्त्तयितव्यम् ।
१२. एषा पुराणी प्रकृतिः दीर्घायुषे च [भवति] एतत् एवं कर्तव्यम् च ।
१३. पडेन लिखितं लिपिकरेण ।

पाठ टिप्पणी

१. यह शब्द 'सुवेंणगिरिते' जैसा दिखायी पड़ता है । परन्तु सिद्धपुर संस्करणमें 'सुवण' बिलकुल स्पष्ट है ।
२. पूर्ति 'उपासके' ।
३. ब्यूलर 'पकते' ।
४. वही 'पक[म भी]णेण' । 'पकमभीणेन' पाठ अधिक शुद्ध है ।
५. [यथा खुदका च] ।
६. पक[मे होति] ।
७. ब्यूलर 'लिखित' ।
८. यह शब्द खरोष्ठी लिपिमें उत्कीर्ण है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. सुवर्णगिरि[1]से आर्यपुत्र[2] (राजकुमार = राज्यपाल) और महामात्योंकी आज्ञासे ऋषिल[3] के महामात्योंका आरोग्य पूछना चाहिये (और यह कहना चाहिये कि) देवानांप्रियकी विज्ञप्ति है—
२. "ढाई वर्ष"से अधिक व्यतीत हुए मैं उपासक था । परन्तु अधिक पराक्रम मैंने नहीं किया एक वर्षतक, किन्तु एक वर्ष और कुछ अधिक बीते
३. जब मैं संघको शरणमें गया ।[4] मैंने अधिक पराक्रम किया । इस कालमें अमिश्र सामान्य मनुष्य जम्बुद्वीपमें
४. देवताओंसे मिश्र हुए । पराक्रमका यह फल है । केवल बड़े लोगोंसे ही यह प्राप्त करने शक्य नहीं । स्वेच्छासे निश्चय ही क्षुद्र व्यक्ति द्वारा भी
५. पराक्रमसे विपुल स्वर्गका प्राप्त करना शक्य है । इस प्रयोजनके लिए यह श्रावण सुनाया गया ।

६. क्षुद्र और महान् इसके लिए पराक्रम करें। सीमावर्ती लोग भी इसे जानें। और चिरस्थायी यह
७. पराक्रम होवे। यह प्रयोजन बढ़ेगा। प्रचुर रूपसे बढ़ेगा। प्रारम्भसे डेढ़ा
८. बढ़ेगा। यह श्रावण सुनाया गया व्युष्ट २०० ५० ६ (२५६) (=पड़ाव) में। वहाँ देवानां प्रियने ऐसा
९. कहा, "माता-पिताकी शुश्रूषा करनी चाहिये। प्राणियोंमें आदर-भाव दृढ़ करना चाहिये। सत्य
१०. बोलना चाहिये। इन धर्मगुणोंका प्रवर्तन करना चाहिये। इसी प्रकार अन्तेवासी (विद्यार्थी) द्वारा
११. आचार्यका समादर करना चाहिये। जातिवालों और कुलमें यथायोग्य व्यवहार करना चाहिये।
१२. यह पुरानी प्रकृति (परम्परा) है जिससे दीर्घायुष्य (प्राप्त) होता है। और इसका पालन होना चाहिये।
१३. लिपिकर पड द्वारा यह लिखा गया।

भाषान्तर टिप्पणी

१. कर्णाटकमें सिद्धपुर, जतिंग रामेश्वर और ब्रह्मगिरि तीन स्थानोंमें अशोकके तीन लघु शिला-लेख मिले हैं। इनमें ब्रह्मगिरिका अभिलेख सबसे अधिक सुरक्षित है। साम्राज्यके दक्षिणी प्रदेशके राज्यपाल द्वारा ये प्रचारित हुए थे। सुवर्णगिरि और इसिला (ऋषिल) दोनोंकी ठीक पहचान करना कठिन है। ब्यूलरके मतमें सुवर्णगिरि पश्चिमी घाटमें स्थित था। फ़्लीटने राजगृहके पास 'सोनागिरि'से सुवर्णगिरीको मिलाया था (ज० रा० ए० १९०९ पृ० ९९८)। कृष्णशास्त्रीके अनुसार मास्कीका समीपवर्ती प्रदेश, जहाँ सोनेकी खानें हैं, सुवर्णगिरि था। सम्भवतः मास्कीके दक्षिणमें यह 'कनकगिरि' है।

२. राजकुमार जो दक्षिण-प्रदेशका राज्यपाल था।

३. कर्णाटकमें सिद्धपुरके पास स्थित।

४. अर्द्धतृतीयानिका अर्थ है तीसरे वर्षका आधा अर्थात् दो वर्ष और आधा वर्ष=ढाई वर्ष।

५. भिक्षुगतिक हुआ। भिक्षुगतिक उपासक और भिक्षुके बीचकी अवस्था है।

सिद्धपुर अभिलेख

१. सुवंणगिरीते अयपुतस महामाता–
२. णं च वचनेन इसिलसि महामाता
३. आरोगियं वतविया [१] देवानंपिये हेवं
४. आह [२] अधिकानि आढतियानि वसानि
५. य हकं उपासके [३] नो तु खो बाढ पकंते हुसं एकं सवछं[1]—[४]
६. सातिरेके तु खो संवछरे यं मया संघे उपयीते बाढं
७. च मे पकंते [५] इमिना चु कालेन अमिसा समाना मु
८.······जंबुद···मिसा देवेहि [६] पकमस हि इयं फले [७] नो हि इ[2]–
९. य सके म······नेव पापोतवे कामं तु खो खुदकेन
१०. पि प······न विपुले स्वगे सके आराधेतवे [८]
११. से······य इयं सावणे साविते यथा खु–
१२. दका च महात्पा च इमं पकमेयु ति अता[3] च
१३. ·········चिरठिकीते[4] च इयं पकमे होति[5] [९]
१४. ·········वढिसिति विपुलं पि च वढिसिति अ
१५. ·········यढियं वढिसिति [१०] इयं च सावणे
१६. ·········[११] २०० ५०६ [१२] मा······सितविये
१७. ·········शितव्यं शपं वत······यं इमे धंमगु
१८. ·········[१३] हेमेव अं······आचरिये अपचायितविये सु
१९. ·········[१४] एसा पोराणा···किती दीघावुसे च [१५] हेमेव···[a] तेविसिने[6] च
२०. आचरिये······थारहं पवतितव······म······
२१. ·········स[7] तथा कटविये [१६] चप·········
२२. ······ण[8] [१७]

संस्कृतच्छाया

१. सुवर्णगिरितः आर्यपुत्रस्य महामात्रा–
२. णां च वचनेन ऋषिले महामात्रा
३. आरोग्यं वक्तव्या। देवानां प्रियः एवम्
४. आह। अधिकानि अर्द्धतृतीयानि वर्षाणि
५. यत् अहम् उपासकः। न तु खलु बाढं प्रक्रान्तः। अभूवं एकं संवत्सरम्···
६. सातिरेकः तु खलु संवत्सरः यत् मया संघः उपेतः बाढं
७. च मया प्रक्रान्तम्। अमुना तु कालेन अमिश्राः समानाः म–
८. [नुष्याः] जम्बुद्व[ीपे] मिश्राः देवैः। प्रक्रमस्य हि इदं फलम्। न हि इ–
९. दं शक्यं महात्मनैव प्राप्तुम्। कामं तु खलु क्षुद्रकेण
१०˙ अपि प्र[क्रममाणे] न विपुलः स्वर्गः शक्यः आलब्धुम्।
११. तत् [एतस्मै अर्था]य इदं श्रावणं श्रावितम् यथा क्षु-
१२. द्रकाः च महात्मानः च इमं प्रक्रमेरन् इति अन्ताः च
१३. [मे जानीयुः] चिरस्थितिकः च अयं प्रक्रमः भवतु।
१४. [अयं च अर्थः] वर्द्धिष्यति विपुलं च वर्द्धिष्यति अ–
१५. [वराधिकेन] द्व्यर्द्धं वर्द्धिष्यति। इदं च श्रावणं
१६. [व्युष्टेन] २०० ५० ६ [=२५६]। मा [ता पित्रोः] शुश्रूषितव्यम्।
१७. [गुरुत्वं प्राणेषु] द्रढयितव्यम्। सत्यं वक्त[व्यम्]। ते इमे धर्मगु–
१८. णाः प्रवर्त्तयितव्याः] एवमेव अ[न्तेवासिना] आचार्यः अपचेतव्यः।

१९. ज्ञातिकेषु च कुले यथार्हं प्रवर्त्तयितव्यम्]। एषा पुराणी [प्र] कृतिः दीर्घायुषे च (भवति)। एवमेव [अ]न्तेवासिना च
२०. आचार्यः······[य]थार्हं प्रवर्त्तयितव्यम्।······म······
२१.······एतत् तथा कर्तव्यम्। च प [डेन]
२२. [लिखितं लिपि करे] ण।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'संवद्ध'।
२. वही 'इ' का लोप कर दिया है।
३. वही 'अंता'।
४. वही 'चिरथितीके'।
५. वही 'होतु'।
६. 'अंतेवासिने' पाठ शुद्ध है।
७. ब्यूलर 'एस'।
८. यह शब्द-खण्ड खरोष्ठीमें लिखा है।

हिन्दी भाषान्तर

१. सुवर्णगिरि'से आर्यपुत्र (राजकुमार) और महामात्यों
२. के वचनसे इषिलमें महामात्रोंका
३. आरोग्य पूछना चाहिये। (और सूचित करना चाहिये कि) देवानां प्रियने ऐसा
४. कहा—"ढाई वर्षसे कुछ अधिक
५. मैं उपासक था। अधिक पराक्रम नहीं किया एक संवत्स[र तक]।
६. एक संवत्सरसे अधिक हुआ मैंने संघकी शरण ली। अधिक
७. मैं पराक्रम करता हूँ। इस कालमें अमिश्र सामान्य म—
८. [नुष्य] जम्बुद्व] ीपमें देवताओंके साथ मिश्र हुए। पराक्रमका ही यह फल है। नहीं
९. यह प्राप्त होने शक्य है केवल बड़े पदवालोंसे। स्वेच्छासे निश्चय ही क्षुद्र द्वारा
१०. भी पराक्रमसे विपुल स्वर्ग प्राप्त करना शक्य है।
११. इसलिए इस प्रयोजनके लिए यह श्रावण सुनाया गया जिससे क्षु—
१२. द्र तथा महान् इसके लिए पराक्रम करें। और सीमावर्ती
१३. [लोग भी जानें] यह पराक्रम चिरस्थायी होवे।
१४. [यह प्रयोजन] बढ़ेगा। प्रचुर रूपसे बढ़ेगा।
१५. [कमसे कम डेढ़ा] बढ़ेगा। यह श्रावण
१६. [व्युष्ट (पड़ाव] २०० ५० ६ (२५६)। में सुनाया गया।"—"माता पिताकी शुश्रूषा करनी चाहिये।
१७. [प्राणियोंमें आदर-भाव] दृढ़ करना चाहिये। [सत्य बोलना चाहिये।] इन धर्म-गु—
१८. [णों का प्रवर्तन करना चाहिये।] इसी प्रकार अन्तेवासी द्वारा आचार्यका आदर करना चाहिये।
१९. [जातिवालों और कुलमें यथायोग्य व्यवहार करना चाहिये।] यह पुरानी [प्र] कृति दीर्घायुष्यके लिए होती है। इसी प्रकार अन्तेवासी द्वारा
२०. आचार्यका [आदर होना चाहिये। जातिवालों और कुलमें य]था योग्य व्यवहार करना चाहिये।
२१. ······यह उसी प्रकार कर्तव्य है। और प[ड]
२२. [लिपिकरसे यह लिखा गया।]

भाषान्तर टिप्पणी

(दे० ब्रह्मगिरि अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।)

जटिंग रामेश्वर अभिलेख

१. ···तान च व···
२. इसि···विया[१] देवान···[२]
३. ···य हकं······
४. खो बाढ···[४]···तिरेके···
५. यं···या······
६. ण······
७. हि इयं···
८. ·········
९. ·········
१०. ···च···हिस···
११. ···पुलं पि···यडियं···[९]
१२. इ···सावणे···थेन [१०] २०० ५०६ [११] हेमेव
१३. मातापितुसु···सितविये हेमेव···न ेसु
१४. ·· ध्रितव्यं सचं वतवियं से[१] इमे···
१५. हेवं पवतितविया [१२] स्वअं न ते सतवस···
१६. तविय[२] हेमेव आचरिये अंतेवासिना···
१७. ···राणा पकती···सितविया···विये
१८. ···चरिये अ[३]···आचरियश अतिका ते···यथारहं पव—
१९. तितविये [१३] एसा पोराणा पकिती[४] दीघा···च [१४] हेमेव श···ो···
२०. च य···वतितविये [१५] हेवं धंमे[५] देवणंपिय···
२१. ···वं कटविये [१६]···डेन लिखितं
२२.···पिकरेण[६] [१७]

संस्कृतच्छाया

१. [सुवर्णगिरितः आर्य पुत्रस्य महामा] त्राणां च व [चनेन]
२. अ[इ]षि[ले महामात्याः आरोग्यं वक्त] व्याः। देवानां[प्रियः]

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'ए'।
२. इस पंक्तिका अर्थ स्पष्ट नहीं है।
३. ब्यूलर 'इ [ते]'।
४. वही 'पकिति'।
५. वही 'हेवं [मे]'।
६. यह शब्द खरोष्ठीमें लिखा है।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये ब्रह्मगिरि अभिलेखका भाषान्तर)

एर्रगुडि अभिलेख[1]

(पराक्रमका फल : कर्तव्योपदेश)

१. देवानां पिये हेवं हआ[2] । [स] ाधिकानि···
२. ते[कप] रळवसं कंए खो तु नो । केऽपाउ कंह[यं][3]
३. हुस साति[रे]कं [तु खो] सवछरे यं मया संघे उपयि-
४. [अ] [न] लेका च नामि इ [।] तेकप मे च हवा ते[4]
५. मिसा मुनिसा देवे हि ते दानि मिसिभूता । पकमस हि (एस फले) ।
६. खु येकिय़ व नेत्पहम [न][5]
७. दकेन पि प[क]···घेतवे । ए
८. [म] मोनेन सकिये विपुले आरा···ताय च अठाय इयं
९. [स]ावने साविते अथा खुदक-महधना इमं पराकमेवू अं
१०. च कातिहिरचि वुनेजा मे च ता[6]-
११. इ[यं] पकमे होतु विपुले पि च वढसिता अपरधिया दियढियं ।
१२. सा नेवसा च यं [इ][7]
१३. [वापि] ते व्यूथेन २०० ५० ६ हेवं देवानं देवानंपिये आह यथा देवान
१४. । [यन्तिक थात हा आ] ये पि[8]
१५. [राजू]के आनपित विये
१६. न आ दपनजा नीदा ते[9]
१७. -पयिसति रठिकानि च । माता पितूसु सु [सु]-
१८. सितविये हेमेव गरूसु सु स्रसितविये पानेसु दयितविये सच वतविय
१९. सुसुम धंमगुना पवतितविया । हेवं तुफे आनपयाथ देवानां पियस वचनेन । हे
२०. पन आ व मे[10] ।
२१. यथ हथियारोहानि करनकानि यू [ग्य] चरियानि बंभनानि च तुफे । हेवं निवेसया-
२२. थ अतेवासोनि या [रि] सा पोराना पकिति । इयं सुसुसितविये अपचायना य वा सव मे आचरि-
२३. यस यथाचारिन आचरियस । नातिकानि यथारह नातिकेसु पवतितविये । हे सा[पि]
२४. अंतेवासीसु यथारह पवतितविये यारिसा पोरना पकिति । यथारह यथा इयं
२५. आरोके सिया हेवं तुफे आनययाथ निवेसयाथ च अंतेवासीनि । हेवं दे-
२६. तियपनआ येपि नं वा[11] ।

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः एवं आह । [स]ाधिकानि
२. यत् अहम् उपासकः(अस्मि); नो तु खलु एकं संवत्सर प्रकान्तः
३. अभूवम् । सातिरेकं तु खलु संवत्सरं यत् मया संघः उपेतः
४. तत् बाढं च मया प्रक्रान्तम् । अनेन च कालेन [अ]—
५. मिथ्या मनुष्याः देवैः ते इदानीं मिश्री भूता । प्रक्रमस्य हि (एतत् फलम्) ।
६. न महात्मनैव शक्यः क्षु-
७. द्रकेण अपि प्रक्रममाणेन शक्यः विपुलः स्वर्गः आलब्धुम् ।
८. एतस्मै च अर्थाय इदं
९. श्रावणं श्रावितम् यथा क्षुद्रक-महात्मानः च पराक्रमेयुः अं—
१०. ता च मे जानीयुः चिरस्थितिकः च
११. अयं प्रक्रमः भवतु विपुलम् अपि वर्द्धिष्यति अपराधिकेन द्व्यर्द्धम् ।
१२. इदं च श्रावणं श्रा—

१३. विवं व्युष्टेन २५६। एवं देवानां प्रियः आह—यथा देवानां—
१४. प्रियः आह तथा कर्तव्यम्।
१५. रज्जुकाः आज्ञापयितव्याः—
१६. ते इदानीं जानपदं आज्ञा—
१७. पयिष्यन्ति राष्ट्रिकान् च। मातृपित्रोः शुश्रू—
१८. षितव्यम्। एवमेव गुरुषु शुश्रूषितव्यं प्राणेषु दयितव्यं सत्यं वक्तव्यं
१९. शुष्म (सूक्ष्म)-धर्मगुणाः प्रवर्त्तयितव्याः। एवं यूयम् आज्ञापयत देवानां प्रियस्य वचनेन। ए-
२०. वमेव आज्ञापयत
२१. यथा हस्त्यारोहान् करणकान् युग्मचर्यान् (रथरोहान्) ब्राह्मणान् च यूयम्—एवं निवेशय (=अध्यापय-
२२. त) अन्तेवासिनः यादृशी पुराणी प्रकृतिः। इदं शुश्रूषितव्यम् अपयाचना या वा सर्वा मे आचा-
२३. र्यस्य, यथाचारिणः आचार्यस्य। ज्ञातिकैः यथार्हं ज्ञातिकेषु प्रवर्त्तयितव्या। एषा [अपि]
२४. अंतेवासिषु यथार्हं प्रवर्त्तयितव्या यादृशी पुराणी प्रकृतिः। यथार्हम् इयम्
२५. अरोका स्यात् एवं यूयम् आज्ञापयत निवेशयत च अन्तेवासिनः। एवं दे-
२६. वानां प्रियः आज्ञापयति।

पाठ टिप्पणी

१. इस अभिलेखका पाठ इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, जिल्द ७ और ९ तथा आर्के सर्वे इण्डिया, ऐनुअल रिपोर्ट, १९२८-२९ प्लेट ६२ मे तैयार किया गया है। पंक्ति १ से १६ तक यह वलीवर्द शैलीमें उत्कीर्ण हुआ है। पंक्ति २० और २६ पुनः दाहिनेसे बायें लिखी गयी है। कहीं कहीं एक पंक्तिके अक्षर दूसरीमें उत्कीर्ण हैं। लेखनकी एक दुरूह कृत्रिम शैलीका यह उदाहरण है। कुछ विद्वानोंने इसमें ब्राह्मीके पूर्व तथाकथित सामी रूप (वाम-मार्गी)का दर्शन किया है। परन्तु आधी पंक्तियाँ दक्षिण-गामिनी हैं और वाम-गामिनी पंक्तियोंके अक्षर भी अपने शुद्ध रूपमें है अर्थात् अक्षरोंकी दिशा वाम-मार्गी नहीं है। अतः लेखनके इस द्रविड-प्राणायामसे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि मूल ब्राह्मी लिपि वाम-मार्गी थी।

२. दाहिनेमे बायें पढ़िये : आह।

३. दाहिनेमे बायें पढ़िये : य हकं उपासके ··पकते।

४. ,, ,, ,, : ते बाढ' ·न अ

५. ,, ,, ,, : न महात्पने···खु

६. ,, ,, ,, : [अं] ता च मे···चिरठितिका च

७. ,, ,, ,, : इयं च···सा

८. ,, ,, ,, : पि ये···कंतविय।

९. ,, ,, ,, : ते दानि जानपद आ न

१०. ,, ,, ,, : मेव आनप–

११. ,, ,, ,, : —वानं पिये आनपयति

हिन्दी भाषान्तर[१]

१. देवानां प्रियने ऐसा कहा—कुछ अधिक [ढाई वर्ष व्यतीत हुए
२. मैं उपासक' रहा। किन्तु निश्चय ही एक संवत्सर पराक्रमशील नहीं
३. हुआ। एक संवत्सरसे अधिक हुआ जब मैंने संघकी शरण ली।
४. तबसे अधिक पराक्रम मैंने किया है। इस कालमें अ-
५. मिश्र मनुष्य देवताओंके साथ इस समय मिश्रीभूत किये गये हैं। पराक्रमका ही [यह फल है।]
६. केवल बड़े लोगोंसे ही यह शक्य नहीं। क्षु-
७. द्रके द्वारा भी पराक्रमसे विपुल स्वर्गका प्राप्त करना शक्य है।
८. इस प्रयोजनके लिए यह
९. श्रावण सुनाया गया जिससे छोटे और बड़े पराक्रम करें और सी-
१०. मावर्ती लोग भी जानें और चिरस्थायी
११. यह पराक्रम होवे। यह प्रचुर रूपसे बढ़ेगा, कमसे कम डेढ़।
१२. यह श्रावण सु-
१३. नाया गया व्युष्ट (पड़ाव) २०० ५० ६ (२५६) (में)।' देवानां
१४. [प्रियने कहा है वैसा करना चाहिये।
१५. रज्जुकोंको आज्ञा देनी चाहिये।
१६. वे इस समय जानपदोंको आज्ञा-
१७. करेंगे। राष्ट्रिकोंको भी।[१]—"माता-पिताकी सुश्रू-
१८. षा करनी चाहिये। इसी प्रकार गुरुओंकी शुश्रूषा करनी चाहिये। प्राणियोंपर दया करनी चाहिये। सत्य बोलना चाहिये।
१९. इन सूक्ष्म धर्म गुणोंका प्रवर्तन होना चाहिये। देवानां प्रियके वचनसे आप इस प्रकारकी आज्ञा करें। ऐ-
२०. सी आज्ञा करें
२१. हाथीकी सवारी करनेवाले अधिकारियों (न्यायाधीशों), लेखकों और रथारोही ब्राह्मणोंको। इसी प्रकार आदेश करें
२२. सीमावर्ती लोगों (अथवा विद्यार्थियों)को—"यह पुरानी प्रकृति है।" इसे सुनना चाहिये। जो सम्पूर्ण अर्चना है मेरे आचा-

२३. पैंकी मिलनी चाहिये जो आचार्यका आचरण करता है। ज्ञातिवालों द्वारा ज्ञातिमें यथायोग्य व्यवहार करना चाहिये। यह
२४. अन्तेवासियोंमें भी यथायोग्य प्रवर्तित होनी चाहिये जो पुरानी प्रकृति है। यह (श्रावण) योग्य (तथा)
२५. सारगर्भित हो। इस प्रकारका आदेश और निर्देश आप अन्तेवासियोंको दें। ऐसा दे-
२६. वानांप्रिय आज्ञा करते हैं।

भाषान्तर टिप्पणी

१. देखिये पंक्ति १ से १७ तकके लिए रूपनाथ अभिलेखकी भाषान्तर-टिप्पणी।
२. दक्षिणी संस्करणोंमें 'उपासक' शब्दका प्रयोग हुआ है, जिसका अर्थ है 'गृहस्थ अनुयायी'।
३. ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर और जटिंग रामेश्वरमें यह अभिलेख 'चपडेन लिखित' (ब्राह्मीमें) और 'लिपिकोण' (खरोष्ठीमें) के साथ समाप्त होता है।

गोविमठ अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. देवानं पिये हेवं आह । सातिरेकाणि अढतियाणि वसाणि यं सुमि उपा
२. सके । नोचु खो बाढं पकंते हुस संवछरे सातिरेके···संघे उपेति बाढं
३. च मे पकंते । इमायं वेलायं जंबुदीपसि अमिसा देवा समाना
४. माणुसेहि से दाणि मिसा कटा । पकमस एस फले । णो हि इयं महतेणेव च
५. किये पापोतवे । खुडकेन पि पकममीणेन विपुले पि चकिये स्वगे आराधयितवे । ए
६. ताये च अठाये इयं सावणे । खुडका च उडारा च पकमंतु ति । अंतापि च जाणन्तु । चिरठितिके च पकमे होतु । इयं
७. अठे वढिसिति विपुले च वढिसिति दिय
८. ढियं पि च वढिसिति ।
९. स [१] [व्यु] थेन २०० ५० ६ ।

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः एवम् आह । सातिरेकानि अर्द्धतृतीयानि वर्षाणि उपा-
२. सकः । न तु खलु बाढं प्रक्रान्तः । सातिरेकं संवत्सरं···संघं उपेतः बाढं
३. च मया प्रक्रान्तः । अस्यां वेलायां जम्बुद्वीपे अमिश्रा देवा समानाः
४. मनुष्येभ्यः ते इदानीं मिश्रा कृताः । प्रक्रमस्य इदं फलम् । न हि इदं महता एव श-
५. क्यः प्राप्तुम् । क्षुद्रकेन अपि प्रक्रममाणेन विपुलोऽपि स्वर्गः शक्यः आलब्धुम् । ए-
६. तस्मै च अर्थाय इदं श्रावणम् । क्षुद्रकाश्च उदाराश्च प्रक्रमन्ताम् इति । अन्त्या अपि च जानन्तु । चिरस्थितिकश्च प्रक्रमः भवतु । अयं
७. अर्थः वर्द्धयिष्यति । विपुलश्च वर्द्धयिष्यति । द्व्य-
८. र्द्धमपि वर्द्धयिष्यति ।
९. श(त विवासात्) व्युष्टेन २५६ ।

हिन्दी भाषान्तर

(दे० रूपनाथ ल० शि० अ० का हिन्दी भाषान्तर ।)

पालकि गुंडी अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१.
२.
३. माणु से···
४. णो हि इयं···व···
५. ···मीणेण विपुले पि चकि (ये) स्वग आर···
६. च पकमंतु ति । अंता पि च जाणन्तु । (चि)···के···
७. च वढिसिति···दियढियं पि च···।

संस्कृतच्छाया

१.
२.
३.
४.
५. ···(प्रक्रम) माणेन विपुलोऽपि शक्यः स्वर्गः आर (ाधयितुम्)
६. च प्रक्रमन्ताम् इति) अन्त्याऽपि च जानन्तु । (चिरस्थिति) कः···
७. च वर्द्धयिष्यति···द्व्यर्द्धमपि च···

टि० खण्डित और अपूर्ण होनेके कारण हिन्दी भाषान्तर नहीं दिया गया ।

राजुल मंडगिरि अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. देवानं पिये हेवा ह । अधि [का] नि [च] अ···के । नो तु [खो] ए (कं) सं [वछर] [प] कं ते हुसं···[सा] तिरेके···[पया] ते वा
२. हं च मे पकंते । [इ] मिना चु का[ले] न अ···[भूता] [प]क[म] फले । नो हि यं महत्पे[नि]व सकिये । [खु] दा[के]···

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः एव (म् आ) ह । अधि [का] नि [च] अ [र्द्ध तृतीयानि वर्षाणि उपास] कः । न तु [खलु] ए [कं] सं [वत्सरं] प्रक्रान्तः··· [सा] तिरेकं···[प्रया] तः वा-
२. ढं च मया प्रक्रान्तः । [अ] नेन च का [ले] न अ [मिश्राः देवाः मिश्रीभूताः] । [प्र] क्र [मस्य] फलम् । न हि अयं महता एव शक्यः । [क्षु] द्र [के]

टि० खण्डित और अपूर्ण होनेके कारण हिन्दी भाषान्तर नहीं दिया गया ।

अहरौरा अभिलेख

(पराक्रमका फल)

१. [1]..य [ज] त
२. ....घिका.................
३. ....[न] च वाढं पलकंते
४. ....च पलकंते [।] एतेन
५. अंतल[2]..............................मिं[3]स देवा कटा [।]
६. पल क म [स]..........न पि सकये पापोतवे[।]खुदकेन पि
७. पलकममीनेना विपुले पि स्वग [सं[4]] क्ये आलाधेतवे [।] एताये अठाये
८. इयं सावने [।] खुदका च उडाला च पलकमंतू [।] अंता पि जानंतू [।]
९. चीलठीतीके च पलकमे होतू [।] इयं च अठे वढिसति विपुलं पि च
१०. वढिसती [।] दियढियं [अ] वल धिया वढिसती [।] एस सावने विवुथेन
११. दुवे सपंना लाति सति [सं] मं[सं][5] बुधस सलीले आलोढे च [।]

संस्कृतच्छाया

१.
२.
३. [सातिरेकाणि सार्धद्वयानि वर्षाणि अस्मि अहं श्रावकः] [न] च वाढं पराक्रान्तः
४. [सातिरेकः तु संवत्सरः य [अस्मि संघम् उपेतः वाढं] च पराक्रान्तः [।] एतेन
५. अन्तरेण [जम्बूद्वीपे ये अमिश्रा देवा अभूवन् ते इदानीं] मिश्राः देवाः कृताः [।]
६. पराक्रम [स्य] [इदं फलम् । इदं महतैव] न अपि शक्यत प्राप्तुम् [।] क्षुद्रकेण अपि
७. पराक्रममाणेन विपुलः अपि स्वर्गः शक्यः आलब्धुम् [।] एतस्मै अर्थाय
८. इदं श्रावणम् [।] क्षुद्रकाश्च उदाराश्च पराक्रमन्तु [।] अन्ता अपि जानन्तु [।]
९. चिरस्थितिकश्च पराक्रमः भवतु । अयं च अर्थः वर्द्धिष्यति विपुलमपि च
१०. वर्द्धिष्यति [।] द्व्यर्द्धम् अवराधिकेन वर्द्धिष्यति [।] एतत् श्रावणं व्युष्टेन
११. षट्पञ्चाशदधिक द्विरात्रिशतेन [स] म्यक् [सं] बुद्धस्य शरीरे आरुढे च [।]

पाठ टिप्पणी

१. म. म. डॉ. मीराशीने प्रथम दो पंक्तियोंको अत्यन्त भग्न होनेके कारण नहीं पढा (भारती, का. वि. वि., म '५ भाग १. पृ. १४०)।
२. गुजर्रा संस्करणमें 'अंतरेना' पाठ है।
३. पाठ 'मिसा' होना चाहिये। उत्कीर्णककी भूलसे 'आ'- मात्राके बदले अनुस्वार उत्कीर्ण हो गया है।
४. मीराशी इसको 'च' पढ़ते हैं।
५. इसको डॉ. अ. कि. नारायण 'अ मं (म्ह) [१ न] पढ़ते हैं (भारती. का. वि. वि., म. '५ भाग १ पृ. १०५) परन्तु प्रस्तुत पाठ अधिक समीचीन है।

हिन्दी भाषान्तर

१. ....
२. ....
३. [कुछ अधिक ढाई वर्षसे मैं श्रावक हूँ किन्तु] अधिक पराक्रम नहीं किया।
४. [कुछ एक वर्षसे अधिक हुए मैं संघ-शरण गया अधिक] पराक्रम किया। इस
५. बीचमें [जम्बूद्वीपमें जो अमिश्र देवता थे वे इस समय] मिश्र देवता किये गये हैं।
६. पराक्रम [का यह फल है। यह महान्से ही] नहीं प्राप्त होने शक्य है। क्षुद्र द्वारा भी
७. पराक्रम करनेवालेसे विपुल स्वर्ग भी प्राप्त होने शक्य है। इस प्रयोजनके लिए
८. यह श्रावण (किया गया)। (जिससे) क्षुद्र और उदार (महान्) पराक्रम करें। सीमान्तके लोग भी जाने।
९. यह पराक्रम चिरस्थायी हो। यह प्रयोजन बढ़ेगा और अधिक
१०. बढ़ेगा। कमसे कम[1] से डेढ़ा बढ़ेगा।[2] यह श्रावण (विज्ञप्ति) प्रवास[3] (पड़ाव) की
११. दो सौ छप्पनवीं रात्रिमें[4] किया गया जब सम्यक् संबुद्धके शरीर (अवशेष) की प्रतिष्ठापना हुई थी।[5]

भाषान्तर टिप्पणी

१. हुल्ज, बसाक, भाण्डारकर और मुकर्जीने 'अवलधिया' का अर्थ 'कमसे कम किया है। इसका आधार पाणिनि ५, ४, ४७ है, जहाँ 'अवरार्द्ध'का अर्थ 'न्यूनतम' है। परन्तु ऐसा भी सम्भव है कि 'अवलधिया'का प्रयोग बौद्ध पारिभाषिक अर्थमें किया गया हो। इस अभिलेखमें पराक्रम (परकम धातु) की महिमा बतलायी गयी है। परकमधातुका मूल 'आरम्भधातु' है। इसलिए इसकी वृद्धिकी कामना की गयी है। पालिमें 'आरम्भ' धातुमें क्तिन् प्रत्यय लगनेपर 'आरद्धि' शब्द बनता

है। मागधीमें र का ल और आ का अब (वनतरगा चागमा, मोग्गलान १, ४५) हो जाता है। अतः 'अवलभिया' का अर्थ 'आरम्भ भातुसे' भी किया जा सकता है (दे० डॉ० अ. कि. नारायण, भारती, का. कि. वि. सं० ५ भा० १ पृ० १०५)।

२. कोई कोई इसका अर्थ 'ढाई' करते हैं। दियदिय' (= द्वयर्द्ध) का अर्थ 'डेढ़' ही ठीक है।

३. डॉ० नारायणने 'विवुथ'को 'विवृत' (= प्रकाशित) के अर्थमें ग्रहण किया है (भारती, का. वि. वि. ५. १. पृ० १०५)। किन्तु श्रावण (घोषणा) तो स्वय प्रकाशित होती है; इसका 'प्रकाशित' क्रिया-विशेषण अनावश्यक है। यह वि√वस् + क्त का ही पालिरूप है। दिनके बदले 'रात' (लाति) का प्रयोग 'पड़ाव' का द्योतक है।

४. अन्य लघु शिला अभिलेखोंमें अंकमें २०० ५० ६ (२५६) पाया जाता है। इसका अर्थ है प्रवास (पडाव) की २५६ वीं रात्रिमें। कुछ विद्वान बुद्धके निर्वाण-संवत्का २५६ वाँ वर्ष मानते हैं। किन्तु ऐसा माननेसे इस अभिलेख (तथा अन्य ल० शि० अ०) का समय ४८३-२५६ = २२७ ई० पू० होगा, जब कि इस अभिलेखके ही साक्ष्यपर इसका समय अशोकके १२वें राज्य-वर्ष (२७२-१२ = २६० ई० पू०) में होना चाहिये।

५. 'सलीले आलोढे' (= शरीरे आरूढे) का अर्थ 'शरीरे आलोके' (शरीरका निर्वाण) करना आवश्यक नहीं। इसका सहज अर्थ है 'अशोक द्वारा बुद्ध-शरीरके अवशेषकी प्रतिष्ठापना'। बौद्ध परम्पराके अनुसार अशोकने पुराने बौद्ध स्तूपोंको खोलकर और भगवान् बुद्धके अवशेषोंको अंशोंमें बाँटकर चौरासी सहस्र स्तूपोंका निर्माण कराया था। इस अभिलेखके अनुसार प्रवासके २५६वीं रातमें भी एक स्तूपकी स्थापना हुई।

तृतीय खण्ड : गुहा अभिलेख

बराबर गुहा

प्रथम अभिलेख

(आजीविकोंको गुहादान)

१. लाजिना पियदसिना दुवाडसवसामिसितेना[1]
२' इयं निगोहकुभा दिना आजीविकेहि ।

संस्कृतच्छाया

१. राजा प्रियदर्शिना द्वादशवर्षाभिषिक्तेन
२. इयं न्यग्रोधगुहा दत्ता आजीविकेभ्यः ।

पाठ टिप्पणी

१. इन शब्दोंके अक्षर कुरेदे हुए हैं । लगता है कि कभी इनको मिटानेका प्रयत्न किया गया हो ।

हिन्दी भाषान्तर

१. राजा प्रियदर्शी द्वादशवर्षाभिषिक्त द्वारा
२. यह न्यग्रोधगुहा[1] दी गयी आजीविकोंको ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. यह गुहाका नाम है । दशरथके गुहा अभिलेखोंमें भी गुहाओंके नाम पाये जाते हैं (इण्डियन ऐंटिक्वेरी, जि० २०, पृ० ३६४)
२. एक धार्मिक सम्प्रदायके अनुयायी । इसके प्रवर्तक बुद्ध और महावीरके समकालीन मक्खलि घोषाल थे । दे० बाशम : हिस्ट्री एण्ड डॉक्ट्रिन्स ऑफ दी आजीविकस ।

द्वितीय अभिलेख

(आजीवकोंको गुहादान)

१. लाजिना पियदसिना दुवा-
२. डसवसामिसितेना इयं
३. कुभा खलतिकपवतसि
४. दिना [आजीवि]केहि[१]

संस्कृतच्छाया

१. राज्ञा प्रियदर्शिना द्वा-
२. दशवर्षाभिषिक्तेन इयं
३. गुहा खलतिक पर्वते
४. दत्ता [आजीवि] केभ्यः।

पाठ टिप्पणी

१. कोष्ठके भीतरके अक्षर कुरेद दिये गये हैं। ऐसा लगता है कि आजीविकोंको यह दान किसी व्यक्तिको सह्य नहीं था, अतः उसने उनके नामको काट देनेकी चेष्टा की। सम्भवतः अशोकके परवर्ती किसी व्यक्तिने ऐसा किया।

हिन्दी भाषान्तर

१. राजा प्रियदर्शी द्वा-
२. दशवर्षाभिषिक्त द्वारा यह
३. गुहा खलतिक[१] पर्वतमें
४. दी गयी आजीवकों[२]को।

भाषान्तर टिप्पणी

१. अशोकके समयमें बराबर पहाड़ियोंका नाम **खलतिक पर्वत** था। पतञ्जलि महाभाष्य (१. २. २) में इस पर्वतका उल्लेख हुआ है (खलतिकस्य पर्वतस्य अदूर-भवानि वनानि खलतिकं वनानि)। खारवेलके हाथी गुम्फा अभिलेख (प० ७) में इस पर्वतका नाम 'गोरथगिरि' है। मौखरिअभिलेख (अनन्तवर्मन् ६-७वीं शती)में' जो बराबर पहाड़ियोंके लोमशऋषि गुहाओंमेंसे चौथीमें पाया गया है, इस पर्वतका नाम 'गोरथगिरि' ही है।
२. धार्मिक सम्प्रदाय विशेष। इसके प्रवर्तक मक्खलिघोषाल थे।

तृतीय अभिलेख

(गुहादान)

१. लाजपियदसी एकुनवी-
२. सतिवसाभिसिते जलघो-
३' सागमथात मे इयं कुभा
४. सुपिये ख···[1] दि-
५. ना [।][2]

संस्कृतच्छाया

१. राजा प्रियदर्शी एकोनविं-
२. शति वर्षाभिषिक्तः। जलघो-
३. षागमार्थाय मया इयं गुहा
४. सुप्रिये ख [लतिक पर्वते] द-
५. त्ता।

पाठ टिप्पणी

१. पूर्ति 'खलतिक पवतसि'।
२. इस अभिलेखके अन्तमें स्वस्तिक, खड्ग और मत्स्यकी प्रतिकृतियाँ अंकित हैं।

हिन्दी भाषान्तर

१. राजा प्रियदर्शी उन्नीस-
२. वर्षाभिषिक्त द्वारा वर्षागम[1]
३. के उपयोगके लिए यह गुहा
४. सुप्रिय (सुन्दर) खलतिक पर्वतपर दी गयी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. वाक्य रचना बडी भद्दी और अस्पष्ट है। 'मे' सर्वनामका प्रयोग भी विचित्र है। कुछ विद्वानों द्वारा इसका प्रयोग किसी अज्ञात दाताके लिए हुआ है, जिसने अशोक-के राज्य-कालमें गुहाका दान किया। परन्तु वास्तवमें इसका प्रयोग अशोकके लिए ही है। 'लाज'से लेकर '—सिते' तक प्रथमा अ है।

परिशिष्ट

दशरथके नागार्जुनी गुहा अभिलेख[1]

प्रथम अभिलेख

(आजिविकोंको गुहादान)

१. वहियक [।] कुभा दषल[2]थेन देवानं पियेना
२. आनंतलियं अभिषि[3]तेना [आजोविकेहि]
३. भदंतेहि वाष[4]निषि[5]दियाये निषि[6] ठे
४. आचंदम षू[7]लियं [॥]

संस्कृतच्छाया

१. वहियका गुहा दशरथेन देवानांप्रियेण
२. आनन्तर्येण अभिषिक्तेन [आजीविकेभ्यः]
३. तत्रभवद्भ्यः वर्षा-निषद्यायै निसृष्टा
४. आचन्द्र-सूर्यम् [॥]

पाठ टिप्पणी

१. वंश और भाषाकी दृष्टिसे दशरथके गुहा अभिलेख अशोकके अभिलेखोंके ही परिवारके हैं।
२. तालव्य श का मूर्द्धन्य ष हो गया है। अभी दन्त्य स में परिवर्तनकी प्रक्रिया बहुप्रचलित नहीं थी।
३, ४, ५. इन स्थानोंमें मूर्द्धन्य ष सुरक्षित है।
६. निसृष्टामें स का ष हो गया है,
७. यहाँ दन्त्य स मूर्द्धन्य ष में परिवर्तित है।

हिन्दी भाषान्तर

१. वहियका (नामकी) गुहा दशरथ[1] देवानां प्रिय (देवताओंके प्रिय)
२. तुरन्त अभिषिक्त हुए द्वारा आजीविक
३. तत्र भवन्तों[2]को वर्षा-आवास[3]के लिए दान की गयी
४. चन्द्र सूर्य (की स्थिति) तकके लिए [॥]

भाषान्तर टिप्पणी

१. यह अशोकका पौत्र और कुणालका पुत्र था। आजीविकोंको उसके द्वारा दानसे यह प्रकट है कि उसने अशोककी उदार धार्मिक नीतिको जारी रखा।
२. प्राकृतके भदन्त और भत दोनों सं० भवत्से व्युत्पन्न हैं। भदन्तमें द का आगम हो गया है। बरुआ और सिनहाने भदन्तको भद्रान्तसे व्युत्पन्न माना है (बर्हुत इन्स-क्रिप्शन्स पृ० ४१) जो ठीक नहीं जान पड़ता।
३. निषिद्या = ठहरनेका स्थान = आवास।

द्वितीय अभिलेख

(आजीवकोंको गुहादान)

१. गोपिका कुभा दषलथेना देवा [ना][1] पि-
२. येना आनंतलियं अभिषितेना आजी-
३. विके [हि] [भदं] तेहि वाष निषिदियाये
४. निसिठा आ चंदम षूलियं [।।]

संस्कृतच्छाया

१. गोपिका गुहा दशरथेन देवा[नां]प्रि-
२. येण आनन्तर्येण अभिषिक्तेन आजी-
३. विके [भ्यः] तत्र [भव]द्भ्यः वर्षा-निषिद्यायै
४. निसृष्टा आचन्द्र-सूर्यम् [।।]

पाठ टिप्पणी

१. यहाँपर दन्त्य स सुरक्षित है।

हिन्दी भाषान्तर

१. गोपिका (नामकी) गुहा देवा[नां]प्रि-
२. य (देवताओंके प्रिय) तुरन्त अभिषिक्त द्वारा आजी-
३. विक तत्रभवन्तोंको वर्षा-आवासके लिए
४. दान की गयी चन्द्र सूर्य (की स्थिति) तकके लिए [।।]

तृतीय अभिलेख

(आजीविकोंको गुहादान)

१. वडथिका कुभा दषलथेना देवानं-
२. पियेना आनंतलियं अ [भि] षितेना [आ]-
३. [जी] विकेहि भदंतेहि वा [षि निषि] दियाये
४. निषिठा आ चंदम षूलियं [।।][1]

संस्कृतच्छाया

१. वडथिका गुहा दशरथेन देवानां-
२. प्रियेण आनन्तर्येण अभिषिक्तेन [आ]-
३. [जी] विकेभ्यः तत्र भवद्भ्यः व[र्षा-निषि] द्यायै
४. निसृष्टा आचन्द्र-सूर्यम् [।।]

पाठ टिप्पणी

१. बराबर गुहा अभिलेखोंकी तरह नागार्जुनी गुहा अभिलेखोंमें भी 'आजीविकेहि' शब्दको कुरेदा गया है। सम्भवत मौखरवशके अनन्तवर्मन्ने ऐसा किया, जिसने बराबरकी गुहाओंमेंसे एकको कृष्ण-पूजा और नागार्जुनी गुहाओंमेंसे एकको शिव-पूजा और दूसरीको पार्वती-पूजाके लिए प्रदान किया।

हिन्दी भाषान्तर

१. वडथिका (नामकी) गुहा दशरथ देवानां-
२. प्रिय (देवताओंके प्रिय) तुरन्त अभिषिक्त द्वारा आ-
३. जीविक तत्रभवन्तोंको वर्षा-आवासके लिए
४. दान दी गयी चन्द्र सूर्य (की स्थिति काल) तकके लिए [।।]

चतुर्थ खण्ड : स्तम्भ अभिलेख

देहली टोपरा स्तम्भ

प्रथम अभिलेख

(धर्मपालनसे इहलोक तथा पारलोकको प्राप्ति)

(उत्तराभिमुख)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा [१] सडुवीसति-
२. वस अभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता [२]
३. हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाया धंमकामताया
४. अगाय पलीखाया अगाय सुसूयाया अगेन भयेन
५. अगन उसाहेना [३] एस चु खो मम अनुसथिया धंमा-
६. पेखा धंमकामता चा सुवे सुवे वडिता वढीसति चेवा [४]
७. पुलिसा पि च मे उकसा चा गेवया चा मझिमा चा अनुविधीयंती
८. संपटिपादयंति चा अलं चपलं समादपयितवे [५] हेमेमा अंत-
९. महामाता पि [६] एस[1] हि[2] विधि या इयं धंमेन पालना धंमेन विधाने
१०. धंमेन सुखियना धंमेन गोती ति [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। षड्विंशति
२. वर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपि लेखिता।
३. इहत्य-पारत्र्यं दुःसम्प्रतिपाद्यम् अन्यत्र अग्र्यायाः धर्मकामतायाः
४. अग्र्यायाः परीक्षायाः अग्र्यायाः शुश्रूषायाः अग्र्यात् भयात्
५. अग्र्यात् उत्साहात्। एषा तु खलु मम अनुशिष्टिः, धर्मा-
६. पेक्षा, धर्मकामता च श्वः श्वः वर्द्धिता वर्द्धिष्यति चैव।
७. पुरुषा अपि च मे उत्कृष्टा च गम्याः च मध्यमाः च अनुविदधति
८. सम्प्रतिपादयन्ति च अलं चपलं समादातुम्। एवमेव अन्त-
९. महामात्रा अपि। एषा हि विधिः या इयं धर्मेण पालना धर्मेण विधानं
१०. धर्मेण सुखीयनं धर्मेण गुप्तिः इति।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर 'एसा'।
२. सेना और ब्यूलर 'पि'।

हिन्दी-भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—छब्बीस-
२. वर्षाभिषिक्त मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखायी गयी।
३. इहलौकिक और पारलौकिक[1] (कल्याण) दुस्सम्पाद्य है बिना उच्चतम धर्मकामता,
४. उच्चतम (आत्म-) परीक्षा, उच्चतम शुश्रूषा, उच्चतम (धर्म-) भय (तथा)
५. उच्चतम उत्साहके। किन्तु यह मेरी धर्मानुशिष्टि, धर्मा-
६. पेक्षा, और धर्मकामता निरन्तर[2] बढ़ी है और बढ़ेगी ही।
७. और मेरे (राज-) पुरुष[3]—उत्कृष्ट[4] गम्य[5] तथा मध्यम- (मेरे धर्मोपदेशका) अनुसरण करते हैं
८. और सम्पादन करते हैं; चपल व्यक्ति द्वारा भी (धर्मानुसरण) करानेमें वे समर्थ हैं।[6] इसी प्रकार अन्त-
९. महामात्र भी (करेंगे)। यही विधि है जो धर्म द्वारा (प्रजा-) पालन, धर्म द्वारा संविधान,
१०. धर्म द्वारा सुखीयन (प्रजाको सुखी बनाना) और धर्म द्वारा गुप्ति (रक्षा)।

भाषान्तर टिप्पणी

१. पालत = सं. पारत्रिक (परत्रसे व्युत्पन्न)। दे० चाइल्डर्स : पालि डिक्शनरी

२. सुवे सुवे = सं. श्वः श्वः [कल (और) कल = निरन्तर]

३. राजकर्मचारी। पुलिस = सं. पुरुष (= राजपुरुष)

४. पालि उकस = सं. उत्कृष्ट (= उच्च, श्रेष्ठ)

५. गम्य = भेजने योग्य सामान्य नौकर। ब्यूलरके अनुसार गेवय = सं. गेवक [संस्कृत धातु गेव् (सेवा करना) से व्युत्पन्न]

६. सभादपेतिके लिए देखिये चाइल्डर्स : पालि डिक्शनरी।

द्वितीय अभिलेख

(उत्तराभिमुख)

(धर्मकी कल्पना)

१०. देवानंपिये पियदसि लाज[1]
११. हेवं आहा [१] धंमे साधू कियं चु धंमे ति [२] अपासिनवे[2] बहुकयाने
१२. दया दाने सोचये [३] चखुदाने पि मे[3] बहुविधे दिने [४] दुपद-
१३. चतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पान-
१४. दाखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे
१५. अठाये इयं धंमलिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिलं-
१६. थितिका च होतू तीति[4] [७] ये च हेवं संपटिपजीसति से सुकटं कछती ति[5] ।

संस्कृतच्छाया

१०. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा
११. एवम् आह । धर्मः साधु । कियान् तु धर्मः इति ? अल्पासिनवं, बहुकल्याणं,
१२. दया, दानं, सत्यं, शौचम् । चक्षुदानम् अपि मया बहुविधं दत्तम् । द्विपद-
१३. चतुष्पदेषु पक्षिवारिचरेषु विविधः मया अनुग्रहः कृतः आ प्राण-
१४. दाक्षिण्यात् । अन्यानि अपि च मया बहूनि कल्याणानि कृतानि । एतस्मै मया
१५. अर्थाय इयं धर्मलिपिः लेखिता—एवम् अनुप्रतिपद्यताम् चिर-
१६. स्थितिका च भवतु इति । यः च एवं सम्प्रतिपत्स्यते सः सुकृतं करिष्यति इति ।

पाठ टिप्पणी

१. सेना और ब्यूलर 'लाजा' ।
२. 'वे' अक्षरके नीचे बायीं ओर एक अनावश्यक आधारवत् रेखा है ।
३. 'मे' के नीचे एक लम्बवत् रेखा निष्प्रयोजन उत्कीर्ण है ।
४. अन्य संस्करणोंमे पाठ है 'होतू ति' ।
५. क के आगे एक अनावश्यक अनुस्वार उत्कीर्ण है ।

हिन्दी-भाषान्तर

१०. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने
११. ऐसा कहा—"धर्म साधु है । धर्म क्या है ? अल्प पाप[1], बहुकल्याण,
१२. दया, दान (और) शौच । चक्षु-दान[2] (ज्ञान-दृष्टि) भी मेरे द्वारा विविध प्रकारका दिया गया । द्विपद (मनुष्य)
१३. चतुष्पद (चौपाये), पक्षी और वारिचरों (जलमें रहनेवाले जानवरों) पर विविध प्रकारके मेरे द्वारा अनुग्रह किये गये आप्राण-
१४. दक्षिणा (अभयदान) तक ।[3] और अन्य भी बहुत कल्याण किये गये । मेरे द्वारा इस
१५. प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि लिखायी गयी जिससे (लोग) इसका अनुसरण करें और यह चिर-
१६. स्थायी होवे । जो इस प्रकार इसको स्वीकार करेंगे वे सुकृत करेंगे ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. अपासिनवे शब्द दो शब्दों अप + आसिनव से बना है । अप = स० अल्प । यह जैन शब्द 'अन्हय' का प्राकृत पर्याय है, जो आ + √स्नुसे व्युत्पन्न है । इसका समकक्ष पालि शब्द 'आसव' है, जिसका संस्कृत रूप 'आश्रव' अथवा 'आस्रव' है । यह आ + √स्रुसे बनता है । स्रुका अर्थ है प्रवाहित होना अर्थात् आत्माका इन्द्रियोंके सम्पर्कसे उनके विषयोंकी ओर बह जाना । तृतीय स्तम्भ अभिलेखमें आसिनवको पाप कहा गया है ।
२. इतिवुत्तकमें तीन प्रकारके चक्षुओंका वर्णन है—(१) मंसचक्खु (मांस-चक्षु) (२) दिब्ब चक्खु (दिव्य चक्षु) और (३) पञ्ञाचक्खु (प्रज्ञा चक्षु) । यहाँ 'प्रज्ञा चक्षु' ही अभीष्ट है । दे० ब्यूलर : जे० डी० एम जी० ४८-६२ ।
३. इसके विस्तृत वर्णनके लिए देखिये द्वितीय शिला अभिलेख और पञ्चम तथा सप्तम स्तम्भ अभिलेख ।

तृतीय अभिलेख

(उत्तराभिमुख)

(आत्मनिरीक्षण)

१७. देवानंपिये पियदसि लाज[1] हेवं अहा [१] कयानं मेव देखति[2] इयं मे
१८. कयाने कटे ति [२] नो मिन[3] पापं देखति इयं मे पापे कटे ति इयं वा आसिनवे
१९. नामाति [३] दुपटिवेखे चु खो एसा [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि
२०. आसिनवगामीनि नाम अथ चंडिये निठलिये कोधे माने इस्या
२१. कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं [६] एस बाढ देखिये [७] इयं मे
२२. हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये

संस्कृतच्छाया

१७. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। कल्याणम् एव पश्यति—"इदं मया
१८. कल्याणं कृतम्" इति। "नो मनाक् पापं पश्यति—'इदं मया पापं कृतम्" इति; इदं वा आसिनवं
१९. नाम" इति। दुष्प्रत्यवेक्ष्यं तु खलु एतत्। एवं तु खलु एतत् पश्येत् "इमानि
२०. आसिनवगामीनि नाम यथा चाण्ड्यं, नैष्ठुर्यं, क्रोधः, मानः, ईर्ष्या
२१. कारणेन एव अहं मा परिभ्रंशयिष्यामि"। सतत् बाढं पश्येत्—"इदं मे ऐहिकाय इदम् अन्यत् मे पारत्रिकाय।"

पाठ टिप्पणी

१. राजके बदले लाजपर पूर्वी प्राकृतका प्रभाव स्पष्ट है।
२. पश्यतिके स्थानमें देखति प्राकृत रूप अधिक प्रचलित है।
३. यह सं०, न मनाक्‌का प्राकृत रूप है। प्राकृतके व्याकरणके अनुसार अ स्वर इ में बदल जाता है।

हिन्दी भाषान्तर

१७. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"(मनुष्य) कल्याण ही देखता है—'यह मुझसे
१८. कल्याण किया गया ऐसा। वह थोड़ा[1] भी पाप नहीं देखता—'यह मुझसे पाप किया गया; अथवा यह आसिनव (पाप)
१९. नाम है।' यह सचमुच कठिनाईसे देखा जा सकता है (अथवा इसकी परीक्षा की जा सकती है)। किन्तु इसे अवश्य देखना चाहिये कि ये
२०. पापगामी हैं, यथा, चण्डता, नैष्ठुर्य, क्रोध, मान (अहंकार), ईर्ष्या और
२१. इनके कारण मैं अपनेको भ्रष्ट न कर दूँ।[2] इसको दृढ़तासे देखना चाहिये—"यह मेरे
२२. इहलौकिक (लाभ) के लिए है; यह मेरे पारलौकिक कल्याणके लिए है।"

भाषान्तर टिप्पणी

१. मिकेलसनने नो मिनको नो अमिन दो खण्डोंमें तोड़कर उसको पाली अमिनासे मिला दिया है जिसका अर्थ उनके अनुसार भी है। (इंडोजामनिशे फारशुंगेन)। परन्तु यह अर्थ समीचीन नहीं जान पड़ता। ब्यूलरने सबसे पहले सुझाया था कि यह सं. न मनाक् (थोड़ा भी नहीं) का प्राकृत रूप है। यह अर्थ अधिक उपयुक्त है।
२. उपर्युक्त विद्वान्‌ने मा को पलिभसयिसंका कर्म माना है और इसका अर्थ किया है 'मुझको कोई दोष न लगावे।' परन्तु 'हकं मा' वाक्यांशमें मा सर्वनाम न होकर अव्यय है।

चतुर्थ अभिलेख

(पश्चिमाभिमुख)

(रज्जुकोंके अधिकार और कर्तव्य)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा [१] सडुवीसतिवस-
२. अभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता [२] लजूका मे
३. बहूसु पानसतसहसेसु जनसि आयता [३] तेसं ये अभिहाले' वा
४. दंडे वा अतपतिये मे कटे किंति लजूका अस्वथ अभीता
५. कंमानि पवतयेवू जनस जानपदसा हितसुखं उपदहेवू
६. अनुगहिनेवु च [४] सुखीयनं दुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च
७. वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च पालतं च
८. आलाधयेवू ति [५] लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे
९. छंदनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूका
१०. चघंति आलाधयितवे [८]अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु
११. अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं पलिहटवे
१२. हेवं ममा लजूका कटा जानपदस हितसुखाये [९] येन एते अभीता
१३. अस्वथ संतं अविमना कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं
१४. अभिहाले' व दंडे वा अतपतिये कटे [१०] इछितविये हि एसा किंति
१५. वियोहालसमता च सिय दंडसमता चा [११] अव इते पि च मे आवुति
१६. बंधनबधानं मुनिसानं तीलितदंडानं' पतवधानं तिंनि दिवसानि मे
१७. योते दिने [१२] नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं
१८. नासंतं वा निझपयिता वा नं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३]
१९. इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४] जनस च
२०. वढ़ति विविधे धंमचलने संयमे दानसविभागे ति [१५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्विंशतिवर्षा-
२. भिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपि लेखिता । रज्जुकाः मे
३. बहुषु प्राणशतसहस्रेषु जनेषु आयताः । तेषां यः अभिहारः वा-
४. दण्डः वा आत्म-प्रत्ययः मया कृतः किमिति ? रज्जुकाः आश्वस्ताः अभीताः
५. कर्माणि प्रवर्त्तयेयुः जनस्य जानपदस्य हितसुखं उपदध्युः
६. अनुगृह्णीयुः च । सुखीयनं दुःखीयनं ज्ञास्यन्ति धर्मयुतेन च
७. व्यपदेक्ष्यन्ति जनं जानपदं किमिति ? इहत्यं पारत्र्यं च
८. आराधयेयुः इति । रज्जुकाः अपि च चेष्टन्ते परिचरितुं माम् । पुरुषाः अपि मे
९. छन्दनानि परिचरिष्यन्ति । ते अपि च कान् व्यपदेक्ष्यन्ति येन मां रज्जुकाः
१०. चेष्टन्ते आराधयितुम् । यथा हि प्रजां व्यक्तायै धात्र्यै निसृज्य
११. आश्वस्तः भवति—"व्यक्ता धात्री चेष्टते मे प्रजायैः सुखं परिहातुम् इति" ।
१२. एवं मम् रज्जुकाः कृताः जानपदस्य हितसुखाय येन एते अभीताः
१३. आश्वस्ताः सन्तः, अविमनसः कर्माणि प्रवर्तयेयुः इति । एतेन मया रज्जुकानाम्
१४. अभिहारः वा दण्डः वा आत्म-प्रत्ययः कृतः । इच्छितव्या हि एषा किमिति ?
१५. व्यवहार समता च स्यात् दण्डसमता च । यावत् इतः अपि च मे आज्ञप्तिः
१६. बन्धन-बद्धानां मनुष्याणां निर्णीत-दण्डानां प्रतिविधानं त्रीणि दिवसानि मया
१७. यौतकं दत्तम् । ज्ञातिका वा तान् निध्यापयिष्यन्ति जीविताय तेषां
१८. नाशान्तं वा निध्यायन्तः दानं ददति पारत्रिकम् उपवासं वा करिष्यन्ति ।
१९. इच्छा हि मे एवं निरुद्धे अपि काले पारत्र्यम् आराधयेयुः इति । जनस्य च
२०. वर्धेत विविधं धर्माचरणं संयमः दानस्य विभागः इति ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलर इसको अभीहाले पढ़ते हैं
२. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'तीतीत—' पाठ होना चाहिये।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"छब्बीस वर्षोंसे
२. अभिषिक्त मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखायी गयी। मेरे रज्जुक[1] (उच्चाधिकारी)
३. कई लाख प्राणियों और जनोंमें नियुक्त[2] हैं। उनका जो अभियोग लगानेका अधिकार अथवा
४. दण्डा-(धिकार) है (इसमें उनको) स्वतन्त्रता मेरे द्वारा दी गयी है।[3] क्यों ? रज्जुक आश्वस्त, निर्भय (होकर)
५. कर्मोंमें प्रवृत्त हों, जन और जानपदको हितसुख पहुँचानेकी व्यवस्था करें
६. और उनपर अनुग्रह करें। वे सुखीयन[4] और दुःखीयन (के कारणोंको) जानेंगे और धर्मयुत[5] द्वारा
७. जनपदके लोगोंको उपदेश करेंगे। क्यों ? जिससे कि वे इहलौकिक और पारलौकिक (कल्याणकी प्राप्तिके लिए)
८. प्रयत्न करें। रज्जुक भी चेष्टा करते हैं मेरी परिचर्या (सेवा) करनेके लिए।[6] मेरे राजपुरुष भी
९. (मेरी) इच्छाओंका पालन करेंगे। वे भी कुछ लोगोंको उपदेश करेंगे जिससे रज्जुक मुझे
१०. प्रसन्न करनेकी चेष्टा करेंगे। जिस प्रकार योग्य धायके (हाथमें) सन्तानको सौंपकर
११. (माता-पिता) आश्वस्त होते हैं—'योग्य धाय चेष्टा करती है मेरे सन्तानको सुख प्रदान करनेके लिए।'
१२. इसी प्रकार मेरे रज्जुक नियुक्त हुए हैं जानपदके हित-सुखके लिए, जिससे निर्भय और
१३. आश्वस्त होते हुए प्रसन्नचित्त कर्मोंमें प्रवृत्त हों। इसलिए मेरे द्वारा रज्जुकोंका
१४. अभिहार (अभियोग लगानेका अधिकार) अथवा दण्ड (उसमें) स्वायत्त किया गया। क्योंकि इसकी इच्छा करनी चाहिये। क्या है वह ?
१५. व्यवहार-समता और दण्ड-समता होनी चाहिये। इसीलिए यह मेरी आज्ञा है[8]।
१६. कारावासमें बद्ध तथा मृत्यु दण्ड पाये हुए[9] मनुष्योंको तीन दिनकी मेरे द्वारा
१७. छूट दी गयी है। (इसी बीचमें) उनकी जानिवाले (पुनर्विचारके लिए रज्जुकोंका) ध्यान आकृष्ट करेंगे उनका जीवन बचानेके लिए[10]
१८. अथवा (उनके) जीवनके अन्ततक ध्यान करते हुए दान देंगे (उनके) पारलौकिक कल्याणके लिए अथवा उपवास करेंगे।
१९. ऐसी मेरी इच्छा है कि कारावासमें भी लोग परलोककी आराधना करें। लोगोंका
२०. विविध धर्माचरण बढ़े, संयम और दान-वितरण भी।

भाषान्तर टिप्पणी

१. इसके लिए तृतीय शिला अभिलेख (गिरनार) की टिप्पणी देखिये।
२. आयत = सम्यक् प्रकारसे विनीत अर्थात् औपचारिक ढंगसे रखे हुए।
३. अतपतिये = आत्मप्रत्ययः = अपने विवेकपर अवलम्बित = स्वतन्त्र।
४. सुखीयन = सुख पहुँचाना। दुःखीयन = दुःख पहुँचाना।
५. ब्यूलरने इसका अर्थ किया है 'धार्मिक सिद्धान्तोंके अनुसार'। किन्तु यहाँ धर्मयुत विशेषण है जो संज्ञाकी तरह प्रयुक्त हुआ है। इसलिए इसका उपयुक्त अर्थ होगा 'धर्मयुक्त लोगों अथवा अधिकारियों द्वारा'।
६. हुल्त्जने इसका अर्थ किया है 'मेरी आज्ञाका पालन करनेके लिए' (अशोकके अभिलेख, पृ० १२४ पं० १३)।
७. अभिहार = अभियोग लगानेका अधिकार।
८. आवुति = आयुक्ति = सम्यक् प्रकारसे व्यवस्था = शासन = आज्ञा।
९. तुलना कीजिये मनु० ९, २३३।
१०. कौटिल्य (शामशास्त्री० पृ० १४६) के अनुसार जीवन-शुल्क देनेपर पुनर्विचार हो सकता था—'पुण्यशीला = समयानुबुद्धा वा दोपनिष्क्रियं (बन्धनस्थान्) दद्युः।

पंचम अभिलेख

(दक्षिणाभिमुख)

(जीवोंको अभयदान)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा [१] सडुवीसतिवस-
२. अभिसितेन मे इमानि जातानि अवधियानि कटानि सेयथा
३. सुके सालिका अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे
४. जतूका अंबाकपीलिका दळी[1] अनठिकमछे वेदवेयके
५. गंगा पुपुटके संकुजमछे कफटसयके पंनससे सिमले
६. संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते गामकपोते
७. सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियती[2] [२]......[3]
८. एळका[4] चा सकूली चा गभिनी वा पायमीना व अवधिय प तके[5]
९. पि च कानि आसंमासिके [३] वधिकुकुटे नो कटविये [४] तुसे सजीवे
१०. नो झापेतविये [५] दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो झापेतविये [६]
११. जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिसायं पुंनमासियं
१२. तिंनि दिवसानि चावुदसं पंनडसं पटिपदाये धुवाये चा
१३. अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि विकेतविये [८] एतानि येवा[6] दिवसानि
१४. नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि
१५. न हंतवियानि [९] अठमीपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये
१६. पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये
१७. अजके एडके सूकले ए वा पि अंने नीलखियति नो नीलखितविये [१०]
१८. तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासि पखाये अस्वसा गोनसा
१९. लखने नो कटविये [११] यावसडुवीसतिवस अभिसितेन मे एताये
२०. अंतलिकाये पंनवीसति बंधनमोखानि कटानि [१२]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। षड्विंशतिवर्षा-
२. भिषिक्तेन मया इमानि जातानि अवध्यानि कृतानि तानि यथा
३. शुकः, सारिका, अरुणः, चक्रवाकः, हंसः, नान्दीमुखः, गेलाटः
४. जतुकाः, अम्बाकपीलिका, दुडिः, अनस्थिकमत्स्यः, वेदवेयकः
५. गङ्गाकुक्कुटः, संकुजमत्स्यः, कमठः, शल्यः, पर्णशशः, सृमरः,
६. षण्डकः, ओकपिण्डः, पृषतः, श्वेतकपोतः, ग्रामकपोतः,
७. सर्वे चतुष्पदाः ये परिभोगं न यन्ति न च खाद्यन्ते।
८. एडका च शूकरी च गर्भिणी वा पयस्विनी वा अवध्या। पोतकाः
९. अपि च आषाण्मासिकाः। वध्रि-कुक्कुटः न कर्तव्यः। तुषः सजीवः
१०. न दाहयितव्यः। दावः अनर्थाय वा विहिंसायै वा नो दाहयितव्यः।
११. जीवेन जीवः न पोषितव्यः। तिसृषु चातुर्मासीषु तिष्यायां पौर्णमास्यां
१२. त्रिषु दिवसेषु-चतुर्दशी, पञ्चदशी, प्रतिपदि च ध्रुवायाः (निश्चितरूपेण),
१३. अनूपवसथं मत्स्यः अवध्यः, नो अपि विक्रेतव्यः। एतान् एव दिवसान्
१४. नागवने, कैवर्त-भोगे, ये अन्ये अपि जीव-निकायाः
१५. नो हन्तव्याः। अष्टमी-पक्षे, चतुर्दश्यां, पञ्चदश्यां, तिष्यायां,
१६. पुनर्वसौ तिसृषु चातुर्मासीषु सुदिवसे गौः न निर्लक्षयितव्यः।
१७. अजः एडकः शूकरः ये वा अपि अन्ये निर्लक्ष्यन्ते (ते) न निर्लक्षयितव्याः।
१८. तिष्यायां, पुनर्वसौ, चातुर्मास्यां, चातुर्मासी-पक्षे (च) अश्वस्य गोः च
१९. (दग्धशलाकया) लक्षणं नो कर्तव्यम्। यावत्-षड्विंशति वर्षाभिषिक्तेन मया एतस्याम्
२०. अन्तरिकायां पञ्चविंशतिः बन्धनमोक्षाः कृताः।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार दडि। अन्य तीन संस्करणोंमें दुण्डि पाया जाता है। इलाहाबाद-कोसम स्तम्भ अभिलेखमें दुटि पाठ है। हुल्शने इसको दली पढ़ा है जो अधिक स्पष्ट है।
२. ब्यूलरके अनुसार खादियति पाठ है।
३. अन्य संस्करणोंमे अजका नानि पाठ पाया जाता है।
४. ब्यूलरके अनुसार एडका पाठ होना चाहिये।
५. शुद्ध और पूर्ण पाठ अवधिया पोतके है।
६. ब्यूलरके अनुसार येव पाठ होना चाहिये।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"छब्बीस वर्षोंसे अ-
२. भिषिक्त मेरे द्वारा ये प्राणी[1] अवध्य (घोषित) किये गये। वे हैं, जैसे[2],
३. शुक, सारिका, अरुण,[3] चक्रवाक, हंस, नान्दीमुख,[4] गेलाट,
४. जतुका (गीदड़), अम्बाकपीलिका[5], दुडि (कछुई), अस्थिरहित मछली, वेदवेयक,[6]
५. गंगा-कुक्कुट, संकुजमत्स्य, कमठ (कछुआ), शल्य (साही), पर्णशश, बारहसिंहा,
६. साँड, ओकपिण्ड (गोधा), मृग, श्वेत कपोत, ग्राम कपोत,
७. और सभी प्रकारके चौपाये जो न उपयोगमें आते हैं और न खाये जाते हैं।
८. गर्भिणी अथवा दूध पिलाती हुई बकरी, भेंड़ और शूकरी अवध्य (घोषित) की गयीं। (इनके) बच्चे भी
९. महीने तककी आयुवाले। कुक्कुटको बधिया[7] नहीं करना चाहिये। सजीव भूसी
१०. नहीं जलानी चाहिये। व्यर्थके लिए अथवा हिंसाके लिए जंगल नहीं जलाना चाहिये।
११. जीवसे जीवका पोषण नहीं करना चाहिये। तीनों चौमासोंमें तिष्य पूर्णमासीको
१२. तीन दिन—चतुर्दशी; पञ्चदशी तथा प्रतिपद्—निश्चित रूपसे
१३. उपवासके दिन मछलियाँ नहीं मारनी चाहिये और न बेचनी चाहिये। इन दिनों
१४. नागवन,[8] कैवर्त-भोग (मछुओंके तालाब) में जो भी अन्य जीव-समुदाय हों
१५. उनको नहीं मारना चाहिये।[9] प्रत्येक पक्षकी अष्टमी, चतुर्दशी, पञ्चदशी, तिष्य,
१६. पुनर्वसु, तीन चातुर्मास्योंके शुक्ल पक्षमें गौको लांछित नहीं करना चाहिये।
१७. बकरा, भेंड़, सूअर, अथवा अन्य जो लांछित होते हैं, उनको लांछित नहीं करना चाहिये।
१८. तिष्य, पुनर्वसु, प्रत्येक चातुर्मासकी पूर्णिमाके दिन और प्रत्येक चातुर्मास्यके शुक्ल-पक्षमें अश्व और गौके
१९. लक्षण (दग्धशलाकासे) नहीं करना चाहिये। यहाँतक छब्बीस वर्षोंसे अभिषिक्त मेरे द्वारा इस
२०. बीचमें पच्चीस बन्धन-मोक्ष (बन्दियोंकी मुक्ति) किये गये।[10]

भाषान्तर टिप्पणी

१. जातानि = जन्म ग्रहण करनेवाले = जीवधारी = प्राणी।
२. संयथा = पालि सेय्यथा = सं० तद्यथा
३. एक प्रकारका लाल पक्षी।
४. एक प्रकारका जलजन्तु (सेंट पीटर्सबर्ग डिक्शनरी); पालि टे० सो० द्वारा सम्पादित [पृ० २०४] थेरी गाथापर भाष्य 'मच्छ-मकर-नंदियादयो च वारिगोचरा'। किन्तु जैन ग्रन्थ प्रश्न-व्याकरण-सूत्र [१-७] के अनुसार यह सारिका अथवा मैनाका एक प्रकार है।
५. रानी—चींटी
६. इसकी पहचान कठिन है।
७. अण्डकोष निकाला हुआ नपुंसक पशु।
८. अर्थशास्त्र (२.२,३१) में नागवनके सरक्षाका विधान है। हाथियों (नागों) का सैनिक महत्त्व भी था। किन्तु यहाँपर सभी प्रकारके जीवोंसे तात्पर्य है।
९. अर्थशास्त्र (२.२६) में अवध्य जानवरोंकी सूचीसे तुलना कीजिये।
१०. अभिषेकके वार्षिकोत्सवके अवसरपर। दे० अर्थशास्त्र (२.३६)। इसके अनुसार बाल, वृद्ध, व्याधित और अनाथ छोड़े जाते थे।

षष्ठ अभिलेख

(अ-पूर्वाभिमुख)

(धर्मवृद्धिः धर्मके प्रति अनुराग)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा [१] दुवाडस
२. वस अभिसितेन मे धंमलिटि लिखापिता लोकसा
३. हितसुखाये से तं अपहटा तं तं धंमवढि पापो वा [२]
४. हेवं लोकसा हितसुखेति पटिवेखामि अथ इयं
५. नातिसु हेवं पतियासंनेसु हेवं अपकटेसु
६. किमं कानि सुखं अवहामी ति तथ च विदहामि [३] हे मे वा
७. सवनिकायेसु पटिवेखामि[१] [४] सव पासंडा पि मे पूजिता
८. विविधाय पूजाया [५] ए चु इयं अतना[२] पचूपगमने
९. से मे मोख्यमते [६] सडुविसति वस अभिसितेन मे
१०. इयं धंमलिपि लिखापिता [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । द्वादश-
२. वर्षाभिषिक्तेन मया धर्मलिपिः लेखिता लोकस्य
३. हितसुखाय येन तत् अप्रहर्ता तां तां धर्मवृद्धिं प्राप्नुयात् ।
४. एवं लोकस्य हितसुखे इति प्रत्यवेक्षे यथा इदं
५. ज्ञातिषु एवं प्रत्यासन्नेषु एवम् अपकृष्टेषु
६. किं कान् सुखम् आवहामि इति तथा च विदधामि । एवम् एव
७. सर्वनिकायेषु प्रत्यवेक्षे । सर्वपाषण्डाः अपि मे पूजिताः
८. विविधया पूजया । यत् तु इदम् आत्मना प्रत्युपगमनं
९. तत् मे मुख्यमतम् । षड्विंशति-वर्षाभिषिक्तेन मया
१०. इयं धर्मलिपिः लेखिता ।

पाठ टिप्पणी

१. वेके निम्नभागके बायें एक अनावश्यक आधारवत् रेखा (–) सलग्न है ।
२. ब्यूलरके अनुसार अतुना । हुल्शने इसे अतना पढा है जो संस्कृत आत्मनाका निकटतम प्राकृत रूप है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"द्वादश
२. वर्षाभिषिक्त मेरे द्वारा धर्मलिपि लिखायी गयी लोकके
३. हित-सुखके लिए, जिससे कि वे (धर्मलिपिकी) अवज्ञा न करनेवाले[१] विविध प्रकारकी धर्मवृद्धि प्राप्त करें ।
४. इस प्रकार लोकके हित-सुखके लिए चिन्तन करता हूँ । तथा यह
५. ज्ञातिवालोंमें, इसी प्रकार निकट और दूरवालोंमें
६. कुछको सुख पहुँचाता हूँ और तदनुकूल आदेश करता हूँ । इसी प्रकार
७. सब निकायों[२] (जन-समुदायों)में चिन्तन करता हूँ । सब धार्मिक सम्प्रदाय मेरे द्वारा पूजित हैं
८. विविध प्रकारकी पूजासे ।[३] किन्तु इस अपने व्यक्तिगत प्रत्युपगमन (पास जाने)को
९. अपना मुख्य कर्तव्य मानता हूँ । छब्बीस वर्षोंसे अभिषिक्त मेरे द्वारा
१०. यह धर्मलिपि लिखायी गयी ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. सेनाका अनुकरण करते हुए जनार्दन भट्टने पूर्वकालिक क्रियामें इसका अर्थ अपहृत्य '(पापाचरणके मार्गको) त्यागकर' किया है जो ठीक नहीं बैठता । अपहटा = अप्रहर्ता = प्रहार अथवा 'अवज्ञा न करनेवाला' ही अर्थ समीचीन जान पड़ता है ।
२. यहाँ निकाय समाज अथवा सम्प्रदायके अर्थमें प्रयुक्त हुआ है ।, पालि-कोश अभिधान प्रदीपिकामें निकायका अर्थ इस प्रकार दिया हुआ है : 'सजातीना तु कुलम् निकायो तु सधर्मिणाम् ।' अर्थात् सहधर्मियोंके समूहको निकाय कहते हैं ।
३. देखिये द्वादश शिला-लेख ।
४. आत्मनः प्रत्युपगमनम् = अपने आप अपने कर्तव्यका चुनाव अथवा जनताके पास जाना । सप्तम शिला लेखमें धर्मयात्राका वर्णन है । रुम्मिनदेई और निगलीव स्तम्भ अभिलेखोंमें 'अतन आगाच'से इसकी तुलना कीजिये ।

सप्तम अभिलेख

(अ) पूर्वाभिमुख

(धर्मप्रचारका सिंहावलोकन)

११. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [१] ये अतिकंतं
१२. अंतलं लाजाने हुसु हेवं इछिसु कथं जने
१३. धंमवढिया वढेया नो चु जने अनुलुपाया धंमवढिया
१४. वढिथा [२] एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [३] एस मे
१५. हुथा [४] अतिकंतं च अंतलं हेवं इछिसु लाजाने कथं जने
१६. अनुलुपाया धंमवढिया वढेया ति नो च जने अनुलुपाया
१७. धंमवढिया वढिथा [५] से किनसु जने अनुपटिपजेया [६]
१८. किनसु जने अनुलुपाया धंमवढिया वढेया ति [७] किनसु कानि
१९. अभ्युंनामयेहं धंमवढिया ति [८] एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं
२०. आहा [९] एस मे हुथा [१०] धंमसावनानि सावापयामि धंमानुसथिनि
२१. अनुसासामि [११] एतं जने सुतु अनुपटीपजीसति अभ्युंनमिसति
२२. धंमवढिया च बाढं वढिसति [१२] एताये मे अठाये धंमसावनानि सावापितानि धंमानुसथिनि विविधानि आनपितानि य···सा पि बहुने जनसि आयता ए ते पलियो वदिसंति पि पविथलिसंति पि [१३] लजूका पि बहुकेसु पानसहसेसु आयता ते पि मे आनपिता हेवं च हेवं च पलियोवदाथ
२३. जनं धंमयुतं [१४] देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [१५] एतमेव मे अनुवेखमाने धंमथंभानि कटानि धंममहामाता कटा धंम···ा··· कटे [१६] देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [१७] मगेसु पि मे निगोहानि लोपापितानि छायोपगानि होसंति पसुमुनिसानं अंबावडिक्या लोपापिता [१७] अढकोसिक्यानि पि मे उदुपानानि
२४. खानापापितानि निंसिढया च कालापिता [१८] आपानानि मे बहुकानि तत तत कालापितानि पटीभोगाये पसुमुनिसानं [१९] ल··· एस पटीभोगे नाम [२०] विविधाया हि सुखापनाया पुलिमेहि पि लाजीहि ममया च सुखयिते लोके [२१] इमं चु धंमानुपटीपती अनुपटीपजंतु ति एतदथा मे
२५. एस कटे [२२] देवानंपिये पियदसि हेवं आहा [२३] धंममहामाता पि मे ते बहुविधेसु अठेसु आनुगहिकेसु वियापटासे पवजीतानं चेव गिहिथानं च सव···डेसु पि च वियापटासे [२४] संघठसि पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति हेमेव बाभनेसु आजीविकेसु पि मे कटे
२६. इमे वियापटा होहंति ति निगंठेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति नानापासंडेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति पटिविसिठं पटीविसिठं तेसु तेसु ते···माता [२५] धंममहामाता चु मे एतेसु चेव वियापटा सवेसु च पासंडेसु [२६] देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [२७]
२७. एते च अंने च बहुका मुखा दान-विसगसि वियापटासे मम चे व देविनं च। सवसि च मे ओलोधनसि ते बहुविधेन आ [का] लेन तानि तानि तुठायतनानि पटी [पादयंति] हिद एव दिसासु च। दालकानां पि च मे कटे। अंनानं च देवि-कुमालानं इमे दान-विसगेसु वियापटा होहंति ति
२८. धंमापदानठाये धंमानुपटिपतिये [२८] एस हि धंमापदाने धंमपटीपति च या इयं दया दाने सचे सोचवे च मदवे साधवे च लोकस हेवं वढिसति ति [२९] देवानंपिये प···स लाजा हेवं आहा [३०] यानि हि कानिचि ममिया साधवानि कटानि तं लोके अनूपटीपंने तं च अनुविधियंति [३१] तेन वढिता च
२९. वढिसंति च मातापितुसु सुसुसाया गुलुसु सुसुसाया वयोमहालकानं अनुपटीपतिया बाभनसमनेसु कपनवलाकेसु आव दासभटकेसु संपटीपतिया [३२] देवानंपिय···यदसि लाजा हेवं आहा [३३] मुनिसानं चु या इयं धंमवढि वढिता दुवेहि येव आकालेहि धंमनियमेन च निझतिया च [३४]
३०. तत चु लहु से धंमनियमे निझतिया व भुये [३५] धंमनियमे चु खो एस ये मे इयं कटे इमानि च इमानि जातानि अवधियानि

[३६] अंनानि पि चु बहुकं···[1]धंमनियमानि यानि मे कटानि [३७] निझतिया व चु भुये मुनिसानं धंमवढि वढिता अविहिंसाये भुतानं

३१. अनालंभाये पानानं [३८] से एताये अथाये इयं कटे पुतापपोतिके चंदमसुलिपिके होतु ति तथा च अनुपटीपजंतु ति [३९] हेवं हि अनुपटीपजंतं हिदत पालते आलधे होति [४०] सतविसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिबि लिखापापिता ति [४१] एतं देवानंपिये आहा [४२] इयं

३२. धंमलिबि अत अथि सिलाथंभानि वा सिला फलकानि वा तत कटविया एन एस चिलठितिके सिया [४३]

संस्कृतच्छाया

११. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। ये अतिक्रान्तम्
१२. अन्तरं राजानः अभूवन् एवं एषिषुः—कथं जनः
१३. धर्मवृद्ध्या वर्द्धेत ? न तु जनः अनुरूपया धर्मवृद्ध्या
१४. अवर्द्धिष्ट । एतत् देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। एतत् मे
१५. अभून्—अतिक्रान्तं च अन्तरम् एवम् एषिषुः राजानः कथं जनः
१६. अनुरूपया धर्मवृद्ध्या वर्द्धेत इति नो च जनः अनुरूपया
१७. धर्मवृद्ध्या अवर्द्धिष्ट। तत् केनस्वित् जनः अनुप्रतिपद्येत।
१८. केनस्वित् जनः अनुरूपया धर्मवृद्ध्या वर्द्धेत इति। केनस्वित् कांश्चित्
१९. अभ्युन्नामयेयं धर्मवृद्ध्या इति। एतत् देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम्
२०. आह। एतत् मे अभूत्—धर्मश्रावणानि श्रावयामि धर्मानुशास्तीः (च)
२१. अनुशास्मि। एतत् जनः श्रुत्वा अनुप्रतिपत्स्यते, अभ्युन्नंस्यति
२२. धर्मवृद्ध्या च वाढं वर्द्धिष्यते। एतस्मै अर्थाय मया धर्मश्रावणानि श्रावितानि धर्मानुशास्तयः विविधाः आज्ञप्ताः य [था मे पु] रुषाः अपि बहुषु जनेषु आयताः एतानि परितः वदिष्यन्ति अपि प्रविस्तारयिष्यन्ति अपि। रज्जुकाः अपि बहुषु प्राणशतसहस्रेषु आयताः। ते अपि आज्ञप्ताः—एवं च एवं च पर्यवदिशत
२३. जनं धर्मयुतम्। देवानांप्रियः प्रियदर्शी एवम् आह—एतस्मिन् एव मया अनुवीक्षमाणेन धर्मस्तम्भाः कृताः धर्ममहामात्राः कृताः धर्मश्रावणं कृतम्। देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह—मार्गेषु अपि मया न्यग्रोधाः रोपिताः (ते) छायोपगा भविष्यन्ति पशुमनुष्याणाम्; आम्रवाटिकाः रोपिताः। अर्द्धक्रोशकानि अपि मे उदपानानि
२४. खानितानि। निषद्याः च कारिताः। आपानानि मया बहुकानि तत्र तत्र कारितानि प्रतिभोगाय पशुमनुष्याणाम्। ल (घुकः तु) एषः प्रतिभोगः नाम। विविधेन हि सुखीयनेन पूर्वैः अपि राजभिः मया च सुखितः लोकः। इमां धर्मानुप्रतिपत्तिम् अनुप्रतिपद्यताम् इति। एतदर्थाय मे
२५. एतत् कृतम्। देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह—धर्ममहामात्राः अपि मया ते बहुविधेषु अर्थेषु आनुग्रहिकेषु व्यापृताः, तत् प्रव्रजितानां च गृहस्थानां च। तत् सर्वेषु पाषण्डेषु अपि च व्यापृताः। तत् संघार्थे अपि मया (इदं) कृतम्। इमे व्यापृताः भविष्यन्ति इति। एवम् एव ब्राह्मणेषु आजीविकेषु अपि मया (इदं) कृतम्।
२६. इमे व्यापृताः भविष्यन्ति इति। निर्ग्रन्थेषु अपि मया (इदं) कृतम्—इमे व्यापृताः भविष्यन्ति। नानापाषण्डेषु अपि मया (इदं) कृतम्—इमे व्यापृताः भविष्यन्ति। प्रतिविशिष्टं प्रतिविशिष्टं तेषु तेषु ते [ते] महामात्राः। धर्ममहामात्रा तु मे एतेषु चैव व्यापृताः सर्वेषु च अन्येषु पाषण्डेषु। देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह।
२७. एते च अन्ये च बहुकाः मुख्याः दान-विसर्गे व्यापृताः। तत् मम चैव देवीनां च। सर्वस्मिन् च मम अवरोधने ते बहुविधेन आकारेण तानि तानि तुष्ट्यायतनानि प्रतिपादयन्ति इह चैव दिशासु च। दारकाणां च मया (इदं) कृतम्। अन्येषां च देवी कुमाराणाम्—इमे दान-विसर्गेषु व्यापृताः भविष्यन्ति इति
२८. धर्मापदानार्थाय धर्मानुप्रतिपत्तये (च) एतत् हि धर्मापदानं धर्मप्रतिपत्तिः च—या इयं दया, दानं, सत्यं, शौचं, मार्दवं, साधवं च—लोकस्य एवं वर्द्धिष्यते इति। देवानां प्रियः प्रि[यद]र्शी राजा एवम् आह—यानि हि कानिचित् मया साधवानि कृतानि तानि लोकः अनुप्रतिपन्नः, तानि च अनुविधीयन्ते (लोकेन)। तेन (लोकाः) वर्द्धिता च
२९. वर्द्धिष्यन्ते च—मातृपित्रोः शुश्रूषया गुरुषु शुश्रूषया वयो-महल्लकानाम् अनुप्रतिपत्त्या, ब्राह्मण-श्रमणेषु, कृपण-वराकेषु यावत् दास-भृतकेषु सम्प्रतिपत्त्यां। देवानां प्रियः [प्रि]य दर्शी राजा एवम् आह—मनुष्याणां तु या इयं धर्मवृद्धिः [सा] वर्द्धिताः द्वाभ्याम् एव आकाराभ्यां धर्मनियमेन च निध्यात्या च।
३०. तत्र तु लघुः सः धर्म-नियमः, निध्यात्या एव भूयः (वर्द्धिता)। धर्मनियमः तु खलु एषः, यत् मया इदं कृतम्—इमानि च इमानि च जातानि अवध्यानि। अन्ये अपि तु बहुकाः धर्मनियमाः ये मया कृताः निध्यात्या एव तु भूयः मनुष्याणां धर्मवृद्धिः वर्द्धिताः अविहिंसायै भूतानाम्
३१. अनालम्भाय प्राणानां (च)। तत् एतस्मै अर्थाय इयं (धर्मलिपिः) कृता पौत्र-प्रापौत्रिकी चान्द्रमः सौर्यिको भवतु इति तथा च अनु प्रतिपद्यन्ताम् इति। एवं हि अनुप्रतिपद्यमाने (धर्मे) ऐहत्य-पारत्र्यम् आलब्धं भवति। सप्तविंशति-वर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता इति। एतत् देवानांप्रियः आह। इयं
३२. धर्मलिपिः यत्र सन्ति शिला-स्तम्भाः वा शिलाफलकानि वा तत्र कर्तव्या, येन एषा चिरस्थितिका स्यात्।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्शने इसे 'अं तं लं' पढ़ा है।
२. इस शब्दमेंका प पंक्तिके ऊपर उत्कीर्ण है।

३. 'यथा पुलिसा' पाठ भरा जा सकता है।
४. सेना और ब्यूलर दोनोंको मिलाकर पढ़ते हैं। किन्तु हुल्त्जके अनुसार दोनों अक्षरोंको पृथक्-पृथक् पढ़ना चाहिये।
५. कटेके पूर्व पाठ सावने होगा।
६. हुल्त्जने इसे निसि [त] या पढ़ा है।
७. हुल्त्जने पूर्ति की है 'लहुके सु'।
८. वही 'सव पासंडेसु',।
९. वही 'से ते महामाता'।
१०. हुल्त्जके अनुसार 'पटिवेदयति' पाठ होना चाहिये। यह जौगड शिला-अभिलेखमें यह पाठ पाया जाता है।
११. पूर्ण पाठ है 'पियदसि',।
१२. पूर्ण पाठ है '—ये पियदसि'।
१३. 'बहुकानि'।

हिन्दी भाषान्तर

११. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"जो व्यतीत
१२. समयमें राजा[१] हुए (उन्होंने) ऐसी इच्छा की—'किस प्रकार[२] लोग
१३. धर्मवृद्धिसे उन्नत किये जा सकें?' किन्तु लोग अनुरूप धर्मवृद्धिसे
१४. उन्नत नहीं हुए। इस सम्बन्धमें देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—'ऐसा मुझे
१५. लगा। (बहुत) समय व्यतीत हुआ राजाओंने ऐसी इच्छा की कि किस प्रकार लोग
१६. अनुरूप धर्मवृद्धिसे उन्नत किये जायँ। परन्तु लोग अनुरूप
१७. धर्मवृद्धिसे नहीं उन्नत हुए। तब किस प्रकार[३] लोग (धर्मका) अनुसरण करें?
१८. किस प्रकार लोग अनुरूप धर्मवृद्धिसे उन्नति करें? किस प्रकार कुछ लोगोंका
१९. धर्मवृद्धिसे अभ्युदय करावें? इस सम्बन्धमें देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा
२०. कहा—'मुझे ऐसा लगा कि धर्म-श्रावणों[४]के सुनानेकी व्यवस्था करूँ, धर्मोपदेशका
२१. आदेश करूँ। इसको सुनकर लोग (धर्मका) अनुसरण करेंगे, अभ्युदय प्राप्त करेंगे
२२. धर्मवृद्धिसे अधिक उन्नति करेंगे। इस प्रयोजनके लिए मेरे द्वारा धर्म-श्रावण सुनाये गये। विविध प्रकारके धर्मानुशासन आज्ञप्त हुए जिससे मेरे राजपुरुष, जो बहुत जनोंमें नियुक्त हैं। उनको उपदेश करेंगे और (विस्तारके साथ) धर्मकी व्याख्या करेंगे। रज्जुक भी कई लाख लोगोंके ऊपर नियुक्त हैं। उनको भी आज्ञा दी गयी है—'इस प्रकारसे उपदेश करो
२३. लोगोंको जो धर्ममें अनुरक्त[५] हैं। देवानांप्रिय प्रियदर्शीने ऐसा कहा—'इस विषयका अनुवीक्षण[६] करते हुए मेरे द्वारा धर्मस्तम्भ[७] खड़े किये गये, महामात्र नियुक्त हुए और धर्मश्रावण सुनाये गये'। देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—'मार्गोंमें मेरे द्वारा न्यग्रोध (वट-वृक्ष) रोपे गये। वे पशु और मनुष्योंके लिए छाया प्रदान करेंगे। आम्र-वाटिका लगायी गयी। आधे-आधे कोस पर[८] कुएँ
२४. खोदे गये। और विश्राम-गृह[९] बनवाये गये। बहुतसे प्याऊ मेरे द्वारा चलाये गये पशु और मनुष्योंके उपयोगके लिए। किन्तु ये उपयोगी काम लघु (छोटे) हैं। क्योंकि विविध प्रकारके सुख पहुँचानेवाले कार्योंसे पूर्ववर्ती राजाओं द्वारा तथा मेरे द्वारा लोग सुखी बनाये गये। इस धर्माचरणका लोग अनुसरण करें, इस प्रयोजनके लिए
२५. यह किया गया'। देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा, "वे धर्ममहामात्र भी मेरे द्वारा विविध प्रकारके कल्याणकारी कार्योंमें नियुक्त हैं, प्रव्रजितोंके और गृहस्थोंके बीच। और वे सभी धार्मिक सम्प्रदायोंमें भी व्याप्त हैं। संघ[१०]के कार्योंमें भी मेरे द्वारा ऐसा किया गया। ये (धर्ममहामात्र) नियुक्त होंगे। इसी प्रकार ब्राह्मणोंमें और आजीवकों[११]में भी मेरे द्वारा यह किया गया।
२६. ये (धर्ममहामात्र) नियुक्त होंगे। निर्ग्रन्थों[१२]में भी मेरे द्वारा यह किया गया—ये 'धर्ममहामात्र) नियुक्त होंगे। नाना प्रकारके धार्मिक सम्प्रदायोंमें मेरे द्वारा यह किया गया—वे (धर्म महामात्र) नियुक्त होंगे। विशेष-विशेष प्रकारके उन उनमें वे (वे) महामात्र (नियुक्त होंगे)। मेरे धर्ममहामात्र तो नियुक्त हैं इन सभी अन्य धार्मिक सम्प्रदायोंमें'। देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा,
२७. और ये अन्य बहुतसे मुख्य (महामात्र) दान-वितरणमें नियुक्त हैं। वे मेरे और देवी[१३] (प्रधान महिषी) के (दान-वितरण) में। वे मेरे सभी अवरोधनों (अन्तः-पुरों) में बहुत प्रकार और आकारके तुष्टिकारक कार्योंका सम्पादन करते हैं यहाँ (पाटलिपुत्रमें) और अन्य दिशाओंमें। और (राज-) दाराओंके दान-वितरणके लिए यह व्यवस्था की गयी। दूसरे देवी-कुमारों[१४]के दान-वितरणके लिए (महामात्र) नियुक्त होंगे। यह
२८. धर्मके प्रसारके लिए और धर्मके अनुसरणके लिए है। धर्मापदान और धर्मप्रतिपत्ति ये हैं—दया, दान, सत्य, शौच, मार्दव और साधुता लोकमें इस प्रकारसे बढ़ेगी। देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा, 'जो कुछ मेरे द्वारा साधु-कार्य किये गये उनको लोग प्राप्त हैं, उनका अनुसरण होता है लोगोंसे। उससे लोग उन्नत हुए हैं' और
२९. उन्नत होंगे माता-पिताकी शुश्रूषासे, गुरुओंकी शुश्रूषासे, वयोवृद्धोंके अनुसरणसे, ब्राह्मण-श्रमण, कृपण-वराक, दास-भृतकोंके साथ उचित व्यवहारसे। देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने कहा, मनुष्योंकी यह धर्मवृद्धि दो उपायों—धर्म-नियम और ध्यानसे वर्धित हुई है।
३०. किन्तु यह धर्म-नियम लघु (छोटा) है, ध्यान अधिक महत्त्वपूर्ण है[१५]। (वास्तविक) धर्म-नियम तो यह है जो मेरे द्वारा किया गया है—ये ये जीवधारी अवध्य (घोषित किये गये)। अन्य भी बहुतसे धर्म-नियम हैं जो मेरे द्वारा किये गये। ध्यानके द्वारा बहुत मनुष्योंकी धर्म-वृद्धि बढ़ी, भूतोंकी विशिष्ट अहिंसाके लिए
३१. प्राणियोंके अवधके लिए[१६]। इसलिए इस प्रयोजनके लिए यह धर्मलिपि लिखायी गयी, जिससे यह पौत्र-प्रपौत्र (से पालित हो), चन्द्र-सूर्यकी आयु तक स्थायी हो और लोग इसका अनुसरण करें। इस प्रकार इसका अनुसरण करनेसे इहलौकिक (सुख) और पारलौकिक कल्याण प्राप्त होता है। सत्ताइस वर्षोंसे अभिषिक्त मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखायी गयी। देवानांप्रियने यह कहा, 'यह
३२. धर्म-लिपि जहाँ शिला-स्तम्भ अथवा शिला-फलक[१७] हो वहाँ लिखायी जाय, जिससे यह चिरस्थायी हो।

भाषान्तर टिप्पणी

१. अशोक इस बातको मानते है कि उनके पूर्व भी राजाओंने प्रजामें धर्मवृद्धिका प्रयत्न किया, परन्तु धर्मवृद्धिके उपयुक्त साधनोंके आविष्कारका श्रेय उन्होंने अपनेको दिया है।

२. ब्यूलरने इसका (कथंका) अर्थ किया है 'किसी प्रकार'। फ्राकेने इसका अर्थ किया है केवल 'कि'।

३. किनसु = पालि केनस्सु = सं० केनस्वित।

४. धर्मश्रावण = धार्मिक सन्देश

५. धर्मयुक्त = धर्ममें लगे हुए।

६. अनुवीक्षण = पीछे अच्छी प्रकारसे देखना (अनु + वि + इक्षण) = सिंहावलोकन करना।

७. कई प्रकारके धर्मस्तम्भ खड़े किये गये—(१) शिला-स्तम्भ और (२) शिला-फलक (पंक्ति ३२) देखिये सिला-थभसि (रूपनाथ शि० अ०); सिलाथंभ (सहसराम शि० अ०) सिलाथभे (रुम्मिनदेई स्तम्भ अ०), थुवे (निगलीव स्तम्भ अ०) : सिलाथभे (रूपनाथ शि० अ०)। राजनीतिक विजयस्तम्भोंके बदले अशोकने धर्मस्तम्भ स्थापित किया।

८. फ्लीटके अनुसार अढकोसिक्यानि सं० आष्टकोशिकानि (आठ-आठ कोशपर) का अपभ्रंश रूप है। हुयेन संगने लिखा है कि प्राचीन भारतमें सेनाका प्रस्थान योजन-से गिना जाता था, जो आठ कोसका होता था। बाणके हर्षचरितमें भी सेनाके अष्टकोशीय प्रस्थानका उल्लेख है। परन्तु कूपोंके लिए आठ कोसकी दूरी बहुत लम्बी है; अर्द्धकोश = १ मीलकी दूरी उपयुक्त है।

९. सं० निषद्या (नि + सद्), वह स्थान है जहाँ यात्री बैठें या विश्राम करें। खारवेलके हाथीगुम्फा अभिलेख (प० १५) में 'अरहत-निसिदिया समीपे' 'अर्हतोंके विश्राम स्थानके पास' पाया जाता है। नागार्जुनी गुहा-अभिलेखमें 'वाप निसिदिया' अर्थात् 'वर्षासे बचाव-स्थान' मिलता है। ल्यूडर और हुल्त्जने इसको सं० 'निश्रयणी' (सीढी) का अपभ्रंश माना है जो उचित नहीं।

१०. बौद्ध संघ।

११. अशोकके गुहालेखोंमें आजीवकोंका उल्लेख है।

१२. निगठ = निर्ग्रन्थ अर्थात् जिनकी ग्रन्थियाँ (सांसारिक बन्धन) नष्ट हो गये हैं। जैन धर्मके संस्थापक महावीर 'निर्ग्रन्थ ज्ञातिपुत्र'के नामसे प्रसिद्ध हैं। अशोकके समय-में उनके अनुयायी 'नगंठ' नामसे प्रसिद्ध थे।

१३. देवी = प्रधान महिषी।

१४. प्रधान महिषीसे उत्पन्न राजकुमार।

१५. ध्यान = धर्मका भावनात्मक रूप।

१६. अहिंसा और अनालम्भमें अन्तर है। अहिंसाका अर्थ है 'मनसा वाचा कर्मणा किसी प्रकार भी किसी प्राणीको कष्ट न देना।' अनालम्भका अर्थ केवल 'वध नहीं करना' है।

१७. शिलाकी चट्टानें।

देहली मेरठ स्तंभ

प्रथम अभिलेख

(धर्म पालनसे इहलोक तथा परलोककी प्राप्ति)

१. इयं···नं धंमेन विधाने
२. धमे·········

संस्कृतच्छाया

१. ··· इदं [धर्मेण पाल] नं धर्मेण विधानं
२. धर्मेण [सुखीयनं]

हिन्दी भाषान्तर

१. ··यह··धर्मसे विधान
२. ······धर्मसे (सुखी बनाना)।

टि० स्तम्भके कई टुकड़ोंमें टूट जाने और उसके बलुआ पत्थरके चिटख जानेसे यह अभिलेख बुरी तरहसे भग्न हो गया। केवल शब्द और अक्षर ही बच पाये। इसके पूर्ण पाठके लिए देखिये दे० टो० स्तम्भ अ०।

द्वितीय अभिलेख

(धर्मकी कल्पना)

१. देवानंपिये पियदसि लाज[1] हेवं आ···[१] धंमे साधु कियं···मे ति [२]
२. अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचिये [३] चखुदानं[2] पि मे
३. बहुविधे दिने [४] दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनु-
४. गहे कटे आ पानदाखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि
५. कटानि [६] एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापिता···
६. अनुपटिपजंतू चिलंथितिका च होतू ति [७] ये च···
७. सति से सुकटं कछती ति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आ[ह] धर्मः साधु कियान् [तु ध] मे इति।
२. अल्पास्रि नवं, बहुकल्याणं, दया, दानं, सत्यं शौचम्। चक्षुर्दानम् अपि मया
३. बहुविधं दत्तम्। द्विपद-चतुष्पदेषु पक्षि-वारिचरेषु विविधः मया अनु-
४. ग्रहः कृत-आप्राणदक्षिणायाः। अन्यानि अपि च मया बहूनि कल्याणानि
५. कृतानि। एतस्मै अर्थाय मया इयं धर्मलिपिः लेखिता······
६. (जनाः) प्रतिपद्यन्ताम्। चिरस्थितिका च भवतु इति। यः च [एवं सम्प्रतिप]-
७. त्स्यते सः सुकृतं करिष्यति इति।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'लाजा'।
२. वही 'दानं'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा क[हा] —"धर्म साधु है। धर्म क्या है?
२. अल्पपाप, बहुकल्याण, दया, दान, सत्य (और) शौच। चक्षुदान (दृष्टिदान) भी मेरे द्वारा
३. बहुत प्रकारका दिया गया। मनुष्य, चौपाये, पक्षी और वारिचरके प्रति विविध प्रकारका मेरे द्वारा अनु-
४. ग्रह किया गया अभयदान तक। अन्य भी मेरे द्वारा अनेक कल्याण
५. किये गये। इस प्रयोजनके लिए मेरे द्वारा यह धर्मलिपि लिखायी गयी (जिससे कि लोग इसका)
६. अनुसरण करें और यह चिरस्थायी हो। और जो इस प्रकार सम्पादन करे—
७. गा वह सुकृत करेगा।

भाषान्तर टिप्पणी

दिल्ली-टोपरा स्तम्भ अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी देखिये।

तृतीय अभिलेख

(आत्मनिरीक्षण)

१. देवानंपिये पियदसि लाज[1] हेवं आह [१] कयानंमेव दे···
२. कयाने कटी ती[2] [२] नो मिना पापं देखति इयं मे पापे[3] कटे ति इयं व
३. आसिन वे नामा ति [३] दुपटिवेखे चु खो एसा [४] हेवं चु खो एस[4] देखिये [५]
४. इमानि आसिनवगामीनि नाम अथ चंडिये निठूलिये कोधे
५. माने इस्या कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं [६]···बाढं
६. देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयं मे पालतिकाये [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। (जनः) कल्याणमेव प[श्यति]—इदं
२. कल्याणं कृतम् इति। नो मनाक् पापं पश्यति—इदं मया पापं कृतम् इति इदं वा
३. आसिनवं नाम इति। दुष्प्रत्यवेक्ष्यं तु खलु एतत्। एवं तु खलु (जनः) एतत् पश्येत्—
४. 'इमानि आसिनवगामीनि नाम, यथा, चाण्ड्यं, नैष्ठुर्यं, क्रोधः,
५. मानः, ईर्ष्या कारणेन वा अहं मा परिभ्रंशयिष्यामि'। [एतत्] बाढं
६. पश्येत्—'इदं मे ऐहिकाय इदं मे पारत्रिकाय'।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'लाजा'।
२. वही 'ति'।
३. वही 'पाप'।
४. वही 'एसा'।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजाने ऐसा कहा—"लोग कल्याण ही देखते हैं—'यह मेरे द्वारा
२. कल्याण किया गया।' थोड़ा भी पाप कोई नहीं देखता—'यह मेरे द्वारा पाप किया गया।' यह वास्तवमें
३. पाप है। यह (पाप) देखना कठिन है। किन्तु इसे अवश्य देखना चाहिये।
४. ये '(वासनायें) पापगामिनी हैं—यथा, चण्डता, नैष्ठुर्य, क्रोध'
५. मान, ईर्ष्या। इनके द्वारा मैं अपने को भ्रष्ट नहीं करूँगा।' इसको अवश्य
६. देखना चाहिये—यह मेरे इहलौकिक सुखके लिए है। यह पारलौकिक कल्याणके लिए।'

भाषान्तर टिप्पणी

देखिये देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेखकी भाषान्तर टिप्पणी।

चतुर्थ अभिलेख

(रज्जुकोंके अधिकार तथा कर्तव्य)

१. ·················
२. ·······क चघंति आलाधयितवे
३. ·······तु अस्वथे[2] होति
४. विय······लिहटवे हेवं ममा
५. लजूक[3] ······ये [९] येन एते अभीता
६. अस्वथ सं······पवतयेवू ति एतेन मे
७. लजूकानं······अतपतिये कटे [१०]
८. इछितवि······हालसमता च सिया
९. दंडसम······मे आवुति बंधनबधानं
१०. मुनिसानं···वधानं तिंनि दिवसानि मे
११. योते दिंने [१२]······पयिसंति जीविताये तानं
१२. नासंतं वा नि······ति पालतिकं
१३. उपवासं वा क······हेवं निलुधसि पि कालसि
१४. पालतं आलाधये······वढति विविधे धंमचलने
१५. संयमे दान······

संस्कृतच्छाया

१. ·········
२. ······क चेष्टन्ते आराधयितुम्।
३. ······आश्वस्तः भवति
४. व्यक्तार्थैः······[प्र] ति हर्तुम् एवं मम
५. रज्जुकाः······[हित-सुखा]य। येन एते अभीताः
६. आश्वस्ताः······प्रवर्तयेयुः इति एतेन मया
७ रज्जुकानां······आत्मप्रत्ययः कृतः।
८. इच्छितव्यं······[व्यव] हार समता च स्यात्
९. दण्ड सम[ता]····· मे आवृत्तिः बन्धन-बद्धानां
१०. मनुष्याणां·····[प्राप्त] वधानां त्रीणि दिवसानि मया
११. यौतकं दत्तम्।······[निध्या] पयिष्यन्ति जाविताय वा तेषां
१२. नश्यन्तं वा नि [ध्यापयितुं]······[दास्य] न्ति पारत्रिकम्
१३. उपवासं वा क [रिष्यन्ति]····· एवम्—निरुद्धे अपि काले
१४. पारत्रिकम् आराधयेयुः [इति]।······वर्धते विविधं धर्माचरणं
१५. संयमः दान [संविभागः च इति।

पाठ टिप्पणी

१. पूर्णपाठ 'लजूक' है।
२. ब्यूलरके अनुसार 'अस्वथे'।
३. वही 'लजूका'।

हिन्दी भाषान्तर

देखिये-देहली—टोपरा चतुर्थ स्तम्भ अभिलेखका भाषान्तर

पंचम अभिलेख

(जीवोंको अभयदान)

१. ·········पोतके[1] पि च कानि
२. ······के [३] वधिकुकुटे नो कटविये [४] तुसे सजीवे
३. ·········तविये [५] दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो
४. झापेतविये [६] जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातंमासीसु[2]
५. तिसायं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं पंनडसं
६. पटिपदा ध्रुवाये[3] च अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि
७. विकेतविये [८] एतानि येव दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि
८. यानि अंनानि पि जीव निकायानि नो हंतवियानी[4] [९]
९. अठमि[5]पखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये
१०. पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने
११. नो नीलखितविये अजके एळके[6] सूकले एवापि
१२. अंने नीलखियति नो नीलखितविये [११] तिसाये पुनावसुने
१३. चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अस्वसा गोनसा लखने
१४. नो······विये [१२] यावसडुवीसतिवस अभिसितेन मे एताये
१५. अंतलिकाये पंनवीसति बंधनमाखानि कटानि [१३]

संस्कृतच्छाया

१. ····· पोतकाः अपि च कान्···
२. ···[अषण्मासि] काः । वधि-कुक्कुटः न कर्तव्यः । तुषः सजीवः
३. ······तव्यः । दावः अनथाय वा विहिंसायै वा न
४. क्षापयितव्यः । जीवेन जीवः पोषितव्यः । तिसृषु चातुर्मासीषु
५. तिष्ये पौणमास्यां त्रीणि दिवसानि—चतुर्दशी, पञ्चदशी,
६. प्रतिपत्-ध्रुवं च अनूपवसथं मत्स्यः अवध्यः न अपि
७. विक्रेतव्यः । एतान् एव दिवसानि नागवने कैवर्त-भोगे
८. अन्येऽपि जीव-निकायाः (ते) न हन्तव्याः ।
९. अष्टमी-पक्षे चतुर्दश्यां पञ्चदश्यां तिष्यायां
१०. पुनर्वसौ तिसृषु चातुर्मासीषु सुदिवसे गाः
११. न निर्लक्षितव्यः । अजकः एडकः शूकरः यः वा अपि
१२. अन्यः निर्लक्ष्यते (सः) न निर्लक्षितव्यः । तिष्ये पुनर्वसौ
१३. चातुर्मास्यां चातुर्मासी-पक्षे अश्वस्य गोः च लक्षणं
१४. न [कर्त]व्यम् । यावत् षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया एतस्मिन्
१५. आन्तरिके पञ्चविंशतिः बन्धन-मोक्षाः कृताः ।

पाठ टिप्पणी

१. इसके पूर्व शब्द 'अवधिया' है ।
२. 'चातुं–' अधिक शुद्ध पाठ होगा ।
३ ब्यूलरके अनुमार 'भुवाये' ।
४. वही 'यानि' ।
५. वही 'अठमी–' ।
६. वही 'एळके' ।

हिन्दी भाषान्तर

देखिये देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ५ का भाषान्तर

षष्ठ अभिलेख

(धर्मके प्रति अनुराग)

१. ·········ु पगमने[1] से मे मोख्यमते [६] सडु······

२. ······िं। सतेन[2] मे इयं धंमलिपि ल······

संस्कृतच्छाया

१. [प्रत्यु] पगमनं तत् मे मुख्य मतम् ।···षड्···

२. ···[अभि] षिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः ले[खिता]

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्जके अनुसार 'प्रत्यूपगमने'।

२. पूर्ण शब्द 'वसाभिसितेन है'।

हिन्दी भाषान्तर

देखिये देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ६ का भाषान्तर ।

लौरिया अरराज स्तंभ

प्रथम अभिलेख

(अ० पूर्वाभिमुख)

(धर्म पालनसे इहलोक तथा परलोककी प्राप्ति)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि
२. लिखापित [२] हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय
३. अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खो मय अनुसथिय धंमापेख[1]
४. धंमकामता च सुवे सुवे वढित[2] बढिसति चेव [४] पुलिसा पि मे उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति
५. संपटिपादयंति च अलं चपलं समादपयितवे [५] हेमेव अंतमहामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन पालन
६. धंमेन विधाने धंमेन सुखीयनं धंमेन गोती ति [६]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपि
२. लेखिता । इहत्र-पारत्र्यं दुष्प्रतिपाद्यम् अन्यत्र अग्र्यायाः धर्मकामतायाः अग्र्यायाः परीक्षायाः
३. अग्र्यायाः शुश्रूषायाः अग्र्यात् भयात् अग्र्यात् उत्साहात् । एषः तु खलुः मम अनुशिष्टिः धर्मापेक्षा
४. धर्म कामता च श्वः श्वः वर्द्धिता वर्द्धिष्यति चैव । पुरुषाः अपि मे उत्कृष्टाः गेयकाः च मध्यमाः च अनुविदधति (धर्मं)
५. सम्प्रतिपादयन्ति च अलं चपलं (जनं) सम्पादयितुम् । एवमेव अन्तमहामात्रा अपि । एषा हि विधिः या इयं धर्मेण पालनं
६. धर्मेण विधानं धर्मेण सुखीयनं धर्मेण गुप्तिः इति ।

पाठ टिप्पणी

१ व्यूलरके अनुसार 'धंमपेख' ।
२. वही 'वढिता' ।

हिन्दी-भाषान्तर

देखिये देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख १ का हिन्दी भाषान्तर

द्वितीय अभिलेख

(धर्मकी कल्पना)

१. देवानंपिये पियदसि लाज[1] हेवं आह [१] धंमे साधु कियं चु धंमे ति [२] अपासिनवे बहुकयाने दय दाने सचे
२. सोचेये ति [३] चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने [४] दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे
३. आपानदखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे अठाये इयं धमलिपि लिखापित हेवं
४. अनुपटिपजंतु चिलंथितीका च होतु ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछति ति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । धर्मः साधु कियान् तु धर्मः इति । अल्पास्त्रिवं, बहुकल्याणं दया, दानं, सत्यं,
२. शौचम् इति । चक्षुदानं अपि मया बहुविधं दत्तम् । द्विपदचतुष्पदेषु, पक्षिवारिचरेषु विविधः मया अनुग्रहः कृतः ।
३. आप्राणदाक्षिण्याय । अन्यानि अपि च मया बहूनि कल्याणानि कृतानि । एतस्मै अर्थाय मया इयं धर्मलिपिः लेखिता एवम्
४. अनुप्रतिपद्यन्ताम् चिरस्थितिका च भवतु इति । यः च एवं संप्रतिपद्यते सः सुकृतं करिष्यति इति ।

पाठ टिप्पणी

१. चिन्हाके अनुसार पाठ 'लाजा' होना चाहिये ।

हिन्दी भाषान्तर

देखिये देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख २ का भाषान्तर

तृतीय अभिलेख

(आत्म-निरीक्षण)

१. देवानंप्रिये पियदसि लाज᾽ हेवं आह [१] कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति [२] नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति
२. इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे चु खो एस [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनव गामीनि नामा ति अथ चाडिये
३. निठूलिये कोधे माने इस्य कालनेनं व हकं मा पलिभसयिसं ति [५] एस बाढं देखिये [६] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। कल्याणमेव पश्यति—इदं मया कल्याणं कृतम्। नो मनाक् पापं पश्यति—इदं मया पापं कृतम् इति'
२. इदं वा असिनवं नाम इति। दुष्प्रत्यवेक्ष्यं तु खलु एतत्। एवं तु खलु एतत् द्रष्टव्यम्। इमानि आसिनवगामीनि नाम इति यथा चाण्ड्यं,
३. नैष्ठुर्यं, क्रोधः, मानः, ईर्ष्या कारणेन वा अहं मा प्रतिभ्रंशयिष्यामि इति। एतत् बाढं द्रष्टव्यम्। इदं मया इहत्रकाय इदं मनाक् मया पारत्रिकाय (कृतम्) इति।

पाठ टिप्पणी

१. किन्हीं के अनुसार 'लाज' अधिक शुद्ध है

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा स्तम्भलेख ३ का भाषान्तर)

चतुर्थ अभिलेख

(रज्जुकोंके अधिकार तथा कर्तव्य)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सड्वीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [२] लजूकामे बहुसु पानसतहसेसु
२. जनसि आयत [३] तेसं ये अभिहाले व दंडे व अतपतिये मे कटे किंति लजूक अस्वस्थ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस
३. हिदसुखं उपदहेवु अनुगहिनेवु च [४] सुखीयनदुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च
४. पालतं च आलाधयेवू [५] लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि कानि वियोवदिसंति येन मं
५. लजूक चघंति आलाधयितवे [८] अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वस्थे होति वियत धाति चघति मं पंजं[१] सुखं पलिहटवे ति
६. हेवं मम लजूक कट जानपदस हितसुखाये [९] येन एते अभीत अस्वथा संतं अविमन[२] कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व
७. दंडे व अतपतिये कटे [१०] इछितविये हि एस किंति वियोहालसमता च सिय दंडसमता च [११] आवा इते पि च मे आवुति बंधनबधानं
८. मुनिसानं तीलितदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं व
९. निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३] इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४]
१०. जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसंविभागे ति [१५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता । रज्जुका मम बहुषु प्राणशतसहस्रेषु
२. जनेषु आयताः । तेषां यः अभिहारः वा दण्डः वा आत्मप्रत्ययः मया कृतः किमिति ? रज्जुकाः आश्वस्ताः अभीताः कर्माणि प्रवर्तयेयुः इति जनस्य जानपदस्य
३. हित-सुखम् उपदध्युः अनुगृह्णीयुः च । सुखीयनं दुःखीयनं (च) ज्ञास्यन्ति धर्मयुक्तेन च व्युपदेक्ष्यन्ति जनं जानपदं किमिति ? इहत्यं च
४. पारत्र्यं च आराधयेयुः इति । रज्जुकाः अपि रंहन्ति (लघन्ते वा) माम् प्रतिचरितुम् । पुरुषान् अपि मम छन्दज्ञान् प्रतिचरिष्यन्ति । ते अपि कांश्चित् व्युपदेक्ष्यन्ति येन माम्
५. रज्जुकाः रंहन्ति आराधयितुम् । यथा हि प्रजां (अपत्यं) व्यक्तायै धात्र्यै निःसृज्य आश्वस्तः भवति जनः—'व्यक्ता धात्री रंहति मम प्रजां सुखं प्रतिहर्तुम्' इति
६. एवं मम रज्जुकाः कृताः जानपदस्य हित-सुखाय । येन एते अभीताः आश्वस्ताः सन्तः अविमनसः कर्माणि प्रवर्तयेयुः इति एतेन मया रज्जुकानाम् अभिहारः वा
७. दण्डः वा आत्मप्रत्ययः कृतः । इच्छितव्यं हि एतत् किमिति ? व्यवहार-समता च दण्ड-समता च स्यात् । यावत् इतः अपि च मे आवृतिः बन्धन-बद्धानां
८. मनुष्याणां तीर्णदण्डानां प्राप्तवधानां त्रयः दिवसाः मे यौतकं दत्तम् । (तेषां) ज्ञातिकाः वा कांश्चित् (रज्जुकान्) निध्यापयिष्यन्ति जीविताय वा तेषां; नश्यन्तं वा
९. निध्यापयितुं दानं दास्यन्ति पारत्रिकम् उपवासं वा करिष्यन्ति । इच्छा हि मे एवं—निरुद्धे अपि काले पारत्र्यं आराधयेयुः इति ।
१०. जनस्य च वर्द्धते विविधं धर्माचरणं संयमः दान-संविभागः (च) इति ।

पाठ टिप्पणी

१. शुद्ध पाठ 'पजं' है।
२. शुद्ध पाठ 'अविमन' है।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा चतुर्थ स्तम्भ अभिलेखका भाषान्तर।)

पंचम अभिलेख

(आ. पश्चिमाभिमुख)

(जीवोंको अभयदान)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितस मे इमानि पि जातानि अवध्यानि
२. कटानि से यथ सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक
३. अंबाकपिलिक दुळि[1] अनठिकमछे वेदवेयके गंगापुपुटके संकुजमछे कपटसेयके
४. पनससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते गामकपोते सवे चतुपदे
५. ये पटिपोगं[2] नो एति नो च खादयति [२] अजका नानि एडका च सूकली च गभिनी व पायमीना व
६. अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके [३] वधिकुकुटे नो कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापयितविये [५] दावे
७. अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये [६] जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिस्यं
८. पुंनमासियं तिन दिवसानि चावुदसं पंनळसं[3] पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि
९. विकेतविये [८] एतानि येव दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि
१०. नो हंतवियानि [९] अठमिपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु
११. सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एळके सूकले एवा पि अंने नीलखियति नो नीलखितविये [१०]
१२. तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमसि पखाये अस्वस गोनस लखने नो कटविये [११]
१३. यावसडुवीसतिवसाभिसितस मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधनमोखानि कटानि [१२]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्‌विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इमानि अपि जातानि अवध्यानि
२. कृतानि, तद् यथा—शुकः, सारिका, अरुणः, चक्रवाकः, हंसः, नन्दीमुखः, गेराटः, जतुका,
३. अम्बाकपीलिका, दुडिः, अनस्थिक-मत्स्यः, वेदवेयकः गङ्गा-कुक्कुटकः, संकुच-मत्स्यः, कमठ-शल्यकौ,
४. पर्णशशः, सृमरः, षण्डकः, ओक-पिण्डः, पलाशादः, श्वेतकपोतः, ग्रामकपोतः, सर्पः, चतुष्पदः,
५. यः प्रतिभोगं न एति न च खाद्यते । अजका एवा एडका च शूकरो च गर्भिणी वा पयस्विनी वा
६. अवध्याः पोतकाः न केचित् (ये) आषाण्मासिकाः । वध्रि-कुक्कुटः नो कर्तव्यः । तुषः सजीवः न दाहयितव्यः । दावः
७. अनर्थाय वा विहिंसायै वा न दाहयितव्यः । जीवेन जीवः न पोषितव्यः । तिसृषु चातुर्मासीषु तिष्यायां
८. पौर्णमास्यां, त्रीणि दिवसानि—चतुर्दशी, पञ्चदशी, प्रतिपत्—ध्रुवं च अनूपवसथं मत्स्यः अवध्यः, न अपि
९. विक्रेतव्यः । एतानि एव दिवसानि नागवने, कैवर्त-भोगे ये अन्ये जीवनिकायाः
१०. न हन्तव्याः । अष्टमी-पक्षे चतुर्दश्यां पञ्चदश्यां तिष्यायां पौर्णमास्यां तिसृषु चातुर्मासीषु
११. सुदिवसे गोः न निर्लक्षितव्यः । अजकः एडकः शूकरः ये वा अपि अन्ये निर्लक्ष्यन्ते (ते) न निर्लक्षितव्याः ।
१२. तिष्यायां पुनर्वसौ चातुर्मास्यां चातुर्मासी-पक्षे अश्वस्य गोः लक्षणं न कर्तव्यम् ।
१३. यावत् षड्‌विंशतिवर्षाभिषेकेन मया एतस्याम् अन्तरिकायां पञ्चविंशतिः बन्धन-मोक्षाणि कृतानि ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'दुडि' ।
२. शुद्ध पाठ 'पटिभोग' होगा ।
३. ब्यूलरके अनुसार 'पनडसं' ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा पञ्चम अभिलेखका भाषान्तर ।)

षष्ठ अभिलेख

(धर्मवृद्धिः धर्मके प्रति अनुराग)

१. देवानंपिये पियदसि लाज[1] हेवं आह [१] दुवाडसवसाभिसितेन मे धंमलिपि लिखापित लोकस
२. हितसुखाये से तं अपहट तं तं धंमवढि पापोव [२] हेवं लोकस हितसुखे ति पटिवेखामि
३. अथा इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेव अपकठेसु किंमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि [३]
४. हेमेव सवनिकायेसु पटिवेखामि [४] सवपासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय [५] एचु इयं अतन पचूपगमने
५. से मे मुख्यमुते [६] सड्वीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया धर्मलिपिः लेखिता लोकस्य
२. हित-सुखाय ताम् अप्रहर्ता तां तां धर्मवृद्धिं प्राप्णुयात् । एवं लोकस्य हित-सुखं प्रत्यवेक्षे—
३. यथा इवं ज्ञातिषु एवं प्रत्यासन्नेषु एवम् अपकृष्टेषु (दूरस्थेषु) कथं कांश्चित् (जनं) सुखम् आवहामि इति तथा च विदधामि ।
४. एवमेव सर्वनिकायेषु प्रत्यवेक्ष्ये । सर्वे पाषण्डाः अपि मया पूजिताः विविधया पूजया । यत् इदम् आत्मना प्रत्युपगमनं
५. तत् मे मुख्यतम् । षड्-विंशति वर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता ।

पाठ टिप्पणी

१. किन्हींके अनुसार पाठ 'लाजा' होना चाहिये ।

हिन्दी-भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ६ का भाषान्तर ।)

लौरिया नंदनगढ़ स्तम्भ

प्रथम अभिलेख

(अ. पूर्वाभिमुख)

(धर्मपालनसे इहलोक तथा परलोककी प्राप्ति)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं
२. धंमलिपि लिखापित [२] हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय
३. अगाय पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खो मम
४. अनुसथिय धंमापेख धंमकामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव [४] पुलिसा पि मे
५. उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं च पलं समादपयितवे [५]
६. हेमेव अंतमहामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन पालन धंमेन विधाने धंमेन सुखीयन
७. धंमेन गोती ति [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं
२. धर्मलिपिः लेखिता । इहत्र पारत्र्यं दुष्प्रतिपाद्यम् अन्यत्र अग्र्यायाः धर्म-कामतायाः
३. अग्र्यात् परीक्षायाः अग्र्यात् शुश्रूषायाः अग्र्यात् भयात् अग्र्यात् उत्साहात् । एषा तु खलु मम
४. अनुशिष्टिः । धर्मापेक्षा धर्मकामता च श्वः श्वः वर्द्धिता वर्द्धिष्यते चैव । पुरुषा अपि मे
५. उत्कृष्टा च गम्याः च मध्यमाः च अनुविदधति सम्प्रतिपादयन्ति च अलं चपलं समादातुम् ।
६. एवमेव अन्तमहामात्रा अपि । एषा हि विधिः या इयं धर्मेण पालनं धर्मेण विधानं धर्मेण सुखीयनं
७. धर्मेण गुप्तिः इति ।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्हर 'लाज' पढ़ते है । परन्तु 'ज'के मध्यमें दाहिनी ओर आ की मात्रा स्पष्ट है ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा प्रथम स्तम्भलेखका भाषान्तर ।)

द्वितीय अभिलेख

(धर्मकी कल्पना)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] धंमे साधु कियं[1] चु धंमे ति [२] अपासिनवे बहु कयाने
२. दय दाने सचे सोचेये ति [३] च खु दाने पि मे बहुविधे दिंने [४] दुपदचतुपदेसु पखि-
३. वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि
४. कटानि [६] एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलंथितीका च होतू ति [७]
५. ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । धर्मः साधुः । कियान् नु धर्मः इति ? अल्पासिनवं बहुकल्याणं
२. दया, दानं, सत्यं, शौचम् इति । चक्षुर्दानम् अपि मया बहुविधं दत्तम् । द्विपद-चतुष्पदेषु, पक्षि-
३. वारिचरेषु विविधः मया अनुग्रहः कृतः आप्राण-दाक्षिण्यात् । अन्यानि अपि च मया बहूनि कल्याणानि
४. कृतानि । एतस्मै अर्थाय मया इयं धर्मलिपिः लेखिता एवम् अनुप्रतिपद्यताम् चिरस्थितिका च भवतु इति ।
५. यः च एवं सम्प्रतिपत्स्यते सः सुकृतं करिष्यति ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'किय' पाठ होना चाहिये ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा द्वितीय स्तम्भ अभिलेखका भाषान्तर ।)

तृतीय अभिलेख

(आत्म-निरीक्षण)

१. देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति [२] नो मिन पापं
२. देखंति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे चु खो एस [४] हेवं चु खो एस देखिये [५]
३. इमानि आसिनवगामीनि[1] नामा ति अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्य कालनेन व हकं
४. मा पलिभसयिसं ति [६] एस बाढं देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । कल्याणमेव पश्यति—'इदं मया कल्याणं कृतम्' इति । न मनाक् पापं
२. पश्यति—'इदं मया पापं कृतम्' इति । दुष्प्रत्यवेक्ष्यं तु खलु एतत् । एवं तु खलु एतत् पश्येत्—
३. इमानि आस्रिनवगामीनि नाम इति यथा चाण्ड्यं, नैष्ठुर्यं, क्रोधः, मानः, ईर्ष्या कारणेन वा अहं
४. मा परिभ्रंशयिष्यामि इति । एतत् वाढं पश्येत्—'इदं मे ऐहिकाय इदम् अन्यत् मे पारत्रिकाय इति ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'आसिनवे--' पाठ होना चाहिये ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा तृतीय स्तम्भ अभिलेखका भाषान्तर ।)

चतुर्थ अभिलेख

(रज्जुकोंके अधिकार और कर्तव्य)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [२] लजूका मे
२. बहुसु पानसतसहसेसु जनसि आयत [३] तेसं ये अभिहाले व दंडे व अतपतिये मे कटे किंति लजूक अस्वस्थ
३. अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हितसुखं उपदहेवू अनुगहिनेवू च [४] सुखीयनदुखीयनं
४. जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च पालतं आलाधयेवू ति [५] लजूका पि लघंति
५. पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चघंति आला-
घयितवे [८]
६. अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं पलिहटवे ति
७. हेवं मम लजूक कट जानपदस हितसुखाये [९] येन एतं अभीत अस्वथा संतं अविमन कंमानि पवतयेवू ति
८. एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अतिपतिये कटे [१०] इछितविये हि एस किंति वियोहालसमता च सिय दंडसमता
च [११]
९. आवा इते पि च मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं तिलितदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि
१०. निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३] इछा हि मे हेवं
११. निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४] जनस वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे ति [१५]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता । रज्जुका मे
२. बहुषु प्राणशतसहस्रेषु जनेषु आयताः । तेषां यः अभिहारः वा दण्डः वा आत्मप्रत्ययः मया कृतः किमिति ? रज्जुकाः आश्वस्ताः
३. अभीता कर्माणि प्रवर्तयेयुः जनस्य जानपदस्य हितसुखं उपदध्युः अनुगृह्णीयुः च । सुखीयनं दुःखीयनं
४. ज्ञास्यन्ति धर्मयुतेन च व्यपदेक्ष्यन्ति जनं जानपदं किमिति ? इहत्यं पारत्र्यं च आराधयेयुः इति । रज्जुकाः अपि रंहन्ते
५. परिचरितुं माम् । पुरुषान् अपि मे छन्दज्ञान् परिचरिष्यन्ति । ते अपि च कान् व्यपदेक्ष्यन्ति येन मां रज्जुकाः चेष्टन्ते आराधयितुम् ।
६. यथा हि प्रजां (अपत्यं) व्यक्तायै धात्र्यै निसृज्य आश्वस्तः भवति—'व्यक्ता धात्री चेष्टते मे प्रजां सुखं प्रतिहर्तुम्' इति
७. एवं मया रज्जुकाः कृताः जानपदस्य हितसुखाय । येन एते अभीताः आश्वस्ताः सन्तः अविमनसः कर्माणि प्रवर्तयेयुः इति
८. एतेन मया रज्जुकानाम् अभिहारः वा दण्डः वा आत्मप्रत्ययः कृतः । इच्छितव्यं हि एतत् किमिति ? व्यवहारसमता च स्यात् दण्डसमता च ।
९. यावत् इयम् अपि च मे आवृतिः बन्धन-बद्धानां मनुष्याणां तीर्णदण्डानां प्राप्तवधानां त्रयः दिवसाः मया यौतकं दत्तम् । (तेषां) ज्ञातिकाः
वा कान्
१०. निध्यापयिष्यन्ति जीविताय तेषां नश्यन्तं वा निध्यापयितुं दानं दास्यन्ति पारत्रिकम् उपवासं वा करिष्यन्ति । इच्छा हि मे एवं
११. निरुद्धे अपि काले पारत्र्यम् आराधयेयुः इति । जनस्य वर्द्धते विविधं धर्माचरणं संयमः दान-संविभागः इति ।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्शके अनुसार 'लाज' ।

हिन्दी भाषान्तर[१]

(देखिये देहली-टोपरा चतुर्थ स्तम्भ अभिलेखका भाषान्तर ।)

पंचम अभिलेख

(आ. पश्चिमाभिमुख)

(जीवोंको अभयदान)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा[1] हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितस मे इमानि पि
२. जातानि अवध्यानि कटानि से यथा सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे
३. नंदीमुखे गेलाटे जतूका अंबाकपिलिक दुळि[2] अनठिकमछे वेदवेयके
४. गंगापुपुटके संकुजमछे कफटसेयके पंनससे सिमले संडके ओकपिंडे
५. पलसते सेतकपोते गामकपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति [२]
६. अजकानानि एडका च सूकली च गभिनी व पायमीना व अवध्य पोतके च कानि
७. आसंमासिके [३] वधिकुकुटे नो कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापयितविये [५] दावे अनठाये व
८. विहिसाये व नो झापयितविये [६] जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिसियं
९. पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं पंनळसं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये
१०. नो पि विकेतविये [८] एतानि येव दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि
११. जीवनिकायानि नो हंतवियानि [९] अठमिपखाये चावुदसाये पंनळसाये तिसाये पुनावसुने
१२. तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एळके सूकले ए वा पि अंने अस्वस गोनस
१३. नीलखयति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अस्वस गोनस
१४. लखने नो कटविये [११] यावसडुवीसतिवसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति
१५. बंधन मोखानि कटानि [१२]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। षड्विंशतिवर्षाभिसिक्तेन मया इमानि अपि
२ जातानि अवध्यानि कृतानि तानि यथा शुकः, सारिका, अरुणः, चक्रवाकः, हंसः,
३. नन्दीमुखः, गेलाटः, जतुकाः, अम्बाकपीलिका, दुडिः, अनस्थि-मत्स्यः, वेदवेयकः,
४. गङ्गा-कुक्कुटः, संकुच-मत्स्यः, कमठशल्यकौ, पर्णशशः, सृमरः, षण्डकः, ओकपिण्डः,
५. पृषतः, श्वेतकपोतः, ग्रामकपोतः सर्वः चतुष्पदः यः परिभोगं न एति न च खाद्यते।
६. अजकाः एडकाः च शूकरी च गर्भिणी वा पयस्विनी वा अवध्या पोतकाः च केचित्
७. आषाण्मासिकाः। वार्ध्र-कुक्कुटः न कर्तव्यः। तुषः सजीवः न ध्मापयितव्यः। दावः अनर्थाय वा
८. विहिंसायै वा न दाहयितव्यः। जीवेन जीवः न पोषितव्यः। तिसृषु चातुर्मासीषु तिष्यायां
९. पौर्णमास्यां त्रिषु दिवसेषु—चतुर्दश्यां, पञ्चदश्यां, प्रतिपदि—ध्रुवं च अनूपवसथं मत्स्यः अवध्यः
१०. नो अपि विक्रेतव्यः। एतान् एव दिवसान् नागवने, कैवर्तभागे अन्ये अपि
११. जीवनिकायाः (ते) न हन्तव्याः। अष्टमी-पक्षे, चतुर्दश्यां, पञ्चदश्यां, तिष्यायां, पुनर्वसौ
१२. तिसृषु चातुर्मासीषु सुदिवसे गौ न निर्लक्षितव्यः। अजकः एडकः शूकरः ये वा अपि अन्ये
१३. निर्लक्ष्यन्ते (ते) न निर्लक्षितव्याः। तिष्यायां, पुनर्वसौ, चातुर्मास्यां, चातुर्मासीय-पक्षे अश्वस्य, गोः
१४. लक्षणं न कर्तव्यः। यावत्-षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया एतस्याम् अन्तरिकायां पञ्चविंशति-
१५. बन्धन-मोक्षाः कृताः।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्शके अनुसार 'लाजा'।
२. ब्यूलरके अनुसार 'दुडि'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा पञ्चम-अभिलेखका भाषान्तर।)

षष्ठ अभिलेख

(धर्मवृद्धि : धर्मके प्रति अनुराग)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा[1] हेवं आह [१] दुवाळसवसाभिसितेन मे धंमलिपि लिखापित
२. लोकस हितसुखाये से तं अपहट तं तं धंमवढि पापोव [२] हेवं लोकस
३. हितसुखे ति पटिवेखामि अथा इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु
४. किंमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि [३] हेमेव सवनिकायेसु पटिवेखामि [४]
५. सवपासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं अतन पचूपगमने
६. से मे मोरव्यमुते [६] सड्वीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया धर्मलिपिः लेखिता
२. लोकस्य हितसुखाय तत् तत् अपहर्ता तां तां धर्मवृद्धिं प्राप्नुयात्। एवं लोकस्य
३. हित-सुखम् अपि प्रत्यवेक्षे यथा इदं ज्ञातिषु एवं प्रत्यासन्नेषु एवम् अपकृष्टेषु
४. किं कान् सुखम् आवहामि इति तथा च विदधामि। एवमेव सर्वनिकायेषु प्रत्यवेक्षे।
५. सर्वे पाषण्डाः अपि मया पूजिताः विविधया पूजया। यत् तु इदम् आत्मनः प्रत्युपगमनं
६. तत् मे मुख्यमतम्। षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्शके अनुसार 'लाजा'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा षष्ठ स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर।)

रामपुरवा स्तम्भ

प्रथम अभिलेख

(धर्मपालनसे इहलोक तथा परलोककी प्राप्ति)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [२] हिदपालते
२. दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय अगाय सुसुसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३]
३. एस चु खो मम अनुसथिय धंमापेख धंमकामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव [४] पुलिसा पि मे उकसा च
४. गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं समादपयितवे [५] हेमेव अंत महामाता पि [६] एसा हि विधि
५. या इयं धंमेन पालन धंमेन विधाने धंमेन सुखियन धंमेन गोती ति [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। षड्-विंशति-वर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता। इहत्यपारत्र्यं
२. दुष्प्रतिपाद्यम् अन्यत्र अग्र्यायाः धर्मकामतायाः अग्र्यायाः शुश्रूषायाः अग्र्यात् भयात् अग्र्यात् उत्साहात्।
३. एषा तु खलु मम अनुशिष्टिः धर्मापेक्षा धर्मकामता च श्वः श्वः वर्द्धिता वर्द्धिष्यते चैव। पुरुषा अपि मे उत्कृष्टा च
४. गम्याः च मध्यमा च अनुविदधति सम्प्रतिपादयन्ति च अलं चपल समादातुम्। एवमेव अन्तमहामात्रा अपि। एषा हि विधिः
५. या इयं धर्मेण पालनं धर्मेण विधानं धर्मेण सुखीयनं धर्मेण गुप्तिः इति।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्हरके अनुसार 'लाज'।
२. वही 'हव'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा प्रथम स्तम्भ-अभिलेख का भाषान्तर।)

द्वितीय अभिलेख

(धर्मकी कल्पना)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा[1] हेवं आह [१] धंमे साधु कियं चु धंमेति [२] अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति [३] चखुदाने पि मे

२. बहुविधे दिंने [४] दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आपानदखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६]

३. एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलंथितीका च होतू ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछती ति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। धर्मः साधु कियान् तु धर्मः इति। अल्पाम्निनवं, बहुकल्याणं, दया, दानं, सत्यं, शौचम् इति। चक्षुदानम् अपि मया

२. बहुविधं दत्तम्। द्विपदचतुष्पदेषु पक्षिवारिचरेषु विविधः मया अनुग्रहः कृतः आप्राणदाक्षिण्यात्। अन्यानि अपि च मया बहूनि कल्याणानि कृतानि।

३. एतस्मै अर्थाय मया इयं धर्मलिपिः लेखिता एवम् अनुप्रतिपद्यताम् चिरस्थितिका च भवतु इति। यः च एवं सम्प्रतिपत्स्यते सः सुकृतं करिष्यति इति।

पाठ टिप्पणी

[1]. कुल्त्शके अनुसार 'लाज'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा द्वितीय स्तम्भ-अभिलेख का भाषान्तर।)

तृतीय अभिलेख

(आत्म-निरीक्षण)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा[1] हेवं आह [१] कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति [२] नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति

२. इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे चु खो एस [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनवगामीनि नामा ति अथ चंडिये निठुलिये

३. कोधे माने इस्य कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं [६] एस बाढं देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। कल्याणमेव पश्यति—'इदं मया कल्याणं कृतम्' इति। ना मनाक् पापं पश्यति—'इदं मया पापं कृतम्' इति।

२. इदं वा आसिनवं नाम इति। दुष्प्रत्यवेक्ष्यं तु खलु एतत्। एवं तु खलु एतत् पश्येत्—इमानि आसिनवगामीनि नाम इति यथा चाण्ड्यं नैष्ठुर्यं

३. क्रोधः मानः ईर्ष्या कारणेन वा अहं मा परिभ्रंशयिष्यामि। एतत् बाढं पश्येत्। इदं मे ऐहिकाय इदम् अन्यत् मे पारत्रिकाय इति।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्तजके अनुसार 'लाज'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा तृतीय स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर।)

चतुर्थ अभिलेख

(रज्जुकोंके अधिकार और कर्तव्य)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा[1] हेवं आह [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [२] लजूका मे बहूसु पानसतसहसेसु
२. जनसि आयत [३] तेसं ये अभिहले[2] व दंडे व अतपतिये मे कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस
३. हितसुखं उपदहेवु अनुगहिनेवु च [४] सुखीयन दुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च पालतं च
४. आलाधयेवु ति [५] लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक
५. चघंति आलाधयितवे [८] अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं पलिहटवे ति हेवं मम लजूक कट
६. जानपदस हितसुखाये [९] येन एते अभीत अस्वथा संतं अविमन कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अतपतिये कटे [१०]
७. इछितविये हि एस किंति[3] वियोहालसमता च सिय दंडसमता च [११] आव इते पि च मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं तीलितदंडानं पतवधानं
८. तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति
९. इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१३] जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे ति [१४]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्‌विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता । रज्जुका मे बहुषु प्राण-शत-सहस्रेषु
२. जनेषु आयताः । तेषां यः अभिहारः वा दण्डः वा आत्मप्रत्ययः मया कृतः किमिति ? रज्जुकाः आश्वस्ताः अभीताः कर्माणि प्रवर्तयेयुः इति जनस्य जानपदस्य
३. हित-सुखम् उपदध्युः अनुगृह्णीयुः च । सुखीयनं दुःखीयनं (च) ज्ञास्यन्ति धर्मयुतेन च व्यपदेक्ष्यन्ति जनं जानपदं किमिति ? इहत्यं च पारत्र्यं च
४. आराधयेयुः इति । रज्जुकाः अपि रंहन्ति परिचरितुं माम् । पुरुषान् अपि मे छन्दज्ञान् परिचरिष्यन्ति । ते अपि च कान् व्यपदेक्ष्यन्ति येन मां रज्जुकाः
५. चेष्टन्ते आराधयितुम् । यथा हि प्रजां (अपत्यं) व्यक्तायै धात्र्यै निसृज्य आश्वस्तः भवति—'व्यक्ता धात्री चेष्टते मे प्रजायै सुखं परिहातुम् इति एवं मम रज्जुकाः कृताः
६. जानपदस्य हित-सुखाय । येन एते अभीताः आश्वस्ताः सन्तः अविमनसः कर्माणि प्रवर्तयेयुः इति । एतेन मया रज्जुकानाम् अभिहारः वा दण्डः वा आत्मप्रत्ययः कृतः ।
७. इच्छितव्यं हि एतत् किमिति ? व्यवहारसमता च स्यात् दण्डसमता च । यावत् इतः अपि च मे आवृतिः—बन्धन-बद्धानां मनुष्याणां तीर्णदण्डानां प्राप्तवधानां
८. त्रयः दिवसाः मया यौतकं दत्तम् । ज्ञातिकाः अपि कान् निध्यापयिष्यन्ति जीविताय तेषां नश्यन्तं वा निध्यायन्तः दानं ददति पारत्रिकम् उपवासं वा करिष्यन्ति ।
९. इच्छा हि मे एवं निरुद्धे अपि काले पारत्र्यम् आराधयेयुः इति । जनस्य च वर्द्धते विविधं धर्माचरणं संयमः दान- संविभागः इति ।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्शके अनुसार 'लाज' ।
२. शुद्ध पाठ 'अभिहाले' ।
३. ब्यूलरके अनुसार 'किति' ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा चतुर्थ स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर ।)

पंचम अभिलेख

(आ० दक्षिणाभिमुख)

(जीवोंको अभयदान)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा[1] हेवं आहा [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इमानि पि जातानि अवध्यानि कटानि से यथ
२. सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबाकपिलिक दुळि अनठिकमछे वेदवेय के
३. गंगापुपुटके संकुजमछे कफटसेयके पंनससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते
४. गामकपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति [२] अजका नानि एळका च सूकली च गभिनी व
५. पायमीना व अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके [३] वधिकुकुटे नो कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापयितविये [५]
६. दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये [६] जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुमासीसु तिस्यं पुनमासियं
७. तिंनि दिवसानि चावुदसं पनडमं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये [८] एतानि येव
८. दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि नो हंतवियानि [९] अठमिपखाये चावुदसाये
९. पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो निलखितविये अजके एलके सूकले
१०. ए वा पि अंने नीलखियति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासियं चातुंमासिपखाये अस्वस गोनस
११. लखने नो कटविये [११] यावसडुवीसतिवसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधनमोखानि कटानि [१२]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्-विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इमानि अपि जातानि अवध्यानि कृतानि तानि यथा
२. शुकः, सारिका, अरुणः, चक्रवाकः, हंसः, नन्दीमुखः, गेलाटः, जतुकाः, अम्बाकपीलिका, दुडि, अनस्थिकमत्स्यः वेदवेयकः,
३. गङ्गाकुक्कुटः, संकुचमत्स्यः, कमठ-शल्यकौ, पर्णशशः, सृमरः, षण्डकः, ओकपिण्डः, पृषतः, श्वेतकपोतः,
४. ग्रामकपोतः, सर्वः चतुष्पदः ये प्रतिभोगं न एति न च खाद्यते । अजका एडका च शूकरी च गर्भिणी वा
५. पयस्विनी वा अवध्या । पोतकाः च के ते आषाण्मासिकाः । वध्रि-कुक्कुटः न कर्तव्यः । तुषः सजीवः न क्षापयितव्यः ।
६. दावः अनर्थाय वा विहिंसायै वा न दाहयितव्यः । जीवेन जीवः न पोषितव्यः । तिसृषु चातुर्मासीषु तिष्यायां पौर्णमास्यां
७. त्रीषु दिवसेषु—चतुर्दशे, पञ्चदशे, प्रतिपदि—ध्रुवं च अनूपवसथं मत्स्यः अवध्यः नो अपि विक्रेतव्यः । एतान् एव
८. दिवसान् नागवने, कैवर्त-भोगे, ये अन्ये अपि जीव-निकायाः (ते) नो हन्तव्याः । अष्टमी-पक्षे चतुर्दश्यां
९. पञ्चदश्यां तिष्यायां पुनर्वसौ, तिसृषु चातुर्मासीषु सुदिवसे गौः न निर्लक्षयितव्यः अजकः एडकः शूकरः
१०. ये वा अपि अन्ये निर्लक्ष्यन्ते (ते) न निर्लक्षयितव्याः । तिष्यायां पुनर्वसौ, चातुर्मासीषु चातुर्मासी-पक्षे अश्वस्य गोः
११. लक्षणं न कर्तव्यम् । यावत्-षड्विंशति-वर्षाभिषिक्तेन मया एतस्याम् अन्तरिकायां पञ्चविंशति-बन्धन-मोक्षाः कृताः ।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्शके अनुसार 'लाज' ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा पञ्चम स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर ।)

षष्ठ अभिलेख

धर्मवृद्धि : धर्मके प्रति अनुराग)

१. देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आह [१] दुवाडसवसाभिसितेन मे धंमलिपि लिखापित लोकस हितसुखाये से तं अपहट
२. तं तं धंमवढि पापोव [२] हेवं लोकस हितसुखे ति पटिवेखामि अथ इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किंमि कानि
३. सुखं आवहामि ति तथा च विदहामि [३] हेमेव सवनिकायेसु पटिवेखामि [४] सबपासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं
४. अतन पचूपगमने से मे मोख्यमुते [६] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । द्वादशवर्षाभिषिक्तेन मया धर्मलिपिः लेखिताः । लोकस्य हित-सुखाय तं तं अपहर्ता
२. तां तां धर्मवृद्धिं प्राप्नुयात् । एवं लोकस्य हित-सुखं प्रत्यवेक्षे यथा इदं ज्ञातिषु एवं प्रत्यासन्नेषु एवम् अपकृष्टेषु किमिति ? कान्
३. सुखम् आवहामि इति तथा च विदधामि । एवमेव सर्वनिकायेषु प्रत्यवेक्षे । सर्वपाषडाः अपि मया पूजिताः विविधया पूजया । ये तु इदम्
४. आत्मनः प्रत्युपगमनं तत् मे मुख्यमतम् । षड्-विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता ।

पाठ टिप्पणी

१. बुल्नरके अनुसार 'लाज' ।

हिन्दी-भाषान्तर

देखिये देहली-टोपरा षष्ठ स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर

प्रयाग-कोसम स्तम्भ

प्रथम अभिलेख

(धर्मपालनसे इहलोक और परलोककी प्राप्ति)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता [२] हिदतपालते दुसंपटिपादये
२. अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय अगाय सुसूसाया अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खो मम अनुसथिया
३. धंमापेखा धंमकामता च सुवे सुवे वढिता वढिसति चेवा [४] पुलिसा पि मे उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च
४. अलं चपलं समादपयितवे [५] हेमेव[1] अंतमहामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन पालना धंमेन विधाने धंमेन सुखीयना धंमेन गुति ति[2] च[3] [७]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इयं धर्मलिपिः लेखिता। इहत्यपारत्र्यं दुष्प्रतिपाद्यम्
२. अन्यत्र अग्र्यात् धर्मकामतायाः अग्र्यात् परीक्षायाः अग्र्यात् शुश्रूषायाः अग्र्यात् भयात् अग्र्यात् उत्साहात्। एषा तु खलु मम अनुशिष्टिः
३. धर्मापेक्षा, धर्मकामता च श्वः श्वः वर्द्धिता वर्द्धिष्यते चैव। पुरुषाः अपि मे उत्कृष्टाः च गम्याः च मध्यमाः च अनुविदधति सम्प्रतिपादयन्ति च
४. अलं चपलं समादातुम्। एवमेव अन्तमहामात्रा अपि। एषः हि विधिः या इयं धर्मेण पालना धर्मेण विधानं धर्मेण सुखीयनं धर्मेण गुप्तिः इति च

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार '**हेमेव**' पाठ होना चाहिये।
२. कोई कोई इसे 'ती' पढ़ते हैं, किन्तु ह्रस्व इ मात्रा व्यंजन के मे स्पष्ट है।
३. ब्यूलरके अनुसार 'चु'।

हिन्दी भाषान्तर

देखिये देहली-टोपरा प्रथम स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर

द्वितीय अभिलेख

(धर्मकी कल्पना)

१. देवानं पिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] धंमे साधु कियं चु धंमे ति [२] अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये [३] चखुदाने पि मे

२. बहुविधे दिंने [४] दुंपदचतुपदेसु[1] पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आपानदखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि[2] कयानानि कटानि [६]

३. एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिलठितीका च होतू ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछति ति [८]

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह। धर्मः साधु कियान् तु धर्मः इति। अल्पास्रिनवं, बहुकल्याणं, दया, दानं, सत्यं, शौचम्। चक्षुदानम् अपि मया

२. बहुविधं दत्तम्। द्विपद-चतुष्पदेषु पक्षि-वारिचरेषु विविधः मे अनुग्रह कृतः आप्राण-दाक्षिण्यात्। अन्यानि अपि च मया बहूनि कल्याणानि कृतानि।

३. एतस्मै अर्थाय मया इयं धर्मलिपिः लेखिता एवम् अनुप्रतिपद्यताम् चिरस्थितिका च भवतु इति। यः च एवं सम्प्रतिपत्स्यते सः सुकृतं करिष्यति इति।

पाठ टिप्पणी

१. 'दुपद'के दु के आगे एक अनावश्यक अनुस्वार है।
२. ब्यूलरके अनुसार 'बहुनि'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा द्वितीय स्तम्भ अभिलेख का भाषान्तर।)

तृतीय अभिलेख

(आत्म-निरीक्षण)

१. देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] कयानमेव देखति इयं मे कयाने कटे ति [२] नो मिन पापकं देखति इयं मे पापके कटे ति इयं वा आसिनवे नामा ति

....

संस्कृतच्छाया

१. देवानां प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । कल्याणमेव पश्यति—'इदं कल्याणं मया कृतम्' इति । नो मनक् पापं पश्यति—'इदं मया पापं कृतम्' इति । इदं वा आस्रिनवं नाम इति ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा तृतीय स्तम्भ अभिलेखका भाषान्तर ।)

चतुर्थ अभिलेख

(रज्जुकोंके अधिकार और कर्तव्य)

१. ·········कानं अभिहाले वा दंडे वा अतपतिये कटे [१०] इछितविये हि एस किंति[1]

२. ·········लसमता च सिया दंडसमता च[2] [११] आव[3] इते पि च मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं तीलीतदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि योते दिंने [१२]

३. ······का व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं वा निझपयिता दानं दाहंति पालतिकं उपवासं वा कछंति [१३]

४. ······हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवु [१४] जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे [१५]

संस्कृतच्छाया

१. ······[रज्जु]कानाम् अभिहारः वा दण्डः वा आत्मप्रत्ययः कृतः। इच्छितव्यं हि एतत् किमिति ?

२. ···[व्यवहा र-समता च स्यात् दण्ड-समता च। यावत् इयम् अपि च मे आवृत्तिः बन्धन-बद्धानां मनुष्याणां तीर्णदण्डानां प्राप्तवधानां त्रयः दिवसाः यौतकं दत्तम्।

३. ···[ज्ञाति]काः वा कान् निध्यापयिष्यन्ति जीविताय तेषां नश्यन्तं वा निध्यायन्तः दानं ददति पारत्रिकम् उपवासं वा करिष्यन्ति।

४. ······हि मे एवम् निरुद्धे अपि काले पारत्र्यम् आराधयेयुः। जनस्य च वर्द्धते विविधं धर्माचरणं संयमः दान-संविभागः।

पाठ-टिप्पणी

१. ब्यूलरके पाठमें यह पंक्ति नहीं पायी जाती।

२. ब्यूलरके अनुसार चा पाठ होना चाहिये।

३. वही, 'अव'।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा चतुर्थ स्तम्भ अभिलेखका भषान्तर।)

पंचम अभिलेख

(जीवोंका अभयदान)

१. ···पिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इमानि जातानि अवधियानि कटानि से यथ सुके सालिका अलुने चकवाके

२. ······नंदीमुखे गेलाटे जतूका[1] अंबाकिपिलिका दुडी[2] अनठिकमछे[3] वेदवेयके गंगापुपुटके संकुजमछे कफट···के पंनससे सिमले संड···

३. ·····तकपोते गामकपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो······

४. ना······पायसी······

५. ······सजीवे नो झाप······

६. ······नि चावुदसं पंचद······

७. ······नि······

८. लखने नो कटवियं [११] या······

संस्कृतच्छाया

१. [देवानां]प्रियः प्रियदर्शी राजा एवम् आह । षड्विंशतिवर्षाभिषिक्तेन मया इमानि जातानि अवध्यानि कृतानि तानि यथा शुकः सारिका, अरुणः, चक्रवाकः,

२. ······नन्दीमुखः, गेलाटः, जतुकाः, अम्बाकपीलिका, दुडिः, अनस्थिकमत्स्यः, वेदवेयकः, गङ्गाकुक्कुटः संकुचमत्स्यः कमठ······[शल्य]कः, पर्णशशः, सृमरः, षण्ड[कः]···

३. ···[श्वे]त कपोतः, ग्रामकपोतः, सर्वः चतुष्पदः ये प्रतिभोगं नो······ना···पयस्विनी······

४. ······[तुषः] सजीव न क्षाप······

५. ······[दिवसेषु]—चतुर्दशे, पञ्चद[शे]·

६. ············नि

७. ········ ·········

८. लक्षणं न कर्तव्यम् । या [वत्]·· ···

पाठ-टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'जतूके' पाठ होना चाहिये ।

२. वही 'दडी' ।

३. 'अनथिक—' पाठ अधिक समीचीन जान पड़ता है ।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा पञ्चम स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर ।)

षष्ठ अभिलेख

(धर्मवृद्धिः धर्मके प्रति अनुराग)

१. ······पिये पियदसी ला···[१]···तं···डिपा···[२] हेवं लोकस

२. हितसुखे ति पटिवेखामि अथ इयं······वं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किमं कानि···विदहामि [३] हेवंमेव सव···कायेसु पटिवेखामि [४]

३. सवपासंडा पि मे पूजिता विविधाय पूजाया [५] ए चु इयं अतना पचुपगमने से मे मुख्यमते [६]···लिपो[1] लिखापिता ति [७]

संस्कृतच्छाया

१. [देवानां]प्रियः प्रियदर्शी रा ····। ··तत्·· [वृ]द्धि प्रा·· ··। एवं लोकस्य

२. हित सुखम् इति प्रत्यवेक्षे यथा इयं ·[ए]वं प्रत्यासन्नेषु एवम् अपकृष्टेषु किं कान्·· विदधामि। एवमेव सर्वं [नि]कायेषु प्रत्यवेक्षे।

३. सर्वपाषण्डाः अपि मया पूजिता विविधया पूजया। एतत् तु इदम् आत्मनः प्रत्युपगमनं तन् मे मुख्यमतम्। लिपिःलेखिता इति

पाठ-टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'लिपि' पाठ होना चाहिये।

हिन्दी भाषान्तर

(देखिये देहली-टोपरा षष्ठ स्तम्भ-अभिलेखका भाषान्तर।)

पंचम खण्ड : लघु स्तम्भ अभिलेख

सांची स्तंभ अभिलेख

(संघभेदका दण्ड)

१. ·····························
२. या[1] भेत···[2][२]···घे[3]···मगे[4] कटे
३. भिखूनं च[5] भिखुनीनं चा[6] ति पुतप-
४. पोतिके चंदमसूरियिके [३] ये संघं
५. भाखति[7] भिखु[8] वा भिखुनि वा ओदाता-
६. नि दुसानि सनंधापयितु अनावा-
७. ससि वासापेतविये [४] इछा हिमे किं-
८. ति संघे समगे[9] चिलथितीके सिया ति [५]

संस्कृतच्छाया

१. ·········
२. ······शक्याः भेत्तु[म्]। संघः समग्रः कृतः
३. भिक्षूणां भिक्षुणीनां च इति पौत्र-प्रा
४. पौत्रकं चान्द्रसौर्यिकम्। यः सङ्घं
५. भङ्क्ष्यति भिक्षुः वा भिक्षुणी वा (सः) अवदाता-
६. नि दूष्याणि सन्निधाप्य अनावा
७. से वासयितव्यः। इच्छा हि मे किमि-
८. ति सङ्घः समग्रः चिरस्थितिकः स्यात् इति।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'यं'।
२. पूर्ण पाठ 'भेतवे' सारनाथ स्तम्भ अभिलेख (पृ० ३) देखिये।
३. पूर्ण पाठ 'संघे'।
४. पूर्ण पाठ 'समगे'।
५. ब्यूलरके अनुसार 'वा'
६. वही 'वा'।
७. वही 'भखति'।
८. ब्यॉयरके अनुसार 'भिखू'।
९. ब्यूलरके अनुसार 'सघम मगे'।

हिन्दी भाषान्तर

१. ·········
२. भंग नहीं किया जा सकता।[1] [सं] घं [स]मग्र[2] (संघटित) किया गया
३. भिक्षुओंका और भिक्षुणियोंका जबतक कि मेरे पुत्र और प्र-
४. पौत्र राज्य करेंगे तथा चन्द्र और सूर्य (स्थिर) रहेंगे।[1] जो संघको
५. भंग करेगा, चाहे भिक्षु अथवा भिक्षुणी हो, श्वेत
६. वस्त्र[4] उसको अवश्य पहनाना चाहिये और अयोग्य आवास
७. में उसे बसाना चाहिये[5]। क्योंकि मेरी इच्छा है कि
८. संघ समग्र होकर चिरस्थायी होवे।[6]

भाषान्तर टिप्पणी

१. सारनाथ स्तम्भ अभिलेखका तीसरा वाक्य देखिये।
२. शरीर और मन दोनोंमें संयुक्त। समन्तपासादिकामें इसकी व्याख्या मिलती है: "समवगस्साति सहितस्स चित्तेन च शरीरेण च अवियुक्तस्साति अत्थो।" सुत्तविभंगमें "समग्गो नाम संघो समान संवासको समान सीमाथितो" अर्थात् समग्र संघसे तात्पर्य है 'एक आवासमें एक सीमाके भीतर रहनेवालोंका समूह।'

३. दीर्घकालके लिए 'चंदं-सुलियिके'का प्रयोग हुआ है। दे० दिल्ली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख (प्र०-३१)। परवर्ती अभिलेखोंमें 'आचन्द्रार्क'का प्रयोग पाया जाता है। दे० हर्षका बाँसखेरा ताम्रपट्ट अभिलेख।

४. भिक्षुके लिए विहित पीले चीवरको हटाकर सामान्य व्यक्तियोंके समान श्वेत वस्त्र। ऐसा करनेसे वह संघके सम्मान और पदसे च्युत हो जाता था।

५. इसका अर्थ है संघसे निष्कासन। यह विनयभंग करनेका दण्ड था।

६. संघके अनुशासन और सुरक्षाके लिए अशोकने महामात्रोंकी नियुक्ति की थी। इसीलिए यह अभिलेख उन्हीको सम्बोधित करके लिखाया गया था। यह कोई नई बात अथवा अशोककी निरंकुशता नहीं थी। स्मृतियोंके अनुसार कुल, जाति, जनपद अथवा संघके समय अथवा संवृत्की अवहेलना करनेवालोंको राज्यदण्ड मिलता था।

सारनाथ स्तम्भ अभिलेख

(संघभेदका दण्ड : अनुशासन)

१. देवा[1] [नंपिये पियदसि लाजा आनपयति]
२. ए ल[2]······
३. पाट······ये[3] केनपि संघे भेतवे [३] ए चुं खो
४. भिखू वा भिखुनि वा संघं भाखति[4] से ओदातानि दुसानि संनंधापयिया आनावाससि[5]
५. आवामयिये [४] हेवं इयं सासने भिखुसंघसि च भिखुनिसंघसि च विंनपयितविये [५]
६. हेवं देवानंपिये आहा [६] हेदिसा च इका लिपी तुफाकंतिकं हुवाति संसलनसि निखिता
७. इकं च लिपिं हेदिसमेव उपासकानंतिकं निखिपाथ [७] ते पि च उपासका अनुपोसथं यावु
८. एतमेव सासनं विस्वंसयितवे अनुपोसथं च धुवाये इकिके महामाते पोसथाये
९. याति एतमेव सासनं विस्वंसयितवे आजानितवे च [८] आवतके च तुफाकं आहाले
१०. सवत विवासयाथ तुफे एतेन वियंजनेन [९] हेमेव सवेसु कोटविषवेसु[6] एतेन
११. वियंजनेन विवासापयाथा [१०]

संस्कृतच्छाया

१. देवा[नांप्रियः प्रियदर्शी राजा आज्ञापयति ।]
२. [पाट]लपुत्रे महामात्राः [ते]—[मया] संघः समग्रः कृतः ।
३. पाट[लिपुत्रे तथा बाह्येषु नगरेषु तथा कर्तव्यं येन न श]क्यः केनापि सङ्घः भेत्तुम् । यः तु खलु
४. भिक्षुः वा भिक्षुणी वा सङ्घं भङ्क्ष्यति, सः अवदातानि दूष्याणि सन्निधाप्य अनावासे
५. आवास्यः । एवम् इदं शासनं भिक्षु-सङ्घे भिक्षुणी-सङ्घे च विज्ञपयितव्यम् ।
६. एवं देवानांप्रियः आह—ईदृशी च एका लिपिः युष्माकम् अन्तिके भूयात् इति संसरणे निक्षिप्ता
७. एकां च लिपिम् ईदृशीम् एव उपासकानाम् अन्तिके निक्षिपत । ते अपि उपासकाः अनूपवसथं यायुः
८. एतत् एव शासनं विश्वासयितुम् । अनूपवसथं च ध्रुवायाः एकैकः महामात्रः उपवसथाय
९. याति एतत् एव शासनं विश्वासयितुम् आज्ञातुं च । यावत्कं च युष्माकम् आहारः
१०. सर्वत्र विवासयत यूयं एतेन व्यञ्जनेन । एवम् एव सर्वेषु कोट्ट-विषयेषु एतेन व्यञ्जनेन विवासयत ।

पाठ टिप्पणी

१. पूर्ण पाठ 'देवानपिये पियदसि लाजा आनपयति' कौशाम्बी लघु स्तम्भ अभिलेखके आधारपर ।
२. पूर्ण पाठ 'ये पाटलपुते महामाता' ।
३. पूर्ण पाठ 'पाट[लपुते तथा बाहिरेसु नगलेसु तथा कतविये येन न सकि]ये' ।
४. फोगेल और सेनाके अनुसार 'भिखति' और ब्यूलरके अनुसार 'भीखति' ।
५. साची और कौशाम्बीमें पाठ है 'अनावससि' ।
६. किन्हीके अनुसार 'कोटविसवेसु' ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवा[नांप्रिय प्रियदर्शी राजा आज्ञा करते हैं--]
२. [जो पाटलिपुत्र[1]में महामात्र हैं उनके प्रति—मेरे द्वारा संघ समग्र (संघटित) किया गया ।]
३. पाट[लिपुत्र तथा अन्य नगरोंमें ऐसा करना चाहिये जिससे] किसीके द्वारा संघका भेदन[2] करना शक्य न हो । "जो भी कोई,
४. भिक्षु अथवा भिक्षुणी, संघका भंग करेगा, वह श्वेत वस्त्र पहनाकर[3] अयोग्य स्थानमें
५. रखा जायेगा ।[4] इस प्रकार यह शासन[5] (आज्ञा) भिक्षु-संघ और भिक्षुणी-संघमें विज्ञप्त होना चाहिये ।"
६. इस प्रकार देवानांप्रियने कहा, इसी प्रकारकी एक लिपि आप लोगोंके पास चौपाल (अथवा एकत्र होनेके स्थान[6])में निक्षिप्त (सुरक्षित) होनी चाहिये ।
७. और इसी प्रकारकी एक लिपि आप उपासकों (गृहस्थों)के पास रखें । ये उपासक प्रत्येक उपवास[7]के दिन आवें
८. इस शासनमें विश्वास उत्पन्न करनेके लिए । उपवासके दिन निश्चित रूपसे प्रत्येक महामात्र उपवास (व्रत)[8]
९. के लिए आयेगा इस शासनमें विश्वास प्राप्त करने और इसको अच्छी तरह समझनेके लिए । और जहाँतक आपका आहार[9] (कार्य-क्षेत्र) है
१०. सर्वत्र भेजिये आप (राजपुरुषोंको) इस (शासनका) अक्षरतः पालन करते हुए । इसी प्रकार सभी कोट और विषयों[10]में इस शासनके अक्षरशः अनुसार (अधिकारियोंको) भेजिये ।"

भाषान्तर टिप्पणी

१. पाटलिपुत्र = आधुनिक पटना । मगधकी राजधानी । जिस प्रकार कौशाम्बी स्तम्भलेखमें कौशाम्बीके महामात्रको सम्बोधन किया गया है उसी प्रकार इस अभिलेखमें पाटलिपुत्रके महामात्रको । ऐसा लगता है कि सारनाथका विहार मागध संघके ही अन्तर्गत था ।

२. संघके भिक्षुओंमें अनुशासन-सम्बन्धी अथवा साम्प्रदायिक फूट डालना। चाइल्डर्सकी पालि डिक्शनरीमें 'संघं भिन्दति' मिलता है। जातक (भाग ४ पृ० २००)में 'संघं भिन्दित्वा'; पातिमोक्खमे 'समग्गस्स संघस्स भेदाय' तथा दीपवंस (७.५४)मे 'बुद्धवचन भिन्दिसु' आदि उल्लेख पाये जाते हैं।

३. संनधापयिया = सं० संनाह्य = अच्छी तरह पहना कर। भिक्षुओंके लिए विहित पीले चीवरको हटाकर गृहस्थोंके लिए उपयुक्त श्वेत वस्त्र पहना कर। अर्थात् भिक्षुपदसे च्युत करके।

४. संघसे निष्कासित करके। यह एक प्रकारका दण्ड था। स्मृतियोंके अनुसार भी कुल, जाति, जनपद अथवा संघके समय अथवा संवृत्की अवहेलना करनेवालेको राज्यकी ओरसे दण्ड मिलता था।

अनावाससि = (भिक्षुओंके लिए) आवासके अयोग्य स्थानमें। समन्तपासादिकाकी भूमिकामें बुद्धघोषने ऐसे स्थानको 'अभिक्खुको आवासो' लिखा है। उन्होंने 'अनावास'में चेतियघर (समाधिस्थल), बोधिघर, समञ्जनीअट्टक (स्नान-स्थान), दारुअट्टक, पानीयमाल, वच्चकुटी (मलमूत्र त्याग करनेका स्थान) और द्वारकोट्ठक (मुख्य द्वारका कोठा)की गणना की है।

५. इका लिपी = शासन (धम्मलिपिसे भिन्न)।

६. संसलनसि = ससरण (आने जाने अथवा एकत्र होनेके स्थान)में विनय पिटक (पृ० १५२-५३; चुल्लवग्ग ६-३-४)में इसी अर्थमें इस शब्दका प्रयोग किया गया। दे० डॉ० टॉमस (ज० रा० ए० सो० १९१५ पृ० १०९-१२)। कुछ लोगोंने इसका अर्थ 'संस्मरण' (स्मृति) किया है जो ठीक नहीं।

७. अनुपोसथं = सं० उपवास(-व्रत)।

८. पोसथाये। उपोसथ = सं० उपवसथ (वैदिक यज्ञ दर्श और पूर्णमासके पूर्वका दिन जो उपवास और व्रतके लिए निश्चित था)। शतपथ ब्राह्मण (१.१.१.७)के अनुसार यजमान यह विश्वास करता था कि इस दिन देवता उसके पास बसते थे (उप + वस) अथवा वह अपनी पत्नीके साथ देवता (अग्नि)के पास रहता था। वैदिक परम्पराके अनुसार पक्षका आठवाँ दिन भी उपवासका था। ये दिन संयम, कथा-वार्ता आदिके होते थे।

९. आहाले = स० आहारे (कार्य-क्षेत्र अथवा अधिकार-क्षेत्र)। देखिये रूपनाथ प्रथम लघु शिला अभिलेख। यहाँ 'आहार'का अर्थ 'भोजन' नहीं है।

१०. नगरो और विषयो (जिलों)में।

११. विवासापयाथा (द्वित्व प्रेरणार्थक)।

कोशाम्बी स्तम्भ अभिलेख : प्रयाग-कोसम

१. देवानंपिये आनपयति [१] कोसंबियं महामात [२]
२. ······समगे कटे [३] संघसि नो[1] लहियेे[2]
३. ······संघं माखति[3] भिखु वा[4] भिखुनि वा[5] से पि चा
४. ओदातानि दुसानि सनंधापयितु अनावाससि आवासयिये [४]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियः आज्ञापयति । कौशाम्ब्यां महामात्रः (एवं वक्तव्यः) ।
२. [सङ्घः] समग्रः कृतः । सङ्घे नो लभ्यः ।
३. [यः] सङ्घं भङ्क्ष्यति भिक्षुः वा भिक्षुणी वा सः अपि च
४. अवदातानि दूष्याणि संनिधाप्य अनावासे आवास्यः ।

पाठ टिप्पणी

१. ब्यूलरके अनुसार 'न' ।
२. वही 'चिये' ।
३. वही 'भखति' ।
४. वही 'व' ।
५. हुल्त्श 'भिखुनी' ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानांप्रिय आज्ञा करते हैं—कौशाम्बी[1]के महामात्रको (ऐसा कहना चाहिये) ।
२. (संघ) समग्र (संघटित) किया गया है । संघमें लिया नहीं जायेगा ।[2]
३. (जो) संघका भंग करेगा[3], भिक्षु हो अथवा भिक्षुणी । उसे निश्चय ही
४. श्वेत वस्त्र[4] पहनाकर भिक्षुओंके लिए अयोग्य आवासमें रख दिया जायेगा ।[5]

भाषान्तर टिप्पणी

१. प्राचीन वत्सराज्यकी राजधानी । वर्तमान इलाहाबाद जिलेमें कोसम । अशोकके समयमें भी एक प्रशासकीय इकाईकी राजधानी थी ।
२. संघमें प्रवेश नहीं पायेगा । सारनाथ और साचीके स्तम्भ अभिलेखोंमें भी इस दण्डका विधान है ।
३. संघ-भेद अपराध माना जाता था । स्मृतियोंके अनुसार कुल, जाति, जनपद और संघके समय अथवा संवृत्की अवहेलना करनेवालेको निष्कासनका दण्ड मिलता था ।
४. भिक्षुओंके चीवर पीले होते थे । श्वेत-वस्त्र पहनानेका अर्थ है भिक्षुत्वसे पदच्युति ।
५. गृहस्थोंके रहने योग्य स्थान ।

रानी स्तम्भ अभिलेख : प्रयाग कोसम स्तम्भ

१. देवानंपियषा वचनेना सवत महामता[1]
२. वतविया [१] ए हेता[2] दुतियाये देवीये दाने
३. अंबावडिका वा आलमे व दानगहे व[3] ए वा पि अंने
४. कीछि गनीयति ताये देवियेषे नानि [२] हेवं···न[4]···
५. दुतीयाये देविये ति तीवलमातु कालुवाकिये [३]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियस्य वचनेन सर्वत्र महामात्राः
२. वक्तव्याः–"यत् अत्र द्वितीयायाः देव्याः दानम्–
३. आम्रवाटिका वा आरामः वा दानगृहं वा यत् वा अपि अन्यत्
४. किञ्चित् गण्यते तस्याः देव्याः तत् । एतानि एवं [ग] ण [यितव्यानि]
५. द्वितीयायाः देव्याः इति तीवरमातुः कारुवाक्याः" ।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्जके अनुसार '**महमता**' पाठ होना चाहिये ।
२. सेना और ब्यूलरके अनुसार 'हेत' पाठ होना चाहिये ।
३. ब्यूलरके अनुसार 'वा' ।
४. पूर्ण शब्द विनति (= स० विज्ञप्ति) है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. देवानां प्रियकी आज्ञासे सर्वत्र महामात्योंको
२. कहना चाहिये, "ये जो द्वितीय देवी[1] के दान हैं, (यथा)
३. आम्रवाटिका, आराम (विश्राम-गृह), दानगृह[2] अथवा अन्य
४. कुछ ये[3] सब देवीके नाममें गिने (पंजीकृत) जाने चाहिये। ये अवश्य गिने जाने चाहिये,
५. द्वितीय देवी[4] तीवरकी माता कारुवाकी (चारुवाकी)[5] की (ऐसी इच्छा है।)

भाषान्तर टिप्पणी

१. सप्तम स्तम्भ-अभिलेखके अनुसार महामात्र तथा अन्य प्रधान अधिकारी रानियोंके दान-कार्यका निरीक्षण करनेके लिए नियुक्त थे।
२. दानगृह = दानशाला अथवा सदाव्रत जहाँ यात्रियोंको भोजन और विश्राम मिलता था। दे० सप्तम स्तम्भ अभिलेख ।
३. 'तानि' सर्वनामका प्रयोग अन्यत्र भी पाया जाता है ।
४. द्वितीय रानीका कई बार उल्लेख करनेसे जान पड़ता है कि वह अशोकको बहुत प्रिय थी ।
५. जनार्दन भट्टके अनुसार यह गोत्रनाम है। परन्तु इस गोत्रका कहीं अन्यत्र उल्लेख नहीं पाया जाता । यह व्यक्तिगत नाम ही अधिक सम्भव जान पड़ता है ।

रुम्मिनदेई स्तम्भ अभिलेख

(अशोककी लुम्बिनीवन-यात्रा)

१. देवानंपियेन पियदसिन लाजिन वीसतिवसाभिसितेन
२. अतन आगाच महीयते हिद बुधे जाते सक्यमुनी ति [१]
३. सिला विगडभीचा[१] कालापित सिलाथमे च उसपापिते
४. हिद भगवं जाते ति [२] लुंमिनिगामे उबलिके कटे
५. अठभागिये च [३]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा विंशति-वर्षाभिषिक्तेन
२. आत्मना आगत्य महीयितम् . इह बुद्धः जातः शाक्यमुनि इति ।
३. शिला-विकटभित्तिका च कारिता शिला-स्तम्भः च उत्थापितः ।
४. इह भगवान् जातः इति । लुम्बिनिग्रामः उद्बलिकः कृतः
५. अष्टभागी च ।

पाठ टिप्पणी

१. हुल्त्ज़के अनुसार 'विगडभी चा' । दूसरा पाठ 'सिला विगड भीचा' सुझाया गया है ।

हिन्दी भाषान्तर

१. बीस वर्षोंसे अभिषिक्त देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा
२. स्वयं आकर (स्थानका) गौरव किया गया, क्योंकि यहाँ शाक्यमुनि बुद्ध जन्म लिये थे ।[१]
३. पत्थरकी दृढ दीवार[२] यहाँ बनायी गयी और शिला-स्तम्भ खड़ा किया गया,
४. क्योंकि भगवान् यहाँ उत्पन्न हुए थे ।[४] लुम्बिनी[५] ग्राम (धर्म--) करसे मुक्त किया गया[६]
५. और अष्टभागी बना दिया गया ।[७]

भाषान्तर टिप्पणी

१. महापरिनिब्बानसुत्तमें भगवान् बुद्धने स्वयं कहा है : 'आगमिस्सन्ति खो आनन्द सद्धा भिक्खु-भिक्खुनियो उपासक-उपासिकायो इध तथागतो जातो ति ।' इसी वचनका रूपान्तर द्वितीय पंक्ति (प्रथम वाक्य)में पाया जाता है ।

२. हुल्त्ज़ ने कारपेण्टियरका अनुसरण करते हुए इसको **सिला + विगण भी** दो खण्डोंमें विभक्त करके अर्थ किया है 'विगड (अश्व) धारण करती हुई शिला' । किन्तु 'विगड'का 'अश्व' अर्थ करना अनुमित है, सिद्ध नहीं । विगड भीचाका सं० विकट भित्तिका रूप अधिक सम्भव है । शिला विकट भित्तिका = पत्थरकी दृढ दीवार । देखिये सर रामकृष्ण भाण्डारकर (ज. ब. ब. रा. ए. सो. २०, ३६६ टि० १४) और फ्लीट (ज. रा. ए. सो. १९०८, ४७७, ८२३) ।

३. वही शिला-स्तम्भ जिसपर यह अभिलेख उत्कीर्ण है ।

४. हिद भगवं जाते ति = अस्मिन् महाराज प्रदेशे भगवान् जातः (दिव्यावदान, पृ० ३८९) । स्तम्भसे थोडी दूरीपर एक मन्दिर है जिसमें एक प्राचीन मूर्ति स्थापित है । इस मूर्तिमें भगवान् बुद्धके जन्मका दृश्य अङ्कित है । भगवान् बुद्धकी माता महामाया प्रसवके बाद तीन अन्य व्यक्तियोंके साथ एक शालवृक्षकी शाखा पकड़कर खड़ी हैं । उनकी दाहिनी ओर उठायी हुई भुजाके नीचे उनकी बहन प्रजापति गौतमी, प्रजापतिकी दाहिनी ओर इन्द्र (नवजात बुद्धकी पूजा करनेके लिए आये हुए) और अन्तमें थोडा पीछेकी ओर सेविका खड़ी है । उनके सामने शिशु (नवजात) खड़ा है । महामायाकी विकृत मूर्तिकी पूजा गाँववाले 'रूपम्-देही' देवीके रूपमें करते हैं ।

५. आजकल यह गाँव 'रुम्मिनदेईके' नामसे बाहर प्रसिद्ध है, किन्तु स्थानीय लोग इसे उपर्युक्त मूर्तिके नामपर 'रूपम्देही' कहते हैं । यह नेपाल राज्यके [illegible] माल तहसीलके अन्तर्गत है ।

६. उबलिके = उद्बलिक (= बलिरहित = धर्म करसे मुक्त) । ब्यूलरके अनुसार अववलिक अथवा अयवलिकका यह रूपान्तर है, जिसका अर्थ है बलिरहित अथवा अल्पबलि सहित । अशोकने अपनी यात्राके उपलक्षमें बुद्धके आदरार्थ धर्मकर उठा दिया ।

७. इसका शाब्दिक अर्थ है आठवाँ भाग (कर देने) वाला । प्राचीन कालमें मुख्य राजकर भूमिकर उपजका छठवाँ भाग होता था । कौटिल्य अर्थशास्त्र (२. २४) के अनुसार भूमिकर चौथा अथवा पाँचवा भाग (चतुर्थ-पञ्च-भागिकः) था । मेगस्थनीजके अनुसार चन्द्रगुप्तके समयमें भूमिकर चौथा भाग था । अशोकने अपनी यात्राके उपलक्षमें इसको घटाकर आठवाँ भाग कर दिया । मनु (७. १३०) के अनुसार भूमिकर उपजका आठवाँ भाग ही होना चाहिये ।

ब्यूलरके अनुसार अठभागिये = अर्थभागी (= राजाके महान् दानका भागी) । यह अर्थ दिव्यावदान (पृ० ३९०) के आधारपर किया गया था, जिसके अनुसार अशोकने लुम्बिनी वनपर एक लाख स्वर्ण मुद्रायें व्यय की थी । पिशेलके अनुसार 'अष्टभाग' का अर्थ 'आठ क्षेत्रवाला' है अर्थात् इसके व्ययके लिए आठ क्षेत्रोंका आय लगा हुआ था । किन्तु ये अर्थ समीचीन नहीं जान पड़ते ।

निगली सागर स्तम्भ अभिलेख

(कनकमुनि स्तूपका जीर्णोद्धार)

१. देवानंपियेन पियदसिन लाजिन चोदसवसाभिसितेन
२. बुधस कोनाकमनस थुबे दुतियं वढिते [१]
३. ·········साभिसितेन[1] च अतन आगाच महीयिते
४. ·········पापिते[2] [२]

संस्कृतच्छाया

१. देवानांप्रियेण प्रियदर्शिना राज्ञा चतुर्दशवर्षाभिषिक्तेन
२. बुद्धस्य कनकमुनेः स्तूपः द्वितीयं वर्द्धितः ।
३. [विंशति व] र्षाभिषिक्तेन च आत्मना आगत्य महीयितम्
४. [शिला-स्तम्भः च उ] स्थापितः ।

पाठ टिप्पणी

१. पूर्णपाठ 'विसतिवसाभिसितेन' (रुम्मिनदेई स्तम्भ अभिलेखके आधारपर) ।
२. पूर्णपाठ 'सिलाथभे च उसपापिते' (वही) ।

हिन्दी भाषान्तर

१. चौदह वर्षोंसे अभिषिक्त देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा
२. कनकमुनि[1] बुद्धका स्तूप दुगुना[2] बढ़ाया गया ।
३. बीस वर्षोंसे अभिषिक्त (राजा)द्वारा स्वयं आकर (उसका) गौरव किया गया
४. [और शिला-स्तम्भ] खड़ा किया गया ।

भाषान्तर टिप्पणी

१. उत्तरी बौद्धोंके अनुसार **कनकमुनि** अथवा **कोनाकमुनि** (दे० कर्न : मैनुअल ऑफ् इण्डियन बुद्धिज्म, पृ० ६४)। दक्षिणी बौद्धोंके अनुसार **'कोणागमन'**। भर्हुतमें 'कोनागमेन' पाया जाता है [इण्डियन ऐण्टिक्वेरी, २१. २२९ सं० ३० । चौबीस बुद्धोंमेंसे एक । बुद्धसे पूर्व तीसरे ।
२. दुतियं वढिते (= दियढियं वढिसति, सहसराम लघुशिला अभिलेख) । इसका अर्थ 'दुगुना' और 'दुबारा' दोनों सम्भव है ।

परिशिष्ट—१

तक्षशिला भग्न अरेमाई अभिलेख[1]

(अरेमाईका लातिनी लिप्यन्तर)[2]

१. ... . UT ...

२. Id KMYRTY ʻI . .

३. KYNVTA ʻI. .

४. Ar Kn ZV ŠKYNVTA . .

५. V LABVHY HUḢ...

६. HVPTYXTY ZNH...

७. ZK BHVVd Nr RH .

८. HVBŠTVK RZY HUT . .

९. MRAN PRYDR . .

१०. H... İKVTḢ

११. VAP BNVHY

१२. IMRAN PRYDRŠ

---

१. कुछ विद्वान् पुरालिपि-शास्त्रके आधारपर इस अभिलेखको तृतीय शती ई० पू० के पूर्वार्द्धका और इसलिए चन्द्रगुप्त मौर्य अथवा बिन्दुसारके समयका मानते हैं। किन्तु इसका अन्तिम शब्द प्रियदर्शी इस बातका संकेत करता है कि यह अशोकका ही अभिलेख है। यदि ५ वीं पंक्तिमें 'हु....' शब्द नैतिक विचार-क्षेत्रका प्रतीक है, जिसको कुछ विद्वान् 'अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो' [आर्य आष्टाङ्गिक मार्ग] का समकक्ष मानते हैं, तो निश्चित रूपसे यह अशोकका अभिलेख माना जा सकता है।

२. एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द १९, पृ० २५१ पर हर्जफेल्ड द्वारा तैयार पाठके आधारपर। सभी पंक्तियोंका उत्तरार्द्ध प्रायः भग्न है। पश्चिमोत्तर भारतमें अरेमाई भाषाका प्रयोग ईरानी सम्पर्कका द्योतक है।

परिशिष्ट—२

कन्दहार द्विभाषीय लघु शिला अभिलेख[1]

हिन्दी भाषान्तर

(यूनानी संस्करण)[2]

दस वर्ष व्यतीत होने पर राजा प्रियदर्शीने लोगोंमें धर्मका प्रचार किया। और उस समयसे आगे उसने लोगोंको अधिक धर्मात्मा बनाया। और सम्पूर्ण संसारमें सभी वस्तुओंकी उन्नति हुई। और राजा जीवधारियोंको मारकर खानेसे परहेज करता है; और वास्तवमें दूसरे मनुष्य भी। और जो कोई राजाका शिकारी अथवा मछुवा था, उसने शिकार करना छोड़ दिया है; और जिनको अपने पर संयम नहीं था, उन्होंने अपना असंयम छोड़ दिया है; और ये अपने माता-पिता और गुरुजनोंके प्रति आज्ञाकारी हो गये हैं, जैसा कि पहले कभी नहीं हुआ था। और भविष्यमें, ऐसा करते हुए, अधिक अनुकूल और पहलेसे अच्छा जीवन व्यतीत करेंगे।

(अरेमाई संस्करण)[3]

दस वर्ष व्यतीत होने पर हमारे राजा प्रियदर्शीने लोगोंको धर्मोपदेश देनेका निश्चय किया। तबसे संसारके मनुष्योंमें पाप कम हो गया है। जिन लोगोंने दुःख उठाया है उनमें यह समाप्त हो गया है और सारे संसारमें शान्ति और आनन्द व्याप्त है। और दूसरी बातोंमें भी, जिनका सम्बन्ध भोजनसे है, हमारा स्वामी बहुत कम जीवोंका वध करता है। इसको देखकर और लोगोंने भी जीव-हत्या बन्द कर दी है। मछली पकड़नेवालोंका काम भी निषिद्ध कर दिया गया है। इसी प्रकार जिनमें संयम नहीं था, उन्होंने संयम सीख लिया है। माता, पिता और गुरुजनों-की आज्ञाकारिता और उनके प्रति कर्तव्योंके पालनका व्यवहार अब होने लगा है। धार्मिक लोगोंपर अब अभियोग नहीं लगाया जाता। इस प्रकार धर्मका पालन सभी मनुष्योंके लिए महत्त्वका है और यह भविष्यमें भी जारी रहेगा।

---

१. इस अभिलेखकी तुलनासे जान पड़ता है कि लघु-शिला अभिलेखों तथा शिला-अभिलेखोंके आधारपर यह प्रस्तुत किया गया था। परन्तु यह किसी दूसरे मूल पालि-प्राकृत अभिलेखका भाषान्तर नहीं जान पड़ता है।

२. जर्नल एशियाटिक, जिल्द २४६ पृ० २-३, १९५८ में दिये हुए पाठपर यह भाषान्तर आधारित है।

३. वही, पृ० २२ पर आधारित।

षष्ठ खण्ड : तुलनात्मक पाठ

शिला अभिलेख

संकेत सारिणी

गि० = गिरनार का० = कालसी शा० = शाहबाज़गढ़ी
मा० = मानसेहरा धौ० = धौली जौ० = जौगड

प्रथम अभिलेख

गि०	इयं धंमलिपी देवानंप्रियेन प्रियदसिना राञा लेखापिता [१]	इध न किंचि जीवं आरभित्पा प्रजूहितव्यं [२]
का०	इयं धंमलिपि देवानंपियेन पियदसिना लेखिता [१]	हिदा नो किछि जिवे आलभितु पजोहितविये [२]
शा०	अय ध्रंमदिपि देवनप्रिअस रञो लिखपितु [१]	हिद नो किचि जिवे अरभितु प्रयुहोतवे [२]
मा०	अयि ध्रमदिपि देवनंप्रियेन प्रियद्रशिन रजिन लिखपित [१]	हिद नो किछि जिवे अरभितु प्रजोहितविये [२]
धौ०	··· सि पवतसि देवनंपिये ··· ··· ··· लाजिना लिखा ··· [१]	इ ··· जीवं आलभितु पजोह ··· [२]
जौ०	इयं धंमलिपी खेपिंगलसि पवतसि देवानंपियेन पियदसिना लाजिना लिखापिता [१]	हिद नो किछि जीवं आलभितु पजोहितविये [२]

गि०	न च समाजो कतव्यो [३]	बहुकं हि दोसं समाजम्हि पसति देवानंप्रियो प्रियद्रसि राजा [४]	अस्ति पि तु
का०	नो पि चा समाजे कटविये [३]	बहुका हि दोसा समाजसा ··· देवानंपिये पियदसी लाजा देखति [४]	अथि पि चा
शा०	नो पि च समज कटव [३]	बहुक हि दोष समयस्पि देवणप्रिये प्रियद्रशि रय दखति [४]	अस्ति पि चु
मा०	नो पि च समजे कटविये [३]	बहुक हि दोष समजस देवनंप्रिये प्रियद्रशि रज दखति [४]	अस्ति पि चु
धौ०	नो पि च समाजे ······ [३]	················ दोसं ·· [४]	········ पि चु
जौ०	नो पि च समाजे कटविये [३]	बहुकं हि दोसं समाजस द्रखति देवानपिये पियदसी लाजा [४]	अथि पि चु

गि०	एकचा समाजा साधुमता देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो [५]	पुरा महानसम्हि देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो
का०	एकातिया समाजा साधुमता देवानंपियसा पियदसिसा लाजिने [५]	पुले महानससि देवानंपियसा पियदसिसा लाजिने
शा०	एकतिअ समये ससुमते देवनपिअस प्रियद्रशिस रञो [५]	पुर महनससि देवनप्रियस प्रियद्रशिस रञो
मा०	एकतिय समज सधुमत देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने [५]	पुर महनससि देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने
धौ०	तिया समाजा साधुमता देव····· पियदसिने लाजिने [५]	······ मह ························ पिय ························
जौ०	एकतिया समाजा साधुमता देवानंपियस पियदसिने लाजिने [५]	पुलुवं महानससि देवानंपियस पियदसिने लाजिने

गि०	अनुदिवसं बहूनि प्राणसतसहस्रानि आरभिसु सूपाथाय [६]
का०	अनुदिवसं बहुनि पानसहसाणि अलंभियिसु सुपठाये [६]
शा०	अनुदिवसो बहुनि प्रणशतसहसनि अरभियिसु सुपठये [६]
मा०	अनुदिवस बहुनि प्रणशतसहस्रनि अरभिसु सुपथये [६]
धौ०	········· ···नि पानसत··· आलभियिसु सूपठाये [६]
जौ०	अनुदिवसं बहूनि पानसतसहसानि आलभियिसु सूपठाये [६]

गि०	से अज यदा अयं धंमलिपी लिखिता ती एव प्राणा आरभरे सूपाथाय
का०	से इदानि यदा इयं धंमलिपि लेखिता तदा तिंनि येवा पानानि अलंभियंति
शा०	सो इदनि यद अय ध्रमदिपि लिखित तद त्रयो वो प्रण हंञंति
मा०	से ··· द अयि ध्रमदिपि लिखित तद तिनि येव प्रणनि अरभियंति
धौ०	से अज अदा इयं धंमलिपि लिखिता ति··· ··· आलभिय
जौ०	से अज अदा इयं धंमलिपी लिखिता तिंनि येव पानानि आलभियंति

गि०	द्वो मोरा एको मगो सो पि मगो न ध्रुवो [७]	एते पि त्री प्राणा पछा न आरभिसरे [८]
का०	दुवे मजूला एके मिगे से पि चु मिगे नो धुवे [७]	एतानि पि चु तीनि पानानि नो आलभियिसंति [८]
शा०	मजुर दुवि २ म्रुगो १ सो पि म्रगो नो ध्रुवं [७]	एत पि प्रण त्रयो पच न अरभिशंति [८]
मा०	दुवे २ मजुर एके मिगे से पि चु म्रिगे नो ध्रुवं [७]	एतनि पि चु तिनि प्रणनि पच नो अरभि··· [८]
धौ०	··· ··· ··· ···	··· तिंनि पानानि पछा नो आलंभियिसंति [८]
जौ०	दुवे मजूला एके मिगे से पि चु मिगे नो धुवं [७]	एतानि पि चु तिंनि पानानि पछा नो आलभियिसंति [८]

द्वितीय अभिलेख

गि० सर्वत विजितम्हि देवानांप्रियस प्रियदसिनो राञो एवमपि प्रचंतेसु यथा चोडा पाडा सतियपुत
का० सवता विजितसि देवानंपियस पियदसिस लाजिने ये च अंता अथा चोडा पंडिया सातियपुतो
शा० सव्रत्र विजिते देवनंप्रियस प्रियद्रशिस ये च अंत यथ चोड पंडिय सतियपुत्रो
मा० सवत्र विजितसि देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने ये च अन अथ चाड पंडिय सतियपुत्र
धौ० सवत विजितसि देवानंपियस पियदसिने ल·····················अथा·······························
जौ० सवत विजितसि देवानंपियस पियदसिने लाजिने ए वा पि अंता अथा चोडा पंडिया सतियपुते

गि० केतलपुतो आ तंबपंणी अंतियोको योनराजा ये वा पि तस अंतियकस सामीपं राजानो सर्वत्र देवानंप्रियस
का० केतलपुतो तंबपंनि अंतियोग नाम योनलाजा ये चा अंने तसा अंतियोगसा सामंता लाजानो सवता देवानंपियसा
शा० केरडपुत्रो तंबपंणि अंतियोको नम योनरज ये च अंञे तस अंतियोकस समंत रजनो सव्रत्र देवनंप्रियस
मा० केरलपुत्र तंबपणि अतियोगे नम योनरज ये च अ······स······गस समत रजने सव्रत्र···प्रियस
धौ० ·········तियोके नाम योनलाजा ए वा पि तस अंतियोकस सामंता लाजाने सवत देवानंपियेन
जौ० ·········ा अंतियोके नाम योनलाजा ए वा पि तस अंतियाकस सामंता लाजाने सवत देवानंपियेन

गि० प्रियदसिनो राञो द्वे चिकीछ कता मनुसचिकीछा च पसुचिकीछा च [१] ओसुढानि च यानि मनुसोपगानि च
का० पियदसिसा लाजिने दुवे चिकिसका कटा मनुसचिकिसा पसुचिकिसा च [१] ओसधीनि···मनुसोपगानि चा
शा० प्रियद्रशिस रञो दुवि २ चिकिस क्रिट मनुशचिकिस ··पशुचिकिस च [१] ओषढनि मनुशोपकनि च
मा० प्रियद्रशिस रजिने दुवे २ चिकिस कट मनुशचिकिस च पशुचिकिस च [१] ओषढनि मनु···कनि···च
धौ० पियदसिना······················ ··················सा च पसुचिकिसा च [१] ···धानि आनि मुनिसोपगानि
जौ० पियदसिना लाजि····················· ·······चिकिसा च पसुचिकिसा च [१] ओसधानि आनि मुनिसोपगानि

गि० पसोपगानि च यत यत नास्ति सर्वत हारापितानि च रोपापितानि च [२] मूलानि च फलानि च यत यत्र
का० पसोपगानि चा अतता नथि सवता हालापिता चा लोपापिता चा [२] एवमेवा मूलानि चा फलानि चा अतता
शा० पशोपकनि च यत्र यत्र नस्ति सव्रत्र हरपित च वुत च [२]
मा० प···कनि च अत्र अत्र नस्ति सव्रत्र हरपित च रोपपित च [२] एवमेव मुलनि च फलनि च अत्र अत्र
धौ० पसुओपगानि च अतत नथि सवत हालापिता च लोपापिता च [२]······मूल·············
जौ० पसुओपगानि च अतत नथि सवत···च अतत

गि० नास्ति सर्वत हारापितानि च रोपापितानि च [३] पंथेसू कूपा
का० नथि सवता हालापिता चा लोपापिता चा [३] मगेसु लुखानि
शा० ··
मा० नस्ति सव्रत्र हरपित च रोपपित च [३] मगेषु रुछनि
धौ० ·········यत हालापिता च लोपापिता च [३] मगेसु उदुपानानि
जौ० नथि सवत्र हालापिता च लोपापिता च [३] मगेसु उदुपानानि

गि० च खानापिता व्रछा च रोपापिता परिभोगाय पसुमनुसानं [४]
का० लोपितानि उदुपानानि च खानापितानि पटिभोगाये पसुमुनिसानं [४]
शा० ············कुप च खनपित प्रतिभोगये पशमनुशनं [४]
मा० रोपपितनि·······················पितनि पटिभोगये पशुमुनिशनं [४]
धौ० खानापितानि लुखानि च लोपापितानि पटिभोगाये ··· ···नं [४]
जौ० खानापितानि लुखानि च·························· [४]

तृतीय अभिलेख

गि०	देवानंप्रियो पियदसि राजा एवं आह [१]	द्वादसवासाभिसितेन मया इदं आञपितं [२]	सर्वत विजिते मम
का०	देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [१]	दुवाडसवसाभिसितेन मे इयं आनपयितये [२]	सवता विजितसि मम
शा०	देवनंप्रियो प्रियद्रशि रज अहति [१]	बदयवषभिसितेन··················अणपितं [२]	सवत्र मअ विजिते
मा०	देवनप्रिये प्रियद्रशि रज··एव अह [१]	दुवडशवषभिषितेन मे इयं अणपयिते [२]	सवत्र विजितसि
धौ०	देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१]	दुवादसवसाभिसितेन मे इयं आनापयि····[२]	··त विजितसि मे
जौ०	देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१]	दुवादसवसाभिसितेन मे इयं आ············ ······	

गि०	युता च राजूके च प्रादेसिके च पंचसु पंचसु वासेसु	अनुसंयानं नियातु एतायेव अथाय इमाय धंमानुसस्टिय
का०	युता लजूके पादेसिके पंचसु पंचसु वसेसु	अनुसयानं निखमंतु एतायेवा अठाये इमाय धंमनुसथिया
शा०	युत रजुक प्रदेशिक पंचषु पंचषु ५ वषेषु	अनुसंयनं निक्रमतु एतसि वो कग्ण इमिस ध्रमनुशस्तिये
मा०	··त रजु··प्रदेशिके पंचषु पंचषु ५ वषेषु	अनुसंयनं निक्रमतु एतये व अथ्रए इमये ध्रमनुशस्तिये
धौ०	युता लजुके········ ·····पंचसु पंचसु वसेसु	अनुसयानं निखमावू······
जौ०	·······च पादेसिके च पंचसु पंचसु वसेसु	अनुसयानं निखमावू······

गि०	यथा अञाय कमाय [३]	साधु मातरि च पितरि च सुस्रुसा मित्र-संस्तुत-ञातीनं
का०	यथा अंनाये पि कंमाये [३]	साधु मातपितिसु सुसुसा मित-संथुत-नातिक्यानं चा
शा०	··थ अञये पि क्रमये [३]	सधु मतपितुषु सुश्रुष मित्र-संस्तुत-ञतिकनं··
मा०	यथ अञये पि क्रमणे [३]	सधु मतपितुषु सुश्रुष मित्र-संस्तुत-ञतिकनं च
धौ०	अथा अंनाये पि कंमने हेवं इमाये धंमानुसथियं [३]	साधु मातापितिसु सुसूसा म··· ··नातिसु च
जौ०	अथा अंनाये पि कंमने········ [३]	··· ···· ········ ·सा मितसंथुतेस····नातिसु च

गि०	बाम्हणसमणानं साधु दानं प्राणानं साधु अनारंभो अपव्ययता अपभाडता साधु [४]	परिसा पि युते
का०	बंभनसमनानं चा साधु दाने पानानं अनालंभे साधु अपवियाता अपभंडता साधु [४]	पलिसा पि च युतानि
शा०	ब्रमणश्रमणनं···प्रणनं अनरंभो सधु अपवयत अपभंडत सधु [४]	परि पि युतनि
मा०	ब्रमणश्रमणनं सधु दने प्रणन अनरभे सधु अपवियत अपभडत सधु [४]	परिष पि च युतनि
धौ०	बंभनसमनेहि साधु दाने जीवेसु अनालंभे साधु अपवियता अपभंडता साधु [४]	पलिसा पि च····नसि
जौ०	बंभनसमनेहि साधु दाने जीवेसु अनालंभे साधु········· ·········· ···· ·········· ········	

गि०	आञपयिसति गणनायं हेतुतो च व्यंजनतो च [५]
का०	गननसि अनपयिसंति हेतुवता चा वियंजनते चा [५]
शा०	गणनसि अणपेशंति हेतुतो च वंजनतो च [५]
मा०	गणनसि अणपयिशति हेतुते च वियंज···नते च [५]
धौ०	युतानि आनपयिसति हेतुते च वियंज···· ··· [५]
जौ०	··········यि······· ···हेतुते च वियंजनते च [५]

चतुर्थ अभिलेख

गि० अतिकातं अंतरं बहूनि वाससतानि वढितो एव प्राणारंभो विहिंसा च भूतानं आतीसु असंप्रतिपती
का० अतिकंतं अतलं बहुनि वससतानि वढिते वा पानालंभे विहिसा चा भुतानं नातिना असंपटिपति
शा० अतिक्रनं अंतरं बहुनि वषशतनि वढिता वो प्रणरंभो विहिस च भुतनं ञतिनं असंपटिपति
मा० अतिक्रतं अतरं बहुनि वषशतनि वधिते वो प्रणरंभे विहिस च भुतनं ञतिन असपटिपति
धौ० अतिकंतं अंतलं बहूनि वससतानि वढिते व पानालंभे विहिसा च भूतानं नातिसु असंपटिपति
जौ० अतिकंतं अंतलं बहूनि वससतानि वढिते व पानालंभे.................................

गि० ब्राम्हणस्रमणानं असंप्रतीपती [१] त अज देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो धंम-चरणेन भेरीघोसो अहो
का० समनबंभनानं असंपटिपति [१] से अजा देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमचलनेना भेलिघोसे अहो
शा० श्रमणब्रमणनं असंपटिपति [१] सो अज देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो ध्रमचरणेन भेरिघोष अहो
मा० श्रमणब्रमणन असंपटिपति [१] से अज देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने ध्रमचरणेन भेरिघोषे अहो
धौ० समनबाभनेसु असंपटिपति [१] से अज देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमचलनेन भेलिघोसं अहो
जौ० .... [१] से अज देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमचलनेन भेल......

गि० धंमघोसो विमानदर्सणा च हस्तिदर्सणा च अगिखंधानि च अञानि च दिव्यानि रूपानि दसयित्पा जनं [२] यारिसे
का० धंमघोसे विमनदसना हथिनि अगकंधानि अंनानि चा दिव्यानि लुपानि दसयितु जनस [२] आदिसा
शा० ध्रमघोष विमननं द्रशनं अस्तिन जोतिकंधनि अञनि च दिवनि रुपनि द्रशयितु जनस [२] यदिशं
मा० धमघोषे विमनद्रशन अस्तिने अगिकंधनि अञनि च दिवनि रुपनि द्रशेति जनस [२] अदिशे
धौ० धंमघोसं विमानदसनं हथीनि अगिकंधानि अंनानि च दिवियानि लूपानि दसयितु मुनिसानं [२] आदिसे
जौ० ....दिवियानि लूपानि दसयितु मुनिसानं [२] आदिसे

गि० बहूहि वाससतेहि न भूतपुवे तारिसे अज वढिते देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो धंमानुसस्टिया अनारंभो
का० बहुहि वससतेहि ना हुतपुलुवे तादिसे अजा वढिते देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमनुसथिये अनालंभे
शा० बहुहि वषशतेहि न भुतप्रवे तदिशो अज वढिते देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो ध्रमनुशस्तिय अनरंभो
मा० बहुहि वषशतेहि न हुतप्रवे तदिशो अज वढिते देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने ध्रमनुशस्तिय अनरभे
धौ० बहूहि वससतेहि नो हुतपुलुवे तादिसे अज वढिते देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमानुसथिया अनालंभे
जौ० बहूहि वससते..धंमानुसथिया अनालंभे

गि० प्राणानं अविहीसा भूतानं आतीनं संपटिपती ब्रम्हणसमणानं संपटिपती मातरि पितरि सुस्रुसा थैर-सुस्रुसा [३] एस अञे
का० पानानं अविहिसा भुतानं नातिनं संपटिपति बंभनसमनानं संपटिपति मातापितिसु सुसुसा.........[३] एसे चा अने
शा० प्रणनं अविहिस भुतनं ञतिनं संपटिपति ब्रमणश्रमणन संपटिपति मतपितुषु वुढनं सुश्रुष [३] एत अञं
मा० प्रणन अविहिस भुतन ञतिन संपटिपति ब्रमणश्रमणन संपटिपति मतपितुषु सुश्रुष वुध्रन सुश्रुष [३] एषे अञे
धौ० पानानं अविहिसा भूतानं नातिसु संपटिपति समनबाभनेसु संपटिपति मातिपितुसुसूसा वुढ-सुसुसा [३] एस अंने
जौ० पानानं अविहिसा भूतानं नातिसु संप...[३] एस अंने

गि० च बहुविधे धंमचरणे वढिते [४] वढयिसति चेव देवानंप्रियो प्रियद्रसि राजा धंमचरणं इदं [५]
का० चा बहुविधे धंमचलने वधिते [४] वधियिसति चेवा देवानंपिये पियदसि लाजा इमं धंमचलनं [५]
शा० च बहुविधं ध्रमचरणं वढितं [४] वढिसति च यो देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो ध्रमचरणो इम [५]
मा० च बहुविधे ध्रमचरणे वध्रिते [४] वध्रयिशति येव देवनंप्रिये प्रियद्रशि रज धमचरण इमं [५]
धौ० च बहुविधे धंमचलने वढिते [४] वढयिसति चेव देवानंपिये पियदसी लाजा धंमचलनं इमं [५]
जौ० च बहुविधे धंमचलने वढिते [४] वढयि.. [५]

गि० पुत्रा च पोत्रा च प्रपोत्रा च देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो प्रवधयिसंति इदं धंमचरण
का० पुता च कं नताले चा पनातिक्या च देवानंपियसा पियदसिने लाजिने पवढयिसंति चेव धंमचलनं
शा० पुत्र पि च कं नतरो च प्रनतिक च देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो प्रवढेशंति यो ध्रमचरणं
मा० पुत्र पि च क नतरे च पनतिक देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने पवढयिशंति यो ध्रमचरण
धौ० पुता पि चु नति पनति ''च देवानंपियस पियदसिने लाजिने पवढयिसंति येव धंमचलनं
जौ० .... पियदसिने लाजिने पवढयिसंति येव धंमचल..

गि० आव सवटकपा धंममिह् सीलम्हि तिस्टंतो धंमं अनुसासिसंति [६] एस हि सेस्टे कंमे य धंमानुसासनं [७]
का० इमं आवकपं धंमसि सीलसि चा चिठितु धंमं अनुसासिसंति [६] एसे हि सेठे कंमं अं धंमानुसासनं [७]
शा० इमं अवकप ध्रमे शिले च तिस्टिति ध्रमं अनुशशिशंति [६] एत हि स्रेठं क्रमं यं ध्रमनुशशनं [७]
मा० इमं अवकपं ध्रमे शिले च चिठितु ध्रमं अनुशशिशंति [६] एषे हि स्रेठे अं ध्रमनुशशन [७]
धौ० इमं आकपं धंमसि सीलसि च चिठितु धमं अनुसासिसंति [६] एस हि सेठे कंमे या धंमानुसासना [७]
जौ० ....[६] ....[७]

गि० धंमचरणे पि न भवति असीलस [८] त इमम्हि अथम्हि वधी च अहीनी च साधु [९] एताय अथाय इदं
का० धंमचलने पि चा नो होति असिलसा [८] से इमसा अथसा वधि अहिनि चा साधु [९] एताये अथाये इयं
शा० ध्रमचरणं पि च न भोति अशिलस [८] सो इमिस अथ्रस वढि अहिनि च सधु [९] एतए अठये इमं
मा० ध्रमचरणे पि च न होति अशिलस [८] से इमस अथ्रस वध्रि अहिनि च सधु [९] एतये अथ्रए इयं
धौ० धंमचलने पि चु नो होति असीलस [८] से इमस अठस वढी अहानि च साधू [९] एताए अठाये इयं
जौ० धंमचलने पि चु नो हाति ...... [८] ....

गि० लेखापितं इमस अथस वधि युजंतु हीनि च नो लोचेतव्या [१०] द्वादसवासाभिसितेन देवानंप्रियेन प्रियदसिना राञा
का० लिखिते इमसा अथसा वधि युजंतु हिनि च मा आलोचयिसु [१०] दुवाडसवशाभिसितेना देवानंपियेना पियदशिना लजिना
शा० निपिस्तं इमिस अठस वढि युजंतु हिनि च म लोचेषु [१०] बदयवपभिसितेन देवनंप्रियेन प्रियद्रशिन रञ
मा० लिखिते एतस अथ्रस वध्र युजंतु हिनि च म अलोचयिसु [१०] दुवदशवषभिसितेन देवनप्रियेन प्रियद्रशिन रजिन
धौ० लिखिते इमस अठस वढी युजंतू हीनि च मा अलोचयिसू [१०] दुवादस वसानि अभिसितस देवानंपियस पियदसिने लाजिने
जौ० .... हीनि च मा अलोचयि [१०] ....

गि० इदं लेखापितं [११]
का० लेखिता [११]
शा० अनं हिद निपेसितं [११]
मा० इयं लिखपिते [११]
धौ० यं इध लिखिते [११]
जौ० .... [११]

पंचम अभिलेख

गि० देवानंप्रियो पियदसि राजा एवं आह [१] कलाणं दुकरं [२] यो आदिकरो कल्याणस सो दुकरं करोति [३] त
का० देवानंपिये पियदसि लाजा अहा [१] कयाने दुकले [२] ए आदिकले कयानसा से दुकलं कलेति [३] से
शा० देवनप्रियो प्रियद्रशि रय एवं अहति [१] कलणं दुकरं [२] यो अदिकरो कलणस सो दुकरं करोति [३] सो
मा० देवनंप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह [१] कलणं दुकरं [२] ये अदिकरे कयणस से दुकरं करोत [३] तं
धौ० देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] कयाने दुकले [२] ····· कयानस से दुकलं कलेति [३] से
जौ० देवानंपिये पियद ·························· [१] ··

गि० मया बहुकलाणं कतं [४] त मम पुता च पोता च परं च तेन य मे अपचं आव संवटकपा
का० ममया बहु कयाने कटे [४] ता ममा पुता चा नताले चा पल चा तेहि ये अपतिये मे आवकपं
शा० मय बहु कलं किटं [४] तं मअ पुत्र च नतरो च परं च तेन ये मे अपच प्रक्षंति अवकपं
मा० मय बहु कयणे कटे [४] तं मअ पुत्र च नतरे च पर च तेन ये अपतिये मे अवकपं
धौ० मे बहुके कयाने कटे [४] तं ये मे पुता व नती व ···च तेन ये अपतिये मे आवकपं
जौ० ································ ············ ····नती·· व पलं च ते······························

गि० अनुवतिसरे तथा सो सुकतं कासति [५] यो तु एत देसं पि हापेसति सो दुकतं कासति [६] सुकरं हि पापं [७]
का० तथा अनुवटिसंति से सुकटं कछंति [५] ए चु हेता देसं पि हापयिसंति से दुकटं कछति [६] पापे हि नामा सुपदालये [७]
शा० तथ ये अनुवटिशंति से सुकटं कषंति [५] यो चु अतो···कं पि हपेशति सो दुकटं कषति [६] पपं हि सुकरं [७]
मा० तथ अनुवटिशति से सुकट कषति [५] ये चु अत्र देश पि हपेशति से दुकट कषति [६] पापे हि नम सुपदरवे [७]
धौ० तथा अनुवतिसंति से सुकटं कछंति [५] ए हेत देसं पि हापयिसति से दुकटं कछति [६] पापे हि नाम सुपदालये [७]
जौ० ···[५] ···································· [६] ············सुपदालये [७]

गि० अतिकातं अंतरं न भूतप्रुवं धंममहामाता नाम [८] त मया त्रैदसवासाभिसितेन धंममहामाता कता [९]
का० से अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलव धंममहामता नामा [८] तेदसवसाभिसितेना ममया धंममहामाता कटा [९]
शा० स अतिकतं अतर नो भुतप्रुव ध्रममहमत्र नम [८] सो तोदशवषभिसितेन मय ध्रममहमत्र किट [९]
मा० से अतिकतं अंतरं न भुतप्रुव ध्रममहमत्र नम [८] से त्रेडशवषभिसितेन मय ध्रममहमत्र कट [९]
धौ० से अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुवा धंममहामाता नाम [८] से तेदसवसाभिसितेन मे धंममहामाता नाम कटा [९]
जौ० से अ ·· [८] ·· [९]

गि० ते सवपासंडेसु व्यापता धामधिस्टानाय··········धंमयुतस च योण-कम्बोज-
का० ते सव पासंडेसु वियापटा धंमाधिथानाये च धंमवढिया हिदसुखाये वा धंमयुतसा योन-कंबोज-
शा० ते सव्रप्रषंडेषु वपट ध्रमधिथनये च ध्रमवढिय हिदसुखये च ध्रमयुतस योन-कंबोय-
मा० ते सव्रपषडेषु वपुट ध्रमधिथनये ध्रमवध्रिय हिदसुखये च ध्रमयुतस योन-कंबोज-
धौ० ते सवपासंडेसु वियापटा धंमाधिथानाये धंमवढिये हितसुखाये च धंमयुतस योन-कंबोच-
जौ० ································ धंमाधिथाना ································

गि० गंधारानं रिस्टिक-पेतेणिकानं ये वा पि अंञे आपराता [१०] भतमयेसु व····························
का० गंधालानं··········ए वा पि अंने अपलंता [१०] भटमयेसु बंभनिभेसु अनथेसु वुधेसु हिद
शा० गंधरनं रठिकनं पितिनिकनं ये व पि अपरंत [१०] भटमयेषु ब्रमणिभेषु अनथेषु वुढेषु हित-
मा० गधरन रठिक-पितिनिकन ये व पि अञे अपरत [१०] भटमयेसु ब्रमणिभ्येषु अनथेषु वुध्रेषु हिद-
धौ० गंधालेसु लठिक-पितेनिकेसु ए वा पि अंने आपलंता [१०] भटिमयेसु बाभनिभयेसु अनाथेसु महालकेसु च हिद-
जौ० ···[१०] ········ भनिभि ························

गि० सुखाय धंमयुतानं अपरिगोधाय व्यापता ते [११] बंधनबधस पटिविधानाय··················
का० सुखाये धंमयुताये अपलिबोधाये वियपटा ते [११] बंधनबधसा पटिविधानाये अपलिबोधयि मोखाये चा एयं अनुबधा
शा० सुखये ध्रमयुतस अपलिगोध वपट ते [११] बधनबधस पटिविधनये अपलिबोधये मोक्षये अपि अनुब···
मा० सुखये ध्रमयुत- अपलिबोधये वियपुट ते [११] बधनबधस पटिविधनये अपलिबोधये मोक्षये च इयं अनुबध
धौ० सुखाये धंमयुताये अपलिबोधाये वियापटे से [११] बंधनबधस पटिविधानाये अपलिबोधाये मोखाये च इयं अनुबंध
जौ० ·· [११] ······································मोखाये························

गि० प्रजा कताभीकारेसु वा थैरेसु वा व्यापता ते [१२]　　पाटलिपुते च बाहिरसु च………… …………
का० पजाव ति वा कटाभिकाले ति वा महालके ति वा वियापटा ते [१२]　　हिदा बाहिलेसु वा नगलेसु सवेसु ओलोधनेसु
शा० प्रजय किटभिकरो व महलके व वियपट ते [१२]　　इअ बहिरषु च नगरेषु सव्रेषु ओरोधनेषु
मा० प्रज ति व कटूभिकर ति व महलके ति व वियप्रट ते [१२]　　हिद बहिरेषु च नगेरेषु सव्रेषु ओरोधनेषु
धौ० पजा ति व कटाभीकाले ति व महालके ति व वियापटे से [१२]　　हिद् च बाहिलेसु च नगलेसु सवेसु सवेसु ओलोधनेसु
जौ० ……………… ……………………………………　　…… .. ……………………………………

गि० ……………………ये वा पि मे अञे ञातिका सर्वत व्यपता ते [१३]　　यां अयं धंमनिस्रितो ति व
का० भातिनं च ने भगिनिना ए वा पि अंने नातिक्ये सवता वियापट [१३]　　ए इयं ध्रमनिसिते ति वा
शा० भ्रतुन च मे स्पसन च ये व पि अंञे ञतिक सवत्र वियपुट [१३]　　ये अयं ध्रमनिशिते ति व
मा० ……भ्रतन च स्पसुन च ये व पि अञे अतिके सव्रत्र वियपट [१३]　　ए इयं ध्रमनिशितो तो व
धौ० मे ए वा पि भातीनं मे भगिनीनं व अंनेसु वा नातिसु सवत वियापटा [१३]　　ए इयं धंमनिसिते ति व
जौ० …ए वा… … ………………………………… .. …… …… ………　　……… ……………… …

गि० ………………… … ……… .. ……… ……… …… … . …ते धंममहामाता [१४]　　एताय अथाय अयं धंम-
का० …… …दाने-सुयुते ति वा सवता विजितसि ममाधंमयुतसि वियापटा ते ध्रंममहामाता [१४]　　एताये अठाये इयं धंम-
शा० ध्रमधिथने ति व दनसयुते ति व सवत विजिते मअ ध्रमयुतसि वियपट ते ध्रममहमत्र [१४]　　एतये अठये अयि ध्रम-
मा० ध्रमधिथने ति व दनसंयुते ति व सव्रत्र विजतसि मअ ध्रमयुतसि वपुट ते ध्रममहमत्र [१४]　　एतये अथये अयि ध्रम-
धौ० धंमाधिथाने ति व दानसयुते व सवपुठवियं धंमयुतसि वियापटा इमे धंममहामाता [१४]　　इमाये अठाये इयं धंम-
जौ० …… … …… …… … … … … … … … … … … ……　　… … ……………………

गि० लिपी लिखिता …… …… … . … …… … . … [१५]
का० लिपि लेखिता चिलथितिक्या होतु तथा च मे पजा अनुवतंतु [१५]
शा० दिपि निपिस्त चिरथितिक भोतु तथ च मे प्रज अनुवततु [१५]
मा० दिपि लिखित चिरठितिक होतु तथ च मे प्रज अनुवटतु [१५]
धौ० लिपी लिखिता चिलठितीका होतु तथा च मे पजा अनुवततु [१५]
जौ० ……………………………………………………………

———

षष्ठ अभिलेख

गि० देवा······सि राजा एवं आह [१] अतिक्रातं अंतरं न भूतप्रुव स व···ल अथकंमे व पटिवेदना वा [२]
का० देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा [१] अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुवे सवं कलं अठकंमे वा पटिवेदना वा [२]
शा० देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एव अहति [१] अतिक्रतं अंतर न भुतप्रुवं सर्वं कलं अठकर्मं व पटिवेदन व [२]
मा० देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह [१] अतिक्रतं अतरं न हुतप्रुवे सत्रं कल अथ्रक्रम व पटिवेदन व [२]
धौ० देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुवे सवं कालं अठकंमे व पटिवेदना व [२]
जौ० ······नंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुवे सवं कालं अठकंमे पटिवेदना व [२]

गि० त मया एवं कतं [३] सवे काले भुंजमानस मे ओरोधनम्हि गभागारम्हि वचम्हि व विनीतम्हि च उयानेसु
का० से मया हेवं कटे [३] सवं कालं अदमानसा मे आलाधनसि गभागालसि वचसि विनितसि उयानसि
शा० तं मय एवं किटं [३] सव्रं कलं अशमनस मे ओरोधनस्पि ग्रभगरस्पि व्रचस्पि विनितस्पि उयनस्पि
मा० त मय एवं किटं [३] सव्र कलं अशतस मे ओरोधने ग्रभगरसि व्रचस्पि विनितस्पि उयनस्पि
धौ० से ममया कटे [३] सवं कालं ··· मानस मे अंते ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनोतसि उयानसि
जौ० से ममया कटे [३] सवं कालं ·· स मे अंते ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनीतसि उयानसि

गि० च सवत्र पटिवेदका स्टिता अथे मे जनस पटिवेदेथ इति [४] सर्वत्र च जनस अथे करोमि [५]
का० सवता पटिवेदका अठं जनसा ··वेदेतु मे [४] सवता चा जनसा अठं कछामि हकं [५]
शा० सवत्र पटिवेदक अठं जनस पटिवेदेतु मे [४] सवत्र च जनस अठ करोमि [५]
मा० सव्रत्र पटिवेदक अथ्र जनस पटिवेदेतु मे [४] सव्रत च जनस अथ्र करोमि अहं [५]
धौ० च सवत पटिवेदका जनस अठं पटिवेदयंतु मे ति [४] सवत च जनस अठं कलामि हकं [५]
जौ० च सवत पटिवेदका जनस अठं प्रटिवेदयंतु मे ति [४] सवत च जनस······ ······ ······कं [५]

गि० य च किंचि मुखतो आञपयामि स्वयं दापकं वा स्रावापकं वा य वा पुन महामात्रेसु आचायिके अरोपितं भवति
का० यं पि चा किछि मुखते आनपयामि हकं दापकं वा सावकं वा ये वा पुना महामतेहि अतियायिके आलापिते होति
शा० यं पि च किचि मुखतो अणपयमि अहं दपक व श्रवक व ये व पन महमत्रन अचयिक अरोपितं भोति
मा० यं पि च किछि मुखतो अणपेमि अहं दपकं व श्रवकं व ये व पुन महमत्रेहि अचयिके अरोपिते होति
धौ० अं पि च किंचि मुखते आनपयामि दापकं वा सावकं वा ए वा महामातेहि अतियायिकेआलोपिते होति
जौ० अं पि च किंछि मुखते आनपयामि दापकं वा सावकं वा ए वा महामातेहि अतियायिके आलोपिते होति

गि० ताय अथाय विवादो निझतो व संतो परिसायं आनंतरं पटिवेदेतव्यं मे सर्वत्र सर्वे काले [६] एवं मया
का० ताये ठाये विवादे निझति वा संतं पलिसाये अनंतलियेना पटि···वियं मे सवता सवं कालं [६] हेवं आनपयिते
शा० तये अठये विवदे निझति व सतं परिषये अनंतरियेन प्रटिवेदेतवो मे सवत्र सवं कलं [६]·· एव अणपितं
मा० तये अथ्रये विवदे निजति व संत परिषये अनतलियेन पटिवेदेतविये मे सत्रत्र सत्र कल [६] एवं अणपित
धौ० तसि अठसि विवादे व निझती वा संतं पलिसाया आनंतलियं पटिवेदेतवियें मे ति सवत सवं कालं [६] हेवं मे
जौ० तसि अठसि विवादे व······ ······लिसायं आनंतलियं पटिवेदेतवियें मे ति सवत सवं कालं [६] हेवं मे

गि० आञपितं [७] नास्ति हि मे तोसो उस्टानम्हि अथसंतीरणाय व [८] कतव्यमते हि मे सर्वलोकहितं [९] तस च पुन
का० ममया [७] नथि हि मे दोसे उठानसा अठसंतिलनाये [८] कटवियमुने हि मे सवलोकहिते [९] तसा चा पुना
शा० मय [७] नस्ति हि मे तोषो उठनसि अठसंतिरणये च [८] कटवमतं हि मे सवलोकहितं [९] तस च
मा० मय [७] नस्ति हि मे तोषो तोषे उठनसि अथसंतिरणये च [८] कटवियमते हि मे सव्रलोकहिते [९] तस चु पन
धौ० अनुसथे [७] नथि हि मे तोसे उठानसि अठसंतीलनाय च [८] कटवियमते हि मे सवलोकहिते [९] तस च पन
जौ० अनुसथे [७] नथि हि मे तोसे उठानसि अठसंतीलनाय च [८] ·· ······ ··· मे सवलोकहिते [९] तस च पन

गि० एस मूले उस्टानं च अथसंतीरणा च [१०] नास्ति हि कंमतरं सर्वलोकहितत्पा [११] य च किंचि पराक्रमामि
का० एसे मुले उठाने अठसंतिलना चा [१०] नथि हि कंमतला सवलोकहितेना [११] यं च किछि पलकमामि
शा० मुलं एत्र उथनं अठसंतिरण च [१०] नस्ति हि क्रमतरं सवलोकहितेन [११] यं च किचि परक्रममि
मा० एषे मुले उठने अथ्रसतिरण च [१०] नस्ति हि क्रमतर सव्रलोकहितेन [११] यं च किछि परक्रममि
धौ० इयं मूले उठाने च अठसंतीलना च [१०] नथि हि कंमत··· सवलोकहितेन [११] अं च किछि पलकमामि
जौ० इयं मूले उठाने च अठसंतीलना च [१०] नथि हि कंमतला सवलोकहितेन [११] अं च किछि पलकमामि

गि० अहं किति भूतानं आनंणं गछेयं इध च नानि सुखापयामि परत्रा च स्वगं आराधयंतु [११] त
का० हकं किति भुतानं अननियं येहं हिद च कानि सुखायामि पलत चा स्वगं आलाधयितु [११] से
शा० किति भुतनं अनणियं व्रचेयं इअ च च सुखयमि परत्र च स्पग्रं अरधेतु [११]
मा० अअं किति भुतनं अणणियं येहं इअ च षे सुखयमि परत्र च स्पग्र अरधेतु ति [११] से
धौ० हकं किति भूतानं आननियं येहं ति हिद च कानि सुखयामि पलत च स्वगं आलाधयंतू ति [११]
जौ० हकं ....नियं येहं ति हिद च कानि सुखयामि पलत च स्वगं आलाधयंतू ति [११]

गि० एताय अथाय अयं धंमलिपी लेखापिता किंति चिरं तिस्टेय इति तथा च मे पुत्रा पोता च प्रपोत्रा च अनुवतरं
का० एतायेठाये इयं धमलिपि लेखिता चिलठितिक्या होतु तथा च मे पुतदाले पलकमातु
शा० एतये अठये अयि ध्रम निपिस्त चिरथितिक भोतु तथ च मे पुत्र नतरे परक्रमंतु
मा० एतये अध्रये इयं ध्रमदिपि लिखित चिरठिकित होतु तथ च मे पुत्र नतरे परक्रमते
धौ० एताये अठाये इयं धंमलिपि लिखिता चिलठितीका होतु तथा च पुता पपोता मे पलकमंतू
जौ० एताये अठाये इयं धंमलिपी लिखिता चिलठितीका होतु...... ता मे पलकमंतु

गि० सवलोकहिताय [१२] दुकरं तु इदं अञत्र अगेन पराक्रमेन [१३]
का० सवलोकहिताये [१२] दुकले चु इयं अनता अगेना पलकमेना [१३]
शा० सवलोकहितये [१२] दुकर तु खो इयं अञत्र अग्रे परक्रमेन [१३]
मा० सवलोकहितये [१२] दुकरे च खो अञत्र अग्रेन परक्रमेन [१३]
धौ० सवलोकहिताये [१२] दुकले चु इयं अंनत अगेन पलकमेन [१३]
जौ० सवलोकहिताये [१२] दुकले चु इयं अंनत अगेन पलकमेन [१३]

सप्तम अभिलेख

गि० देवानंपियो पियदसि राजा सर्वत इछति सवे पासंडा वसेयु [१] सवे ते सयमं च भावसुधिं
का० देवानंपिये पियदसि लाजा सवता इछति सवपासंड वसेवु [१] सवे हि ते सयमं भावसुधि
शा० देवनंप्रियो प्रियशि रज सवत्र इछति सव्रप्रषंड वसेयु [१] सवे हि ते सयमे भवशुधि
मा० देवनप्रियो प्रियद्रशि रज सव्रत्र इछति सव्रपषड वसेयु [१] सव्रे हि ते सयम भषशुधि
धौ० देवानंपिये पियदसी लाजा सवत इछति सवपासंडा वसेवू ति [१] सवे हि ते सयमं भावसुधी
जौ० ....दसी लाजा सवत इछति सवपासडा वसे ति [१] सवे हि ते सयमं भावसुधी

गि० च इछति [२] जना तु उचावचछंदो उचावचरागो [३] ते सर्वं व कासंति एकदेसं व कसंति [४]
का० चा इछंति [२] जने चु उचावुचाछंदे उचावुचलागे [३] ते सवं एकदेसं पि कछंति [४]
शा० च इछंति [२] जनो चु उचवुचछंदो उचवुचरगो [३] ते सव्रं व एकदेशं व पि कषंति [४]
मा० च इछंति [२] जने चु उचवुचछंदे उचवुचरगे [३] ते सव्रं एकदेशं व पि कषति [४]
धौ० च इछंति [२] मुनिसा च उचावुचछंदा उचावुचलागा [३] ते सवं वा एकदेसं व कछंति [४]
जौ० च इछंति [२] मुनिसा च उचावुचछंदा उचावुचलागा [३] .... सं व कछंति [४]

गि० विपुले तु पि दाने यस नास्ति सयमे भावसुधिता व कतंञता व दढभतिता च निचा बाढं [५]
का० विपुले पि चु दाने असा नथि सयमे भावसुधि किटनाता दिढभतिता चा निचे बाढं [५]
शा० विपुले पि चु दने यस नस्ति सयम भवशुधि किट्रञत द्रिढभतित निचे पढं [५]
मा० विपुले पि चु दनं यस नस्ति सयेमे भवशुति किटनत ..... द्रिढभतित च निचे बढं [५]
धौ० विपुले पि चा दाने अस नथि सयमे भावसुधी ....च नीचे बाढं [५]
जौ० विपुले पि चा दाने............. .. ..धी ....च नीचे बाढं [५]

अष्टम अभिलेख

गि० अतिकातं अंतरं राजाना विहारयातां अयासु [१] एत मगव्या अञानि च एतारिसनि
का० अतिकंतं अंतलं देवानंपिया विहालयातं नाम निखमिसु [१] हिदा मिगविया अंनानि चा हेडिसाना
शा० अतिक्रतं अतरं देवनंप्रिय विहरयत्र नम निक्रमिषु [१] अत्र म्रुगय अञनि च एदिशनि
मा० अतिक्रतं अतरं देवनप्रिय विहरयत्र नम निक्रमिषु [१] इअ म्रिगविय अञनि च एदिशनि
धौ० अतिकंतं अंतलं लाजाने विहालयातं नाम निखमिसु [१] ···त मिगाविया अंनानि च एदिसानि
जौ० ··································· ·····विया अंनानि च एदि···
सो० ··································· ····································

गि० अभीरमकानि अहुंसु [२] सो देवानंप्रियो पियदसि राजा दसवर्साभिसितो संतो अयाय संबोधि [३] तेनेसा
का० अभिलामानि हुसु [२] देवानंपिये पियदसि लाजा दसवसाभिसिते संतं निखमिथा संबोधि [३] तेनता
शा० अभिरमनि अभुवसु [२] सो देवनंप्रियो प्रियद्रशि रज दशवषभिसितो सतं निक्रमि सबोधि [३] तेनद
मा० अभिरमनि हुसु [२] से देवनप्रिये प्रियद्रशि रज दशवषभिसिते संतं निकमि सबोधि [३] तेनद
धौ० अभिलामानि हुवंति नं [२] से देवानंपिये पियदसी लाजा दसवसाभिसिते निखमि संबोधि [३] तेनता
जौ० ···· मानि हुवंति नं [२] से देवानंपिये पिय········· दस························ · ·
सो० ··························· ··························· ··········· निखमिठ स······ ···

गि० धंमयाता [४] एतयं होति बाम्हणसमणानं दसणे च दाने च थैरानं दसणे च हिरंणपटिविधानो च
का० धंमयाता [४] हेता इयं होति समनबंभनानं दसने चा दाने च बुधानं दसने च हिलंनपटिविधाने चा
शा० ध्रंमयत्र [४] अत्र इयं होति श्रमणब्रमणनं द्रशने दनं बुढनं द्रशन हिरञप्रटिविधने च
मा० ध्रमयत्र [४] अत्र इय होति शमणब्रमणन द्रशने दने च बुध्रन द्रशने च हिञपटिविधने च
धौ० धंमयाता [४] ततेस होति समनबाभनानं दसने च दाने च बुढानं दसने च हिलंनपटिविधाने च
जौ० ···· ता [४] ततेस होति स··· ··················· च दाने च बुढानं दसने च हिलंनपटिविधाने च
सो० ·········· [४] हेत इयं होति बंभ························ बुढानं दसने च हिरंनपटिविधाने च

गि० जानपदस च जनस दसपनं धंमानुसस्टी च धमपरिपुछा च तदोपया [५] एसा भुय रति
का० जानपदसा जनसा दसने धंमनुसथि चा धमपलिपुछा चा ततोपया [५] एसे भुये लाति
शा० जनपदस जनस द्रशन ध्रमनुशस्ति ध्रमपरिप्रुछ च ततोपयं [५] एषे भुये रति
मा० जनपदस जनस द्रशने ध्रमनुशस्ति च ध्रमपरिपुछ च ततोपय [५] एषे भुये रति
धौ० जानपदस जनस दसने च धंमानुसथी च ··· पुछा च तदोपया [५] एसा भुये अभिलामे
जौ० ································· धंमपलिपुछा ········· [५] ···· ········· इलामे
सो० ······························ धंमानुसथि ·· धंम······ ·· ············ [५] ····ये रती

गि० भवति देवानंपियस प्रियदसिनो राञो भागे अंञे [६]
का० होति देवानंपियसा पियदसिसा लाजिने भागे अंने [६]
शा० भोति देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो भगो अंञि [६]
मा० होति देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने भगे अणे [६]
धौ० होति देवानंपियस पियदसिने लाजिने भागे अंने [६]
जौ० होति देवानंपियस पियदसिने लाजिने भागे अ···[६]
सो० होति दे································ने भागे अं···[६]

नवम अभिलेख

गि० देवानंपियो प्रियदसि राजा एव आह [१] अस्ति जनो उचावचं मंगलं करोते आबाधेसु वा आवाहवीवाहेसु वा
का० देवानंपिये पियदसि लाजा आह [१] जने उचावुचं मंगलं कलेति आबाधसि अवाहसि विवाहसि
शा० देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एवं अहति [१] जनो उचवुचं मंगलं करोति अबधे अवहे विवहे
मा० देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह [१] जने उचवुचं मगलं करोति अबधसि अवहसि विवहसि
धौ० देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] अथि जने उचावुचं मंगलं कलेति आबाध............ वीवाह
जौ० देवानंपिये पियदसी लाजा.......... [१] ....

गि० पुत्रलाभेसु वा प्रवासंम्हि वा एतम्ही च अञम्हि च जनो उचावचं मंगलं करोते [२] एत तु
का० पजोपदाने पवाससि एताये अंनाये चा एदिसाये जने बहु मगलं कलेति [२] हेत चु
शा० पजुपदने प्रवसे अतये अञये च एदिशिये जनो व मंगलं करोति [२] अत्र तु
मा० प्रजोपदये प्रवसस्पि एतये अञये च एदिशये जने बहु मंगलं करोति [२] अत्र तु
धौ० ...जुपदाये पवाससि एताये अंनाये च हेदिसाये जने बहुकं मंगलं क... [२] ...चु
जौ० पजुपदाये पवाससि एताये अंनाये च हेदिसाये अने बहुकं .... [२] ......

गि० महिडायो बहुकं च बहुविधं च छुदं च निरथं च मंगलं करोते [३] त कतव्यमेव तु
का० अबकजनियो बहु चा बहुविधं चा खुदा चा निलथिया चा मगलं कलंति [३] से कटवि चेव खो
शा० स्त्रियक बहु च बहुविधं च पुतिक च निरठियं च मंगलं करोति [३] सो कटवो च व खो
मा० अबकजनिक बहु च बहुविध च खुद च निरथिय च मगलं करोति [३] से कटविये चेव खो
धौ० इथी बहुकं च बहुविधं च खुदं च निलठियं च मंगलं कलेति [३] से कटविये चेव खो
जौ० .... च मंगलं कलेति [३] से कटविये चेव खो

गि० मगलं [४] अपफलं तु खो एतरिसं मंगलं [५] अयं तु महाफले मंगले य धंममंगले [६]
का० मंगले [४] अपफले चु खो एसे [५] इयं चु खो महाफले ये धंममगले [६]
शा० मंगल [४] अपफलं तु खो एत [५] इमं तु खो महफल ये ममंगल [६]
मा० मगले [४] अपफले चु खो एषे [५] इयं चु खो महफले ये ध्रममगले [६]
धौ० मंगले [४] अपफले चु खो एस हेदिसे मंग...[५] ...यं चु खो महाफले ए धंममंगले [६]
जौ० मंगले [४] अपफले चु खो एस हेदिसे म...[५] इयं चु.. [६]

गि० ततेत दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती गुरूनं अपचिति साधु पाणेसु सयमो साधु बम्हणसमणानं साधु
का० हेता इयं दासभटकसि सम्यापटिपति गुलुना अपचिति पानानं संयमे समनबंभनानं
शा० अत्र इम दसभटकस सम्मपटिपति गरुन अपचिति प्रणनं संयमो शमणब्रमणन
मा० अत्र इयं दसभटकसि सम्यपटिपति गुरुन अपचिति प्रणन सयमे श्रमणब्रमणन
धौ० ततेस दासभटकसि संम्यापटिपति गुलूनं अप............................. मे समनबाभनानं
जौ० ....सभटकसि संम्यापटिपति गुलूनं अपचिति पानेसु सयमे समनबाभनानं

गि० दानं एत च अञ च एतारिसं धंममंगलं नाम [७] त वतव्यं पिता व पुतेन वा भात्रा वा स्वामिकेन
का० दाने एसे अंने चा हेडिसे धंममगले नामा [७] से वतविये पितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेन
शा० दन एतं अञं च ध्रममंगलं नम [७] सो वतवो पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतन पि स्पमिकेन
मा० दने एषे अणे च एदिशे ध्रममगले नम [७] से वतविये पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतुन पि स्पमिकेन
धौ० दाने एस अंने च............ धंममंगले नाम [७] से वतविये पितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेन
जौ० दाने एस अंने....................................... [७] .. ..पितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेन

गि० वा इदं साधु इदं कतव्य मंगलं आव तस अथस निस्टानाय अस्ति
का० पि मितसंथुतेना अव पटिवेसियेना पि इयं साधु इयं कटविये मगले आव तसा अथसा निबुतिया
शा० पि मित्रसंस्तुतेन अत्र प्रतिवेशियेन इमं सधु इमं कटवो मंगलं यव तस अठस निबुटिय निबुटस्पि
मा० पि मित्रसंस्तुतेन अव पटिवेशियेन पि इयं सधु इयं कटविये मगले अव तस अथस निबुटिय निबुटसि
धौ० पि .... ले आव तस अठस निफतिया अथि
जौ० पि इयं साधु इयं कटविये..

गि० च पि वुतं साधु इदं इति [८] न तु एतारिसं अस्ति दानं व अनगहो व यारिसं धंमदानं व धमनुगहो व [१०]
का० इमं कछामि ति [८] ए हि इतले मगले संसयिक्ये से [९] सिया व तं अठं निवटेया सिया पुना नो [१०]
शा० व पुन इमं कषं [८] ये हि एतके मगले सशयिके तं [९] सिय वो तं अठं निवटेयति सिय पुन नो [१०]
मा० व पुन इम कषमि ति [८] ए हि इतरे मगले शशयिके से [९] सिय व तं अध्रं निवटेय सिय पन नो [१०]
धौ० च हेवं वुते दाने साधू ति [८] से नथि .... अनुगहे वा आदिसे धंमदाने धंमानुगहे ...... [१०]
जौ० .... [८] ......से............... ....दाने अनुगहे वा आदिसे धंमदाने धंमानुगहे च [१०]

गि० त तु खो मित्रेन व सुहृदयेन वा ञतिकेन व सहायन व ओवादितव्यं तम्हि तम्हि पकरणे इदं कचं इदं साधु इति
का० हिदलोकिके चेव से [११] इयं पुना धंममगले अकालिक्ये [१२] हंचे पि तं अठं नो निटेति हिद अठं पलत अनंतं
शा० इअलोक च वो तं [११] इद पुन ध्रममगलं अकलिकं [१२] यदि पुन तं अठं न निवटे इअ अथ परत्र अनंतं
मा० हिदलोकिके चेव से [११] इयं पुन ध्रममगले अकलिके [१२] हचे पि तं अध्रं नो निवटेति हिद अथ परत्र अनत
धौ० ....मि..................तिकेन सहायेन पि.................. वियोवदित ..तिसि पकलनसि इयं.................
जौ० सं थु खो मितेन... .... यं साधू..................

गि० इमिना सक स्वगं [१३] आराधेतु इति किं च इमिना कतव्यतरं यथा स्वगारधी
का० पुना पवसति [१३] हंचे पुन तं अठं निवतेति हिदा ततो उभयेसं लधे होति हिद चा से अठे पलत चा अनंतं
शा० पुञं प्रसवति [१३] हंचे पुन तं ठं निवटेति ततो उभयेस लधं भोति इअ च सो अठो परत्र च अनंतं
मा० पुण प्रसवति [१३] हचे पुन तं अध्रं निवटेति हिद ततो उभयेसं अरधे होति हिद च से अध्रे परत्र च अनत
धौ० ... लाधयितवे [१३] ....टव्...............स्वगस आलधी...
जौ० इमेन सकिये स्वगे आलाधयितवे [१३] किं हि इमेन कटथियतला.....................

का० पुना पसवति तेना धंममगलेना [१४]
शा० पुञं प्रसवति तेन ध्रमंगलेन [१४]
मा० पुणं प्रसवति तेन ध्रमगलेन [१४]

दशम अभिलेख

गि० देवानंपियो प्रियदसि राजा यसो व कीति व न महाथावहा मञते अञत
का० देवानंपिये पियदषा लजा यषो वा किति वा नो महथावा मनति अनता यं पि यषो
शा० देवनप्रिये प्रियद्रशि रय यशो व किट्रि व नो महठवह मञति अञत्र यो पि यशो
मा० देवनप्रिये प्रियद्रशि रज यशो व किटि व नो महथ्रवहं मञति अणत्र यं पि यशो
धौ० देवानंपिये पियदसी लाजा यसो व किटी वा न········हं मंनते··· ·············[यसो
जौ० ··· ·· ·· ·· ······ ····· ····· ···यसो

गि० तदात्पनो दिघाय च मे जनो धंमसुस्रुसा सुस्रुसता
का० वा किति वा इछति तदत्वाये अयतिये चा जने धंमसुसुषा सुसुषातु मे ति
शा० किट्रि व इछति तदत्वये अयतिय च जने ध्रमसुश्रुष सुश्रुषतु मे ति
मा० व किटि व इछति तदत्वये अयतिय च जने ध्रमसुश्रुष सुश्रुषतु मे ति
धौ० वा किटी वा इछति तदत्वाये आ··· ············जने·······सूसं सुसूसतू मे
जौ० वा किटी वा इछति तदत्वाये आयतिये च जने धंमसुसुसं सुसूसतु मे

गि० धंमवुतं च अनुविधियतां [१] एतकाय देवानंपिया पियदसि राजा यसो व किति व इछति [२]
का० धंमवतं वा अनुविधियंतु ति [१] एतकाये देवानंपिये पियदसि लाजा यषो वा किति वा इछ [२]
शा० ध्रंमवुतं च अनुविधियतु [१] एतकये देवनप्रिये प्रियद्रशि रय यशो किट्रि व इछति [२]
मा० ध्रमवुतं च अनुविधियतु ति [१] एतकये देवनप्रिये प्रियद्रशि रज यशो व किटि व इछति [२]
धौ० धंम················ ····· ·········मे [१] एतकये······ ·· ····· ······ ·· ····· · ···यसो वा किटी वा इ· [२]
जौ० ·· ·· ·· ·· ···· ···· ··· · ····· ·········· · · ······ ·· ······· ·· ·· · · · ············ ···· ·· ········ [२]

गि० यं तु किचि परिकमते देवानं प्रियदसि राजा त सवं पारत्रिकाय किंति सकले
का० अं चा किछि लकमति देवनंपिये पियदषि लाजा त षव पालंतिक्याये वा किति सकले
शा० यं तु किचि परक्रमति देवनंप्रिया प्रियद्रशि रय तं सव्रं परत्रिकये व [किति सकले
मा० ·········· किछि परक्रमति देवनप्रिये प्रियद्रशि रज तं सव्रं परत्रिकये व किति सकले
धौ० ················ इ पलकमति देवानंपिये पालतिकाये···· किंति सकले
जौ० ·· ················ ··········ति देवानंपिये पालतिकाये वा किंति सकले

गि० अपपरिस्रवे अस [३] एस तु परिस्रवे य अपुञं [४] दुकरं तु खो एतं छुद्रकेन
का० अपपलाषवे षियाति ति [३] एषे चु पलिसवे ए अपुने [४] दुकले चु खो एषे खुदकेन
शा० अपरिस्रवे सियति [३] एषे तु परिस्रवे यं अपुञं [४] दुकरे तु खो एषे खुद्रकेन
मा० अपपरिसवे सियति ति [३] एषे चु परिसवे ए अपुणं [४] दुकरे चु खो एषे खुद्रकेन
धौ० अपपलिसवे हुवेया ति [३] पलिस··· ······· ··········[४] दुकले ········ · ······अ अ-
जौ० अपपलिसवे हुवेया ति [३] ········ ···· · · ····· ····· ······ · ·· · ···· · ··········

गि० व जनेन उसटेन व अञत्र अगेन पराक्रमेन सवं परिचजित्पा [५] एत तु
का० वा वगेना उषुटेन वा अनत अगेना पलकमेना षवं पलितिदितु [५] हेत चु
शा० वग्रेन उसटेन व अञत्र अग्रेन परक्रमेन सवं पलितिजितु [५] अत्र चु
मा० व वग्रेन उसटेन व अनत्र अग्रेन परक्रमेन सव्रं परितिजितु [५] अत्र तु
धौ० गेन····· ·········· न सवं च पलितिजितु खुदकेन वा उसटेन वा [५]
जौ० ········ ·· ··· ·········· · ···लितिजितु खुदकेन वा उसटेन वा [५]

गि० खो उसटेन दुकरं [६]
का० खो उषटेन वा दुकले [६]
शा० उसटे··················· · ····[६]
मा० खो उसटेनेव दुकरे [६]
धौ० उसटेन चु दुकलतले [६]
जौ० उसटेन चु दुकलतले [६]

एकादश शिलालेख

गि० देवानंप्रियो पियदसि राजा एवं आह [१] नास्ति एतारिसं दानं यारिसं धंमदानं धंमसंस्तवो वा धंमसंविभागो
का० देवानंपिये पियदषि लाजा हेवं हा [१] नथि हेडिषे दाने अदिष धंमदाने। धमषविभगे।
शा० देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एवं हहति [१] नस्ति एदिशं दनं यदिशं ध्रमदन ध्रमसंस्तवे ध्रमसंविभगो
मा० देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह [१] नस्ति एदिशे दने अदिशे ध्रमदने ध्रमसंथवे ध्रमसंविभग

गि० वा धंमसंबधो व [२] तत इदं भवति दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती मातरि पितरि साधु सस्रुसा
का० धंमषंबधे। [२] तत एषे दाषभटकषि। षम्यापटिपति मातापितुषु। षुषुषा।
शा० ध्रमसंबंध [२] तत्र एतं दसभटकनं संमपटिपति मतपितुषु सुश्रुष
मा० ध्रमसंबंधे [२] तत्र एषे दसभटकसि सम्यपटिपति मतपितुषु सुश्रुष

गि० मितसस्तुतञातिकानं बाम्हणस्रमणानं साधु दानं प्राणानं अनारंभो साधु [३] एत वतव्यं पिता व पुत्रेन
का० मितषंथुतनातिकयानं समनाबंभनाना दाने पानानं अनालंभे [३] एषे वतविये पितिना पि पुतेन
शा० मित्रसंस्तुतञतिकनं श्रमणब्रमणन दन प्रणन अनरंभो [३] एतं वतवो पितुन पि पुत्रेन
मा० मित्रसंस्तुतञतिकन श्रमणब्रमणन दने प्रणन अनरभे [३] एषे वतविये पितुन पि पुत्रन

गि० व भाता व मितसस्तुतञातिकेन व आव पटीवेसियेहि इद साधु इद कतव्यं [४] सो तथा
का० पि भातिना पि षवामिकयेन पि मितशंथुताना अवा पटिवेषियेना इयं षाधु इयं कटविये [४] शे तथा
शा० पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि मित्रसंस्तुतन अव प्रतिवेशियेन इमं सधु इमं कटवो [४] सो तथ
मा० पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि मित्रसस्तुतेन अव पटिवेशियेन इयं सधु इय कटविये [४] से तथा

गि० करु इलोकचस आरधो होति परत च अनंतं पुञं भवति तेन धंमदानेन [५]
का० कलंत हिदलोकिक्ये च कं आलधे होति पलत चा अनत पुना पशवति तेना धंमदानेना [५]
शा० करतं इअलोक च अरधेति परत्र च अनतं पुञ प्रसवति तेन ध्रमदनेन [५]
मा० करतं हिदलोके च कं अरधे होति परत्र च अनंतं पुणं प्रसवति तेन ध्रमदनेन [५]

द्वादश अभिलेख

गि० देवानंपिये पियदसि राजा सवपासंडानि च पवजितानि च घरस्तानि च पूजयति दानेन च विवाधाय
का० देवानापियं पियदषि लाजा षावापाषंडानि पवजितानि गहथानि वा पुजेति दानेन विविधये
शा० देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय सव्रपषंडनि प्रव्रजितनि ग्रहथनि च पुजेति दनेन विविधये
मा० देवनप्रिये प्रियद्रशि रज सव्रपषडनि प्रवजितनि गेहथनि च पुजति दनेन विविधये

गि० च पूजाय पूजयति ने [१] न तु तथा दानं व पूजा व देवानंपियो मंञते यथा किति सारवढी अस
का० च। पुजाये [१] नो चु तथा दाने वा पुजा वा देवानंपिये मनति अथा किति शालावढि शियाति
शा० च पुजये [१] नो चु तथ दन व पुज व देवनंप्रियो मञति यथ किति सलवढि सिय
मा० च पुजये [१] नो चु तथ दन व पुज व देवनंप्रिये मञति अथ किति सलवढि सिय

गि० सवपासंडानं [२] सारवढो तु बहुविधा [३] तस तु इदं मूलं य वचिगुती किंति आतपपासंडपूजा व पर-
का० शवपाशडान [२] शालावढि ना बहुविधा [३] तश चु इनं मुले अ वचगुति किति ति अतपाशडषापुजा वा पल-
शा० सव्रप्रषंडनं [२] सलवढि तु बहुविध [३] तस तु इयो मुल यं वचगुति किति अतप्रषंडपुज व पर-
मा० सव्रपषडन ति [२] सलवुढि तु बहुविध [३] तस चु इयं मुले अं वचगुति किति अतप्रषडपुज व पर-

गि० पासंडगरहा व नो भवे अप्रकरणम्हि लहुका व अस तम्हि तम्हि प्रकरणे [४] पूजेतया तु एव परपासंडा
का० पाशंडगलहा व नो शया अपकलनशि लहुका वा शिया तगि तशि पकलनशि [४] पुजेतविय चु पलपाशडा
शा० प्रषंडगरन व नो सिय अपकरणसि लहुक व सिय तसि तसि प्रकरणे [४] पुजनविय व चु परप्रषंड
मा० पषडगरह व नो सिय अपकरणसि लहुक व सिय तसि तस्मि पकरणसि [४] पुजेतविय व चु परप्रषड

गि० तेन तन प्रकरणेन [५] एवं करुं आत्पपासंडं च वढयति परपासंडस च उपकरोति [६] तदंञथा
का० तेन तेन अकालन [५] हेव कलत अतपाशडा वढं वढियति पलपाशड पि वा उपकलेति [६] तदा अनथ
शा० तेन तेन अकरेन [५] एवं करतं अतप्रषंड वढेति परप्रषंडस पि च उपकरोति [६] तद अञथ
मा० तेन तेन अकरेन [५] एवं करतं अत्वपषड वढं वढयति परपषडस पि च उपकरोति [६] तदंअथ

गि० करोतो आत्पपासडं च छणति परपासंडस च पि अपकरोति [७]
का० कलत अतपाशड च छनति पलपाशड पि वा अपकलेति [७]
शा० करमिनो अतप्रषंड क्षणति परप्रषडस च अपकरोति [७]
मा० करतं अतपषड च छणति परपषडस पि च अपकरोति [७]

गि० या हि कोचि आत्पपासंडं पूजयति परपासंडं व गरहति सवं आत्पपासंडभतिया किंति आत्पपासंडं
का० ये हि केछ अतपाशड पुनाति पलपाषड वा। गलहति। षवे अतपाषंडभतिया वा किति। अतपाषंड।
शा० यो हि कचि अतप्रषडं पुजेति परप्रषडं गरहति सव्रे अतप्रषडभतिय व किति अतप्रषंडं
मा० ये हि केछि अत्वपषड पुजेति परपषड व गरहति सव्र अत्वपषडभतिय व किति अत्वपषड

गि० दीपयेम इति सो च पुन तथ करातो आत्पपासंडं बाढतरं उपहनाति [८] त समवायो एव साधु किंति अञमंञस
का० दिपयेम षे च पुना तथा। कलंतं बाढतले। उपहंति। अतपाषडषि। [८] षमवाये वु षाधु। किति। अंनमनषा
शा० दिपयमि ति सो च पुन तथ करतं बढतरं उपहंति अतप्रषडं [८] सो सयमो वो सधु किति अञमञस
मा० दिपयम ति……… पुन तथ करतं बढतरं उपहंति अत्वपषड [८] से समवये वो सधु किति अणमणस

गि० धंमं स्रुणारु च सुसुंसेर च [९] एवं हि देवानंपियस इछा किंति सवपासंडा बहुस्रुता च असु
का० धंमं षुनेयु चा। षुषुषेयु चा ति। [९] हेवं हि देवानंपियषा इछा किंति सवपाषंड। बहुषुता चा
शा० ध्रमो श्रुणेयु च सुश्रुषेयु च ति [९] एवं हि देवनंप्रियस इछ किति सव्रप्रषंड बहुश्रुत च
मा० ध्रमं श्रुणेयु च सुश्रुषेयु च ति [९] एवं हि देवनप्रियस इछ किति सव्रप्रषड बहुश्रुत च

गि० कलाणागमा च असु [१०] ये च तत्र तत प्रसंना तेहि वतव्यं [११] देवानंपियो नो तथा दानं व पूजां
का० कयानागा च। हुवेयु ति [१०] ए च तत तत। पषंना तेहि वतविये। [११] देवानापिये नो तथा। दानं वा। पुजा
शा० कलणगम च सियसु [१०] ये च तत्र तत्र प्रसन तेषं वतवो [११] देवनंप्रियो न तथ दनं व पुज
मा० कयणगम च हुवेयु ति [१०] ए च तत्र तत्र प्रसन तेहि वतविये [११] देवनप्रिये नो तथ दनं व पुजं

गि० व मंञते यथा किति सार-वढी अस सर्व-पासडानं [१२] बहका च एताय अथा व्यापता धंममहामाता च
का० वा मंनति अथा किति षाला-वढि शिया षव-पाषंडति [१२] बहुका चा एतायाठाये वियापटा धंममहामाता
शा० व मञति यथ किति सल-वढि सियति सर्व-प्रषडनं [१२] बहुक च एतये अठ····· वपट ध्रममहमत्र
मा० व मणति अथ किति सल-वढि सिय सव्र-पषडन [१२] बहुक च एतये अथ्रये वपुट ध्रममहमत्र

गि० इथीझखमहामाता च वचभूमीका च अञे च निकाया [१३] अयं च एतस फल य आत्पपासंडवढी च होति
का० इथिधियखमहामाता वचभुमिक्या अने वा निक्याया [१३] इयं च एतिषा फले यं अतपाषंडवढि चा होति
शा० इस्त्रिधियक्षमहमत्र व्रचभुमिक अञे च निकये [१३] इमं च एतिस फलं यं अतपषडवढि भोति
मा० इस्त्रिजक्षमहमत्र व्रचभुमिक अञे च निकये [१३] इयं च एतिस फले यं अत्वपषडवढि च भोति

गि० धंमस च दीपना [१४]
का० धंमष चा दिपना [१४]
शा० ध्रमस च दिपन [१४]
मा० ध्रमस च दिपन [१४]

त्रयोदश अभिलेख

गि० ....नो कलिंगा व.'' ज.''' [१] ....
का० अठ-वषा- । भिषित- । षा देवानंपियष पियदषिने । लाजिने । कलिंग्या विजिता । [१] दियढ-मिते । पान-षत-षहशे । ये
शा० अठ-वष-अभिसित स देवनप्रिअस प्रिअद्रशिस रञो कलिग विजित [१] दियढ-मत्रे प्रण-शत-स्रे सह ये
मा० अठ-वषभिसित स देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने कलिग विजित [१] दियढ-मत्रे प्रण-शत-स.........

गि० ... ...वढे सत-सहस्र-मात्रं तत्रा हतं बहु-तावतकं मत [२] तता पछा अधुना लधेसु कलिंगेसु
का० तफा अपवुढे । शत-षहष-भिते । तत हते । बहु-तावतके । वा मटे [२] तता पछा । अधुना लधेष । कलिंग्येषु
शा०ततो अपवुढे शत-सहस्र-मत्रे तत्र हते बहु-तवतके व मुटे [२] ततो पच अधुन लधेषु कलिगेषु
मा० ... ...मटे [२] ततो पच अधुन लधेषु कलिगेषु

गि० तीव्रो धंमवायो... . . . . सयो देवानंप्रियस
का० तिवे । धंमवाये धंम-कामता । धंमानुपथि चा । देवानंपियषा [३] षे अथि अनुषये । देवानंपियषा ।
शा० तिव्रे ध्रम-शिलन ध्रम-क्रमत ध्रमनुशस्ति च देवनप्रियस [३] सो अस्ति अनुसोचन देवनप्रिअस
मा० तिव्रे ध्रमवये......... . ध्रमनुशस्ति च देवनप्रि [३] .. ..

गि० व-ज.'' .... [४] .... वधा व मरणं व अपवाहो व जनस त बाढं
का० विजिनितु । कलिंग्यानि । [४] अविजितं हि । विजिनमने । ए तता वध वा मलने वा । अपवहे वा । जनषा षे बाढ ।
शा० विजिनिति कलिगनि [४] अविजितं हि विजिनमना या तत्र वध व मरणं व अपवहो च जनस तं बढं
मा० .... [४] . . .. मरणं व अपवहे व जनस से बढ

गि० वेदन-मत च गुरु-मत च देवानंपि'''स [५] ... .[६] ... ...
का० वेदनिय-मुते । गुलु-मुते चा । देवनंपियषा । [५] इयं पि चु । तता । गलु-मततले । देवानंपियषा [६] य तता
शा० वेदनिय-मतं गुरु-मतं च देवनंप्रियस [५] इदं पि चु तता गुरु-मततरं देवनंप्रियस [६] ये तत्र
मा० वेदनिय-मते गुरु-मते च देवनप्रियस [५] इयं पि चु ततो....... .... [६]

गि० ..... वाम्हणा व समणा व अञे....... . ...सा मात्रि पितरि
का० वषति बाभना व षमं वा अने वा पाशंड गिहिथा वा येषु विहिता एष अगभुति-षुषुषा माता-पिति-
शा० वसति ब्रमण व श्रमण व अंञे व प्रषंड ग्रहथ व येसु विहित एष अग्रभुटि-सुश्रुष मत-पितुषु
मा० .. .. येसु विहित एष अग्रभुटि-सुश्रुष मत-पितुषु

गि० सुसुंसा गुरु-सुसुंसा मित-संस्तत-सहाय-ञातिकेसु दास- भ ....
का० षुषुषा गलु-षुषा मित-षंथुत-षहाय-नातिकेषु दाश- भटकषि षम्यापटिपति दिढ-भतिता तेषं तता होति
शा० सुश्रुष गुरुनसुश्रुष मित्र-संस्तुत-सहय-ञातिकेषु दस- भटकनं सम्म-प्रतिपति द्रढ-भतित तेष तत्र भोति
मा० सुश्रुष गुरु-सुश्रुष मित्र-संस्तु.... . ...

गि० ....अभिरतानं व विनिष्क्रमण [७] येसं वा प ....
का० उपघाते वा वधे वा अभिलतानं वा विनिखमने [७] येषं वा पि षुविहितानं सिनेहे अविपहिने ए तानं मित-शंथुत-
शा० अपग्रथो व वधो व अभिरतन व निक्रमणं [७] येष व पि सुविहितनं सिहो अविप्रहिनो ए तेष मित्र-संस्तुत-
मा० ....वधे व अभिरतनं व विनिक्रमणि [७] येषं व पि सुविहितनं सिनेहे अविपहिने ए तनं मित्र-सं...

गि० ..... हाय-ञातिका व्यसनं प्रापुणति तत सो पि तेस उपघातो होति [८] पटिभागो चेसा सव........
का० षहाय-नातिकय वियषनं पापुनाति तता षे पि तानमेवा उपघाते होति [८] पटिभागे चा एष षव-मनुषानं
शा० सहय-ञतिक वसन प्रपुणति तत्र तं पि तेष वो अपग्रथो भोति [८] प्रतिभगं च एतं सत्र-मनुशनं
मा० .... [८] .... एष सत्र-मनुशनं

गि० ....[८] .. . .स्ति इमे निकाया अञत्र योनेसु........................
का० गुलुमते चा देवानंपियषा [८] नथि चा षे जनपदे यता नथि इमे निकाया आनता योनेषु बंभने चा षमने चा
शा० गुरुमतं च देवनंप्रियस [८] नस्ति च
मा० गुरुमते च देवनंप्रियस [८] नस्ति च से जनपदे यत्र नस्ति इमे निकय अञत्र योनेषु ब्रमणे च श्रमणे..

गि० ………………………म्हि　यत्र नास्ति मानुसानं एकतरम्हि
का० नथि चा कुवापि जनपदपि यता नथि　मनुषान　एकतलपि
शा०　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　एकतरे
मा० ……………पि जनपदसि यत्र………………………

गि०　पासंडम्हि　न　नाम प्रसादो [९]　यावतको　जनो　तदा……　………………
का० पि । पाषडषि ।　नो　नाम पषादे । [९]　पे अवतके　जने । तदा कलिंगेषु लधेषु हते चा मटे चा । अपबुढे
शा० पि प्रषडस्पि　न　नम प्रसदो [९]　सो यमत्रो　जनो　तद कलिगे　　हतो च मुटो च　अपवुढ
मा० ……………　न　नम प्रसदे　[९]　से यवतके　जने　तद कलिगेषु　　हते च………　अपवुढे

गि० ……………………………　स-भागो व　गरु-मतो　देवानं……[१०]　………………………………
का० चा ततो षते भागे　वा । षहष-भागे वा अज गुलु-मते वा देवानंपियषा [१०]　………………………………
शा० व ततो शत-भगे　व सहस्र-भगं व अज गुरु-मतं वो देवनंप्रियस [१०]　यो पि च अपकरेयति क्षमितवियमतं व
मा० व ततो शत-भगे　व सहस्र-भगे व अज गुरु-मते व　देवनप्रियस [१०]　……………पक……मितवि………

गि० ……………न य सक छमितवे [११]　या च पि अटवियो
का० ……………………………[११]　………………
शा० देवनंप्रियस यं शको क्षमनये [११]　य पि च अटवि
मा० ……………………………[११]　…पि च अटवि

गि० देवानंपियस पिजिते　पाति……………………………[१२]　…………चते तेसं देवानंपियस……………
का० ……………………………………………………[१२]　………………………………
शा० देवनंप्रियस विजिते　भोति त पि अनुनेति　अनुनिजपेति……[१२]　अनुतपे पि च प्रभवे देवनंप्रियस वुचति तेष किति
मा० देवनप्रियस विजितसि होति न पि अनुनयति अनुनिझपयति　[१२]　अनुतपे पि च प्रभवे देवनप्रियस वुचति तेष कि…

गि० ……………………………………………　……………सव-भूतानां अछति च सयमं च समचेरं च मादव च
का० ……………………………नेषु [१३]　इछ……………षव-भु………………षयम　षमचलियं मदव ति
शा० अवत्रपेयु न च　हंञेयसु　　[१३]　इछति हि देवनंप्रियो सव्र-भुतन अक्षति　संयमं　समचरियं रभसिये
मा० ……………………………[१३]……छ……वनप्रिय……………………………………………

गि० [१९]　……………………………………………………………………लघो…नंप्रियस इध
का० [१९]　इयं चु मु……………………देवानंपियेषा ये धंम-विजये [१३]　पे च पुना लधे देवानंपि……　च
शा० [१९]　अयि च मुख-मुत विजये देवनंप्रियस यो ध्रम-विजयो [२०]　सो च पुन　लधो देवनंप्रियस इह च
मा० [१९]　……　मुख-मुते विजये देवनप्रियस ये ध्रम-विजये [२०]　से च पुन　लधे देवनप्रियस हिद च

गि० सवेसु च……………………………………………………योन-राज　परं　च　तेन
का० षवेषु च अंतेषु अ षषु पि योजन-षतेषु अत अतियोगे नाम योन-ला… पलं चा तेना अंतियोगेना
शा० सवेषु च अंतेषु अ षषु पि योजन-शतेषु यत्र अंतियोको नम योन-रज　परं　च　तेन अतियोकेन
मा० सब्रेषु च अंतेषु अ षषु पि योजन-शतेषु………तियोगे　नम योन-रज……………………

गि० चत्पारो　राजानो　तुरमायो च अंतेकिन　च मगा च　……………………………
का० चतालि ४ लजाने　तुलमये नाम अंतेकिने नाम मका नाम अलिकषुदले नाम निचं चोड-पंडिया अवं
शा० चतुरे ४ रजनि　तुरमये नम अंतिकिनि नम मक नम अलिकसुदरो नम निच चोड-पंड　अव
मा० ……………………………अंते……नम मक नम अलिकसुदरे नम निच चोड-पंडिय अ

गि० …………………[१३]　………　इध राज-विसयम्हि　योनकंबो………………
का० तंबपंनिया हेवमेवा [१३]　हेवमेवा　हिदा लाज-विशवषि　योनकंबोजेषु नाभक-नाभपंतिषु भोज-पितिनिक्येषु
शा० तंबपंणिय　　[१३]　एवमेव　हिद रज-विषयस्पि　योनकंबोयेषु नभक-नभितिन　भोज-पितिनिकेषु
मा० तंबपंणिय　　[१३]　एवमेव　हिद रज-विषवसि　योनकंबोजेषु नभक-नभपंतिषु　भोज-पितिनिकेषु

गि० …ध्रं-पारिंदेसु　सवत देवानंपियस धंमानुसस्टिं　अनुवतरे [१४]　यत पि दूति………………………
का० अध-पालदेषु　षवता देवानंपियषा धंमानुषथि　अनुवतंति [१४]　यत पि दुता देवानंपियसा　नो यंति ते पि
शा० अंध्र-पलिदेषु　सवत्र देवनंप्रियस ध्रमनुशस्ति　अनुवटंति [१४]　यत्र पि　देवनंप्रियस दुत न व्रचंति ते पि
मा० अध-प……………………………………………[१४]　यत्र पि दुन देवनप्रियस　न यंति ते पि

गि० ………………… ………… ……नं धमानुसस्टि च धमं अनुविधियरे……… ……………………
का० सुतु देवानंपियेनं धंम-वुतं विधनं धंमानुसथि धंमं अनुविधियं अनुविधियिसंअ चा [२२] ये से
शा० श्रुतु देवनंप्रियस ध्रम-वुटं विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रंमं अनुविधियंति अनुविधियिशंति च [२२] यो स
मा० श्रुतु देवनप्रियस ध्रम-वुत विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रंमं अनुविधियंति अनुविधियिशंति च [२२] ये से

गि० ……………………………विजयो सवथा पुन विजयो पीति-रसो सा [१५] लधा सा पीती होति धंम-वोजयम्हि [१६]
का० लधे एतकेना होति सवता. विजये पिति-लसे से [१५] गधा सा होति पिति पिति धंम-विजयषि [१६]
शा० लधे एतकेन भोति सवत्र विजयो सवत्र पुन विजयो प्रिति-रसो सो [१५] लध भोति प्रिति ध्रम-विजयस्पि [१६]
मा० लधे एतकेन होति सवत्र विजये…… …… …… [१५] …… ……………

गि० ……………………[१७] …… …………प्रिया [१८] एताय अथाय अयं धंम-
का० लहुका वु खो सा पिति [१७] पालंतिकयमेवे मह-फला मंनंति देवेनंपिये [१८] एताये चा अठाये इयं धंम-
शा० लहुक तु खो स प्रिति [१७] परत्रिकमेव मह-फल मेञति देवनंप्रिया [१८] एतये च अठये अयि ध्रम-
मा० …………[१७] परत्रिकमेव मह-फल मणति देवनप्रिये [१८] एतये च अथये इयं ध्रंम-

गि० ल …………………………वं विजयं मा विजेतव्यं मंञा सरसके एव विजये छाति च……
का० लिपि लिखिता किति पुता पपोता मे असु नवं विजय म विजयनविय मनिषु षयकषि नो विजयषि खंति चा लहु-
शा० दिपि निपिस्त किति पुत्र पपोत्र मे असु नवं विजयं म विजेतविअ मञिषु स्पकस्पि यो विजये क्षंति च लहु-
मा० दिपि लिखित किति पुत्र प्रपोत्र मे असु नवं वि ……तविय मञिषु सय ……………

गि० …………………… …… [१९] किको च पारलोकिका ……
का० दंडता चा लोचेतु तमेव चा विजयं मनतु ये धंम-विजये [१९] षे हिदलोकिकय पललोकिये [२६] षवा
शा० दंडन च रोचेतु तं च यो विज मञतु यो ध्रम-विजयो [१९] सो हिदलोकिको परलोकिको [२६] सव-
मा० ……………… [१०] हिदलोके परलोकिकं [२६] सव

गि० ……………………[२०] इलोकिका च पारलोकिका च [२१]
का० च क निलति होतु उयाम-लति [२०] षा हि हिदलोकिक पललोकिकया [२१]
शा० चति-रति……… भोतु य ध्रम-रति [२०] स हि हिदलोकिक परलोकिक [२१]
मा० च क निरति होतु य ध्रम-रति [२०] स हि इअलोकिक परलोकिक [२१]

चतुर्दश अभिलेख

गि० अयं धंम-लिपी देवानंप्रियेन प्रियदसिना राञा लेखापिता अस्ति एव संखितेन अस्ति मझमेन अस्ति विस्ततन [१]
का० इयं धम-लिपि देवानंपियेना पियदसिना लजिना लिखापिता अथि येवा सुखितेना अथि मझिमेना अथि वियटेना [१]
शा० अयि ध्रम-दिपि देवनंप्रियेन प्रिशिन रञ निपेसपित अस्ति वो संक्षितेन अस्ति यो············ विस्तृटेन [१]
मा० इयं ध्रम-दिपि देवनप्रियेन प्रिय······ जिन लिखपित ································ [१]
धौ० इयं धंम-लिपी देवानंपियेन पियदसिना लाजिना लिखा································ अथि मझिमेन ···· [१]
जौ० ··· मझिमेन अथि वियटेन [१]

गि० न च सर्वं सर्वत घटितं [२] महालके हि विजितं बहु च लिखितं लिखापयिसं चेव [३] अस्ति च
का० नो हि सवता सवे घटिते [२] महालके हि विजिते बहु च लिखिते लेखापेशामि चेव [३] निक्यं अथि चा
शा० न हि सवत्र सवत्रे गटिते [२] महलके हि विजिते बहु च लिखिते लिखपेशमि चेव [३] अस्ति चु
मा० ································· [२] ······························· लिखिते लिखपेशमि चेव [३] नि ·· अस्ति चु
धौ० ·· हि सवे सवत घटिते [२] महंने हि विजये बहुके च लिखिते लिखियिस ······ [३] अथि······
जौ० नो हि सवे सवत घटिते [२] महंते हि विजये ···················· ·· ··

गि० एत कं पुन पुन वुतं तस तस अथस माधूरताय किंति जनो तथा पटिपजेथ [४] तत्र
का० हेता पुन पुना लपिते तष तषा अथषा मधुलियाये येन जने तथा पटिपजेया [४] ये षाया अत
शा० अत्र पुन पुन लपितं तस तस अठस मधुरियये येन जन तथ पटिपजेयति [४] सो सिय व अत्र
मा० अत्र पुन पुन लपिते तस तस अथस मधुरियये येन जने तथ पटिपजेयति [४] से सिय अत्र
धौ० ·········· ······वुते तस······························याये किंति च जने तथा पटिपजेया ति [४] ए पि चु हेत
जौ० ················ ······················ स माधुलियाये किंति च जने तथा पटिपजेया ति [४] ए पि चु हेत

गि० एकदा असमातं लिखितं अस देसं व सछाय कारणं व अलोचेत्पा लिपिकरापरधेन व [५]
का० किछि असमति लिखिते दिषा वा षंखेये कालनं वा अलोचयितु लिपिकलपलाधेन वा [५]
शा० किचे असमतं लिखितं देशं व संखय करण व अलोचेति दिपिकरस व अपरधेन [५]
मा० किछि·····ति लिखित············व संखय···[५]
धौ० ·····असमति लिखिते···स···सं·····लोचयितु·······························कला·····ति········· [५]
जौ० ··· [५]

प्रथम पृथक् शिला अभिलेख

धौ० देवानंपियस वचनेन तोसलियं महामाता नगल - वियोहालका ...... वतविय [१] अं किछि दखामि
जौ० देवानंपिये हेवं आहा [१] समापायं महामाता नगल - वियोहालक हेवं वतविया [२] अं किछि दखामि

धौ० हकं तं इछामि किंति कंमन पटिपादयेहं दुवालते च आलभेहं [२] एस च मे
जौ० हकं तं इछामि किंति कं कमन पटिपातयेहं दुवालते च आलभेहं [३] एस च मे

धौ० मोख्य-मत दुवाल एतसि अठसि अं तुफेसु अनुसथि [३] तुफे हि बहूसु पान - सहसेसु आयत पनयं गछेम सु मुनिसानं [४]
जौ० मोखिय-मत दुवालं अं तुफेसु अनुसथि [४] फे हि बहूसु पान - सहसेसु आयत पनयं गछेम सु मुनिसानं [५]

धौ० सवे मुनिसे पजा ममा [५] अथा पजाये इछामि हकं किंति सवेन हित-सुखेन हिद-लोकिक पाल-लोकिकेन युजेवु
जौ० सव - मुना मे पजा [६] अथ पजाये इछामि किंति मे सवेन हित-सुखेन युजेयू ति हिद-लोकिक पाललोकिकेन

धौ० ति तथा ...... मुनिसेसु पि इछामि हकं [६] नो च पापुनाथ आव-गमुके इयं अठे [७] केछ व एक
जौ० हे मेव मे इछ सव - मुनिसेसु [७] ना चु तुफे एतं पापुनाथ आव-गमुके इयं अठे [८] केचा एक

धौ० पुलिसे ... नाति एतं से पि देसं नो सवं [८] देखत हि तुफे एतं सुविहिता पि [१०] नितियं एक-पुलिसे पि अथि ये
जौ० मुनिसे पापुनाति से पि देसं नो सवं [९] दखथ हि तुफे पि सुविता पि [११] बहुक अठि ये एति एक-मुनिसे

धौ० बंधनं वा पलिकिलेसं वा पापुनाति [११] तत होति अकस्मा तेन बधनंतिक अंने च ... हु जने दवियें
जौ० बंधनं पलिकिलेसं पि पापुनाति [१२] तत होति अकस्मा ति तेन बधनंतिक अन्ये च वगे बहुके

धौ० दुखीयति [१२] तत इछितविये तुफेहि किंति मझं पटिपादयेमा ति [१३] इमेहि चु जातेहि नो संपटिपजति इसाय आसुलोपेन
जौ० वेदयति [१३] तत तुफेहि इछितये किंति मझं पटिपातयेम [१४] इमेहि जातेहि नो पटिपजति इसाय आसुलोपेन

धौ० निठूलियेन तूलनाय अनावूतिय आलसियेन किलमथेन [१४] से इछितविये किंति एते जाता नो हुवेवु ममा ति [१५]
जौ० निठूलियेन तुलाय अनावुतिय आलस्येन किलमथेन [१५] हेवं इछितविये किंति मे एतानि जातानि नो हेयू ति [१६]

धौ० एतस च सवस मूले अनासुलोपे अतूलना च [१६] नितियं ए किलंते सिया न ते उगछ
जौ० सवस चु इयं मूले अनासुलोपे अतुलना च [१७] नितियं एयं किलंते सिय ... संचलितु उथाया

धौ० संचलितविये तु वटितविये एतविये वा [१७] हेवंमेव ए दखेय तुफाक तेन वतविये आनंने देखत
जौ० संचलितव्ये तु वटितविय पि एतविये पि नीतियं [१८] एवे दखेया आनंने णिझपेतविये

धौ० हेवं च हेवं च देवानंपियस्स अनुसथि [१८] स महाफले ए तस संपटिपाद महा-अपाये असंपटिपति [१८]
जौ० हेवं हेवं च देवानंपियस अनुसथि ति [१८] एतं संपटिपातयंतं महा-फले होति असंपटिपति महापाये होति [१९]

धौ० विपटिपादयमीने हि एतं नथि स्वगस आलधि नो लाजाधि [१९] दुआहले हि इमस कंमस मे कुते मनो अतिलेके [२०]
जौ० विपटिपातयंतं नो स्वगआलधि नो लाजाधि [२०] दुआहले एतस कंमस मे कुते मनो अतिलेके [२१]

धौ० संपटिपजंमीने चु एतं स्वगं आलाधयिसथ [२१] मम च आननियं एहथ [२२] इयं च लिपि तिसनखतेन
जौ० एतं संपटिपजमीने मम च आननेयं एसथ [२२] स्वगं च आलाधयिसथा [२३] इयं चा लिपी अनुतिसं

धौ० सोतविया [२३] अंतला पि च तिसेन खनसि खनसि एकेन पि सोतविय [२४] हेवं च कलंतं तुफे चघथ
जौ० सोतविया [२४] अला पि खनेन सोतविया एककेन पि [२५] .... मीने चघथ

धौ० संपटिपादयितवे [२५] एताये च अठाये इयं लिपि लिखित हिद एन नगल-वियोहालका सस्वतं समयं युजेवू ति ......
जौ० ....तवे [२६] एताये च अठाये इयं लिखिता लिपी एन महामाता नगलक सस्वतं समयं एतं युजेयु ति एन

धौ० ···नस अकस्मा पलिबोधे व अकस्मा पलिकिलेसे व नो सिया ति [२६] एताये च अठाये हकं···मते पंचसु पंचसु
जौ० मुनिसानं अ··············ने···········पलिकि················ ···[२७] ···············ये·············पंचसु पंचसु

धौ० वसेसु निखामयिसामि ए अखखसे अचंड सखिनालंभे होसति एतं अठं जानितु···तथा कलंति
जौ० वसेसु अनुसयानं निखामयिसामि महामातं अचंडं अफलुसं त························

धौ० अथ मम अनुसथी ति [२७] उजेनिते पि चु कुमाले एताये व अठाये निखामयिस···हेदिसमेव वगं नो च अतिकामयिसति
जौ० ···················· [२८]···········पि कुमलि व··त······ ·············मयि· ··································

धौ० तिंनि वसानि [२८] हेमेव तखसिलाते पि [२९] अदा अ··· ते महामाता निखमिसंति अनुसयानं तदा अहापयितु अतने
जौ० ·············[२९] ·············हाते ···[३०] ········· वखनिक अव अनुसयानं निखमिसंति अतने

धौ० कंमं एतं पि जानिसंति तं पि तथा कलंति अथ लाजिने अनुसथी ति [३०]
जौ० कंमं···यितु······ ··············तं पि तथा कलंति अथा····················[३१]

द्वितीय पृथक् शिला अभिलेख

धौ० देवानंपियस वचनेन तोसलियं कुमाले महामाता च वतविय [१] अं किछि दखामि हकं तं इ⋯⋯
जौ० देवानंपिये हेवं आह[१] समापायं महमता लाजा-वचनिक वतविया [२] अं किछि दखामि हकं तं इछामि

धौ० ⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯दुवालते च आलभेहं [२] एस च मे मोख्य-मत दुवाला एतसि अठसि अं तुफेसु⋯⋯⋯
जौ० हकं किंति कं कमन पटिपातयेहं दुवालते च आलभेहं [३] एस च मे मोखिय-मत दुवाल एतस अथस अं तुफेसु अनुसथि

धौ० ⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯मम[४] अथ पजाये इछामि हकं किंति सवेन हित-सुखेन हिदलोकिक-पाललोकिकाये युजेवू ति
जौ० [४] सव मुनिसा मे पजा [५] अथ पजाये इछामि किंति मे सवेणा हित-सुखेन युजेयू ति हिदलोगिक पाललोकिकेण⋯

धौ० हेवं⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯⋯[५] सिया अंतानं अविजितानं कि-छंदे सु लाजा अफेसु⋯[६] ⋯⋯⋯मम इछ मम अंतेसु
जौ० हेवंमेव मे इछ सव-मुनिसेसु [६] सिया अंतानं अविजितानं किं-छांदे सु लाजा अफेसू ति [७] एताका वा मे इछ अंतेसु

धौ० ⋯पापुनेवु ते इति देवानंपिय⋯⋯⋯⋯अनुविगिन ममाये हुवेयू ति अस्वसेवु च सुखंमेव लहेवु ममते
जौ० पापुनेयु लाजा हेवं इछति अनुविगिन हुवेयू ममियाये अस्वसेयु च मे सुखंमेव च लहेयू ममते

धौ० नो दुखं हेवं⋯उनेवू इति खमिसति ने देवानंपिये अफाका ति ए चकिये खमितवे मम निमितं च
जौ० नो खं हेवं च पापनेयु खमिसति ने लाजा ए सकिये खमितवे ममं निमितं

धौ० च धंमं चलेवू हिदलोक परलोकं च आलाधयेवू [७] एतसि अठसि हकं अनुसासामि तुफे
जौ० च धंमं चलेयू ति हिदलोगं च पललोगं च आलाधयेयू [८] एताये च अठाये हकं तुफेनि अनुससामि

धौ० अनने एतकेन हकं अनुसासितु छंदं च वेदितु आ हि धिति पटिञा च ममा अजला [८] से हेवं कटु
जौ० अनने एतकेन हकं तुफेनि अनुसासितु छंदं च वेदितु आ मम धिति पटिंना च अचल [९] स हेवं कटु

धौ० कंमे चलितविये अस्वास⋯⋯इ च तानि एन पापुनेवू इति अथ पिता तथ देवानंपिये अफाक अथा च
जौ० कंमे चलितविये आस्वासनिया च ते एन ते पापुनेयु अथा पित हेवं ने लाजा ति अथ

धौ० अतानं हेवं देवानंपिये अनुकंपति अफे अथा च पजा
जौ० अतानं अनुकंपति हेवं अफनि अनुकंपति अथा पजा

धौ० हेवं मये देवानंपियस [९] से हकं अनुसासितु छंदं च वेदितु तुफाक देसावुतिके
जौ० हेवं मये लाजिने [१०] तुफेनि हकं अनुसासित छंदं च वेदित आ मम धिति पटिंना चा अचल सकल-देसा-आयुतिके

धौ० होसामि एताये अठाये [१०] पटिबला हि तुफे अस्वासनाये हित-सुखाये च तेस हिदलोकिक-पाललोकिकाये [११]
जौ० होसामि एतसि अथसि [११] अलं हि तुफे अस्वासनाये हित-सुखाये च तेसं हिदलोगिक-पाललोकिकाये [१२]

धौ० हेवं च कलंतं तुफे स्वगं अलाधयिसथ मम च आननियं एहथ [१२] एताये च अठाये इयं लिपि लिखिता हिद एन
जौ० हेवं च कलंतं स्वगं च आलाधयिसथ मम च आननेयं एसथ [१३] एताये च अथाये इयं लिपि लिखित हिद एन

धौ० महामाता स्वसतं समं युजिसंति अस्वासनाये धंम-चलनाये च तेस अंतानं [१३] इयं च लिपि अनुचातुंमासं
जौ० महामाता सास्वतं समं युजेयू अस्वासनाये च धंम-चलनाये च अंतानं [१४] इयं च लिपी अनुचातुंमासं

धौ० तिसेन नखतेन सोतविया [१४] कामं चु खणसि खनसि अंतला पि तिसेन एकेन पि
जौ० सोतविया तिसेन [१५] अंतला पि च सोतविया खने संतं एकेन पि

धौ० सोतविया [१५] हेवं कलंतं तुफे चघथ संपटिपादयितवे [१६]
जौ० सोतविया [१६] हेवं च कलंतं चघथ संपटिपातयितवे [१७]

लघु शिला अभिलेख

संकेत सारिणी

रू० = रूपनाथ	मा० = मास्की	ज० = जटिंग रामेश्वर	ए० = एर्रगुडि	रा० = राजुलमंडगिरि
स० = सहसराम	ब्र० = ब्रह्मगिरि	गु० = गुजर्रा	गो० = गोविमठ	
बै० = बैराट	सि० = सिद्धपुर	अह० = अहरौरा	पा० = पालकिगुण्डि	सा० = सारनाथ

ब्र०	सुवंणगिरीते	अयपुतस	महामातानं	च	वचनेन	इसिलसि	महामाता	आरोगियं	वतविया	हेवं	च	वतविया	[१]
सि०	सुवंणगिरीते	अयपुतस	महामातानं	च	वचनेन	इसिलसि	महामाता	आरोगियं				वतविया	[१]

रू०	देवानंपिये	हेवं	आह	[१]	सातिरेकानि	अढतियानि	व		य	सुमि	प्रकास
स०	देवानांपिये	हेवं	आ···		······	··[ ]यानि	सवछलानि ।	[१]	अं	उपासके	
बै०	देवानांपिये		आहा	[१]	साति····	······	वसानि		य	हकं	
मा०	देवानंपियस	असोकस	···		·····	अढति··नि	वषानि		अं	सुमि	
ब्र०	देवाणंपिये	आणपयति		[२]	अधिकानि	अढातियानि	वसानि		य	हकं	
सि०	देवानंपिये	हेवं	आह	[२]	अधिकानि	अढातियानि	वसानि		य	हकं	
ज०	[२] देवान···		···		·····	·······	····	[२]	य	हकं	
गु०	देवानंपियस	असोकराजस		[१]		अढतियानि	संवछरानि		·	उपासके	
अह०					··धिका··						
ए०	देवानंपिये	हेवं	आह	[१]	साधिकानि	······	·····		यं	हकं	
गो०	देवानंपिये	हेवं	आह	[१]	सातिरेकाणि	अढतियाणि	वसाणि		यं	सुमि	
पा०											
रा०	देवानंपिये	हेवा	ह	[१]	अधिकानि च अ···	···			···		

रू०	सके	[२]	नो	चु		यादि		पकते	[३]					सातिलेके	चु	
स०	सुमि ।	[२]	न	चु		याढं		पलकंते	[३]					सवछले		
बै०	उपासके	[२]	नो	चु		बाढं		····		···	···	··		····	···	
मा०	बुध-शके	[२]												···तिरे··		
ब्र०	···सके	[३]	नो	तु	खो	बाढं		प्रकंते		हुसं	एकं	सवछरं	[४]	सातिरेके	तु	खो
सि०	उपासके	[३]	नो	तु	खो	बाढं		पकंते		हुसं	एकं	सवछ··	[४]	सातिरेके	तु	खो
ज०	····	[३]	··	···	खो	बाढ		···	[४]	···	···	····		···तिरेके	··	···
गु०	सि	[२]	···	··	··	···		···		···	·			साधिके		
अह०			म	च		बाढं		पलकंते		···						
ए०	उपासके	[२]	नो	तु	खो	एकं	संवछर	पकते		···	···	····		सातिरेकं		
गो०	उपासके	[२]	णो	चु	खो	बाढं		पकंते		हुस	···	संवछरे		सातिरेके		
पा०																
रा०	···के	[२]	नो	तु	खो	एकं	संवछर	पकंते		हुसं	···	····		सातिरेके	··	···

रू० छवछरे य सुमि हकं सघ उपेते बाढि च पकते [४] या इमाय
स० साधिके। अं ... ...ते [४] एतेन च
वै० ...... अं ममया सघे उपयाते बाढ च ... ...
मा० ... ..मि संघं उपगते उठ... .. ...मि उपगते [३] पुरे
ब्र० संवछरें यं मया संघे उपयीते बाढं च मे पकंते [५] इमिना चु
सि० संवछरे यं मया संघे उपयीते बाढं च मे पकंते [५] इमिना चु
ज० .... यं ..या ... .
गु० संवछरं य च मे संघे याते ती अहं बाढं च ... परकंतेती आहा। एतेना
अह० पलकंते। एतेन
ए० सवछरे यं मया संघे उपयि बाढ च मे पकते। इमिना च
गो० यं मे संघे उपेति बाढं च मे पकंते। इमायं
पा०
रा० .... पयाते बाढं च मे पकंते इमिना चु

रू० कालाय जंबुदिपसि अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसा कटा [५]
स० अंतलेन। जंबुदीपसि। अमिसं-देवा। मंत मुनिसा मिसं देव कटा। [५]
वै० ...... जंबुदिपसि अमिसा न देवेहि .... मि... ... .
मा० जंबु...सि ये अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसिभूता
ब्र० कालेन अमिसा समाना मुनिसा जंबुदीपसि मिसा देवेहि
सि० कालेन अमिसा समाना मु... जंबुद.... मिसा देवेहि [६]
ज० ....
गु० अंतरेना जंबुदिपसि देवानंपियम्स अमिसं देवा संतो मुनिम्स मिसं देवा कटा
अह० अंतल मिसं देवा कटा
ए० कालेन अमिसा मुनिसा देवेहि ते दानि मिसीभूता
गो० वेलायं जंबुदिपसि अमिसा देवा समाना माणुसेहि दाणि मिसा कटा
पा० .... माणुसे· ...
रा० कालेन भूता

रू० पकमसि हि एस फले [६] नो च एसा महतता पापोतवे खुदकेन पि
स० पल... ... इयं फले [६] नो ... यं महतता व चकिये पावतवे। खुदकेन पि
वै० ...कमस एस ..ले [६] नो हि एसे महतनेव चकिये ....
मा० [४] इय अठे खुदकेन पि
ब्र० पकमस हि इयं फले [७] नो हियं सक्ये महात्पेनेव पापोतवे कामं तु खो खुदकेन पि
सि० पकमस हि इयं फले [७] नो हि इय सके म...नेव पापोतवे कामं तु खो खुदकेन पि
ज० .... हि इयं ... ...
गु० परकमस इयं फले। नो च इयं महतेनातिव चकिये पापोतवे। खुद्दाकेण पि
अह० पलकमम्स न पि सक्ये पापोतवे। खुदकेन पि
ए० पकमस हि एस फले न महत्पनेव सकिये खुदकेन पि
गो० पकमम्स एस फले। णो हि इयं महतेणेव चकिये पापोतवे खुद्दकेन पि
पा० णो हि इयं ....व ... .
रा० नो हि यं महत्पेनेव सकिये। खुदाके.. ...

रू० पकममिनेना सकिये विपुले पा स्वगे आरोधवे [७] एतिय अठाय च
स० पलकममीनेना विपुले पि सुअग ..किये· आला...वे। [७] से एताये अठाये इयं
वै० ...कममिनेना विपुले पि स्वगे चक्ये आलाधेतवे [७] ... ...
मा० धम-युतेन सके अधिगतवे [५] न हेवं दखितविये उडालके व इम
ब्र० पकमि...णेन विपुले स्वगे सक्ये आराधेतवे एतायठाय इयं
सि० प.........न विपुले स्वगे सके आराधेतवे [८] से .... य इयं
ज० ... .
गु० परकममीनेना चरमीनेना पानेसू संयतेना विपुले पी स्वगे चकिये आराधयितवे। से एताये अठाये इयं

अह० पलकममीनेना विपुले पि स्वग सक्ये आलाधेतवे। एताये अठाये इयं
ए० पकममीनेन सकिये विपुले आराधेतवे। एताय अठाय इयं
गो० पकममीणेन विपुले पि चकिये स्वगे आराधयितवे। एताये च अठाये इयं
पा० ···मीणेण विपुले पि चकिये स्वग आर······।
रा० ······ विपू·· ·· ··· ··· ······तवे। एताये च अठाय

रू० सावने कटे खुदका च उडाला च पकमतु ति अता पि च
स० सावाने। खुदका च उडाला वा पलकमतु अंता पि च
बै० ······ ··· ···का च उडाला वा पलकमतु नि अंता पि च
मा० अधिगछेया ति [६] खुदके च उडालके च सतविय हेवं वे कलंतं
ब्र० सावणे सावापिते ·· ··· महात्पा च इमं पकमेयु ति अंता च मे
सि० सावणे साविते यथा खुदका च महात्पा च इमं पकमेयु ति अता च ···
ज० ··· ··· ·· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···
गु० सावणे। खुदाके च उडारे वा धंमं चरंतू योगं युंजंतू। अंता पि च
अह० सावने। खुदका च उडाला च पलकमंतु। अता पि च
ए० सावने साविते। अथा खुदका महाधना इमं पराकमेतू। अंता च मे
गो० सावणे। खुडका च उडाग च पकमंतु ति अंता पि च
पा० ··· ··· च पकमंतु।
रा० सावने साविते। ··· · ··· ··· ··· ··· ·· ·· ··ता च

रू० जानंतु इय पकरा च किति चिरठितिके सिया [८] इय हि अठे वढि वढिसिति
स० जानंतु। चिलठितीके च पलाकमे होतु। [८] इयं च अठे वढिसति।
बै० जानंतु नि चिलठित··· ··· ·· ···· ·· · ··· ··· ······
मा० भद्के से अ ··· ·· निके च
ब्र० जानेयु चिरठितीके च इयं पक··· ·· इयं च अठे वढिसिति
सि० ·· ·· चिरठितीके च इयं पकमे होति [९] ··· ·· ·· वढिसिति
ज० ····· ······ ·· ·· ··· ··· ·· च ··· ··ढिस··
गु० जानंतू किंति च चिलथितिके धंम च ··· ··· ··· ··सिति
अह० जानंतू चिलठीतीके च पलकमे होतु। इयं च अठे वढिसति
ए० जानेयु चिरठितिका च इयं पकमे होतु। इयं अठे
गो० जाणंतु चिरठितिके च पकमे होतु। इयं अठे वढिसति
पा० चि···के · ··· ·· ··· · · ····
रा० जानेयु चिरठितिक च इयं पकमे होत। · · · · ··

रू० विपुल च वढिसिति अपलधियेना दियढिय वढिसत [९] इय च अठे पवतिनिसु
स० विपुलं पि च वढिसति दियाढियं अवलधियेना दियढियं वढिसति। [१०] इम च अठं पवतेसु
बै० ···लं पि वढिसति ······ ······ दियढियं वढिसति ·· ··· ·· ··· ··
मा० वढिसिति वा दियढियं हेवं ति
ब्र० विपुलं पि च वढिसिति अवरधिया दियढियं वढिसिति
सि० विपुलं पि च वढिसिति अ······ यढियं वढिसिति
ज० ···पुलं पि ··· ···· ······ यढियं ·····
गु० एतं वा धंमं चरं अति यो
अह० विपुलं पि च वढिसती। दियढियं अवलधिया वढिसती
ए० विपुल पि च वढिसिता अपरधिया दियढियं
गो० विपुले च वढिसति दियढियं पि च वढिसिती ति
पा० ··· च वढिसति दियढियं पि च ······
रा० वि··· ··· ·····

रू० लेखापेत वालत [१०] इध च अधि साला-ठभे सिला-
स० लिखापयाथा [११] य·· वा अथि हेता सिला-थंभा तत

रू० ठंभसि लाखापेतवय त [११] एतिना च वयजनेना यावतक
स० पि लिखापयथ ति
सा० [८] आवते

रू० तुपक अहाले सवर विवसेतवाय ति [१२]
सा० च तुफाकं आहाले सवत विवासयाथ तुफे एतेन वियंजनेन

रू० व्युठेना सावने कटे [१३]
स० इयं च सवने विवुथेन दुवे सपंना लाति-सता विवुथा ति
ब्र० इयं च सावणे सावापिते व्यूथेन
सि० इयं च सावणे ....
ज० इ... ... सावणे ....थेन
गु० इयं च सावन विवुथेन
अह० एस सावने विवुथेन दुवे संपना लाति सति
ए० इयं च सावने सावापिते व्युथेन
गो० स व्युथेन
पा०
रा० च सावनं सावापिते व्यूथेन

रू० २०० ५० ६ मत विवासा त [१४]
स० २०० ५० ६
ब्र० २०० ५० ६ [१२]
सि० २०० ५० ६ [१२]
ज० २०० ५० ६ [१२]
गु० २०० ५० ६
अह० २०० ५० ६ सं वं च बुधस सलीले आलोढे त्या च
ए० २०० ५० ६
गो० २०० ५० ६
पा०
रा० २०० ५० ६

स्तम्भ अभिलेख

संकेत सारिणी

टो० = देहली-टोपरा   नं० = लौरिया-नंदनगढ़   प्र० = प्रयाग-कोसम
अ० = लौरिया-अरराज   राम० = रामपुरवा   मे० = देहली-मेरठ

प्रथम अभिलेख

टो० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा [१] सडुवीसति-वस-अभिसितेन मे इयं
अ० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं
नं० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं
राम० देवानंपिये पियदसि लाज हेव आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं
प्र० देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं

टो० धंम-लिपि लिखापिता [२] हिदत-पालते दुसंपटिपादये अंनत अगाया धंम-कामताया अगाय
अ० धंम-लिपि लिखापित [२] हिदत-पालते दुसंपाटपादये अंनत अगाय धंम-कामताय अगाय
नं० धंम-लिपि लिखापित [२] हिदत-पालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंम-कामताय अगाय
राम० धंम-लिपि लिखापित [२] हिदत-पालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंम-कामताय अगाय
प्र० धंम-लिपि लिखापिता [२] हिदत-पालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंम-कामताय अगाय

टो० पलीखाया अगाय सुसूसाय अगेन भयेना अगेन उसाहेना [३] एस चु खो मम
अ० पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खो मम
नं० पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खो मम
राम० पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खो मम
प्र० पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन [३] एस चु खा मम

टो० अनुसथिया धंमापेखा धंम-कामता चा सुवे सुवे वढिता वढीसति चेवा [४] पुलिसा पि च मे
अ० अनुसथिय धंमापेख धंम-कामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव [४] पुलिसा पि मे
नं० अनुसथिय धंमापेख धंम-कामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव [४] पुलिसा पि मे
राम० अनुसथिय धंमापेख धंम-कामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव [४] पुलिसा पि मे
प्र० अनुसथिया धंमापेखा धंम-कामता च सुवे सुवे वढिता वढिसति चेवा [४] पुलिसा पि मे

टो० उकसा चा गेवया चा मझिमा चा अनुविधीयंती संपटिपादयंति चा अलं चपलं
अ० उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं
नं० उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं
राम० उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं
प्र० उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं

टो० समादपयितवे [५] हेमेवा अंत-महामाता पि [६] एस हि विधि या इयं धंमेन
मे० ....
अ० समादपयितवे [५] हेमेव अंत-महामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन
नं० समादपयितवे [५] हेमेव अंत-महामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन
राम० समादपयितवे [५] हेमेव अंत-महामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन
प्र० समादपयितवे [५] हेमेव अंत-महामाता पि [६] एसा हि विधि या इयं धंमेन

टो०	पालना	धंमेन	विधाने	धंमेन	सुखियना	धंमेन	गोती	ति		[७]
मे०	···नं	धंमेन	विधाने	धमे··	····	···	···	···		[७]
अ०	पालन	धंमेन	विधाने	धंमेन	सुखीयन	धंमेन	गोती	ति		[८]
नं०	पालन	धंमेन	विधाने	धंमेन	सुखीयन	धंमेन	गोती	ति		[७]
राम०	पालन	धंमेन	विधाने	धंमेन	सुखीयन	धंमेन	गोती	ति		[७]
प्र०	पालन	धंमेन	विधानं	धंमेन	सुखीयना	धंमेन	गुति	ति	च	[७]

द्वितीय अभिलेख

टो० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा [१] धंमे साधू कियं चु धंमे ति [२]
मे० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आ·· [१] धंमे साधु कियं ··· ··मे ति [२]
अ० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] धंमे साधु कियं चु धंमे ति [२]
नं० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] धंमे साधु किय चु धंमे ति [२]
राम० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] धंमे साधु कियं चु धंमे ति [२]
प्र० देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] धंमे साधु कियं चु धंमे ति [२]

टो० अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये [३] चखु-दाने पि मे
मे० अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये [३] चखु-दाना पि मे
अ० अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति [३] चखु-दाने पि मे
नं० अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति [३] चखु-दाने पि मे
राम० अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति [३] चखु-दाने पि मे
प्र० अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये [३] चखु-दाने पि मे

टो० बहुविधे दिंने [४] दुपद-चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ
मे० बहुविधे दिंने [४] दुपद-चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ
अ० बहुविधे दिंने [४] दुपद-चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ
नं० बहुविधे दिंने [४] दुपद-चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ
राम० बहुविधे दिंने [४] दुपद-चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ
प्र० बहुविधे दिंने [४] दुपद-चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ

टो० पान-दखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे
मे० पान-दखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे
अ० पान-दखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे
नं० पान-दखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे
राम० पान-दखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे
प्र० पान-दखिनाये [५] अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि [६] एताये मे

टो० अठाये इयं धंम-लिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिलं-थितिका च होतू ती
मे० अठाये इयं धंम-लिपि लिखापिता ··· अनुपटिपजंतू चिलं-थितिका च होतू
अ० अठाये इयं धंम-लिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलं-थितीका च होतू
नं० अठाये इयं धंम-लिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलं-थितीका च होतू
राम० अठाये इयं धंम-लिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलं-थितिका च होतू
प्र० अठाये इयं धंम-लिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिल-ठितीका च होतू

टो० ति [७] ये च हेवं संपटिपजीसति से सुकटं कछती ति [८]
मे० ति [७] ये च ··· ·····सति से सुकटं कछती ति [८]
अ० ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछति ति [८]
नं० ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछति [८]
राम० ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछती ति [८]
प्र० ति [७] ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछती ति [८]

तृतीय अभिलेख

टो० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा [१] कयानंमेव देखति इयं मे कयाने कटे ति [२]
मे० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा [१] कयानंमेव दे··· ··· ··· कयाने कटे ती [२]
अ० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति [२]
नं० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति [२]
राम० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति [२]
प्र० देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] कयानमेव देखति इयं मे कयाने कटे ति [२]

टो० नो मिन पापं देखति इयं मे पापे कटे ति इयं वा आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे
मे० नो मिना पापं देखति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे
अ० नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे
नं० नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे
राम० नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति [३] दुपटिवेखे
प्र० नो मिन पापकं देखनि इयं मे पापके कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति ··· ······

टो० चु खो एसा [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनव-गामीनि नाम
मे० चु खो एसा [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनव-गामीनि नाम
अ० चु खो एस [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनव-गामीनि नामा ति
नं० चु खो एस [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनव-गामीनि नामा ति
राम० चु खो एस [४] हेवं चु खो एस देखिये [५] इमानि आसिनव-गामीनि नामा ति
प्र० ·· ···

टो० अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्या कालेन व हकं मा पलिभसयिसं [६]
मे० अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्या कालेन व हकं मा पलिभसयिसं [६]
अ० अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्य कालेन व हकं मा पलिभसयिसं ति [६]
नं० अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्य कालेन व हकं मा पलिभसयिसं ति [६]
राम० अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्य कालेन व हकं मा पलिभसयिसं [६]

टो० एस बाढ देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये [८]
मे० ··· बाढं देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयं मे पालतिकाये [८]
अ० एस बाढं देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति [८]
नं० एस बाढं देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति [८]
राम० एस बाढं देखिये [७] इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति [८]

चतुर्थ अभिलेख

टो० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा [१] सडुवीसति-वस-अभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापिता [२]
अ० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापित [२]
नं० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इमं धंम-लिपि लिखापित [२]
राम० देवानंपिये पियदसी लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापित [२]

टो० लजूका मे बहूसु पान-सत सहसेसु जनसि आयता [३] तेसं ये अभिहाले वा दंडे वा अत-पतिये मे
अ० लजूका मे बहूसु पान-सत-सहसेसु जनसि आयत [३] तेसं ये अभिहाले व दंडे व अत-पतिये मे
नं० लजूका मे बहूसु पान-सत-सहसेसु जनसि आयत [३] तेसं ये अभिहाले व दंडे व अत-पतिये मे
राम० लजूका मे बहूसु पान-सत-सहसेसु जनसि आयत [३] तेसं ये अभिहले व दंडे व अत-पतिये मे

टो० कटे किंति लजूका अस्वथ अभीता कंमानि पवतयेवू जनस जानपदसा हित-सुखं उपदहेवू अनुगहिनेवु
अ० कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हित-सुखं उपदहेवु अनुगहिनेवु
नं० कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हित-सुखं उपदहेवू अनुगहिनेवु
राम० कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हित-सुखं उपदहेवु अनुगहिनेवु

टो० चा [४] सुखीयन-दुखीयनं जानिसंति धंम-युतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च
अ० च [४] सुखीयन-दुखीयनं जानिसंति धंम-युतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च
नं० च [४] सुखीयन-दुखीयनं जानिसंति धंम-युतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च
राम० च [४] सुखीयन-दुखीयनं जानिसंति धंम-युतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च

टो० पालतं च आलाधयेवू ति [५] लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे
अ० पालतं च आलाधयेवु [५] लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे
नं० पालतं च आलाधयेवू ति [५] लजूका पि लघति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे
राम० पालतं च आलाधयेवू ति [५] लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं [६] पुलिसानि पि मे

टो० छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूका चघंति आलाधयितवे [८]
मे० .. ..क चघंति आलाधयितवे [८]
अ० छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चघंति आलाधयितवे [८]
नं० छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चघंति आलाधयितवे [८]
राम० छंदंनानि पटिचलिसंति [७] ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चघंति आलाधयितवे [८]

टो० अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं
मे० ... .तु अस्वथे होति विय .. ..
अ० अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं
नं० अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं
राम० अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं

टो० पलिहटवे हेवं ममा लजूका कटा जानपदस हित-सुखाये [९] येन एते अभीता अस्वथ संतं
मे० लिहटवे हेवं ममा लजूक .. .. ये [९] येन एते अभीता अस्वथ सं..
अ० पालहटवे ति हेवं मम लजूक कट जानपदस हित-सुखाये [९] येन एते अभीत अस्वथा संतं
नं० पलिहटवे ति हेवं मम लजूक कट जानपदस हित-सुखाये [९] येन एते अभीत अस्वथा संतं
राम० पलिहटवे ति हेवं मम लजूक कट जानपदस हित-सुखाये [९] येन एते अभीत अस्वथा संतं

टो० अविमना कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे वा अत-पतिये कटे [१०] इछितविये हि
मे० ... ... पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं .... अत-पतिये कटे [१०] इछितवि.. ...
अ० अविमन कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अत-पतिये कटे [१०] इछितविये हि
नं० अविमन कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अत-पतिये कटे [१०] इछितविये हि
राम० अविमन कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अत-पतिये कटे [१०] इछितविये हि
प्र० .. ..कानं अभिहाले वा दंडे वा अत-पतिये कटे [१०] इछितविये हि

टो० एसा किंति वियोहाल-समता च सिय दंड-समता चा [११] अव इते पि च मे आवुति
मे० ··· ···हाल-समता च सिया दंड-सम·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· मे आवुति
अ० एस किंति वियोहाल-समता च सिय दंड-समता च [११] आवा इते पि च मे आवुति
नं० एस किंति वियोहाल-समता च सिय दंड-समता च [११] आवा इते पि च मे आवुति
राम० एस किंति वियोहाल-समता च सिय दंड-समता च [११] आवा इते पि च मे आवुति
प्र० एस किंति ···ल-समता च सिया दंड-समता च [११] आव इते पि च मे आवुति

टो० बंधन-बधानं मुनिसानं तीलित-दंडानं पत-वधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि
मे० बंधन-बधानं मुनिसानं ······· ··बधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] ···· ···
अ० बंधन-बधानं मुनिसानं तीलित-दंडानं पत-वधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि
नं० बंधन-बधानं मुनिसानं तीलित-दंडानं पत-वधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि
राम० बंधन-बधानं मुनिसानं तीलित-दंडानं पत-वधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने [१२] नातिका व कानि
प्र० बंधन-बधानं मुनिसानं तीलीत-दंडानं पत-वधानं तिंनि दिवसानि योते दिंने [१२] ···का व कानि

टो० निझपयिसंति जीवितायें तानं नासंतं वा निझपयिता दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३] इछा हि मे
मे० ·· पयिसंति जीवितायें तानं नासंतं वा नि···· ··· ··ति पालतिकं उपवासं वा क···· [१३] ··· ·· ··
अ० निझपयिसंति जीवितायें तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३] इछा हि मे
नं० निझपयिसंति जीवितायें तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३] इछा हि मे
राम० निझपयिसंति जीवितायें तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति [१३] इछा हि मे
प्र० निझपयिसंति जीवितायें तानं नासंतं वा निझपयिता दानं दाहंति पालतिकं उपवासं वा कछंति [१३] ··· हि मे

टो० हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४]
मे० हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधये·· ·· ···
अ० हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४]
नं० हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४]
राम० हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति [१४]
प्र० हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवु [१४]

टो० जनस च वढति विविधे धंम-चलने संयमे दान-सविभागे ति [१५]
मे० ··· ·· वढति विविधे धंम-चलने संयमे दान···· ··· [१५]
अ० जनस च वढति विविधे धंम-चलने सयमे दान-संविभागे ति [१५]
नं० जनस च वढति विविधे धंम-चलने सयमे दान-सविभागे ति [१५]
राम० जनस च वढति विविधे धंम-चलने सयमे दान-सविभागे ति [१५]
प्र० जनस च वढति विविधे धंम-चलने सयमे दान-सविभागे [१५]

पंचम अभिलेख

टो० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा [१] सडुवीसति-वस-अभिसितेन मे इमानि जातानि अवधियानि
अ० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितस मे इमानि पि जातानि अवध्यानि
नं० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितस मे इमानि पि जातानि अवध्यानि
राम० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इमानि पि जातानि अवध्यानि
प्र० ·····पिये पियदसी लाजा हेवं आहा [१] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इमानि जातानि अवधियानि

टो० कटानि सेयथा सुके सालिका अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूका अंबा-कपीलिका दळी
अ० कटानि सेयथ सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबा-कपिलिक दुळि
नं० कटानि सेयथा सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबा-कपिलिक दुळि
राम० कटानि सेयथ सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबा-कपिलिक दुळि
प्र० कटानि सेयथ सुके सालिका अलुने चकवाके ··· नंदीमुखे गेलाटे जतूका अंबा-किपिलिका दुडि

टो० अनठिक-मछे वेदवेयके गंगा-पुपुटके संकुज-मछे कफट-सयके पंन-ससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते
अ० अनठिक-मछे वेदवेयके गंगा-पुपुटके संकुज-मछे कफट-सेयके पंन-ससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते
नं० अनठिक-मछे वेदवेयके गंगा-पुपुटके संकुज-मछे कफट-सेयके पंन-ससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते
राम० अनठिक-मछे वेदवेयके गंगा-पुपुटके संकुज-मछे कफट-सेयके पंन-ससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते
प्र० अनठिक-मछे वेदवेयके गंगा-पुपुटके संकुज-मछे कफट-··के पंन-ससे सिमले संड·· ···· ····

टो० सेत-कपोते गाम-कपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियती [२] ··· ··ि एळका चा
अ० सेत-कपोते गाम-कपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति नो च खादियति [२] अजका नानि एडका च
नं० सेत-कपोते गाम-कपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति [२] अजका नानि एडका च
राम० सेत-कपोते गाम-कपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति [२] अजका नानि एळका च
प्र० ··त-कपोते गाम-कपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो ·· ·· ·· ···· ··· ··· ना· · ··

टो० सूकली चा गभिनी व पायमीना व अवधिय पोतके पि च कानि आसंमासिके [३] वधि-कुकुटे नो
मे० ·· ··· पोतके पि च कानि ····के [३] वधि-कुकुटे नो
अ० सुकली च गभिनी व पायमीना व अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके [३] वधि-कुकुटे नो
नं० सूकली च गभिनी व पायमीना व अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके [३] वधि-कुकुटे नो
राम० सूकली च गभिनी व पायमीना व अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके [३] वधि-कुकुटे नो
प्र० ··· ·· ··· ·· पायमी·· ··

टो० कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापेतविये [५] दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो झापेतविये [६]
मे० कटविये [४] तुसे सजीवे ·· ··तविये [५] दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो झापेतविये [६]
अ० कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापयितविये [५] दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये [६]
नं० कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापयितविये [५] दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये [६]
राम० कटविये [४] तुसे सजीवे नो झापयितविये [५] दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये [६]
प्र० ···· ·· ·· सजीवे नो झाप···· ·· ·· ··· ··

टो० जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिसायं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं
मे० जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिसायं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं
अ० जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिस्यं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं
नं० जीवेन जीवे नो पुसित इये [७] तीसु चातुंमासीसु तिसियं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं
राम० जीवेन जीवे नो पुसितविये [७] तीसु चातुंमासीसु तिस्यं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं
प्र० ·· ·· ···· ·· ···· ·· ···नि चावुदसं

टो० पंनडसं पटिपदाये धुवाये चा अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि विकेतविये [८] एतानि येवा
मे० पंनडसं पटिपदा धुवाये च अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि विकेतविये [८] एतानि येव
अ० पंनळसं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये [८] एतानि येव

नं० पंनळसं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये [८] एतानि येव
राम० पंनडसं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये [८] एतानि येव
प्र० पंचद . . . .

टो० दिवसानि नाग-वनसि केवट-भोगसि यानि अंनानि पि जीव-निकायानि नो हंतवियानि [९] अठमी-पखाये चावुदसाये
मे० दिवसानि नाग-वनसि केवट-भोगसि यानि अंनानि पि जीव-निकायानि ना हंतवियानी [९] अठमि-पखाये चावुदसाये
अ० दिवसानि नाग-वनसि केवट-भोगसि यानि अंनानि पि जीव-निकायानि नो हंतवियानि [९] अठमि-पखाये चावुदसाये
नं० दिवसानि नाग-वनसि केवट-भोगसि यानि अंनानि पि जीव-निकायानि नो हंतवियानि [९] अठमि-पखाये चावुदसाये
राम० दिवसानि नाग-वनसि केवट-भोगसि यानि अंनानि पि जीव-निकायानि ना हंतवियानि [९] अठमि-पखाये चावुदसाये

टो० पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एडके सूकले ए वा पि अंने
मे० पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने ना नीलखितविये अजके एळके सूकले ए वा पि अंने
अ० पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने ना नीलखितविये अजके एळके सूकले ए वा पि अंने
नं० पंनळसाये तिसाये पुनाव[सु]ने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एळके सूकले ए वा पि अंने
राम० पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने ना निलखितविये अजके एळके सूकले ए वा पि अंने

टो० नीलखियति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासि-पखाये अस्वसा गोनसा
मे० नीलखियति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासि-पखाये अस्वसा गोनसा
अ० नीलखियति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासि-पखाये अस्वस गोनस
नं० नीलखियति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासि-पखाये अस्वस गोनस
राम० नीलखियति नो नीलखितविये [१०] तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासि-पखाये अस्वस गोनस
प्र० . . . .

टो० लखने नो कटविये [११] याव-सडुवीसति-वस-अभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधन-मोखानि कटानि [१२]
मे० लखने नो . . विये [११] याव-सडुवीसति-वस-अभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधन-मोखानि कटानि [१२]
अ० लखने नो कटविये [११] याव-सडुवीसति-वसाभिसितस मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधन-मोखानि कटानि [१२]
नं० लखने नो कटविये [११] याव-सडुवीसति-वसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधन-मोखानि कटानि [१२]
राम० लखने नो कटविये [११] याव-सडुवीसति-वसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधन-मोखानि कटानि [१२]
प्र० लखने नो कटविये [११] या . . . .

षष्ठ अभिलेख

टो० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा [१] दुवाडस-वस-अभिसितेन मे धंम-लिपि लिखापिता लोकसा
अ० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] दुवाडस-वसाभिसितेन मे धंम-लिपि लिखापित लोकस
नं० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] दुवाळस-वसाभिसितेन मे धंम-लिपि लिखापित लोकस
राम० देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह [१] दुवाडस-वसाभिसितेन मे धंम-लिपि लिखापित लोकस
प्र० ······पिये पियदसी ला · · · · · · · ·

टो० हित-सुखाये से तं अपहटा तं तं धंम-वढि पापोवा [२] हेवं लोकसा हित-सुखे ति पटिवेखामि अथ
अ० हित-सुखाये से तं अपहट तं तं धंम-वढि पापोव [२] हेवं लोकस हित-सुखे ति पटिवेखामि अथा
नं० हित-सुखाये से तं अपहट तं तं धंम-वढि पापोव [२] हेवं लोकस हित-सुखे ति पटिवेखामि अथा
राम० हित-सुखाये से तं अपहट तं तं धंम-वढि पापोव [२] हेवं लोकस हित-सुखे ति पटिवेखामि अथ
प्र० · · · · तं · · · · · ढि पा· · · [२] हेवं लोकस हित-सुखे ति पाटिवेखामि अथ

टो० इयं नातिसु हेवं पतियासंनेसु हेवं अपकठेसु किमं कानि सुखं अवहामी ति तथ च विदहामि [३]
अ० इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किंमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि [३]
नं० इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किंमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि [३]
राम० इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि [३]
प्र० इयं · · · · वं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किमं कानि · · · · · · · · · विदहामि [३]

टो० हेमेवा सव-निकायेसु पटिवेखामि [४] सव-पासंडा पि मे पूजिता विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं अतना
मे० · · · · · · · · · · · · · · ·
अ० हेमेव सव-निकायेसु पटिवेखामि [४] सव-पासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं अतन
नं० हेमेव सव-निकायेसु पटिवेखामि [४] सव-पासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं अतन
राम० हेमेव सव-निकायेसु पटिवेखामि [४] सव-पासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं अतन
प्र० हेवंमेव सव··कायेसु पटिवेखामि [४] सव-पासंडा पि मे पूजिता विविधाय पूजाय [५] ए चु इयं अतना

टो० पचूपगमने से मे मोख्य-मते [६] सडुवीसति-वस-अभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापिता [७]
मे० · ूपगमने से मे मोख्य-मते [६] सडु · · · · ि सितेन मे इयं धंम-लिपि लि······ [७]
अ० पचूपगमने से मे मुख्य-मुते [६] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापित [७]
नं० पचूपगमने से मे मोख्य-मुते [६] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापित [७]
राम० पचूपगमने से मे मोख्य-मुते [६] सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापित [७]
प्र० पचुपगमने से मे मुख्य-मुते [६] · · · · · · · · · · ·लिपी लिखापिता ति [७]

अज्ञ गि. १.१०; ४. २, ५; का. १३. ३९; शा. ४. ७. ८; १३. ७; मान. ४. १३. १४; १३. ७; धौ. १. ४; ४. २. ३; जौ. १. ४; ४. २
अजका अ. ५.५
अजके टो. ५.१७
अज (ञ) क्ष मान. १२.८
[अ] जला धौ. पृथ. २.७
अजा का. ४. ९.१०
-अझरव गि. १२.९
अज्ञ गि. ९.५
अञ्च शा. ४. ९; ९.१९
अञत गि. १०.१
अञत्र गि. ६. १४, १०. ४, १३. ५; शा. ६. १६, १०. २१, २२; मान. ६. ३२, १३.६
अञथ शा. १२.४
अञनि शा. ४. ८; ८. १७; मान. ४. १३, ८.३४
[अ] ञमंञस गि. १२.७
अञमञस शा. १२.६
अञम्हि गि. ९.२
अञये शा. ३. ६; ९. १८; मान. ३. १०; ९.२
अञानि गि. ४. ४; ८.१
अञाय गि. ३.३
अञे गि. ४. ७; ५. ८; १२. ९; १३. ३; शा. १२. ९; मान. ४. १५; ५. २२, २५; १२.८
अटवि शा. १३. ७; मान. १३.८
अटविया गि. १३.६
अठ शा. १०.२१
अठं का. ६. १८; ९. २६; शा. ६. १४, १५; ९. २०; धौ. ५. २ पृथ. १. २२; जौ. ६. २, शा. ७
[अ] ठं शा ९.२०
अठ-कंम का. ६. १७; धौ. ६. १; जौ. ६.१
अठ-क्रमं शा. ६.१४
अठभागियं रुम्मि. ५
अठामपखाये अ. ५.१०
अठमापखाये टो. ५.१५
अठये शा. ४. १०; ५. १३; ६. १४, १५, १६; १२. ८; १३.११
अठय (ं) शा. १.२
[अठ] वष-अ [भिस]-ि त [स] शा. १३.१
[अठ] वषाभसित [स] मान. १३.१
अठ [व] षाभिषितषा का. १३.३५
अठस शा. ४. १०; १४. १३; धौ. ४. ७; ९.५
अठ-संतिरण शा. ६.१५
अठ सं[.] तिरणये शा. ६.१५
[अ] ठ संतिलना का. ६.२०
अठ-संतिल नाये का. ६.१९
अठ-संतीलना धौ. ६. ५; जौ. ६.५
अठ-संतीलनाय धौ. ६. ४; जौ. ६.४
अठसि धौ. ६. ३; पृथ. १. ३; २. २. ६; जौ. ६.३
-अठसि टो. ७.२५
अठाय रू. ३; ब्र. ५
अठाये का. ३. ७; ५. १६; ६. १९. २०; १२. ३४, १३. १५; धौ. ४. ७; ५. ७; ६. ६; पृथ. १. १९ २१, २३; २. ८, ९; जौ. ६. ६; पृथ. १. १०; २. ८; टो. २. १५; ७. २२. स. ४ टो.
-अठाये का. १. ३; धौ. १. ३; जौ. १, ३; टो. ५. १०, ७. २८
अठि जौ. पृथ. १.४
अठे का. ९. २७; धौ. पृथ. १. ७, जौ. पृथ. १. ४; रू. ४, स. ५; मास. ४, ७; ब्र. ७
अठंमु टो. ७.२५
अठो शा. ९.२०
अठ् [र] ६.१८
अठस शा. ९.१९
अठ [कोस] कियानि टो. ७.२३
अठति [य] आनि रू. १; मास. ६
अठाति यानि ब्र. २; सि. ४
अणणियं मान. ६.३१
अणत्र मान. १०.९
अणपयमि शा. ६.१४
[अणपयित]` मान. ३.९
[अणप] यिश [ित] मात. ३.११
अणपित मान. ६.२९
अणपित [ं] शा. ३. ५; ६.१५
अणपेमि शा. ६. १५; मान. ६.२८
अणपेशांत शा. ३.७
अणमणस मान. १२.६
अणे मान. ८. ३७; ९.५
अत (=अत्र) का. १४.२२
अत (=अन्ताः) मान. २.५
अत (=यत्र) का. १३.६ धौ. २. ३; जौ. २. ३; टो. ७.३२
अतत धौ. २. ३; जौ. २.३
अ [त] ता का. २. ५, ६
अतन अ. ६. ४; रुम्मि. २; निग. ३
अतना टो. ६.८
अतने धौ. पृथ. १. २५; जौ. पृथ. १.१२
अतपतिये टो. ८. ४.१४
अत-पशंड-पुजा का. १२.३१
अतपषड मान. १२.४
अतपषड वढि शा. १२.९
अतपाशड का. १२.३२
अतपाशडा का. १२.३२
अत-पाषंड का. १२.३३
अतपापं [ड] भतिया का. १२.३३
अतपापंड-वढि का. १२.३५
अतपापडषि का. १२.३३
अत प[रषंड] शा. १२.४
अत-प्रषंड शा. १२. ४,६
अत प्रषंड-पुज शा. १२.३
अत प्रषडं शा. १२. ५,६
अत-प्रषड-पुज मा. १२. ३
अत-प्रषड-भतिय शा. १२. ५
अतये (पतये) शा. ९. १८
अतर शा. ५. ११
अंतरं शा. ८. १७, मान. ४. १२; ६. २६; ८. ३४
अता (=अंता) रू. ३; सि. १२
अता (=अत्र) का. ८. २३. धौ. ८. २
[अ] ता (=यत्र) का. २. ५, ६
अतानं धौ. पृथ. २. ७; जौ. पृथ. २. १०
अतिकंतं का. ४. ९; ५. १४; ६. १७; ८. २२; धौ. ४. १; ५. ३; ६. १; ८. १, जौ. ४. १; ६. १; टो. ७. ११. १५
अतिकातं गि. ४. १; ५. ३; ८. १
अतिकामयिसति धौ. पृथ. १. २४
अतिक्रतं शा. ४. ७; ५. ११; ६. १४; ८. १७; मान. ४. १२, ५. २१; ६. २६; ८. ३४
अतिक्रातं गि. ६. १
अतियायिक का. ६. १९; धौ. ६. ३; जौ. ६. ३
अतियोक [`] न शा. १३. ९
अतियोगे का. १३. ६; मान. २. ६
-अतिलेके धौ. पृथ. १. १६; जौ. पृथ. १. ८
[अतुलना] जो. पृथ. १. ६
अ [तु] लना धौ. पृथ. १. १२
अतेषु का. १३. ६
अतो शा. ५. ११
अत्र शा. ८. १७, ९. १८, १९; १०. २२; १४; १३, १४; मान. ५. २०; ८. ३५; ९. ३, ४; १०. ११; १४. १४
अत्र (=यत्र) मान. २. ७, ८
अत्य-पषड मान. १२. ४, ५, ६
अत्वपषड-भतिय मान. १२. ५
अत्वपषड-वढि मान. १२. ९
अथ शाह. ९. २० मान. ९. ७
अथ (=यथा) मान. २. ५, १२. २, ७; धौ. पृथ. १. २३. २६; २. ३; ७; जौ. पृथ. १. ३; २. ३, १०; टो. ३. २०; ६. ४
-अथ गि. १०.१; का. १०.२७
अथकंमे गि. ६.२
अथाम्ह गि. ४.१०
अथषा का. १४.२२
अथस गि. ४.११; ९.६; १४.४; जौ. पृथ. २.२
अथ संतीरणा गि. ६.१०
अथ संतीरणाय गि. ६.९
अथमा का. ४.१२, १३; ९.२६
[अ] थम [ि] जौ० पृथ. २.१२
अथा (अथाय) गि. १२.९
अथा (=यथा) का. २.४; १२.३१, ३४; धौ. २.१; ३.२; पृथ. १.५; २.७, ८; जौ. २.१; ३.२; पृथ. १.१२; २.१०; टो. ४.१०; अ. ६.३

अभिलेख शब्दानुक्रमणी

संकेत सारिणी

अ० = लौरिया-अरराज
कल० = कलकत्ता-बैराट
का० = कालसी
कौ० = कौशाम्बी
गि० = गिरनार
ज० = जटिंग-रामेश्वर
जौ० = जोगड
टो० = देहली-टोपरा
धौ० = धौली
नं० = लौरिया-नंदनगढ़
निग० = निगली सागर
पृथ० = पृथक् धौली तथा जौगड शि० ले०
प्र० = प्रयाग-कोसम
बरा० = बराबर
बै = बैराट
ब्र० = ब्रह्मगिरि
मान० = मानसेहरा
मास० = मास्की
मे० = देहली-मेरठ
रा० = रानी अभिलेख
राम० = रामपुरवा
रुम्मि० = रुम्मिनदेई
रू० = रूपनाथ
शा० = शाहबाजगढ़ी
स० = सहसराम
सा० = सारनाथ
सि० = सिद्धपुर
सोपा० = सोपारा

टिप्पणी—निम्नांकित सन्दर्भों मे पहली सख्या अभिलेख और दूसरी पंक्ति प्रकट करती है।

इसिलसि ब्र. १; सि. २
इलिज (झ) क्ष-महमत्र मान. १२.८
इ [लिधि] यक्ष-म [ह] मत्र शा. १२.९
इस्य अ. ३.३
इस्या टो. ३.२०
इह शा. १३.८

उ

उकसा टो. १.७
उग [छ] (छं) धौ. पृथ. १. १३
उचबुचं शा. ९.१८; मान. ९.१
उचबुच-छंद्रो शा. ७.३
उचबुच-छंदे मान. ७.३३
उचबुच-रगे मान. ७.३३
उचबुच-रगो शा. ७.३
उचावचं गि. ९.१, २
उचावच-छंदो गि. ७.२
उचावच-रागो गि. ७.२
उचावुचं का. ९.२४; धौ. ९.१
उचावुच-छंदा धौ. ७.२; जौ. ७.१
उचावुच-लागा धौ. ७.२; जौ. ७.१
उचावुच-ला [ग]` का. ७.३१
उचावुचा-छ [अं] दं का. ७.२१
उजेनितं धौ. पृथ. १.२३
उठनस [ि] शा. ६.१५; मान. ६.२९
उठने मान. ६.३०
[उठानं] मास. ३
उठान् [अ] सा का. ६. १९
उठानसि धौ. ६.४; जौ. ६.४
उठाने का. ६.१९; धौ. ६.५; जौ. ६.५
[उड] आलके मास. ५, ६
उडाला रू. ३; स. ४; बैर. ६
उथनं शा. ६. १५
उथाय् [आ] जौ. पृथ. १.७
उदुपानानि का. २.६; धौ. २.४; जौ. २.४, टो. ७.२३
उपकगति गि. १२. ४; शा. १२.४; मान. १२.४
उपकलेनि का. १२.३२
उ [प] गते मास. ३
उपघाते का. १३.३७, ३८
[उ] पघातो गि. १३.४
उपतिस-पसिने कल. ५
-उपदने शा. ९.१८
उपदये मान. ९.२
उपदहेवु अ. ४.३
उपदहेवू टो. ४.५
-उपदाने (ये) का. ९.२४
-उपदाये धौ. ९.१; जौ. ९.१
उपधाल् [अ] येयू कल. ७
[उ] पगाते बै. ३
उपयीते ब्र. ३; सि. ६
उपवासं टो. ४.१८
उपहंति का. १२.३३; शा. १२.६; मान. १२.६
उपहनाति गि. १२.६
उपासका सा. ७; कल. ८
उपासकानंतिकं सा. ७
उपासके स. १; बै. २; ब्र. २; सि. ५
उपासिका कल. ८
उप [`] ते रू. १
उबलिके रुम्मि. ४
उ [भ] य [`] स शा. ९.२०
उभयेसं का. ९.२६; मान. ९.८
उयनस्पि शा. ६.१४; मान. ६.२७
उयानसि का. ६.१८; धौ. ६.२; जौ. ६.२
उयानेसु गि. ६.४
उयाम-लति का. १३.१८
-उविगिन धौ. पृथ. २.८; जौ. पृथ २.५
[उ] षटे [न] का. १०.२९
उषुटेन का. १०.२८
उसटेन गि. १०.४; शा. १०.२२; मान. ११.११; धौ. १०.४, जौ. १०.३,
उसटेनेव मान. १०.११
उसपापिते रुम्मि. ३; निग. ४
उसाहेन अ. १.३
उसाहेना टो. १.५
उस्टानं गि. ६.१०
उस्टानम्हि गि. ६.९

ए

ए का. ५.१३, १४, १५, १६; ९.२६; १०.२८; १२.३४; १३.३६, ३८; शा. १३.५; मान. ५.२५; ९.६; १०.११; १२.७; १३.५; धौ. २.२; ५.२, ४, ६, ७, ६.३; ९.३; १४.३, पृथ. १.१२, १३, १४, २२; २.५; जौ. २.१, २; ५.७; ६.३; १४.२, पृ० १.७; २.७; टो. ५.१७; ६.८; ७.२२; प्र. रा. २,३. मा. ३· कल. २, ३, ५
एकं ब्र. २; सि. ५
[ए] कं शा. ५.११
एक [आ] क [`] न जौ. पृथ. १.९
एकचा गि. १.६
एकतरम्हि गि. १३.५
एकतरे शा. १३.६
एकतल्प [ि] का. १३.३९
एकनि [ग] शा. १.२
[एक] तिया मान. १.३
एकतिया का. १.२; धौ. १.२; जौ. १.२
एकदा गि. १४.५
एक-देशं शा. ७.३; मान ७.१३
एक-देसं गि. ७.२; का. ७.२१; धौ. ७.२
एक-पलिम्से धौ. पृथ. १.७, ८
एक-मुनिसे जौ. पृथ. १. ४
एकुनवीसतिवसा [भ] [ि] सि [त]` बरा. ३.१
एके. का. १.४; मान. १.५; जौ. १.४
एकेन धौ. पृथ. १.१८; २.१०; जौ. पृथ. २.१६
एको गि. १.११
एडका अ. ५.५
एडकं टो. ५.१७
एत (=इत्र) गि. ५.३; ८.१; ९.३; १०.४; १४.३
एत(=एतत्) गि. ९.४, ५; ११. ३; शा. ४.९, १०; ९.१८
एत (=एतै) शा. १.३
एतं गि. १०.४, शा. ९.१९; ११.२३, २४; १३. ६; जौ. पृथ. १.७, १५, १६, २२, २५; जौ. पृथ. १.३, ७, ८, १०; टो. ७.१४, १९, २१, ३१
एतकये शा. १०.२१; मान. १०.१०
एतकाय गि. १०.२
एतकाये धौ. १०.२
एतके शा. ९.२०
एतकेन शा. १३.१०; मान. १३.११; धौ. पृथ. २.६; जौ. पृथ. २.८
एतकेना का. १३.१३
एतदथा टो. ७.२४
[ए] तनि मान. १.५
एतमेव टो. ७.२२; सा. ८.९
एताद्दी गि. ९.२
एतयं गि. ८.३
एतये शा. ४.१०; ५.१३; ६.१६; १२.८; १३. ११; मान. ३.१०; ४.१७; ५.२६, ६.३१; ९.२; १२.८; १३.१२
एतरिसं गि. ९.४
एतवियं धौ. पृथ. १.१३; जौ. पृथ. १.७
एतस गि. १२.९; मान. ४.१८; धौ. पृथ. १.१२; जौ. पृथ. १.८; २.२
एतसि धौ. पृथ. १.३; २.२, ६; जौ. पृथ. २.१२
एता (न) का जौ. पृथ. २.५
एतानि का. १.४· जौ. १.४. ए. १.६; टो. ५.११ कल. ६
एताय गि. ४.११; ५.९; ६.१२; १२.८; १३.११
ए [म] आयठाय रू. ५
एतायाठाये का. १२.३४
एताये का. ३.७; ४.१२; ५.१६; ९.२४; १३.१५; धौ. ४.७; ६.६; ९.२; पृथ. १.११, २१, २३; २.८, ९; जौ. ६.६; ९.१, पृथ १.१०; २.७, १३; टो. २.१४; ५.१९; ७.२२, ३१; स. ४
एता [य]` ठाये का. ६.२०
एतायेव गि. ३.३
एतारिसं गि. ९.५, ७; ११.१
एतारिसानि गि. ८.१
एति जौ. पृथ. १.४; टो. ५.७
एतिना रू. ५
एतिय रू. ३
एतिषा का. १२.३५
एतिस शा. ३.६; १२.९; मान. १२.८

एते गि. ९.१२; धौ. पृथ. १.११; टो. ८.१२; ७.२७

एतेन टो. ४.१३; मा. १०, मह. ७

एतेनि (ना) कल. ८

एतेसु टो. ७.२६

एत्र शा. ६.१५

एद [ि] शं शा. ११.२३

एद्रिशनि शा. ८.१७; मान. ८.३४

[एद्रि] श [ये] मान. ९.२

एद्रिशि (स) [ये] शा. ९.१८

एदिशो मान. ९.५; ११.१२

एदिस्मानि धौ. ८.१

एदिस्माये का. ९.२४

एन धौ. पृथ. १.१९; २.७, ९; जौ. पृथ. १.१०; २.९, १४; टो. ७.३२

एयं का. ५.१५; जौ. पृथ. १.६

एव गि. १.१०; ३.३; ४.१, ७; ९.३; १२.४, ६; १३.११; १४.१, ३; का. ४.१२; ९, २५, २६; १३.१७; १४.२१; शा. १३.९, ११; १४.१३; मान. २.८; ९.३, ७; १०.११, १३. १०, १२; १४.१४; धौ. ४.५; ९.३, पृथ. १. १३, २४; २.५; जौ. ९.२, पृथ. २.४, ६; टो. ३.१७; ७.२३, २५, २६; अ. १.४, ५; ६.४; सा. ७, ८, ९, १०; वै. ५; ब्र. ८, ९, १०; सि. ९

एव (=एवं) गि. ९.१; शा. ६.१४, १५; मान. ३, ९

एवं गि. ३.१, ५.१, ६.१, २, ८, ११.१, १२.४, ७; शा. ५.११, ६.१४, ९.१८, ११.२३, १२. ४, ७; मान. ५.१९, ६.२६, २७, २९, ९.१, ११.१२, १२.४, ६

एवमपि गि. २.२

एवमेव शा. १३.९; मान. २.८; १३.१०

[ए] वमेवा का. २.६

एवा का. २.६; ४.११; १३.३८, ८, टो. १.६, ८; ६.६; कल. ८

एवे जौ. पृथ. १.७

एवे (व) का. १३.१४

एष का. १३.३७, ३८; शा. १३.४; मान. १३.४, ६

एषे का. १०.२८; ११.२९; ३०; शा. ८.१७; १०.२२; मान. ४.१५, १७; ६.३०; ८.३६; ९.४, ५; १०.११; ११.१२, १३

एस गि. ४.७, १०; ६.१०; १०.३; धौ. ४.४, ६; ८.२; ९.३, ४. पृ. १.३; २.२; जौ. ४.५; ८.२; ९.३, ४, पृथ. १.२; २.२; टो. १.५, ९; ३.१९, २१, ७.१४, २०, २४, २५, २८, ३०, ३२; अ. ३.२; ४.७; रू. २; बै. ४; ब्र. १२

एसथ जौ. पृथ. १.९; २.१३

एसा गि. ८.३, ५; १३.४; धौ. ८.३; टो. ३.१९; ४.१४; अ. १.५; रू. २; . १२; सि. १९; जट. १९

एसे का. ४.११, १२; ६,१९. ८.२३.९.२५; वै. ५

एहथ धौ. पृथ. १.१७; २.९

[ए] ळका टो. ५.८

एळके मे. ५.११

ओ

ओकपिंडे टो. ५.६

आदातानि प्र. ४. सा. ५, सा. ८

-ओपकनि शा. २.५

-ओपगानि गि. २.५, ६; का. २.५; धौ. २.३; जौ. २.३; टो. ७.२३

-ओपग्र मान. ८.३६

-ओपयं शा. ८.१७

ओपया गि. ८.५; का. ८.२३ धौ. ८.३

ओराधनम्हि गि. ६.३

ओरोधनस्पि शा. ६.१४

ओरोधने मान. ६.२७

ओरोधनेषु शा. ५.१३; मान. ५. २४

ओलोधनम्हि का. ६.१८; धौ. ६.२; जौ. ६.२; टो. ६.२७

ओलोधनेम [उ] का. ५.१६ धो. ५.६

ओवादितव्यं गि. ९.८

-ओवादे कल. ५

ओप [ढ़] नि शा. २.५; मान. २.७

ओसधानि जौ. २.३

ओसधीन [ि] का. २.५

ओसुढानि गि. २.५

क

कं गि. १४. ३, जौ. पृथ. १.१; २.१

-कंधनि शा. ४.८; मान. ४. १३

-कंधानि का. ४.१० धौ. ४.२

-कंबाच धौ. ५.४

-कंबोज गि.५.५; १३.९, का. ५.१५; मान. ५. २२

-कंबोजेषु का. १३.९; मान. १३.१०

-कंबोय शा. ५.१२

-क [ं] बोयेषु शा. १३.९

कंमं का. ४.१२; धौ. पृथ. १.२५; जौ. पृथ. १.१२

कंमत धो. ६.५

कंमतरं गि. ६.१०

कंमतला का. ६.२०; जौ. ६.५

कं [मन] धौ. पृथ. १.२

कंमने धौ. ३.२; जौ. ३.२

कंमस धौ. पृथ १.१६; जौ. पृथ. १.८

कंमानि टो. ४.५, १३

कंमा [प] गि. ३.४

कंमाये का. ३.७

कंमे गि. ४.१०; धौ. ४.६; पृ. २.७; जौ. पृथ. २.९

-कंमे गि. ६.२; का. ६.१७; धौ. ६.१; जौ. ६.१

कचं. गि. ९.८

कचि शा. १२.५

कछंति का. ५.१४; ७.२१; धो. ५.२; ७.२; जौ. ७.२; टो. ४.१८

कछति का. ५.१४; धौ. ५.२; अ. २.४

कछनी टो. २.१६

कछामि का. ६.१८; ९.२६

कट मान. २.७; ५.२१; अ. ४.६

कटव शा. ९.१

कटव-मतं शा. ६.१५

कटवियतला जो. ९.६

कटविय-मते मान. ६.३०; धौ. ६.४

कट [—] विय-मुते का. ६.१९

कटविया टो. ७.३२

कटविये का. १.२; ९.२६; ११.३०; मान. १.२; ९.३, ६, ११.१४; धौ. ९.३; जौ. १.२; ९.२, ४; टो. ५.९, १९; सि. २१. ज. २१

कटवि [ये] का. ९.२५

कटवो शा. ९.१८, १९; ११.२४

कटा का. २.५; ५.१४; धौ ५.३; टो. ४.१२; ७.२३; रू. २; स ३

कटानि टो. २.१४; ५.२, २०; ७.२३, २८, ३०

[कटा-िका] ले का. ५.१६

[क] टाभिका [ले] धौ. ५.६

कटि (ट) वियें ब्र. १२

कटु धौ. पृथ. २.७

[क] टू जौ. पृथ. २.९

कटे का. ५.१३; ६.१७; मान. ५.१९; धौ. ५.१; ६ १; जौ. ६.१; टो. २.१३, ३.१८; ४.४, १४; ७.२३, २५, २६, २७, ३०, ३१; प्र. २; सा. २; रुम्मि. ४; रू. ३,५

कटूभिकर मान. ५.२४

कतं गि. ५.२; ६.२

कतंञता गि. ७.३

कतव्य गि. ९.६

क [तव्] य [ं] गि. ११.३

कतव्यतरं गि. ९.९

कतव्य-मते गि. ६.९

कतव्यमेव गि. ९.३

कतव्यो गि. १.४

कता गि २.४; ५.४

कताभीकारेसु गि. ५.७

कथं टा. ७.१२, १५

-कप शा. ४.९

-कपं का.४.१२; ५.१४; शा.५.११; मान. ४.१६; ५.२०; धौ. ४.६; ५.२,

कपन-ग्लाकेनु टो. ७.२९

-कपा गि. ४.९; ५.२

-कपिलिक अ. ५.३

-कपीलिका टो. ५.४

-कपोते टो. ५.६

थ

द

दिपन शा. १२.१०; मान. १२.९
दिपना का. १२.३५
दिपयम मान. १२.५
दिपयमि शा. १२.६
[दि] पयेम का. १२.३३
-दिपि शा. १.१, ३; ५.१३; १३.११; १४.१३; मान. १.१, ४; ५.२६; ६.३१; १३.१२; १४.१३
दिपिकरस शा. १४.१४
[दि] य [ढ]-म [त्रं] मान. १३.१
दियढ-मिते का. १३. ३५
दियढिय रू. ४
दियढियं म. ६; बै. ८; मास. ८, ब्र. ७; सि. १५; ज. ११
दियाढियं स. ६
दिवनि शा. ४.८; मान. ४.१३
दिव [स] मान. १.४
दिवसं गि. १, ८; का. १.३; जो. १.३
दिवसानि टो. ४.१६; ५.१२, १३
-दिवसाये टो. ५.१६
-दिवसो शा. १.२
दिवि [या] नि धौ. ४. ४.२; जौ. ४.३
दिव्यानि गि. ४.४; का. ४.१०
दिषा का. १४.२३
दिसासु टो. ७.२७
दिसेया कल. ३
दी [घा] वुसे ब्र० १२; सि. १९; ज. १९
दीपना गि. १२.९
दीपयेम गि. १२.६
दुआहले धौ. पृथ. १.१६; जौ. पृथ. १.८
दुकट मान. ५.२०
दुकटं का. ५.१४; शा. ५.११; धौ. ५.२
[दु] कतं गि. ५.३
[दु] कर शा. ६.१६
दुकरं गि. ५.१; ६.१४; १०.४; शा. ५.११; मान. ५.१९
दुकरे शा. १०.२२; मान. ६.३२; १०.११
दुकलं का. ५.१३; धौ. ५.१
दुकलतले धौ. १०.४; जौ. १०.३
दुकले का. ५.१३; ६.२१; १०.२८, २९; धौ. ५.१; ६.७; १०.३; जौ. ६.७
दुख [ं] धौ. पृथ. २.५
[दु] ख [ं] जौ. पृथ. २.६
दुखीयति धौ. पृथ. १.९
-दुखीयनं टो. ४.६
दुडी प्र. ५.२
दुत शा. १३.१०; मान. १३.११
दुता का. १३.१०
दुतियं निग. २
दुतियाये प्र. रा. २
दुतीयाये प्र. रा. ५
दुपटिवेखे टो. ३.१९

दुपद-चतुपदेसु टो. २.१२
दुव [ड] श-वषभिसे (सि) तेन मान. ३.९
दुव [द] श-वषभिसितेन मान. ४.१८
दुव [ा] डसव [शा] भिसितेना का. ४.१३
दुवाडस-वसभिसितेन टो. ६.१
दुवाडस-वसाभिसितेन का. ३.७; राम. ६.१
दुवाडस-वसाभिसितेना बरा. १. १; २.१
दुवादस धौ. ४.८
दुवादस-वसाभिसितेन धौ. ३.१; जौ. ३.१
दुवाल धौ. पृथ. १.३; जौ. पृथ. २.२
दुवालं जौ. पृथ. १. २
दुवालते धौ. पृथ. १.३, २.२; जौ. पृथ. २; २.२
दुवाला धौ. पृथ. २.२
दुवा [ळ] स [व] साभिसितेन न. ६.१
दु [वि] शा. १.३; २.४
दुवे का. १.४; २.५, मान. १.४; २.७; जो. १. ४; स. ६
दुवेहि टो. ७.२९
दुसंपटिपादये टो. १.३
दुसानि प्र. ४; सा. ६, सा. ४
दुळि अ. ५.३
दूति (तां) गि. १३.९
देखंति अ. ३.१
देखत धौ. पृथ. १.७, १४
देखति टो. ३.१७, १८
देखिये टो. ३.१९, २१
-देघ स. ३
-देवणप्रि [ये] शा. १.१
देवनंपिये का. १०.२८
देवनंप्रिय शा. ८. १७
देवनंप्रियस शा. २. ३, ४; ४.७, ८, ९; ८.१७; १२.७; १३.३, ६, ७, ८, १०: मान. १३.६
[दे] वनंप्रिये मान.१.२; १२.२
देवनंप्रियेन शा. ४.१०; १४.१३; मान. १.१; ५.१९
देवनंप्रियो शा. ३. ५; ६.१४; ७.१; ८.१७; ९, १८; १०.२२; ११.२३; १२; १, २, ८; १३ ८, ११
देवनपिअस शा. १.२
देवनप्रिअस शा. १. १, २; १३. १, २
देवनप्रि [य] मान. ८.३४
देवनप्रियस शा. १३.२; मान. १.३; २.५; ४. १३, १४, १६; ८.३६; १२.६; १३.१, ३, ७, ८, ९, ११.
देवनप्रिये शा. १०. २१; मान; ३. ९; ४. १५; ६. २६; ८.३४; ९.१; १०. ९, १०; ११. १२; १२; १, ७; १३. १२
देवनप्रियेन मान. ४.१८; १४.१३
देवनप्रियो शा. ५.११; मान. ७. ३२
देवा रु. २; मास. ४

-[दे] वा स. २
देवाणंपि [यस] ज. २०
देवाणंपिये ब्र. १,८
देवानं गि. १०.३; १३.६
देव[ान]ं प [ि] नंय (= पियस) का.१३.११
[दे] वानंपियष का. १३.३५
देवानंपियषा का. १२. ३३; १३; ३६, ३८, ३९, १०. प्र. रा. १
देवानंपियस गि. ८.५; १२.७; १३.२, ६, ७, ९; धौ. २.१; ४.२, ३, ५; ८, ८, ८.३; पृथ. १.१, १४; २.१, ८; जौ. १.२, ३: २.१; ४.२; ८.३; पृथ. १.७; मास. १
देवानंपियसा का. १.२, ३; २.४, ५; ४. ९, १०, ११; ८.२३; १३.११
देवानंपिया का. ८.२२
देवानंपिये गि. १२.१; का. १.२; ३.६; ४;११; ५.१३; ६.१७; ७.२१; ८.२२; ९.२४; १०. २७; ११.२९; १२,३१; धौ. ३.१; ४.५; ५.१; ६,१, ७.१; ८.१; ९.१; १०.१, २; पृथ २.४, ५,७; जौ. १.५; ३.१; ५.१, ६.१; ८.१; ९.१; १०.२; पृथ. १; २.१; टो. १ १; २.१०; ३.१७; ४१.१; ५.१; ६.१; ७.११; १४, १९, २३, २५, २६, २८ २९, ३१; प्र० १; मा. ६; रू. १; सि. ३
देवानंपियेन धौ. १.१; २.२; १४.१; जौ. १.१; २.२; निग. १
देवानंपियेना का. १.१; ४. १३; १४, १९
देवानंपिये (य) पा का. १३.५
देवानंपियो गि. ३. १; ७.१; ९.१; १०, १,२; १२.२, ८
देवानंप्रियस गि. १.६, ८; २.१, ४; ४,२.५, ८; १३.२, ८
देवानंप्रियेन गि. १.१; ४.१२; १४.१
देवानंप्रियो गि. १.५; ४.७; ५.१; ८.२; १३.११
देवान [पि] येन रुम्मि. १
देवानांपिये म. १; बै. १
देवानापिये का. १२. ३०, ३४
देवि-कुमालानं टो. ७.२७
देविनं टो. ७.२७
देवि (वा) नंप्रियो गि. ११.१
देविये प्र. रा. ४.५
देवीये प्र. रा. २
दे [वे] नं [पि] ने (= देवानंपिये) का. १३.१४
देवेहि बै. ४; ब्र. ४; सि. ८
देश मान. ५.२०
देशं शा. १४.१४
-देशं शा. ७.३; मान. ७.३३
देसं गि. ५.३; १४.५; का. ५.१४; धौ. ५.२; पृथ. १.७; जौ. पृथ. १.४
-देसं गि. ७.२; का. ७.२१; धौ. ७.२

-देसा-आ [युति] के (=देस्रायुतिके) जौ. पृथ. २.१२
देसायुतिके धौ. पृथ. २.८
दोष शा. १.१; मान. १.२
दोसं गि. १.४; जौ. १.२
दोसा का. १.२
दोसे (=तोसे) का. ६.१९
दुवादस-वासाभिसितेन गि. ३.१; ४.१२
द्रखति जौ. १.२
द्रशन शा. ८.१७
द्रशन मान. ४.१३
द्रशनं शा. ४.८
द्रशने शा. ८.१७; मान. ८.३५,३६
द्रशयितु शा. ४.८
द्रशेति मान. ४.१३
द्रसयितु जौ. ४. ३
द्रखितव्यं ब्र. ९; सि. १७; ज. १४
द्रिढ-भतित शा. ७.५; १३.५; मान. ७.३३
द्वे गि. २.४
द्वो गि. १.११

ध

धंमं गि. ४.९; १२.७; का. ४.१२; १२. ३३; १३.१२; धौ. ४.६, पृथ. ५; जौ. पृथ. २.७
धंम-कामता का. १३.३६; टो. १.६
धंम-कामताय अ. १.२
धंम-कामताया टो. १.३
धंम-गुणा ब्र. १०; सि. १७
धंम-[घो] सं धौ. ४.२
धंम-घोसे का. ४.९
धंम-घाम्नो गि. ४.३
धंम-चरणं गि. ४.८,९
धंम-चरणे गि. ४.७,१०
धंम-चरणेन गि. ४.३
धंम-चलनं का. ४.११, १२; धौ. ४.५, ६; जौ. ४.६
धंम-चल [न]ायं धौ. पृथ. २.१०; जौ. पृथ. २.१५
धंम-चलने का. ४.११, १२; धौ. ४.५,६; जौ. ४.५,७; टो. ४.२०
धंम-चलनेन धौ. ४.२; जौ. ४.२
धंम-चल [न]ेना का. ४.९
धंम-थंभानि टो. ७.३३
धंम-दानं गि. ९.७; ११.१
धंम-दाने का. ११.२९; धौ. ९.६; जौ. ९.५
धंम-दानेन गि. ११.४
धंम-दानेना का. ११.३०
धंम-नियमानि टो. ७.३०
धंम-नियमे टो. ७.३०
धंम-नियमेन टो. ७.२९
धंम-निखिते का. ५.१६; धौ. ५.७
धंम-निश्रितो गि. ५.८
धंमनुसथि का. ८.२३
धंमनुसथिया का. ३.७
धंमनुसथिये का. ४.१०
धंम-पटीपति टो. ७.२८
[ध]ंम-प [ल]ि [पुछ]ा जौ. ८.३
धंम-पलियायानि कल. ४,६
धंम-मंगलं गि. ९.५
धंम-मंगले गि. ९.४; धौ. ९.३,४
धंम-मगले का. ९.२५,२६
धंम-मगलेन [ा] का. ९.२७
धंम-महामता का. ५.१४, १६
धंम-महामाता गि. ५.४, ९; १२.९; का. ५.१४; १२.३४; धौ. ५.३, ७. टो. ७.२३ २५, २६
धंमम्हि गि. ४.९
धंम-याता गि. ८.३; का. ८.२३; धौ. ८.२
धंम-यु [तं] टो. ७.२३
धंम-युतस गि. ५.५; धौ. ५.४
धंम-युत [सा] का. ५.१५
धंम-युतसि का. ५.१६; धौ. ५.७
[धंम]-युतानं गि. ५.६
धंम-युताये का. ५.१५; धौ. ५.५
धंम-युतेन टो. ४.६
धंम-लिपि का. १.१, ३, ५.१७, १३.१५; टो. १.२, २.१५, ४.२, ६.२, १०
धंमलिपी गि. १.१ १०, ५.९; ६.१३; १३.११, १४.१; धौ. १.४; ५.८; ६.६; १४.१ जौ. १.१, ४, ६.६
धंम-लिबि टो. ७.३१, ३२
धंम-वढि टो. ६.३; ७.२९,३०
धंम-वढिया का. ५.१५; टो. ७.१३, १६, १७, १८, १९, २२
धंम-[व] ढिये धौ. ५.४
धंम-वतं का. १०.२७
धंम [वाय]े का. १३.३५
धंमवायो गि. १३.१
धंम-विजयंसि का. १३.१३
धंम-विजये का. १३.५, १७
धंम-वीजयम्हि गि. १३.१०
धंम-वुतं गि. १०.२; का. १३.११
धंमष का. १२.३५
धंम-संबध [े] का. ११.२९
धंमस गि. १२.९
धंम-संबधो गि. ११.१
धंम-संविभागो गि. ११.१
धंम-संस्तवो गि. ११.१
धंम-सावनानि टो. ७.२०, २२
धं [म-स]ा[वन]े टो. ७.२३
धंमसि का. ४,१२; धौ. ४.६; कल. २
धंम-सुसुषा का. १०.२७
धंम-सुस्रूसं जौ. १०.१
धंम-सुसु [ं] सा गि. १०.२
धंमाधिथानाये का. ५.१५; धौ. ५.४; जौ. ५.४
धंमाधिथाने धौ. ५.७
धंमानुगहे धौ. ९.६; जौ. ९.५
धंमानुपटिपतिये टो. ७.२८
धंमानुपटीपती टो. ७.२४
धंमानुषथि का. १३.३६, १०
धंमानुस ि [थ] का. १३.१२; सोपा. ८.८
धंमानुसथिनि टो. १०.२०,२२
धंमानुसथिया धौ. ४.३; जौ. ४.४
[धं] मानुस ि [थ] ये धौ. ३.२
धंमानु [सथी] धौ. ८.३
धंमानुसस्टि गि. १३.९
धंमानुसस्टिय गि. ३.३
धंमानुसस्टिया गि. ४.५
धंमानुसस्टी गि. ८.४
धंमानुसासनं गि. ४.१०; का. ४.१२
धंमानुसाम्नना धौ. ४.६
धंमापदानठाये टो. ७.२८
धंमापदाने टो. ७.२८
धंमापेख अ. १.३
धंमापेखा टो. १.६
धंमे टो. २.११; ज. २०
धंमेन टो. १.९, १०
धत [क]ाये(=धतकाये) का. १०.२७
धमं गि. १३.१०
धम-घोषे मान. ४.१३
धम-[च] रण मान. ४.१६
धमनुगहो गि. ९.७
धम-परिपुछा गि. ८.४
धम-पलिपुछा का. ८.२३
धम-युतं [न] मास. ५
धम-लिपि का. ६.२०, १४.१९; अ. २.३
धम-ष[ि]बभगे का. ११.२९
धमानुसस्टि गि. १३.१०
धाति टो. ४.११
धातिये टो. ४.१०
धामधिस्टानाय गि. ५.४
धिति धौ. पृथ. २.६; जौ. पृथ. २.९, ११
धुवं जौ. १.४
धुवाये टो. ५.१२; सा. ८
ध्र [ ] म [ ] मान. १३.११
ध्रंम-दिपि मान. १३.१२
ध्रंमधियनये शा. ५.१२
ध्रंमनुश [स्ति] य शा. ४.८
ध्रंमनुशस्तिये शा. ३.६
ध्रंम-म [ह] म [त्र] शा. ५.११
ध्रंम-यत्र शा. ८.१७
[ध्रं] म-युतस शा. ५.१२
ध्रंम-रति शा. १३.१२
ध्रंम-वुतं शा. १०.२१
ध्रम शा. ६.१६
ध्रमं शा. ४.१०; १३.१०; मान. ८.१७; १२.६

म

मान. १३.१३; रू. १; बै. २; ब्र. २; सि. ५; ज. ३

[य] (=**ये**) का. १३.३७

यं गि. १०.३; का. ६.१८, २०; १०.२७; १२.३५; शा. ४.१०; ६.१४, १५, १६; १०.२२; १२. २, ९; १३.७; मान. ६.२८, ३०; १०.९; १२. ९; ब्र. ३; सि. ६; ज. ५

यं (=**इयं** ?) धौ. ४.८

यंति का. १३.११; मान. १३.११

यत गि. २.६, ७; १३.९; का. १३.१०; स. ७

यता का. १३.३८, ३९

यत्र गि. २.७; १३.५; शा. २.५; १३.९, १०; मान. १३.६, ११

-यत्र शा. ८.१७; मान. ८.३४

यथ शा. २.३; १२.२, ८; मान. ३.१०

[य] [थ] शा. ३.६

यथा गि. २.२; ३.३; ९.९; १२.२, ८; का. ३.७; टो. ७.२२; सि. ११

यथारहं ब्र. ११; सि. २०; ज. १८

यद शा. १.२

-यद मान. ८.३५

यदा गि. १. १०; का. १.३

यदि शा. ९.२०

यदिशं शा. ४.८: ११.२३

यमत्रो शा. १३.६

यव शा. ९.१९

यवतके मान. १३.७

यशो शा. १०.२१; मान. १०.९, १०

यषो का. १०.२७, २८

यस गि. ७.३; शा. ७.४; मान. ७.३१

यसो गि. १०.१, २; का. १०.२७; धौ. १०.१, २; जौ. १०.१

या गि. १३.६; धौ; ४.६; टो. १.९; ७.२८, २९; रू. २

-यातं का. ८.२२; धौ; ८.१

-याता गि. ८.३; का. ८.२३; धौ. ८.२

-यातां गि. ८.१

याति सा. ९

यानि गि. २.५; टो. ५ १४; ७.२८,३०

यारिसं गि. ९. ७; ११. १

यारिसे गि. ४.४

यावतक रू. ५

य [ा] वत[को] गि. १३. ५

याव-सहुवीसति-वसाभिसितस अ. ५.१३

याव-सहुवीसति-वसाभिसितेन न. ५.१४

यावु सा. ७

युजंतु गि. ४.११; का. ४.१३; शा. ४.१०; मान. ४.१८

युजंतू धौ. ४.७

युजिसंति धौ. पृथ. २.१०

यु[जे] [यु] जौ. पृथ. १. १०

युजेयू जौ. पृथ. २.३, ४,१४

युजेयू धौ. पृथ. २.३

युत शा. ३.६

-युत- मान. ५.२३

-यु [तं] टो. ७.२३

युतनि शा. ३.७; मान. ३.११

-युतस गि. ५.५; शा. ५.१२; मान. ५.२२; धौ. ५.४

युत[सा] का. ५.१५

-युतसि का. ५.१६; शा. ५.१३; मान. ५.२५: धौ. ५.७

युता गि. ३.२; का. ३.७; धौ. ३.१

-युतानं गि. ५.६

युतानि का. ३.८; धौ. ३.३

-युताये का. ५.१५; धौ. ५.५

युते गि. ३.६

-युतेन टो. ४.६; मास. ५

[यू] जेयू जौ. पृथ. १.३

यूजेवू धौ. पृथ. १.६, २०

ये गि. २.३; ५.५, ८; १२.८; का. २.४, ५; ५. १४; ६. १८; ९. २५; १२.३२; १३. ३, ५, १२, १७; शा. २. ३. ४; ५. ११, १२, १३; ६.१४, १५; ९.१८, २०; १२. ७; १३.१, ३; मान. २.५, ६; ५.१९, २०, २२, २५; ६. २८; ९. ४; १२. ५; १३.९, ११; धौ. ५.१, २; पृथ. १.८; जौ. पृथ. १.४; टो. २.१६; ४.३; ५.७; ७. ११, ३०; सा. ४; मास. ४

येन का. १४. २२; शा. १४.१३; मान. १४.१४; टो. ४.९, १२

येव मान. १,४; ४.१५; धौ. ४,६; जो. १.४; ६.६; टो. ७.२९; मे. ५.७

येवा का. १.३; १४.१९; टो. ५.१३

येशु का. १३.३७

येष शा. १३.५

येषं का. १३.३८; मान. १३.५

येस्नं गि. १३.४

येसु शा. १३.४; मान. १३.४

येहं का. ६.२०; मान, ६.३१; धो. ६.५; जा. ६.६

यो गि. ५.१, ३, ८; ११. ५; शा. ५.११; १०. २१; १२. ५; १३.३, ७, ८, १०, १२

यो (=**येव**) शा. ४.९; १३.११; १४;१३; मान. ४.१६

योजन-शतेषु शा. १३.९; मान. १३.९

[यो] जन-षतेषु का. १३.६

योण-[कं] बो [ज]- गंधारानं गि. ५.५

योते टो. ४.१७

[योन]-कंबोˑˑ गि. १३.९

योन-कंबोच-गंधालेसु धौ. ५.४

योन-कंबोज-गंधालानं का. ५.१५

योन-कंबोज-गधरन मान. ५.२२

योन-कंबोजेषु का. १३.९; मान. १३.१०

योन-कंबोय-गंधरनं शा. ५.१२

योन-कंबोयेषु शा. १३.९

योन-रज शा. २. ४; १३. ९: मान. २. ६; १३. ९

[यो]न-राज गि. १३. ८

योन-राजा गि. २. ३

योन-लाजा का. २. ५; १३. ६; धौ. २. १; जौ २. २

योनेषु का. १३. ३८; मान. १३. ६

योने [सु] गि. १३. ५

र

-रगे मान. ७. ३३

-रगो शा. ७. ३

रज शा. ३. ५; ७. १; ८. १७; मान. १. २; ३. ९; ४. १६; ५. १९; ६. २६; ७. ३२; ८. ३५; ९. १; १०.९, १०; ११. १२; १२. १

-रज शा. २. ४; १३. ९; मान. २. ६; १३. ९

रजनि शा. १३. ९

र [ज]ने मान. २. ६

रजना शा. २. ४.

रज विषय [सि] मान. १३. १०

रज-विषवस्पि शा. १३. ९

रजिन मान. १. १; ४. १८

रजिने मान. १.३, ३ से आगे; २. ५, ६; ४. १३, १४, १६; ८. ३७; ११. १

रजुको शा. ३. ६

रञ शा. ४. १०; १४. १३

रञो शा. १. १, २; २. ४; ४. ७, ८, ९; ८. १७; १३. १

रठिकनं शा. ५. १२

रटिक-पितिनिकन मान. ५. २२

रति गि. ८. ५; शा. ८. १७: मान. ८. ३६

-रति शा. १३. १२; मान. १३. १३

[र] ती सोपा. ८. ९

रभसियं शा. ८. ८

रय शा. १. १; ५. ११; ६. १४; ९. १८; १०. २१, २२; ११. २३; १२. १

-रसा गि. १३. १०; शा. १३. ११

-रागो गि. ७. २

-राज गि. १३. ८

राज-वि [स] यम्हि गि. १३. ९

राजा गि. १. ५; ३. १; ४. ८; ५.१; ६.१; ७.१; ८.२; ९. १; १०. १, २, ३; ११. १; १२.१

-राजा गि. २. ३

राजानो गि. २. ४; ८. १; १३. ८

राजूके गि. ३. २

राञा गि. १. २; ४. १२; १४. १

राञो गि. १. ७, ८; २. १, ४; ४. २, ५, ८; ८. ५

रि (ग) ष्टिक-पेतेणिकानं गि. ५. ५

रुछनि मान. २.८

रुपनि शा. ४. ८; मान. ४. १३

रूपानि गि. ४. ४

रोचेतु शा. १३. ११
रोपपित मान २. ७, ८
[रोप] पि [तनि] मान. २. ८
रोपापिता गि. २. ८
रोपापितानि गि. २. ६, ७

ल

लखमे टो. ५. १९
लघंति टो. ४. ८
लजा का. १०. २७, २८
लजाने का. १३. ७
लजिना का. १४. १९
लजु[के] धौ. ३. १
लजूक अ. ४. २, ५, ६
लजूका टो. ४, २, ४, ८, ९, १२, ७. २२
लजूकानं टो. ४. १३
लजूके का. ३. ७
लठिक-पितेनिकेसु धौ. ५. ४
-लति का. १३. १८
लघ शा १३. ११
लधं शा. ९. २०
लधा गि. १३. १०
लघे का. ९. २७; १३. ५, १२; शा. १३. १०; मान. १३. ९, ११
लधेय (यु) का. १३. ३५
लधेवु का. १३. ३९; शा. १३. २; मान. १३. २
लधे तु गि. १३. १
लधो गि. १३. ८; शा. १३. ८
[ल] पितं शा. १४. १३
लपिने का. १४.२१; मान. १४.१४
-लसे का. १३.१३
लह (हु) का का. १२.३२
लहियि प्र. २
लहु टो. ७.३०
लहुक शा. १२.३; १३.११; मान. १२.३
लहुका गि. १२.३; का. १२.१४
[लहुके] टो. ७.२४
लहु-दंडत शा. १३.११
लहु-दंडता का. १३.१६
लहेयू जौ. पृथ. २.६
लहेवु धौ. पृथ. २.५
ला(लि) खापेतवय रू. ५
-लागा धौ. ७.२; जो. ७.१
-लागे का. ७.२१
लाघुलोवादे कल. ५
लाज का. ४.११; धौ. पृथ २.४; टो. १.१; २.१०; ३.१७; ४.१; ५.१; ६.१; बरा. ३.१
[ला]ज-वचनिक जौ. पृथ. २.१
ला [ज]-विशविव का. १३.९
लाजा का. १.२; ३.६; ५.१३; ६.१७; ७.२१; ८.२२; ९.२४; १०.२८; ११.२९; १२.३१; धौ. ३.१; ४.५; ५.१; ६.१; ७.१; ८.२; ९.१; १०.१; जौ. १.२; ३.१; ६.१; ७.१; ९.१; पृथ. २.५, ६.१०; टो. ७.११, १४, १९, २३, २६, २८, २९; प्र. १.१; २.१; ३.१; ५.१; कल. १
-लाजा का. २.५; धौ २.१; जौ. २.२
लाजाने धौ. २.२; ८.१; जौ. २.२; टो. ७.१२, १५
ला[जा] नो का. २.५
ला[जा]ल[धि] धौ. पृथ. १.१५
लाजा [ल]धि जौ. पृथ. १.८
लाजिन रुम्मि. १; निग. १
लाजिना का. ४.१३; धौ. १.१; १४.१; जौ. १.१; २.२; बरा. १.१; २.१
लाजिने का. १.२, ३; २.४, ५; ४.९, १०, ११; ८.२३; १३.३५; धौ. १.३; ४.२, ३, ५, ८; ८.३; पृथ. १.२६; जो. १.३; २.१; ४.२, ६; ८.४; पृथ. २.११
लाजीहि टो. ७.२४
लाति का. ८.२३
लाति-सता स. ६ आगे
-लाभेसु गि. ९.२
[लि] खापेत मान. १.१; १४.१३
लिखपितु (त) शा. १.१
लिखपित मान. ४.१८
लिखपेशमि शा. १४.१३; मान. १४.१४
[लिखापयथ] स. ८
[लिखाप] याथा स. ७
लिखा[प] यामि कल. ८
लिखापयिसं गि. १४.३
लिखापापिता टो. ७.३१
लिखापित अ. १.२; २.३; ४.१; ६.१, ५
लिखापिता का. १४.१९; धौ. १.१; जौ. १.१; टो. १.२; २.१५; ४.२; ६.२, १०
लिखित शा. १.३; मान. १.४; ५.२६; ६.३१; १३.१२; धौ. पृथ. १.१९; जो. पृथ. २.१४
लिखितं गि. १४.३, ५; शा. १४.१४; ज. २१
लिखिता गि. १.१०; ५.९; का. १३.१५; धौ. १.४; ६.६; पृथ. १.१०
लिखिते का. ४.१२; १४.२१, २३; शा. १४-१३; मान. ४.१८. १४.१४; धौ. ४.७, ८; १४.२, ३; ब्र. १३
लिखिगि[स्यामि] धौ. १४.२
लिपि धौ. पृथ. १.१७, १९; २.९, १०
-लिपि का. १.१, ३; ५.१७; ६.२०; १३.१५; १४.१९; टो. १.२; २.१५; ४.२; ६.२, १०
लिपिं सा. ७
लिपिकरापरधेन गि. १४.६
लि[पि] करेण ब्र. १३; ज. २२
लि[पि] कलपलाधेन का. १४.२३
लिपी जौ. पृथ. १.९, १०; २.१४, १५; सा. ६
-लिपी गि. १.१, १०; ५.९; ६.१३; १४.१; धौ. १.४; ५.८; ६.६; १४.१; जौ. १.१, ४; ६.६; प्र. ६.३
-लिबि टो. ७.३१, ३२
लुंमिनि-गामे रुम्मि. ४
लुखानि का. २.६; धौ. २.४; जौ. २.४
लुपानि का. ४.१०
लूपानि धौ. ४.३; जौ. ४.३
लेखापितं गि. ४.११, १२
लेखापिता गि. १.२; ६.१३; १४.१
लेखापेत रू. ४
लेखापेशामि का. १४.२१
लेखिता का. १ १, ३; ४.१३; ५.१७; ६.२०
-लोक- धौ. पृथ. २.६
-लोक- गि. ६.९, ११, १४; का. ६.१९,२०; शा. ६.१५,१६; मान. ६.३०,३२; धौ. ६.४,५,७; जौ. ६.५,७
-लोकं धौ. पृथ. २.६
लोकस टो. ७.२८; अ. ६. १, २
लोकसा टो. ६.२, ४
लोकं टो. ७.२४, २८
-लागं जौ. पृथ. २.७
-लोचयितु का. १४. २३; धौ. १४.३
लोचेतव्या गि. ४.१२
-लोचेति शा. १४.१४
लोचेतु का. १३.१७
-लोचेत्पा गि. १४.६
ला [चेषु] शा. ४.१०
लोपापिता का. २.६, धौ. २.३,४, जौ. २.४; टो. ७.२३
लोपापितानि धौ. २.४; टो. ७.२३
लोपितानि का. २.६

व

व (=एव) का. ९.२६; शा. ९.१८, १९; १०, २२; १२.३, ५; १३.७; १४.१४; मान. ३. १०; ९.६, ७; १०.१०; १२. ३, ५; १३.७; धौ. ४.१; पृथ. १-७, २३; २.५; जौ. ४.१; टो. ३.२१;७.३०; अ. ३.२; रू. ३; स.३; मास. ६
व(=वा) गि. ५.५, ८, ६.२, ३, ७, ९; ७.२, ३; ९. ५, ७, ८; १०, १, २, ४; ११. १,३; १२.२, ३, ५, ८; १३. २, ३, ४, ६; १४.५, ६; का. १२.३१; १३.३७; शा. ५.१२ आदि; मान. ५.२२ आदि; धौ; ५.१, २, ६, ७; ६.१ ३; ७.२; पृथ. १.२०, २१; जौ. ५.२; ६.१, ३; ७.२; टो. ४.१४, १७, १८; ५.८; अ. ४.२, ७, ८; ५.७; प्र. रा. ३
व (वसानि का छोटा रूप) रू. १
वंजनतो शा. ३.७
वगं धौ. पृथ. १.२४
[व] गे जौ. पृथ. १.५
वगेना का. १०.२८
वग्रेन शा. १०.२२; मान. १०.११
वच-भूमि का. १२.३१; शा. १२.२; मान. १२.२
-वचनिक जौ. पृथ. १.१३; २.१
वचमेन धौ. पृथ. १.१; २.१; ब्र. १; सि. २
[व] चनेना रा. १

सव्र-प[व] डेष [षु] मान. ५.२१
सव्र-प्रषंड शा. ७.१; १२.७
सव्र-प्रषंडनं शा. १२.२
सव्र-प्रषंडनि शा १२.१
सद्र-प्रषंडेषु शा. ५.१२
सव्र-प्रषडनं शा. १२.८
सव्र-भुतन शा. १३.८
सव्र-मनु शनं शा. १३.६; मान. १३.६
स [व्र-लो] क-हितये मान. ६.३१
सव्र-लोक-हिते मान. ६.३०
सव्र-लाक-हितेन मान. ६.३०
सव्रे शा. १०.५; मान. ७.३०; १२.५
सव्रेषु शा. ५.१३; मान. ५ २४; १३.९
सर्शायके शा. ९.२०
ससव्र (= सव्रे) शा. १४.१३
ससु(धु)-मते शा. १.२
-ससं टो. ५.५
-सस्तुत- गि. ११.२, ३
-सस्तुतेन शा. ९.१९
सस्वतं धौ. पृथ. १.२०; जौ. पृथ. १.१०
-सहय- शा. १०.४, ५
-सहसनि शा. १.२
-सहस्रानि का. १.३; जौ. १.३
-सहसेसु जौ. पृथ. १.२; टो. ४.३; ७.२२
-सहसेसुं धौ. पृथ. १.४
-सहस्र- गि. १३.१; शा. १३.१
-सहस्रनि मान. १.४
-सहस्र-मगं शा. १३.७
-सहस्र भगे मान. १३.७
-सहस्रानि गि. १.९
-[सह] स्रे शा. १३.१
-सहाय- गि. १३.३, ४
सहाय (यें) न गि. ९.८
सहाये [न] धौ. ९.६
सा गि. १३ १०; का. १३.१३, १४
सातिय ग्तो का. २.४
साति[र]केकानि (= सातिरेकानि) रू. १
सातिरेके मास. २; ब्र. २; सि. ६; ज. ४
सातिलेके रू. १
साध (धु) गि. ९.८
साधवानि टो. ७.२८
साधवे टो. ७.२८
साधि [के] स. २
साधु गि. ३.४, ५; ४.११; ९.४, ५, ६, ७; ११.
    २, ३; १२.६; का. ३.७, ८; ४.१२; ९.२६;
    धौ. ३.२, ३; जौ. ३.३; ९.४; अ. २.१
साधु-मता गि. १.६; का. १.२; धौ. १.२;
    जौ. १.२
साधू धौ. ४.७; .५; जौ. ९.६; टो. २.११
सामंता का. २.५; धौ. २.२; जौ. २.२
सामी [पं] गि. २.३
सार-वढी गि. १२.२, ८
सा (सि) लाठ [भे] रू. ५
सालिक अ. ५.२
सालिका टा. ५.३
सावकं का. ६.१८; धौ. ६.३; जौ. ६.३
सावणे ब्र. ५, ८; सि. ११, १५; ज. १२
-सावनानि टो. ७.२०, २२
सावने रू. ३, ५
-सावने टो. ७.२३
सावा (व) ने स. ४
सावापयामि टो. ७.२०
सावपितानि टो. ७.२२
सावापिते ब्र. ५, ८
साविते सि. ११
सासनं सा. ८, ९
सासने सा. ५
साम्घतं जौ. पृथ. २.१४
सि [ने] हे मान. १३.५
सिमले टो ५.५
सिय शा. ९.२०; १२.२, ३; १४.१४; मान. ९.
    ७; १२.२, ३, ७; १४.१४; जौ. पृथ. १.६;
    टो. ४ १५
सियति शा. १०.२२; १२.८; मान. १०.११
सियसु शा. १२.७
सिया का. ९.२६; धौ. पृथ. १.१२, २१; २.४;
    जौ. पृथ. २.४; टो. ७.३२; मे. ४.८; सां. ८;
    रू. ४
-सिलसा का. ४.१२
सिला रुम्मि. ३
सिला-ठंभसि रू. ५
सिला- थं [भा] स. ८
सिला-थंभानि टो. ७.३२
सिला-थभे रुम्मि. ३
सिला-फलकानि टो. ७.३२
[सि] हो (= सिनेहो) शा. १३.५
सीलस्हि गि. ४.९
-सीलम गि. ४.१०; धौ. ४.७
सीलसि का. ४.१२; धौ. ४.६
सु धौ. पृथ १ ४; २.४; जौ. पृथ. १ २; २.५
सुअगे स. ४
सुकट मान. ५.२०
सुकटं का. ५ १४; धौ ५.२; टो. २.१६
सुकतं गि. ५.३
सुकर गि. ५.३; शा. ५.११
सुकिटं शा. ५.११
सुके टो. ५.३
सुखं टो. ४.११; ६.६
-सुखं टो. ४ ५
सुखंमेव धौ. पृथ. २.५; जौ. पृथ. २.६
सुखयमि शा. ६.१६; मान. ६.३१
सुखयामि धौ. ६.६; जौ. ६.६
सुखयिते टो. ७.२४
-सुखये शा. ५.१२; मान. ५.२२, २३
सुखापयामि गि. ६.१२
-[सु] खा [य] गि. ५ ६
सुखायमाया टो. ७ २८
सुखायामि का. ६.२०
-सुखाये का. ५.१५; धौ. ५.४, ५; पृथ. २.८;
    जौ पृथ. २ १२; टो. ४.१२; ६.३
-सुखाहरो गि. पुष्पिका
सुखिनेना (= संखि०) का. १४.१९
सुखियना टो. १.१०
सुखीयन नं. १.६
सुखीयन-दुखीयनं टो. ४.६
सुखीयना प्र. १.४
-[सुखे] टो. ६.४
-सुखेन धौ. पृथ. १.५; २.३; जौ. पृथ. १.३; २.३
सुतु का. १३.११; टो. ७.२१
सुदवसाये टो. ५.१६
-सुधि का. ७.२१, २२
सुधि गि. ७.२
-सुधिता गि. ७.३
-सुधी धौ. ७.१, २; जा. ७.१
सुनेयु कल. ७
सुपठयं शा. १.२
सुपठाये का १.३
सुप [ध्र] ये मान १.४
सुपदरथे मान. ५ २१
सुपदालये का. ५.१४; धौ. ५ ३; जौ. ५.३
सुपिये बरा. ३.४
सुभासिते कल. ३
सुभि रू. १; स. १; मास. २, ३
-सुयुते का ५.१६
-सुलिगिके टो. ७.३१
सुवंणगिरीते ब्र. १; सि. १
सुवामिकेन का ९.२५; धौ. ९.५; जौ. ९.४
सुविता जौ. पृथ. १.४
सुविहितनं शा १०.५; मान. १३.५
सुवि [हि] ता धौ पृथ. १.८
सुवे टो. १.६
-सुश्र (श्रु) ष शा. १०.२१
सुश्रुष शा. ३.६; ४ ७; ११.२३; १३ ४; मान.
    ३.१०; ४. ५; ११.१२; १३.४
-सुश्रुष शा. १३.४; मान १०.९; १३.४
सुश्रुषतु शा. १०.२१; मान. १०.९
सुश्रुषेयु शा. १२.७; मान. १२.७
सुसुंसा गि. १३.३
-सुसुंसा गि. १३.३
सुसुंसेर गि. १२.७
-सुसुस का. १०.२७
सुसुसातु का. १०.२७
सुसुसा का. ३.८, ४.११
सुसुसाया टो. ७.२९
सुसूसं जौ. १०.१
सुसूसतु धौ. १०.२; जौ. १०.१

सुखुसा धौ. ३.२
-सुसूसा धौ. ४.४
सुसूसाय अ. १.३
सु[सू] साया टो. १.४
सुसूसितवियि ब्र. ९
-सुश्रुसा गि. १०.२
सुश्रुसता गि. १०.२
-सुश्रुसा गि. ४.७, ११.२
सुश्रुसा गि. ४.७
सुश्र सा गि. ३.४
सुहदयेन गि. ९.७
सूकली टो. ५.८
सूकले टो. ५ १७
-सूने कल. ५
सूपठाये धौ. १.३; जौ. १.३
सूपाथाय गि. १.९, ११
-[सू] रि [यि] के सां. ४
से गि. १.१०; का. १.३, ४; ४.९, १२; ५.१३, १४; ६.१७, २०; ९.२५, २६, २७; १३.१२, १३; मान. १.४, ५; ४.१३, १७; ५.१९ २०, २१; ६.३१; ८.३४; ९.३, ५, ७, ८; ११.१४; १२.६; १३.३, ४, ७, ९, ११; १४.१४; धौ. १.४; ४.२, ७; ५.१, २, ३, ५, ६; ६.१; ८.१; ९.३, ४, ५; पृथ. १.७, ११, १४; २.७, ८; जौ. १.४; ४.२; ५.३; ६.१; ८.१; ९.२, ५; पृथ. १.८; टो. २.१६; ६.३, ९; ७.१७, ३०, ३१; कौ. ३; सा. ४; स. ४; कल. ३; मास. ७; ब्र. ८, १०; सि. ११; ज. १४
सेठे का. ४.१२; धौ. ४.६
सेत-कपोते टो. ५.६
सेनो धौ. पुष्पिका
-सेयके अ. ५.३
सेयथ अ. ५.२
सेयथा टो. ५.२
सेस्टे गि. ४.१०
सो गि. १.११; ५.१, ३; ८.२; ११.४; १२.६; १३.४; शा. १.२, ३; ४.७, १०; ५.११; ८.१७; ९.१८, १९, २०; ११.२४; १२.१; १३.२, ६, ८, ११, १२; १४.१४
सोखये टो. २.१२
सोखये टो. ७.२८
सोखेये अ. २.१
सोतविय धौ. पृथ. १.१८; २.११
सोतविया धौ. पृथ. १.१७; २.१०; जौ. पृथ. १.९; २.१५, १६
स्टिता गि. ६.४
स्त्रियक शा. ९.१८
स्प [क्रिय] शा. १३.११
स्पग्र मान. ६.३१
स्पग्रं शा. ६.१६
स्पमिकेन शा. ९.१९; ११.२४; मान. ९.५; ११.१३
स्पस (सु) न शा. ५.१३
-स्पसुन मान. ५.२४
-स्रमणानं गि. ४.२; ११.२
स्रावापकं गि. ६.६
स्रुणारु गि. १२.७
-स्रुता गि. १२.७
स्रोतं शा. ४.१०
स्रोते मान. ४.१७
[स्व] अ ज. १५
स्वग-आलधि जौ. पृथ. १.८
स्वग गि. ६.१२; ९.९; का. ६.२०; धौ. ६.६; पृथ. १.१६; २.९; जौ. ६.६; पृथ. १.९; २.१३
स्वगस धौ. ९.७; पृथ. १.१५
स्वगारधी गि. ९.९
स्वगे जौ. ९.६; रू. ३; ब्र. ५; सि. १०
स्वय गि. ६.६
स्वमतं (= सम्मतं) धौ. पृथ. २.९
स्वामिकन गि. ९.६
-स्वेतो गि. पुष्पिका

ह

हंचे का. ९.२६; शा. ९.२०
हंवंति अ. १.३
[हं] भेयसु शा. १३.८
हंतवियानि टा. ५.१५
[ह] नावयानी मे. ५.८
हंमे टो. ५.३
हकं का. ६.१८, २०; धौ. ६.२, ५; पृथ. १.२, ५, पृथ. १.५, ६, २१; २. १.३, ६, ८; जौ. ६.५. २.१, ८, ११; टो. ३.२१; रू. १; बै. २; कल. ४ ब्र. २; सि. ५; ज. ३
हचे मान. ९.७, ८
हतं गि. १३.१
हते का. ३.३५., ३९; शा. १३.१; मान. १३.७
[ह] ना शा. १३.३
[ह] थिनि का. ४.१०
हथीनि धौ. ४.२
ह (हि) ध रू. ४
हपेशनि मान ५.२०
हपेशदि शा. ५.११
हमा कल. २
हमियाये कल. ३
हरणिन शा. २.५; मान. २.७, ८
हरित-व [नि] णा गि. ४.३
हहनि शा. ५.११; ११.२३
हा (लो) मि गि. १३.४
-हापगिन् धौ. पृथ. १.२५
हापगिम्मति का. ५.१४; धौ. ५.२
हापेमन्ति गि ५.३
हापयिसानि गि. ७.६, ७
हालापिता का. २.६; धौ. २.३; जौ. २.४
-हितं गि. ६.९; शा. ६. १५
-हितत्पा गि. ६.११
-हि ये शा. ६.१६; मान. ६.३२
-हित-सुखं टो. ४.५
[हित] -सुखये शा. ५.१२
हित-सुखाये धौ. ५.४, ५; पृथ. २.८; जौ. पृथ. २.१२; टो. ४. १२; ..३
हित-[सुखे] टो. ६.४
हित-सुखेन धौ. पृथ. १.५; २.३; जौ. पृथ. १.३; २.३
-हिताय गि. ६.१४
-हिताये का. ६.२०; धौ. ६.७; जौ. ६.७
-हिते का. ६.१९; मान. ६.३०; धौ. ६ ४; जौ. ६.५
-हितेन शा. ६.१६; मान. ६.३०; धौ. ६.५; जौ. ६.५
-हितेना का. ६.२०
हिद का. ६.२०; ९.२६, २७; शा. १.१; ४.१०; १३.९; मान. १.१; ५.२४; ९. ७, ८; १३.९, १०; धौ. ५.६; ६.६; पृथ. १.१९; २.९; जौ. १.१; ६.६; पृथ. २.१४; टो ७. २७; रुम्मि. २.४
हिदतं टो. ४.७
हिदत-पालते टो. १.३; ७.३१
हिदतिकाये टो. ३.२२
हिदलोक धौ. पृथ. २.६
हिदलोकिक का. १३. १८; शा. १३.१२
हिदलोकिक-पाललोकिकाये धौ. पृथ. २.३, ९
हिदलो [किक]-पाललोकिके [न] धौ. पृथ. १.५
हिदलोकिके का. ९.२६; मान. ९.७
हिदलोकिका शा. १३ १२
हिदलोकिक्य का. १३.१७
हिदलोकिक्ये का ११.३०
हिदलोके मान. ११.१४; १३.१३
हिदलो [गं] जौ. पृथ. २.७
हिदलोगि [क]-पाललोकिकाये जौ. पृथ. २.१२
हिदलोगिक-पाललोकिकंण जौ. पृथ. २.४
हि[दलो]गिक-पाललोकिकेन जौ. पृथ. १.३
हिद-सुखये शा. ५.१२; मान. ५.२२, २३
हि.-सुखाये का. ५.१५
हिदा का. १.१; ५.१६; ८.२२; ९.२७; १३.९
हिनि का. ४.१३; शा. ४.१०; मान. ४.१८
-हिनि का. ४.१२; शा. ४.१०; मान. ४.१७
हिरंण-पटिविधाना गि. ८.४
हिरं -पटिविधाने सोपा. ८.७
[हिर] ञ-पटिवि [धने] मान. ८.३५
हिरञ-पटिविधने शा. ८.१७
हिलन-पटिविधाने का. ८.२३; धौ. ८.३; जौ. ८.३
हीनि गि. ४.११; धौ. ४.७; जौ. ४.८
-हीनि धौ. ४.७
-हीनी गि. ४.११
हीयं ब्र. ४

सन्दर्भ-सूची

अय्यर, वी. गोपाल : दी डेट ऑफ् बुद्ध, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ३७.३४१-५०, १९०८

आयंगर, एल० के० : अग्नि-स्कन्ध एण्ड दी फोर्थ रॉक एडिक्ट ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४४. २०३-०६, १९१५ तथा जर्नल ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१५, ५२१-२७

" : सतियपुत्र ऑफ् दी अशोक एडिक्ट्स, जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१९, ५८१-८४

" : सतियपुत्र, जर्नल ऑफ् इण्डियन हिस्ट्री, १४. २७३-७९, १९३५

" : दी कोसर ऑफ् तामिल लिट्रेचर एण्ड दी सतियपुत्र ऑफ् अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, जर्नल ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९२३. ६०९-१३

आप्टे, वी. सी. : अशोक चरित्र (मराठी), पूना, १९१९

ओल्डेनबर्ग, एच. : दि विनय पिटक : बुद्धिस्टिक स्टडिएन

ओल्डहम, सी. ई. ए. डब्ल्यू. : रिसेण्ट डिस्कवरीज ऑफ् एडिक्ट्स ऑफ अशोक

इलियट, सर चार्लस् : हिन्दुइज़्म एण्ड बुद्धिज़्म, खण्ड १, लन्दन १९२१, २५४-७५

इन्द्रजी, भगवान लाल : दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, इण्डियम एण्टीकिटी १०. १०५. ०९-१८८१

" : एण्टीक्वेरियन रिमेन्स ऐट सोपारा एण्ड पदण, जर्नल ऑफ् दी बाम्बे ब्रांच रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १५. २७३-३२८, १८८२

एडमण्ड्स, अलबर्ट जे. : बुद्धिस्ट बिब्लिओग्राफी, जर्नल ऑफ् दी पालि टेक्स्ट सोसाइटी, १९०२-०३, २८-२९

: आइडेण्टिफिकेशन ऑफ् अशोक्स फर्स्ट बुद्धिस्ट सेलेक्शन, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१०, ३८५-८७

एगरमाण्ट, पी. एच. एल. : दी डेट ऑफ् अशोक्स रॉक एडिक्ट १३, एक्टा ओरिएण्टेलिआ, १८. १०३-२३, १९४०

कार्पेण्टियर, जे. : ए नोट ऑन दी पडरिया ऑर रुम्मिनदेई इन्सक्रिप्शन, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४३. १७-२०, १९१४

" : एण्टियोकस, किंग ऑफ् यवनस, बुलेटिन ऑफ् दी स्कूल ऑफ् ओरियण्टल स्टडीज़, ६. २०३-२१, १९३०-३२

" : रिमार्क्स ऑन दी फोर्थ रॉक एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ९. ७६-८७, १९३०

क्लार्क, डब्ल्यू. ई. : मागधी एण्ड अर्द्धमागधी, जर्नल ऑफ् दी अमेरिकन ओरियण्टल सोसाइटी, ४४. ८१-१२१, १९२४

कोर्ट, एम. ए. : एक्सट्रैक्ट्स ट्रान्सलेटेड फ्राम मेमॉयर ऑन दी मेप ऑफ् पेशावर एण्ड दी कण्ट्री कम्प्राइज्ड बिट्वीन दी इण्डस एण्ड दी मेडेस्पीस् : दी पिउक्लेटीस एण्ड तक्षशिला ऑफ् एंश्यण्ट ज्योग्रफी, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ५. ४६८-८२, १८३६

काउसेन्स, एच. : डिस्क्रिप्शन ऑफ् रूपनाथ रॉक, आर्केयोलॉजिकल सर्वे ऑफ् वेस्टर्न इण्डिया, १९०३-०४, पैरा ११३, पृष्ठ ३५-३६

कोड्, जी. आर. : दी अशोक नुमेरल्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४०-५५-५८, १९११

कर्न, एच. : वर्सन्स ऑफ् सम ऑफ् दी अशोक इन्सक्रिप्शन्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ५. २५७-७६, १८७६

" : ऑन दी सेपरेट एडिक्ट्स ऐट धौली एण्ड जौगड, : जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १२. ३७९-९४, १८८०

" : मैनुअल ऑफ् इण्डियन बुद्धिज़्म, १८९८

कीलहॉर्न, एफ. : भगवत् तत्रभवत् एण्ड देवानांप्रिय, जर्नल ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८, ५०२-०५

किट्टो, एम. : नोट् ऑन दी इन्सक्रिप्शन फाउण्ड नियर भाब्रा, जर्नल ऑफ दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ९. ६१७-१९, १८४०

: नोट्स ऑन दी केव्स ऑफ बराबर, जर्नल ऑफ दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, १६. ४०१-१६, १८४१

कौशाम्बी, धर्मानन्द : अशोकाज भाब्रा एडिक्ट एण्ड इट्स रिफ़ेन्सेज़ टु तिपिटक पैसेजेस, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४१, ३७-४०, १९१२

कृष्णस्वामी, सी. एस. एण्ड घोष, अमलानन्द : ए नोट ऑन दी इलाहाबाद पिलर ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९३५, ६९७-७०६

गोपाल, एम. एच. : दी डेट ऑफ् अशोक्स रॉक एडिक्ट्स, इण्डियन एण्टीक्विटी, ५६. २७-२९, १९२७

ग्रियर्सन, जी. ए. : दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् प्रियदसी

" : एम. ई. सेनास नोट्स डी' एपिग्राफिक इण्डियन, इण्डियन एण्टीक्वेरी, १९. ४३-४४, १८९०

" : ऑन दी कन्डीशन ऑफ् अशोक इन्सक्रिप्शन्स इन इण्डिया, टेन्थ कांग्रेस, पार्ट २, १४०-५०, १८९४

" : संस्कृत ऐज ए स्पोकेन लैंग्वेज, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०४, ४७७-७९

" : लिंग्विस्टिक रिलेशनशिप ऑफ् दी शहबाजगढ़ी इन्सक्रिप्शन, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०४, ७२५-३१

" : अपकोसिय, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०६, ६९३

" : यास्कस दत्र शाहबाजगढ़ी एण्ड मानसेरा फोनेटिक्स, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१३, ६८२-८३

,, : शहबाजगढ़ी उत्थानम् शौरसेनी लोकेटिव इन (इ), जर्नल ऑफ् दी अमेरिकन ओरिएण्टल सोसाइटी, ४२, २११-१२, १९२२

घाटगे, ए. एम. : ग्रुप्स-ऑफ् ट्रप्यूट्स इन मिडिल-इण्डो आर्यन्, जर्नल ऑफ् दी युनिवर्सिटी ऑफ् बाम्बे, १४, ५२-५४, १९४५

घोष, ए. : दी कोसम इंसक्रिप्शन ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी युनिवर्सिटी ऑफ् बाम्बे, तीन खण्ड १।४

घोष, मिस भ्रमरा : डिड नॉट यवन डिनोट पर्सियन इवेन बिफोर दी सेकेण्ड संचुरी ए. डी. ? इण्डो-यूरोपियन, १. ५१९-२१, १९३५

घोष, एम. : रेलीजन ऑफ् अशोक, द्वितीय ऑल इण्डिया ओरिएण्टल कान्फ्रेन्स, ५५३-५८, कलकत्ता, १९२२

घोषाल, यू. एन. : ऑन सम प्वाइन्टस रिलेटिंग टु दी मौर्य ऐडमिनिस्ट्रेटिव सिस्टम, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ६. ४३३-३५; ६१४-२७, १९३०

चक्रवर्ती, एम. एन. : एनीमल्स इन दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ पियदसी, मेमॉयर्स ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, खण्ड १, ३६१-७४, कलकत्ता, १९०६

चन्दा, रामप्रसाद : दी बिगनिंग्स ऑफ् आर्ट इन ईस्टर्न इण्डिया विद स्पेशल रिफरेन्स टु स्कल्पचर्स इन दी इण्डियन म्यूजियम, कलकत्ता, मेमॉयर्स ऑफ् दी आर्कलॉजिकल सर्वे ऑफ् इण्डिया, नं० ३० कलकत्ता, १९२७

,, : नवनिष्कृत अशोक शिलालेख, प्रवासी, १९३५, ८०६-०८

चौधरी, बंकिम चन्द्र रे : सुराष्ट्र अण्डर दी मौर्याज, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ७. ६२९-३०, १९३१

जैक्सन, वी. एस. : नोट्स ऑन दी बराबर हिल्स, जर्नल ऑफ् दी बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, १२. ४९-५२ १९२६

जेकब, एल. जी. एण्ड वेस्टरगर्ड, एन. एल. : कॉपी ऑफ् दी अशोक इन्सक्रिप्शन्स ऐट गिरनार, जरनल ऑफ् दी बाम्बे ब्रांच ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १. २५७-५८, १८४३

जेकब, ली ग्राण्ड : करेक्शन्स ऑफ् सण्ड्री एरर्स इन दी लिथोग्राफ्ड कॉपी ऑफ् दी गिरनार अशोक इन्सक्रिप्शन्स पब्लिश्ड इन नम्बर ५ ऑफ् दी जर्नल ऑफ् दी बाम्बे ब्रान्च ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, २. ४१०, १८४७

जैन, के. पी. : अशोक एण्ड जैनिज़्म, जैन एण्टीक्वेरी, ५. ५३-६०, ८१-८८, १९३९

जायसवाल, के. पी. : दी रॉक एडिक्ट ६ ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी ४२. २८२-८४, १९१३

,, : प्रोक्लेमेशन्स ऑफ् अशोक विद ए रिवाइज़्ड ट्रान्सलेशन, माडर्न रिव्यू, नं १९१५, ८१-८९

,, : नोट्स ऑन अशोक्स इन्सक्रिप्शन्स, जर्नल ऑफ् दी बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, ४. १४४-४५, १९१८

,, : दी टर्म्स 'अनुसंधान' 'राजुक' एण्ड फार्मर किंग्स इन अशोक्स इन्सक्रिप्शन्स, जर्नल ऑफ् दी बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, ४. ३६-४३, १९१८

,, : दी अर्थशास्त्र एक्सप्लेन्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४७. ५०-५६, १९१८

,, : नोट्स ऑन अशोक इन्सक्रिप्शन्स, दी टर्म 'अपवु' इन रॉक सीरीज १३, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४७. २९७, १९१८

,, : एविडेन्स ऑफ् ऐन अशोकन पिलर ऐट भुवनेश्वर इन उड़ीसा, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ५८. २१८-१९, १९२९

,, : नोट्स ऑन अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ५९-१८ १९३०

,, : ऐन एक्ज़ैक्ट डेट इन दी रेन ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, १७. ४००, १९३१

,, : प्लेसेस एण्ड पिपुल्स इन अशोक्स इन्सक्रिप्शन्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ६२. १२१-२३, १९३३

,, : प्रोक्लेमेशन्स ऑफ् अशोक ऐज ए बुद्धिस्ट एण्ड हिज जम्बुद्वीप, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ६२. १६७-७१, १९३३

,, : एर्रगुडि माइनर प्रोक्लेमेशन, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ९. ५८३, १९३३

टूॉयर, ए. : रिमार्क्स अपॉन दि सैक्रेड इन्सक्रिप्शन ऑफ् दी इलाहाबाद पिलर, जर्नल ऑफ् एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ३. ११८-२३, १८३४

टर्नर, आर. एल. : दी फ्यूचर स्टेम इन अशोक, बुलेटिन ऑफ् दी स्कूल ऑफ् ओरियण्टल स्टडीज, ६. ५२९-३७, १९३०-३२

,, : अशोकन वाइम-इयर, बुलेटिन ऑफ् लिंग्विस्टिक सोसाइटी ऑफ् इण्डिया, २. १६१-६४, १९३२

,, : दी गोवीमठ एण्ड पालिगुडि इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, हैदराबाद आर्क्योलॉजिकल सीरीज नं० १०, कलकत्ता, १९३२

टर्नर, जी. : फर्दर नोट्स ऑन दी कॉलम्स ऐट डेलही, इलाहाबाद, बेतिया, एटसेट्रा, जर्नल ऑफ् एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ६. १०४९-६४, १९३७

डेविड्स, मिसेज सी. ए. एफ. रीज़ : अशोक एण्ड ऑफ् दी वे, इण्डियन आर्ट एण्ड लेटर्स, १४ (न्यू सीरीज), ४६. ५३, १९४०

डेविड्स, टी. डब्ल्यू. रीज़ : ऑन दी एन्शयण्ट क्वायन्स एण्ड मेजर्स ऑफ् सीलोन, दी इण्टर नेशनल न्यूमिस्मेटा ओरियण्टेलिया, ५७-६०, लन्दन, १८७७

,, : नोट ऑन सम ऑफ् दी टाइटिल्स यूज़्ड इन दी भाब्रा, एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी पालि टेक्स्ट सोसाइटी, १८९६, ९३-९८, लन्दन

,, : दी सम्बोधि इन अशोक्स एडिक्ट्स, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १८९८, ६१९-२२

,, : अशोक्स भाब्रा एडिक्ट, जरनल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसायटी, १८९८, ६३९-४०

,, : डायलॉग्स ऑफ् दी बुद्ध, सैक्रेड बुक्स ऑफ् दी बुद्धिस्ट्स, खण्ड २, लन्दन, १८९९

,, : मिलिन्द, खण्ड १, पृष्ठ ३८

,, : बुद्धिस्ट इण्डिया, लन्दन, १९०३

थापर, रोमिला : अशोक एण्ड डिक्लाइन ऑफ दी मौर्यज, लन्दन, १९६१

थामस, एफ. डब्ल्यू. : अशोक नोट्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ३७. १९-२४, १९२८

थोमा, पी. जे. : दी आइडेण्टीफिकेशन ऑफ् सत्यपुत्र, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९२३, ४११-१४

थामस, ई. जे. : बुद्धघोष एण्ड दी डेट ऑफ् अशोक, इण्डियन कल्चर, १. ९५-९६, १९३५

" : दी क्वेश्चन ऑफ् जोरास्ट्रियन इनफ्लुएन्स ऑन अर्ली बुद्धिज़्म, डा० मोदी मेमोरियल वाल्यूम पेज, २७९-८९, १९३०

थामस, एडवर्ड : दी अर्ली फेथ ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, ९. १५५-२३४, १८७७

थामस, एफ़. डब्ल्यू. : संस्कृत ऐज ए स्पोकेन लैंग्वेज, जरनल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०४, ४६०-६५

" : उबलिके एण्ड युक्त, जरनल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०९, ४६६-६७

" : रुपनाथ एडिक्ट ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१२, ४७७-८१

" : नोट्स ऑन दी एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१४, ३८३-९५

" : नोट्स ऑन दी एडिक्ट्स, ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१५, ९७-११२

" : नोट्स ऑन दी एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१६, ११३-२३

" : अशोक, दी इम्पीरियल पैट्रेन ऑफ् बुद्धिज़्म, कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ् इण्डिया, रैप्सन ई० जे०, वाल्यूम १, चैप्टर २०, ४९५-५१३, १९२२

" : संस्कृत मैस्कुलिन प्लूरल्स इन आनि, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९२४, ४४९-५०

" : भास एण्ड एक्यूजेटिव प्लूरल मैस्कुलिन इन आनि, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९२५, १०४-०७

दीक्षितार, वी० आर० आर० : ए हिस्ट्री ऑफ् अर्ली बुद्धिज़्म इन इण्डिया, जर्नल आफ् दी बाम्बे हिस्टारिकल सोसाइटी २. ५१-७४, १९२९

" : अशोकस् रिलीज-दी एवीडेन्स ऑफ् आर्क्योलॉजी, जर्नल आफ् ओरियण्टल रिसर्च, ४. २६७-८१, १९३०

" : दी मौर्यन पॉलिटी, मद्रास, १९३२

" : धर्मविजयः ए न्यू इण्टरप्रेटशन, डॉ० के० बी० पाठक कामेमोरेटिव वाल्यूम २८०-८६, १९३४

" : दी थर्टीन्थ रॉक एडिक्ट ऑफ् अशोक, वुलनर कॉमेमोरेटिव वाल्यूम, ६८-७४, १९४०

" : ऐन इट्रीगिंग स्टेटमेण्ट इन अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, के० वी० रंगस्वामी आयंगर कोमेमोरेटिव वाल्यूम २५-३० बनारस १९४०

" : दी कोशर, देअर प्लेस इन साउथ इण्डियन हिस्ट्री, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कॉन्फरेन्स २१७-१८, पटना १९३०

" : हू वेयर दी सतियपुत्रज ? इण्डो-यूरोपियन १, ४९३-९६, ९३४-३५

" : दी सतियपुत्रस्, सातकर्णीस् एण्ड नासत्यज, इण्डो-यूरोपियन, २. ५४९-५६, १९३६

देव, एस. के. : अशोकस् धम्मलिपिज, कलकत्ता, १९१९

" : नोट्स ऑन सम एडिक्ट्स ऑफ अशोक, जर्नल एण्ड प्रोसीडिंग्स ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, १६. ३३९-३७, १९२०

" : दी स्वस्तिक एण्ड दी ओंकार, जर्नल एण्ड प्रोसीडिंग्स ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, १७. २३९-४७, १९२१

नारिस, ई० : ऑन दी कपूर्दिगिरि रॉक इन्सक्रिप्शन, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ८. ३०३-१४, १८४६

नारायण राव, सी० : ए नोट ऑन सुवर्णगिरि

" : न्यू अशोकन एडिक्ट डिस्कवर्ड ऐट एर्रगुड़ि

पाण्डेय, राजबली : हिस्टॉरिकल एण्ड लिटरेरी इंसक्रिप्शन्स, वाराणसी, १९६१

पाई, एम० गोविन्द : सतियपुत्र ऑफ् अशोकज एडिक्ट

पिटर्सन, पी० : ए कलेक्शन ऑफ् प्राकृत एण्ड संस्कृत इन्सक्रिप्शन्स

प्रिंसेप, जे० : नोट ऑन इन्सक्रिप्शन न० १ ऑफ् दी इलाहाबाद कालम, (प्रयाग स्तम्भके अभिलेख सं० १ पर टिप्पणी), जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, ३. ११४-१७ १८३४

" : नोट ऑन दी मठिया लाठ इन्सक्रिप्शन (मठिया लाठ अभिलेखपर टिप्पणी), जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, ३. ४८३-८७ १८३४

" : फेक्सिमिलीज ऑफ् ऐन्शयेण्ट इन्सक्रिप्शन्स (प्राचीन अभिलेखोंकी मूलप्रति) जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, ६. ६३-१८३१

" : फर्दर एल्युसिडेशन ऑफ् दी लाट ऑर शिलास्तम्भ इन्सक्रिप्शन्स फ्रॉम वेरियस सोर्सेज, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, ६. १९०-९१, १८३१

" : इण्टरप्रेटेशन ऑफ् दी मोस्ट एंशिएण्ट ऑफ् दी इन्सक्रिप्शन्स—ऑन दी पिलर काल्ड दी लाट ऑफ् फीरोजशाह, नियर डेलही ऐण्ड ऑफ् दी इलाहाबाद, रधिया ऐण्ड मठिया पिलर, ऑर लाट इन्सक्रिप्शन्स व्हिच ऐग्री देयर विथ

" : नोट ऑन फैक्सिमिलीज ऑफ् दी वेरियस इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् दी ऐंशिएण्ट कॉलम ऐट इलाहाबाद टेकेन बाई कैप्टेन एडवर्ड स्मिथ, इंजीनियर्स, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, ६. ९६३-६९७ १९३७

" : डिस्कवरी ऑफ् नेम ऑफ् ऐण्टियोकस दी ग्रेट ऑफ् दी एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, किंग ऑफ् इंडिया, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ७. १५६-६७, १८३८

" : ऑन दी एडिक्ट्स ऑफ् प्रियदर्शि ऑर अशोक दि बुद्धिस्ट मॉनर्क ऑफ् इण्डिया, प्रिजर्व्ड ऑन दी गिरनार रॉक—इन दी गुजरात पेनिनसुला ऐण्ड

ऑन दी धौली रॉक इन कटक विद दी डिस्कवरी ऑफ् टॉलेमीज नेम देयरइन, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल, ७. २१९-८२. १८३८

" : एग्जैमिनेशन ऑफ् दी सेपेरेट एडिक्ट्स ऑफ् दी अस्वस्तामा इन्सक्रिप्शन्स ऐट धौली इन कटक, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बंगाल ७. ४३४-५६ १८३८

फ्लीट, जे. एफ. : फेक्सिमिलीज ऑफ् दी इंसक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी १३. ३०४-०६, १८८४ इलाहाबाद एण्ड डेलही पिलर्स

" : दी सहसराम, रूपनाथ एटसेटरा एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०३. ८२९

" : दी डेट ऑफ् बुद्धाज डेथ, एज डिटरमिण्ड बाई ए रिकर्ड ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी आयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०४. १-२६

" : दी रुहसराम, रूपनाथ एटसेटरा एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०४. ३३५ शार्ट नोट

" : एपिग्राफिक रिसर्चेज इन माइसोर, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०५. ३०४

" : दी मीनिंग ऑफ अधकोसिय इन दी सेविन्थ पिलर एडिक्ट ऑफ अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०६, ४०१-१७

" : दी लास्ट एडिक्ट ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८. ८११-२२

" : दी रुम्मिन देई इन्सक्रिप्शन, जनरल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८. ८२३

" : दी रुमिन देई इन्सक्रिप्शन एण्ड दी कन्वर्सन ऑफ् अशोक टु बुद्धिज्म, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०८. ४७१-९८

" : उद्‌वलिक एण्ड प्रणय क्रिया, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०९ ७६०-६२

" : दी लास्ट वर्ड्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०९. ९८७-१०१६, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१०. १३०१-०८, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१३. ६५५-५८

" : रिमार्क्स ऑन हुल्त्ज नोट ऑन दी रूपनाथ एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१०. १४६-४९

" : दी २५६ नाइट्स ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९११. १०९१-१११२

" : आर्क्योलोजिकल वर्क इन हैदराबाद डेकन, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१६. ५७२-७४

फ्रैंके, आर. ओ. : पालि एण्ड संस्कृत, स्ट्रसवर्ग १९०२, १-५

बारनेट, एल. डी. : दी अर्ली हिस्ट्री ऑफ् सदर्न इण्डिया, कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ् इण्डिया, I, ५९३-६०३, १९२२

बनर्जी-शास्त्री, ए. : स्टडीज इन अशोक, जर्नल ऑफ् बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, ८. ७५-८२. १९२२

बरुआ, बी. एम. : ए नोट ऑन दी भाब्रा एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१५. ८०५-१०

" : इन्सक्रिप्शनल एक्सकरशन्स इन रिस्पेक्ट ऑफ् अशोक एडिक्ट्स, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, २. ८२-१२८, १९२६

" : दी एर्रगुडि कॉपी ऑफ् अशोकज माईनर रॉक एडिक्ट, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ९. ११-२०, १९३३

" : अशोकस माईनर रॉक एडिक्ट, दी एर्रगुडि कॉपी, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, १३. १३२-६. १९३७

" : आइडेण्टिटी ऑफ् असन्धिमित्ता एण्ड कालुवाकी, इण्डो-यूरोपियन १. १२२-३. १९३४-३५

" : अशोक एण्ड हिज इन्सक्रिप्शन्स, कलकत्ता १९४६

" : अशोकज एकजैम्पुल एण्ड ब्रह्मन् एनिमॉसिटी, माडर्न रिव्यू. ८७. ५९-६२. १९४७

" : रेलिजन ऑफ् अशोक, एम. बी. एस. पब्लिकेशन, कलकत्ता

" : अशोक एडिक्ट्स इन न्यू लाइट,

बसाक आर. जी. : दी वर्ड्स 'नीति' एण्ड 'विनीत' एज यूज्ड इन इण्डियन एपिग्राफ्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४८. १३-१५, १९१९

" : अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, कलकत्ता, १९५९

बसु, जी. पी. : ट्रांसपोजीशन ऑफ् –र– इन दी वेस्टर्न वर्शन्स ऑफ् दी अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी ७. ११८-२६, १९४४

बीम्स, जोन : 'रजुक' ऑर 'लजुक', जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १८९५. ६६-१६२

ब्लाख, जे. : अशोक एट ला मागधी, बुलेटिन ऑफ् दी स्कूल ऑफ् ओरिएण्टल स्टडीज, ६. २९१-९५, १९३०-३२

बोस, ए. के. : अनुसम्यान, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ९. ८१०-२. १९३३

बोस, एम. एम. : दी रेलीजन ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी डिपार्टमेण्ट ऑफ् लेटर्स, कलकत्ता युनिवर्सिटी, १०. १२९-४४, १९२३

" : दी कलिङ्ग एडिक्ट ऑफ् धौली, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ३. ७३-८, ३३६-५५, १९२७

" : अशोकज रॉक एडिक्ट्स, फर्स्ट, ऐट्थ, नाइन्थ एण्ड एलेविन्थ, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ४. ११०-२३, १९२८

बॉयर, एम. ए. एम. : सुरक्वेल्क्स इन्सक्रिप्शन्स दी ल' इंदे, जर्नल एशियाटिक, ४८५-५०३, १८९८

ल' इन्सक्रिप्शन्स दे सारनाथ एट सेस पैरलेल्स द' इलाहाबाद एट दे साची; जर्नल एशियाटिक सोसाइटी, ११९-४२- १९०७

ब्यूलर, जी. : थ्री न्यू अशोक एडिक्ट्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी ६. १४९-६०, १८७७

" : दी थ्री न्यू एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ७. १४१-६०, १८७८

" : ट्रांसक्रिप्शन ऑफ् दी डेलही एण्ड इलाहाबाद पिलर एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी, १३. ३०६-१०, १८८४

,, : ट्रांसक्रिप्ट्स एण्ड ट्रांसलेशन्स ऑफ् दी धौली एण्ड जौगड वर्शन्स ऑफ् अशोकज एडिक्ट्स, आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ् सदर्न इण्डिया, १. ११४-३१. १८८७

,, : टेक्स्ट्स ऑफ् दी अशोक एण्डिक्ट्स ऑन दी डेलही-मेरठ पिलर एण्ड दी सेपरेट एडिक्ट्स ऑन दी इलाहाबाद पिलर, इण्डियन एण्टीक्वेरी, १९. १२२-६, १८९०

,, : दी बराबर एण्ड नागार्जुनी हिल केव इन्सक्रिप्शन ऑफ् अशोक एण्ड दशरथ, इण्डियन एण्टीक्वेरी, २०. ३६१-५. १८९१

,, : अशोकज टवेल्थ रॉक एडिक्ट एकार्डिंग टु दी शहबाजगढी वर्शन, एपिग्राफिया इण्डिका, १. १६-२०. १८९२

,, : अशोकज सहसराम, रूपनाथ एण्ड वैराट् एडिक्ट्स; इण्डियन एण्टीक्वेरी, २२. २९९–३०६, १८९३.

,, : दी अशोक एडिक्ट्स फ्रॉम माइसोर, वी. ओ. जे. ८.२९–३२. १८९३.

,, : दी पिलर एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, एपिग्रॉफिया इण्डिका, २. २४५ — ७४. १८९४.

,, : अशोकज रॉक एडिक्ट्स एकार्डिंग टु दी गिरनार शहबाजगढ़ी, कालसी एण्ड मानसेहरा वर्शन्स, एपिग्रॉफिया इण्डिका, २.४४७–७२. १८९४

,, : दि डिस्कवरी ऑफ् ए न्यू फ्रैगमेण्ट ऑफ् अशोकज एडिक्ट्स थर्टीन्थ एट जूनागढ, वी. ओ. जे. ८. ३१८–२०. १८९४

,, : दी राइटर ऑफ् अशोकज सिद्धपुर एडिक्ट्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी, २६. ३३४–५. १८९७.

,, : वर्ड्स फ्रॉम अशोकज एडिक्ट्ज फाउण्ड इन पालि, वी. ओ. जी. १२-७५-६. १८९८

,, : दी अशाक एडिक्ट्स ऑफ् पडेरिआ एण्ड निगलीव, एपीग्रॉफिया इण्डिका, ५. १-६ १८९८-९.

बरगेस, जे. रिपोर्ट्स ऑन दी एण्टीक्विटीज ऑफ् काठियावाड़ एण्ड कच्छ, आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ् वेस्टर्न इण्डिया, लण्डन १८७६. ६. ९३–१२७

,, : दी बुद्धिस्ट स्तूप्स ऑफ् अमरावती एण्ड जगय्यपेट, आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ् सदर्न इण्डिया, खण्ड १. १८८७. १–१२

बर्नाफ, एम. इ. : सुर अन्यत्र एट सुर क्वेलकस पैसेजेस देस एडिक्ट्स रेलीजिक्स दे प्रियदसी, अपेंडिक्स नं. १०, लोट्स दे ला बोने लोई, ६५२-७८१पेरिस १८५२.

बर्ट, टी. एस. : डिस्क्रिप्शन विथ ड्राइंग्स ऑफ् दी ऐंश्येण्ट स्टोन पिलर ऐट इलाहाबाद काल्ड भीमसेन्स गदा ऑर क्लब, विथ एकम्पनीइंग कॉपीज ऑफ् फोर इंसक्रिप्शन्स एनग्रेवेन इन डिफरेण्ट कैरेक्टर्स अपॉन इट्स सरफेस, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बैंगाल ३. १०५-१३-१८३४

बर्ट, कैप्टेन : इन्सक्रिप्शन फाउण्ड नियर भाब्रा, थ्री मार्चेस फ्रॉम जैपुर ऑन दी रोड टु डेल्ही, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बैंगाल ९. ६१६-१७. १८४०

भाण्डारकर, डी. आर. : एपिग्रॉफिक नोट्स एण्ड क्वेश्चन्स, जर्नल ऑफ् बाम्बे ब्रांच ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी २१. ३९२-९९.१९०४

,, : एपिग्रॉफिक नोट्स एण्ड क्वेश्चन्स १२, सहसराम-रूपनाथ-ब्रह्मगिरि एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी ४१. १७०-७३. १९१२

,, : एपिग्रॉफिक नोट्स एण्ड क्वेश्चन्स १४. दी फोर्थ रॉक एडिक्ट ऑफ् अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी ४२. २५-२६.१९१३

,, : एपिग्रॉफिक नोट्स एण्ड क्वेश्चन्स १६, 'सम्बोधि' इन अशोकज रॉक एडिक्ट एट्थ; इण्डियन एण्टही-क्वेरी ४२.१५९.६०.१९१३

,, : एपिग्रॉफिक नोट्स एण्ड क्वेश्चन्स १९, अशोकज रॉक एडिक्ट फर्स्ट रीकंसीडर्ड, इण्डियन एण्टीक्वेरी ४२. २५७-५८.१९१३.

सहसराम, रूपनाथ- ब्रह्मगिरि, मास्की एडिक्ट्स ऑफ् अशोक रीकंसीडर्ड एनल्स ऑफ् दी भण्डारकर ओरिएण्टल रीसर्च इंस्टीट्यूट, १०.२४६-६८.१९२९-३०

,, : अशोक (दी कारमाईकल लेक्चर्स) कलकत्ता, १९२५

,, : अशोकन नोट्स, डॉ॰ मोदी मेमोरियल वाल्यूम, ४४५-५०. १९३०

,, : अशोकन नोट्स, डॉ. के. बी. पाठक कॉमोनोरेटिव वाल्यूम, २६९-७४.१९३४

एण्ड मजूमदार, एस एन: दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक कलकत्ता १९२०.

भण्डारकर, आर. जी. : नोट ऑन दी गंजाम रॉक इन्सक्रिप्शन, इण्डियन एण्टीक्वेरी, १-२२१-२.११७२

,, : ए पीप इण्टू दी अर्ली हिस्ट्री ऑफ् इण्डिया फ्रॉम दी फाउण्डेशन ऑफ् दी मौर्य डायनेस्टी टु दी फाल ऑफ् दी इम्पीरियल गुप्त डायनेस्टी, जर्नल ऑफ् दी बाम्बे ब्रॉन्च ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी २०-३६६-४०८-१९००

,, : विंसेट स्मिथ्स अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, इण्डियन रिव्यू, १९०९, ४०१-०५

भट्ट जनार्दन : अशोकके धर्मलेख, बनारस १९२३ रिव्यू : एल. डी. बार्नेट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९२५-१८४

भट्टाचार्य, विनयतोष : ए पैसेज इन दी फोर्थ पिलर एडिक्ट ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, ६-३१८—२१.१९२०

भट्टाचार्य, जीवानन्द : सेलेक्ट अशोकन एपिग्रॉफ्स, कलकत्ता १९४१

भट्टाचार्य बी. सी. : लुम्बिनी दी बर्थ-प्लेस ऑफ् बुद्ध, जर्नल, बनारस हिंदू वर्सिटी,५-७१-१९४०-४१

भुजंगराव, टी. : 'पलदस' ऑफ् दी अशोकन एडिक्ट, माडर्न रिव्यू, ७८-३७४-७५ कलकत्ता १९४५

मैकफेल, जे. एम. : अशोक, लन्डन एण्ड कलकत्ता, १९०८

मजुमदार, भवतोष : सिम्बोलॉजी ऑफ् अशोक पिलर कैपिटल, सारनाथ, इण्डो-यूरोपियन, २. १६०-६३. १९३५.

मजुमदार, एन. जी. : 'समाज', इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४७ २२ १-२३-१९१८

मार्शल, जे. एच. : आर्क्योलॉजिकल एक्सप्लोरेशन इन इण्डिया, १९०७-०८, जर्नल आफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८-१०८५-८८

मार्शल, सर जॉन : गाइड टु टैक्सिला, कलकत्ता १९१८

मैसन, सी. : नैरेटिव ऑफ् ऐन एक्सकर्शन फ्राम पेशावर टु शाहबाजगढ़ी, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, ८. २९३-३०२, १८४६

मेहेनडले, एम. ए. : अशोका चे शिलालेख व तत्कालीन समाज (इन मराठी), चित्रमय जगत, नवम्बर १९४१

,, : ए कम्पैरेटिव ग्रामर ऑफ् अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, बुलेटिन ऑफ् दी डेकन कॉलेज रिसर्च इंस्टीट्यूट, ३. २२५-९०, १९४२

,, : मेसेज ऑफ् अशोक, भारत ज्योति नवम्बर १०. ११४६

,, : अशोकन इन्सक्रिप्शन्स इन इण्डिया, दी युनिवर्सिटी ऑफ् बाम्बे, १९४८

मजूमदार, बी. के. : अशोकज सर्विस टु बुद्धिज्म, रिव्यू २६. २७-३०, १९४७

मिकेल्सन, : नोट्स ऑन दी पिलर एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, इण्डो-जर्मेनिश फर्शुंगन, २३. २१९-७१, १९०८-०९

,, : दी इण्टररिलेशन ऑफ् दी डायलेक्ट्स ऑफ् दी फोरटीन एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, १, जेनेरल इण्ट्रोडक्शन एण्ड दी डायलेक्ट ऑफ् दी शहबाजगढ़ी एण्ड मानसेहरा रिडक्शन्स, जर्नल ऑफ् दी अमेरिकन ओरियण्टल सोसाइटी, ३०. ७७-९३. १९०९-१०

,, : दी इण्टररिलेशन ऑफ् दी डायलेक्ट्स ऑफ् दी फोरटीन एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, २ दी डायलेक्ट ऑफ् दी गिरनार रिडक्शन, जर्नल ऑफ् दी अमेरिकन ओरियण्टल सोसायटी, ३१. २२३-५०, १९११

,, : दी एटीमोलॉजी ऑफ् दी गिरनार वर्ड 'पेटणिक', इण्डो-जर्मेनिशे, फर्शुंगन, २४. ५२-५५, १९०९

,, : दी एलेजेड अशोकन वर्ड 'लुक्ष', इण्डोजर्मेनिशे फर्शुंगन, २८. २०४, १९११

,, : वन्स मोर ऑन शहबाजगढ़ी 'उथनम्' जर्नल ऑफ् दी अमेरिकन ओरियण्टल सोसाइटी, ४१. ४६०-६१-११२१

,, : अशोकन नोट्स, जर्नल ऑफ् दी अमेरिकन ओरियण्टल सोसायटी, ३६. २०५-१२-१९१७

मिराशी, वी. वी. : न्यू लाइट ऑन देवटेक इन्सक्रिप्शन्स, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेंस ६१३-२२ माइसोर १९३५

मित्रा ए. के. : मौर्यन आर्ट, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ३. ५४१-६०, १०२७

मित्रा, एस. एन. : आइडेण्टिफिकेशन ऑफ् विनय समुकसे इन अशोकज भाब्रा एडिक्ट, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ४८. ८-११-१९१९

मित्रा, एस. एन. : विनयसमुकसे इन अशोकस भाब्रा एडिक्ट इट्स आइडेण्टीफिकेशन, जर्नल ऑफ् दी डिपार्टमेण्ट ऑफ् लेटर्स, युनिवर्सिटी ऑफ् कलकत्ता, २०. १-७, १९३०

,, : दि मंगलसुत्त एण्ड दी रॉक एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, आल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेंस, नवम्बर ८. १९२२

,, : दी लुम्बिनी पिलग्रिमेज रिकॉर्डेड इन टू इन्सक्रिप्शन्स, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ५. ७२८-५३. १९२९

,, : नोट्स ऑन अशोक रेसक्रिप्ट्स, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ७. १९३-९५, ६५७-१९३१

,, : नोट्स ऑन अशोक रेसक्रिप्ट्स, इंडियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ८. ३७७-७९; १९१-९४, १९३२

,, : दी क्वीन्स डोनेशन एडिक्ट, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, ७. ४९८-६३, १९३१

,, : आइडेण्टीफिकेशन ऑफ् पियदसी एण्ड अशोक, इण्डो-यूरोपियन, १. १२०-२१ १९३४

,, : दी राजुकस एण्ड प्रादेसिकस ऑफ् अशोक इन रिलेशन टु दी युतस, इण्डो-यूरोपियन, १. ३०८,११ १९३४

मुखर्जी आर. के. : अशोक (गायकवाड़ लेक्चर्स), लन्दन १९२८

,, : पैरेलेलिज्म बिटवीन अशोकज एडिक्ट्स एण्ड कौटिल्याज अर्थशास्त्र

,, : दी आथंटीसिटी ऑफ् अशोकन एडिक्ट्स अशोकन क्रोनोलॉजी

,, : एन अशोकन इन्सक्रिप्शन रीकन्सीडर्ड

,, : ए प्रोपोज्ड इण्टरप्रेटेशन ऑफ् एन अशोकन इन्सक्रिप्शन

मूर, जे. : प्रो. एच. कर्न्स डिसर्टेशन ऑन दी एरा ऑफ् बुद्ध ऐण्ड अशोकन इन्सक्रिप्शन्स

मुखर्जी, पी. सी. : ए रिपोर्ट ऑन ए टूर ऑफ् एक्सप्लोरेशन ऑफ् दी ऐण्टीक्विटी इन दी तराई नेपाल

मुल्वानी, सी. एम. : अशोक पिलर एडिक्ट फिफ्थ 'सिमले सडके', इण्डियन एण्टीक्वेरी, ३७. ३१. १९०८

रैप्सन, ई. जे. : ऐंशिएण्ट इण्डिया, कैम्ब्रिज, १९१४, चैप्टर सेविन्थ, मौर्य एम्पायर.

रे, निहार रंजन : अर्ली ट्रेसेज ऑफ् बुद्धिज्म इन बर्मा, जर्नल ऑफ् ग्रेटर इण्डिया सोसायटी, ६. ९९-१२३. १९३९

राइस, एल. : एडिक्ट्स ऑफ् अशोक इन माइसोर, बंगलोर १८९२.

,, : एपिग्रॉफिया कर्नाटिका, वाल्यूम २, बंगलोर १९०३.

,, : माइसोर एण्ड कुर्ग फ्रॉम दी इंसक्रिप्शन्स, लन्दन १९०९

,, : दी न्यू अशोक एडिक्ट ऐट मास्की, जर्नल आफ् रॉयल एशियाटिक सोसायटी, १९१६. ८३८-३९.

लडू, टी. के. : ए नोट ऑन हुल्त्ज फोर्थ नोट ऑन दी रूपनाथ एडिक्ट, जरनल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसायटी, १९११. १९१७-९.

लाथम, आर. जी. : ऑन दी डेट एण्ड पर्सोनैलिटी ऑफ् पियदसी, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी. १७. २७३-८०. १८६.

ला, बी. सी. : डिड अशोक बिकम ए भिक्षु ? इण्डो-यूरोपियन, १. १३३-३४, १९३४

,, : इम्पॉर्टेन्स ऑफ् दी भाब्रा एडिक्ट, इण्डो-यूरोपियन, १. १३०-३३. १९३४

लूडर्स, एच. : दी लिंगुअल ला इन दी नार्दर्न ब्राह्मी स्क्रिप्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९११. १०८१-८९.

वेनिस, ए. : सम नोट्स ऑन दी मौर्य इसक्रिप्शन्स ऐट सारनाथ, जर्नल एण्ड प्रोसीडिंग्स ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ३. १-७. १९०७.

वेंकट राव, जी. : अशोकज धम्म (धर्म), एस. के. आयंगर कॉमेमोरेशन वाल्यूम, २५२-६३, १९३६

वेंकट सुब्बिया, ए. : अठभागिए, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ६०. १६८-७०; २०४-७. १९३७.

वेंकटेश्वर, एस. वी. : सतियपुत्र इन दी सेकेण्ड रॉक एडिक्ट ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९१८, ५४१-४२

विद्यालंकार, सत्यकेतु : मौर्य साम्राज्यका इतिहास (हिन्दी), हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, १९२८-२९१

फोगल, जे. पी. एच. : एपिग्रॉफिकल डिस्कवरीज ऐट सारनाथ, एपिग्रॉफिया इण्डिका ८. १६६-७१ १९०५-०६.

व्यास, सूर्य नारायण : सम्राट् अशोक—अथवा सम्प्रति (हिन्दी), नागरी प्रचारिणी पत्रिका, १६. १-६५ १९३५.

विल्सन, एच. एच. : ऑन दी रॉक इंसक्रिप्शन्स ऑफ् कपूर्दि-गिरि (धौली) एण्ड गिरनार, जर्नल आफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १२. १५३–२५८, १८५०

विल्सन, एच. एच. : बुद्धिस्ट इंसक्रिप्शन ऑफ् किंग प्रियदर्शी, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसायटी १६. ३५७-६७, १८५६.

विंटर नित्ज, एम. : ए हिस्ट्री ऑफ् इण्डियन लिटरेचर, वाल्यूम २, कलकत्ता १९३३.

वुलनर, ए. सी. : अशोक टेक्स्ट ऐण्ड ग्लासरी, पंजाब युनिवर्सिटी ओरियण्टल पब्लिकेशन, कलकत्ता १९२४.

,, : क्विन्क्वेनियल सर्किट्स ऑर ट्रांसफर ऑफ् अशोकज ऑफीशियल्स, जर्नल ऑफ् पंजाब युनिवर्सिटी हिस्टॉरिकल सोसाइटी. १.१०८- १२. १९३२.

लॉयल. सी. जे. : उवलिके = उवारी, जनरल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८. ८५०-५१

शङ्कर, के. जी. : स्टडीज ऑफ स्कॉलरशिप, वाल्यूम ३, सातियपुत्र ऑफ् अशोकज रॉक एडिक्ट नं. २, क्वार्टरली जर्नल ऑफ् मिथिक सोसाइटी ११-२८३-१९२१

,, : सम प्रॉब्लम्स ऑफ् इण्डियन क्रोनोलॉजी, एनल्स ऑफ् दी भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट १२-३०१-६१, १९ ३१

शर्मा, रामावतार : प्रियदर्शि-प्रशस्तयः ऑर पियदसि इन्सक्रिप्शन्स, पटना १९१७.

सेठ, एच. सी. : साइड लाइट्स ऑन अशोक दी ग्रेट, एनल्स आफ् दी भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इस्टीट्यूट २०-१७७-८७-१९३८, ३९.

शाह, टी. एल. : एन्दयण्ट इण्डिया वाल्यूम २, बड़ौदा १९३९

,, : एम्परर अशोक डिसलाउड, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, लाहौर १९२८.

शास्त्री, एच. कृष्ण : दी न्यू अशोकन एडिक्ट ऑफ् मास्की, हैदराबाद आर्क्योलॉजिकल सिरीज न. १, कलकत्ता. १९१५.

शास्त्री, हरप्रसाद : काजेज ऑफ् दी डिसमेम्बरमेण्ट ऑफ् दी मौर्य एम्पायर, जर्नल ऑफ दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ६,२५९-६२ कलकत्ता १९१०

,, : टू इण्टरनल सिटीज इन दी प्रॉविन्स ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा, जर्नल ऑफ् दी बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी, ६.२३-३९. पटना १९२०

शास्त्री, हीरानन्द : दी अशोकन रॉक ऐट गिरनार, गायकवाड़ आर्क्योलॉजिकल सिरीज २, १-५८ बड़ौदा १९३६.

शास्त्री, के. ए. नीलकान्त : अशोक नोट्स, दी जर्नल ऑफ दी गंगानाथ झा रिसर्च इंस्टीट्यूट१.९५-११७.१९४३.

शास्त्री एस. एम. स्वामी : अशोकज एडिक्ट ऐट सग्ग, जर्नल ऑफ श्री वेंकटेश्वर ओरियण्टल इंस्टीट्यूट ३-८७-९८-१९४२

शास्त्री के. ए. नीलकान्त : उवलिके, उभवि, उनबली; इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली २०-२८५-८७. १९४४.

सेन, बी. सी. : ऐन्दयण्ट इण्डियन इन्सक्रिप्शन्स ऐज ए सोर्स ऑफ् हिस्ट्री, कलकत्ता ओरियण्टल जर्नल, १.९७. १०४.

सेन, ज्योतिर्मय : अशोकन मिशन २, सीलोन ऐण्ड सम कनेक्टेड प्रॉब्लेम्स, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली ४.६६७-७८. १९२८

सेन प्रबोधचन्द्र : दी रेलिजस पॉलिसी आफ् अशोक, विश्वभारती क्वार्टरली ९.३.

सेन, सुकुमार : दी यूज ऑफ् इंस्ट्रूमेण्टल इन मिडिल इण्डोआर्यन; ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेंस वाल्यूम १, लाहौर १९२८.

,, : दी यूज ऑफ् दी जेनेटिव इन दी इण्डो-आर्यन; इंडियन लिंग्विस्टिक्स ९.१०-२९. १९४४-४५

सेन, सुरेन्द्र नाथ : सरवाइवल ऑफ् सम अशोकन फार्म्स इन सेवेन्टीन्थ सञ्चुरी बेंगाली; ए वाल्यूम ऑफ् स्टडीज इन इण्डोलॉजी प्रेजेन्टेड टु प्रोफेसर पी. वी. काणे. ४१७-१९ पूना १९४१.

सेनार्ट, ई. : दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् पियदसि, इण्डियन एण्टीक्वेरी, १०.२०९-११.१८८१

सेठ, एच. सी. : सेण्ट्रल एशियाटिक प्रॉविन्स ऑफ् दी मौर्य एम्पायर, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली १३. ४००-१७. १९३१

,, : क्रोनोलॉजी ऑफ् अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, जर्नल ऑफ् इण्डियन हिस्ट्री, १७.२१९-९२.१९३८.

सेठ, एच. सी. : सम ऑब्सक्योर पैसेज इन अशोकन इन्सक्रिप्शन्स, नागपुर युनिवर्सिटी जर्नल, दिसम्बर १९४३, १६-२०

सरकार, डी. सी. : ऐन इंसक्रिप्शन ऑफ् अशोक डिस्कवर्ड ऐट एर्रगुडि, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली ७.७३७-४० (८१७-२०) १९३१.

,, : यवन एण्ड पारसीक, जर्नल ऑफ् इण्डियन हिस्ट्री १४.३४-३८.१९३५

,, : ऑन सम वर्ड्स इन दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, इण्डियन कल्चर, ७.४८७-८९.१९४१.

,, : पारिदं इन दी इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, इण्डियन कल्चर. ८.३९९-४००.१९४२ सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स, कलकत्ता युनिवर्सिटी कलकत्ता

सरकार, एस० सी० : ए नोट ऑन दी लास्ट इयर ऑफ् अशोक, इण्डियन कल्चर, ११, ८५-८६, १९४४

सिंहदेव, बी० : तोसली एण्ड तोसलि, क्वार्टरली जर्नल ऑफ् दी आन्ध्र हिस्टॉरिकल सोसाइटी ३, ४१-४३, १९२८

स्मिथ, वी० ए० : दी बर्थप्लेस ऑफ् गौतम बुद्ध, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १८९७, ६१५-२१

,, : दी ऑथर शिप ऑफ् दी पियदसि इन्सक्रिप्शन्स जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०१, ४८१-९९

,, : दी ट्रासलेशन ऑफ् देवानं पिय, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०१, ५७७-७८

,, : ए प्रीफेटरी नोट टु मुखर्जीस 'ए रिपोर्ट ऑन ए टूर ऑफ् एक्सप्लोरेशन ऑफ् दी एण्टीक्विटी० इन दी तराई नेपाल, कलकत्ता, १९०१

,, : ऑन ए पैसेज इन दी भाब्रू एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ४८१-९९

स्वरूप, विष्णु : दी एण्टीक्विटी ऑफ् राइटिंग इन इण्डिया, जर्नल ऑफ् बिहार एण्ड ओरिसा रिसर्च सोसाइटी ८, ४६-६४; ९९-१११, १९२२

स्मिथ, वी० ए० : दी आइडेण्टिटी ऑफ् पियदसि विद अशोक मौर्य, ऐण्ड सम कनेक्टेड प्रॉब्लेम्स, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०१, ८२७-५८

,, : ए चायनीज अशोक, इण्डियन एण्टीक्वेरी ३२, २३६, १९०३

,, : कुसिनारा ऑर कुशिनगर ऐण्ड अदर बुद्धिस्ट होली प्लेसेज, जरनल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९०२, १३९-६३

,, : दी मीनिंग ऑफ् पियदसि, इण्डियन एण्टीक्वेरी ३२, २६५-६७, १९०३

,, : अशोक नोट्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी ३२, ३६४-६६, १९०३

,, : अशोकज अलेज्ड मिशन टु पीगू, इण्डियन एण्टीक्वेरी, ३४, १८०-८६, १९०५

,, : अनपब्लिश्ड अशोक इन्सक्रिप्शन ऐट गिरनार, इण्डियन ऐंटिक्वेरी. ३८. ८०-१९०१

,, : दी रुम्मिनदेई इन्सक्रिप्शन हिदर टु नोन ऐज दी पहरिया इन्सक्रिप्शन, इण्डियन एण्टीक्वेरी ३४. १-४ १९०५

,, : अशोक नोट्स, इण्डियन एण्टीक्वेरी ३४. २००-०३; २४५-५७ १९०५

,, : दी एडिक्ट् ऑफ् अशोक, लण्डन १९०९ ट्रासलेशन, पेज ३.४१, कमेन्ट्री, ४३-७६

,, : अशोक दी बुद्धिस्ट एम्परर ऑफ् इण्डिया

,, : अर्ली हिस्ट्री ऑफ् इण्डिया, ऑक्सफर्ड १९२४

सुब्रह्मण्यम, टी. एन. : सतियपुत्र ऑफ् अशोकज एडिक्ट न. २, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९२२. ८४-८६

,, : पेटेनिकाज ऑफ् अशोकज रॉक एडिक्ट १३, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९२३. ८२-९३

स्टेन, ओटो : यवनज इन अर्ली इण्डियन इन्सक्रिप्शन्स, इण्डियन कल्चर १.३४३-५८ १९३५

स्पियर, जे. एस. : लुम्बिनी, वी. ओ. जे. ११. २२-२४ १८९७

साहनी, दयाराम : दी एर्रगुडि एडिक्ट ऑफ् अशोक, ऐनुअल रिपोर्ट, आर्क्योलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट, १९२८-२९. १६१-६७

सहीदुल्ला, मुहम्मद : एटीमॉलोजी ऑफ् कुभ, लघ, गेवेया एटसेटरा, इन दी अशोकन इंसक्रिप्शन्स, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फेंस नं० ८ कलकत्ता १९२३

सैलेटोर, बी. ए. : दी आइडेण्टीफिकेशन ऑफ् सतियपुत्त, इण्डो-यूरोपियन १. ६६७-७३. १९३५

सेलिस्बरी, ई. ई. : हिस्ट्री ऑफ् बुद्धिज्म, जर्नल ऑफ् अमेरिकन ओरियण्टल सोसाइटी, ७९-१३५. १८४९

समद्दार, जे. एन. : दी एडिक्ट्स ऑफ् अशोक, दी विश्वभारती क्वार्टरली २. २३९-५०, कलकत्ता १९२४-२५

,, : दी ग्लोरीज ऑफ् मगध, पटना १९२७

सांकालिया, एच. डी. : प्री-वेदिक टाइम्स टू विजयनगर : ए सर्वे ऑफ् इयर्स वर्क इन ऐंश्यण्ट इण्डियन हिस्ट्री एण्ड ऑक्योलॉजी, प्रोग्रेस ऑफ् इण्डिक स्टडीज (१९१७-१९४२) १९५-२३८. पूना १९४२

हार्डी, ई. : ऑन दी पैसेज इन दी भाब्रा एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०१.३११-१५

,, : दी भाब्रा एडिक्ट, जरनल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०१.५७७.

हीरास, एच. : अशोकज धर्म एण्ड रिलीजन, क्वार्टरली जर्नल ऑफ् दी मिस्टिक सोसाइटी, १७.२५५-७७.१९२७

हर्ज फील्ड, ई : ए न्यू अशोकन इन्सक्रिप्शन फ्रॉम टैक्सिला, इपिग्रेफिआ इण्डिका, १९.२५१-५३.१९२८

हफ़्गसन, बी. एस. : नोटिस ऑफ् सम ऐंश्यण्ट इन्सक्रिप्शन्स इन दी कैरेक्टर्स ऑफ् दी इलाहाबाद कालम, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी ऑफ् बेंगाल, ३.४८१-८३.१८२४

हुल्त्ज, इ. : ए नोट ऑन दी भाब्रा एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०९.७२७-२८

,, : 'ए नोट ऑन दी रूपनाथ एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९०९.७२८-३०

,, : ए सेकेन्ड नोट ऑन दी रूपनाथ एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी एशियाटिक सोसाइटी, १९१०.१४२-४६

,, : एथर्ड नोट ऑन दी रूपनाथ एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१०.१३०८-११

,, : दी साँची एडिक्ट ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९९९.१६७-६९.

,, : अशोकस फोर्थ रॉकए डिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९११-७८५-८८

,, : ए सेकेण्ड नोट ऑन दी भाब्रा एडिक्ट, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, १९११. १११३-१४

,, : एफोर्थ नोट ऑन दी रूपनाथ एडिक्ट जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९११.१११४-१७

,, : दी रूपनाथ एण्ड सारनाथ एडिक्ट्स ऑफ अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१२.१०५३-५९.

,, : अशोकज् फोर्थ रॉक एडिक्ट एण्ड हिज माइनर रॉक एडिक्ट्स, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१३.६५१-५३.

,, : न्यू रीडिंग्स इन अशोकज् रॉक एडिक्ट्स, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसाइटी १९१३. ६५३-५५

,, : दी डेट ऑफ् अशोक, जर्नल ऑफ् दी रॉयल एशियाटिक सोसायटी, १९१४.९४३-५१

,, : इन्सक्रिप्शन्स ऑफ् अशोक, (कॉरपस इंसक्रिप्शनम इण्डीकेरम, वाल्यूम १), ऑक्सफोर्ड १९२५.

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	सं० ७	प्रियदशिनः	प्रियदर्शिनः
५	सं० ९	र्भशीले	धर्मशीले
२२	मू० ४	गे	मिगे
२२	मू० ४	मिसे	से
२३	मू० ६	उवुपानानि	उदुपानानि चा
४४	मू० ३	पथ	यथ
,,	मू० ५	पंशुमनुशन	पशुमनुशनं
४९	मू० १४	उपनस्थि	उयनस्पि
,,	,,	निरुति	निझति
५२	मू० १७	१	१७
,,	,,	हिरयत्र	विहर यत्र
,,	,,	होति	होहि
५३	सं० १८	करोति	कुर्वन्ति
५३	हि० २०	परलोक	परलोक मे
५४	हि० २१	मेरे द्वारा	उनके द्वारा
५५	मू० २४	मित्रसंस्तुतन	मित्र संस्तुतन
५६	मू० १	प्रपंडमि	प्रपडनि
५८	मू० ९	अब	अव
६१	मू० २	पि	पिच
६२	मू० ६	मतियतुत्र	मतियपुत्र
,,	मू० ८	समत्र	समत्र हरपित च
६३	मू० ९	पचसु	पंचसु पंचसु
६४	मू० १५	सुश्रुव	सुश्रुष
,,	,,	सुश्रुव	सुश्रुष
६६	मू० २०	ह्येशति	ह्पेशति
७७	मू० ४	लिता	लिखिता
८०	मू० ५	पुना	पुता
,,	मू० ६	धमं चलनं	धमन्चलनं
८१	मू० ५	महाकल्सु	महालकेसु
,,	मू० ८	धंमयिलपी	धंमलिपि
८२	मू० ३	हेति	होति
८५	सं० २	अथ	स्त्रीजनः
१०५	मू० ७	णिझपेतविये	णिझपेतविये
१०५	स० ७	(पश्येत् के बाद जोड़िये)	अन्योन्यं पश्यत
११८	मू० १	देवानापियसा	देवानां पियस
१३४	मू० २	डसवसाभिसितेना	डसवसाभिसितेना
१५३	सं० २	अल्पासि नवं	अल्पासिनवं
१९३	संकेत सारिणी	शाहवाज गढ़ी	शहबाजगढी
,,	३	शा०	श०
२३१	सकेत सारिणी	शाहबाजगढी	शाहबाजगढ़ी

संकेत—मू० = मूलपाठ सं० = संस्कृतच्छाया पा० टि० = पाठ टिप्पणी हि० = हिन्दीभाषान्तर

फलक—१ :

अशोकके अभिलेखोंके प्राप्ति-स्थान

फलक—५ :

गिरनार शिला अभिलेख ३-५

फलक—४ : गिरनार शिला अभिलेख १-२

फलक—६ : गिरनार शिला अभिलेख ६-८

फलक—७ : गिरनार शिला अभिलेख ९-१२

फलक—८ :
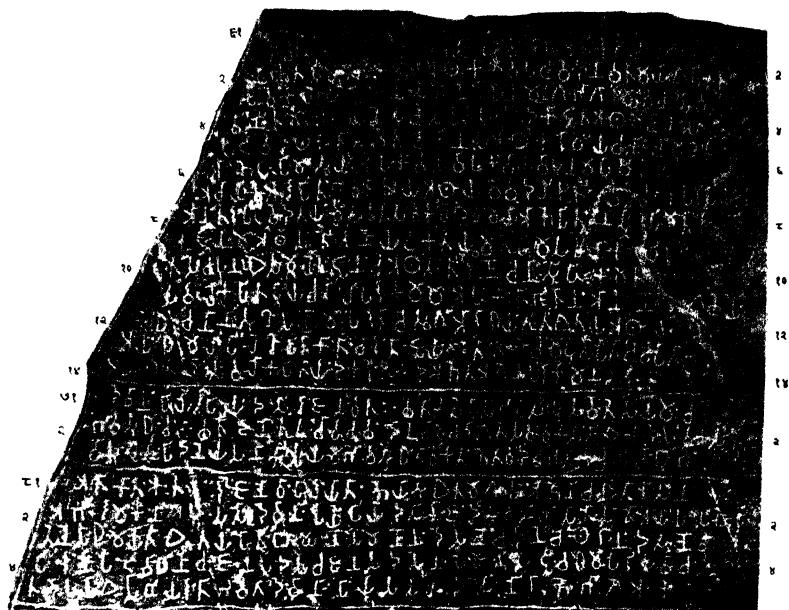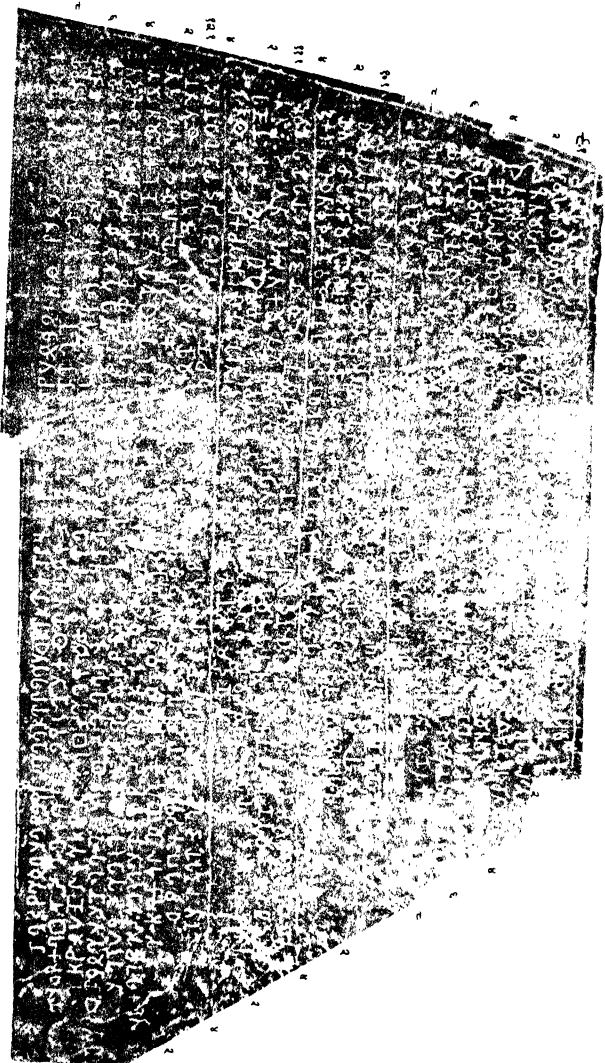
गिरनार शिला अभिलेख १३–१४
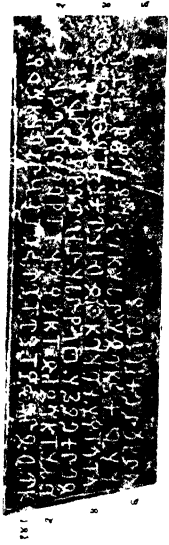
फलक—१ : कालसी शिला अभिलेख (पूर्व मुख) १-१३
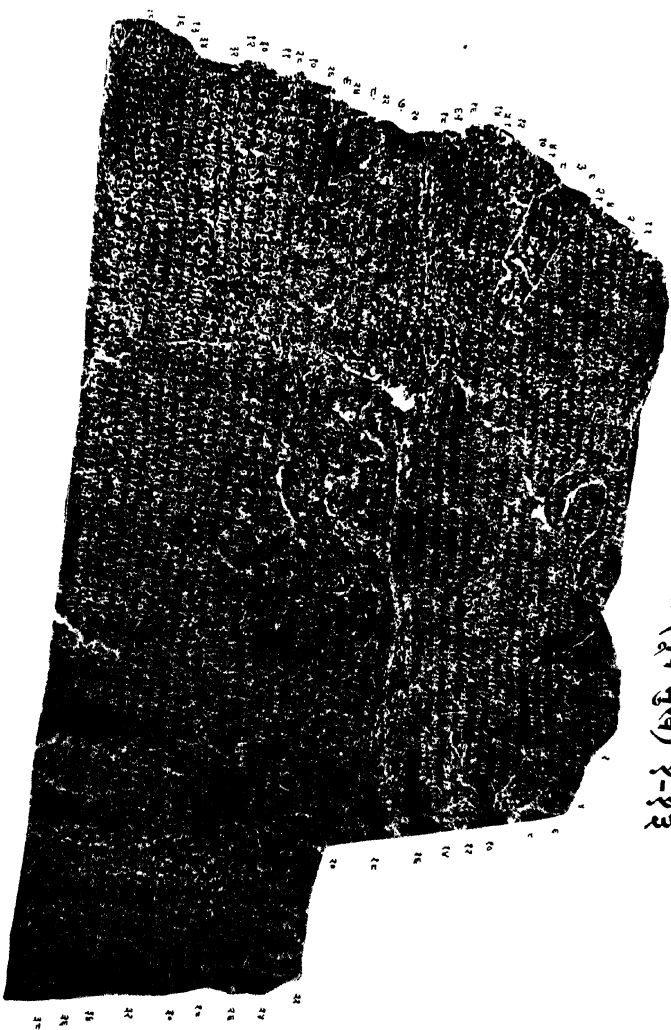
फलक—१०: **कालसी शिला अभिलेख (दक्षिण मुख) १४**
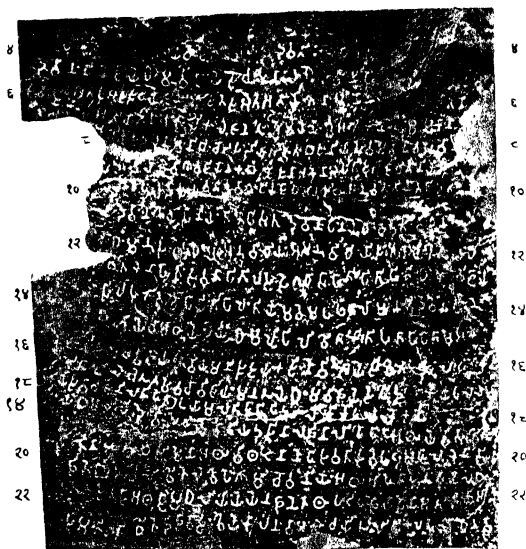
(उत्तर मुख) गजतमे

फलक—११ : शहबाजगढ़ी शिला अभिलेख (दक्षिण अर्द्धांश) १-६; ८-११
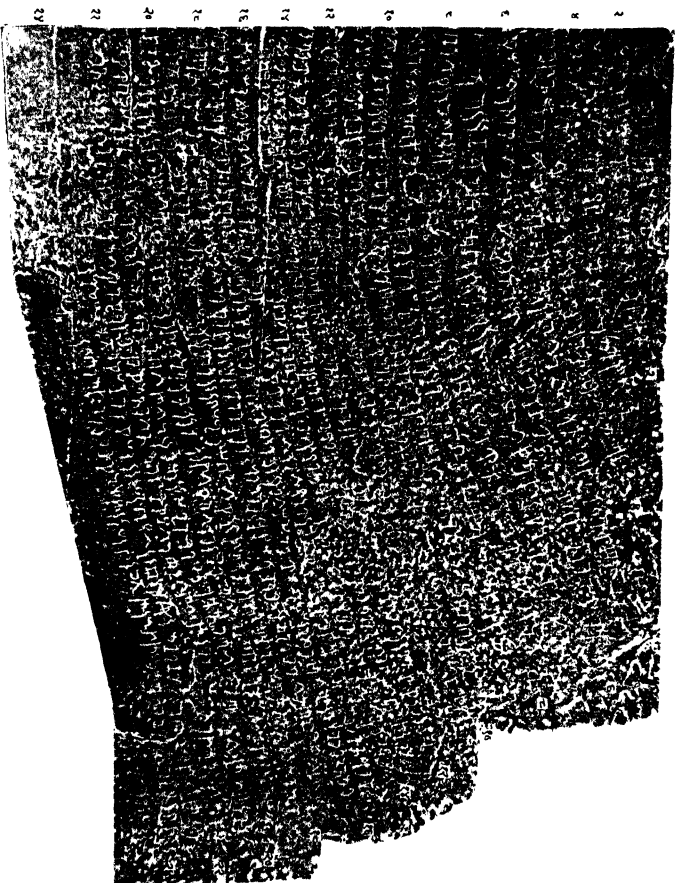
फलक—१२ : शहबाजगढ़ी शिला अभिलेख (वाम अर्द्धांश) १-६; ८-११
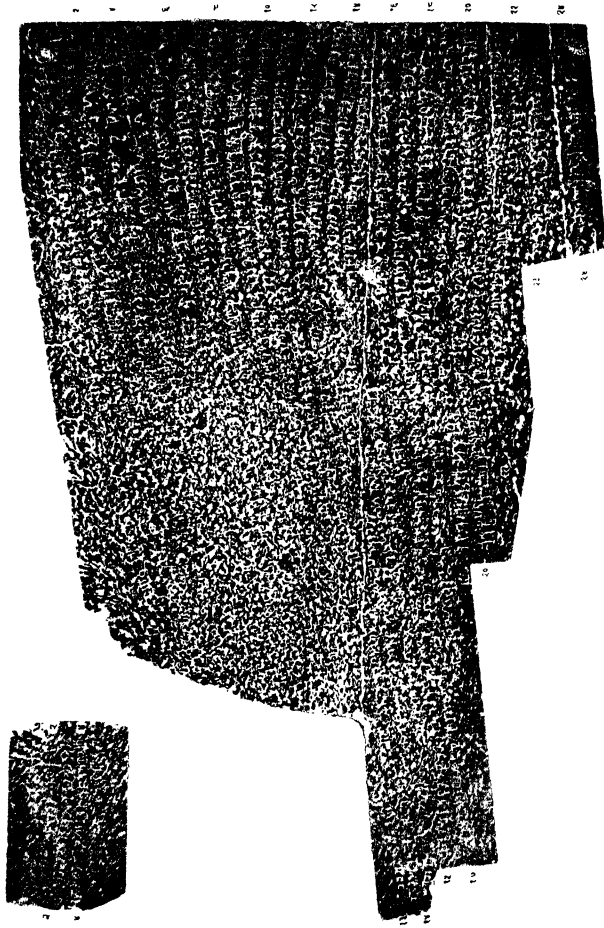
फलक—१३ : शहबाजगढ़ी शिला अभिलेख ७-१२
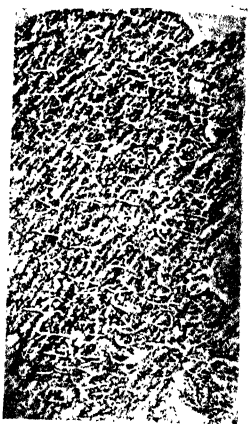
फलक—१४ : **शहबाजगढ़ी शिला अभिलेख अ-(दक्षिण अर्द्धांश) १३-१४**
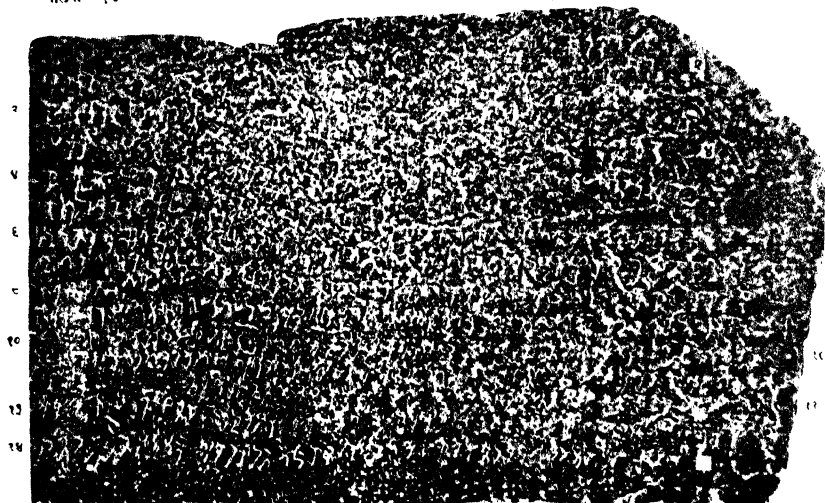
आ—(वाम अर्द्धांश) १३-१४
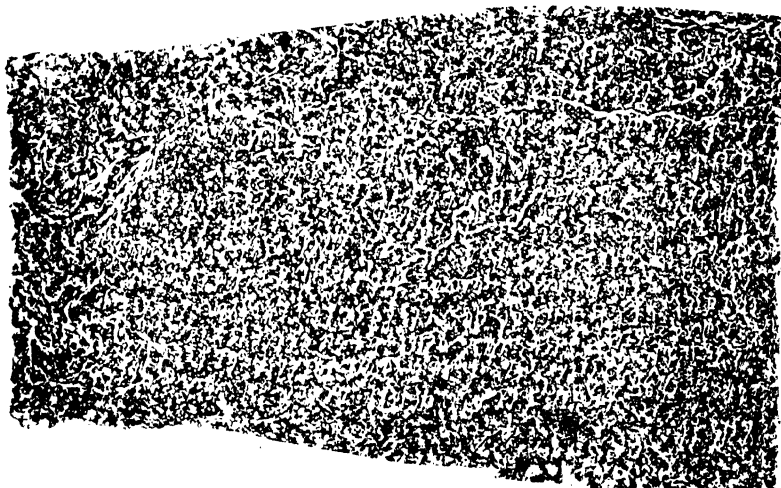
फलक—१५ : **मानसेहरा शिला अभिलेख १–८**

फलक—१६ : मानसेहरा शिला अभिलेख ९-११

फलक—१७ :
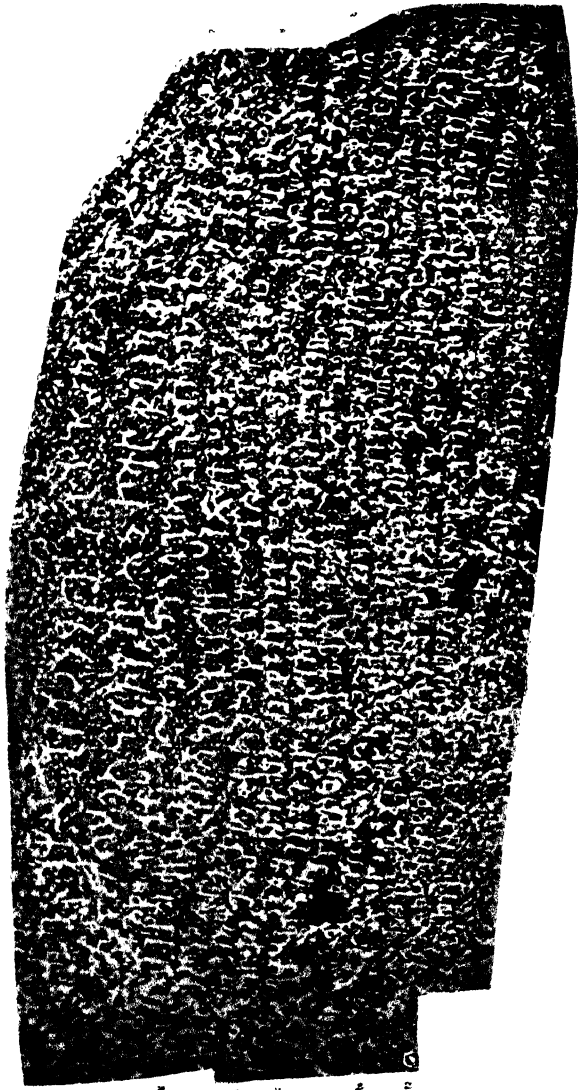
मानसेहरा शिला अभिलेख १२

फलक—१८ : मानसेहरा शिला अभिलेख १३-१४

फलक—१९ : धौली शिला अभिलेख (मध्य) १–६
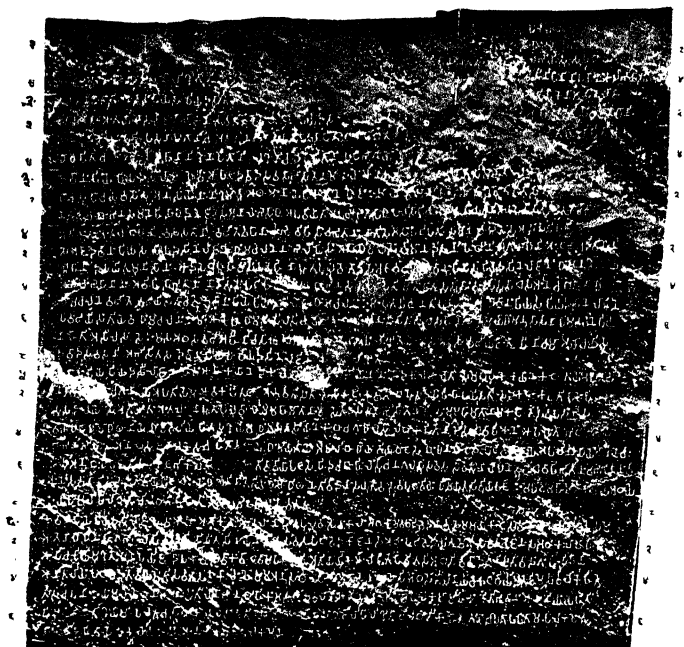
फलक—२० : **धौली शिला अभिलेख (वाम) प्रथम पृथक्**
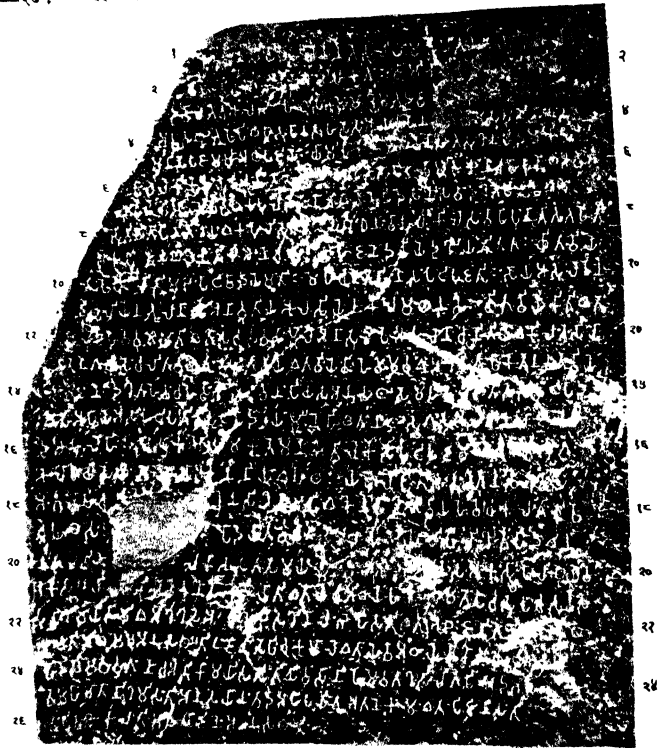
फलक—२१ : धौली शिला अभिलेख (दक्षिण) ७-१४: द्वितीय पृथक्

जौगड शिला अभिलेख (प्रथम खण्ड) १-५
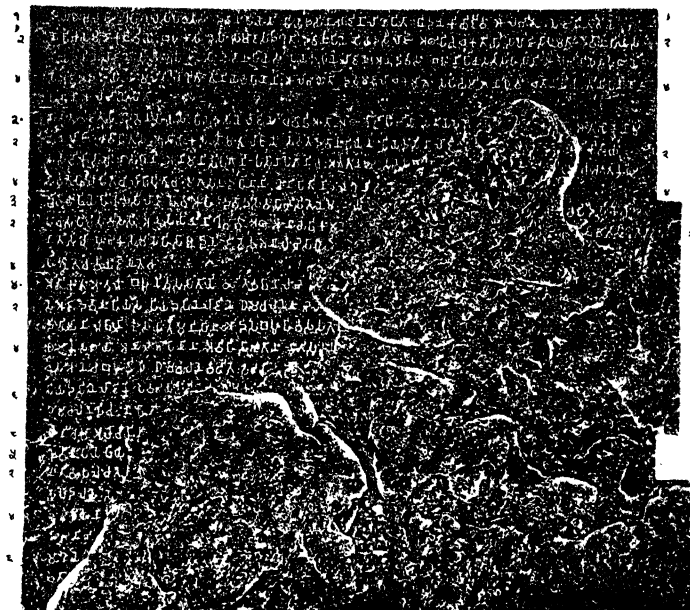
फलक—२३ : जौगड शिला अभिलेख (द्वितीय खण्ड) ६-१४
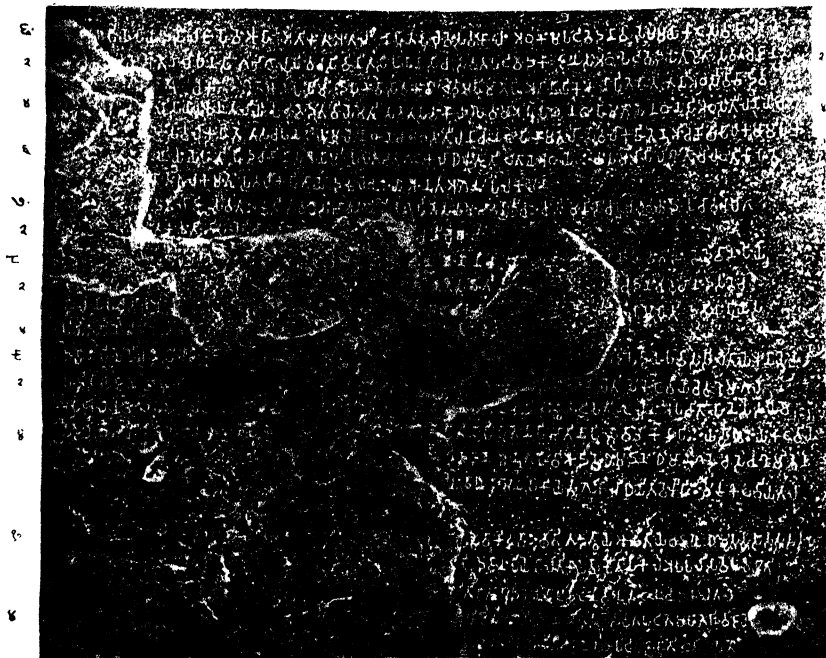
फलक—२४ : **जौगड शिला अभिलेख (तृतीय खण्ड)**

द्वितीय पृथक् : प्रथम पृथक्
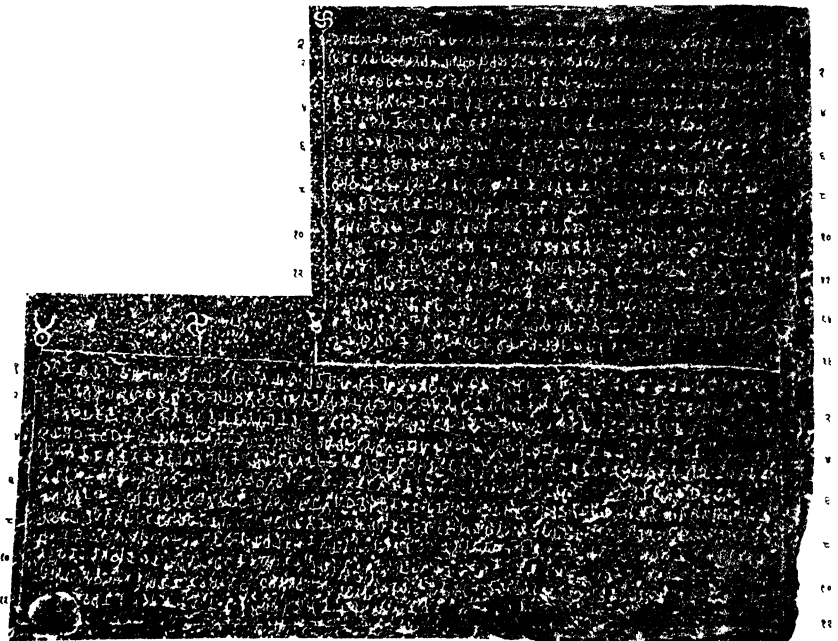
फलक—२५: बम्बई-सोपारा शिला अभिलेख-८ (आंशिक)

फलक—२६ :

रूपनाथ लघु शिला अभिलेख
(वाम अर्द्धांश; दक्षिण अर्द्धांश)
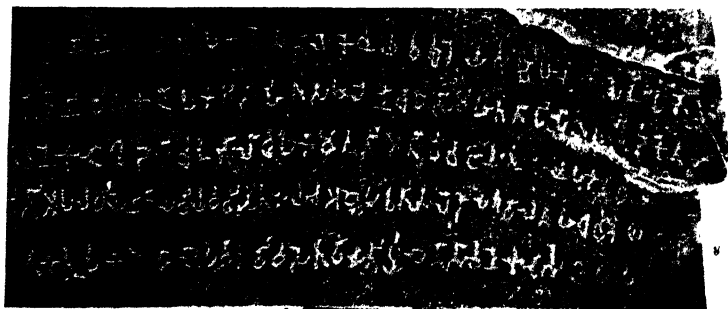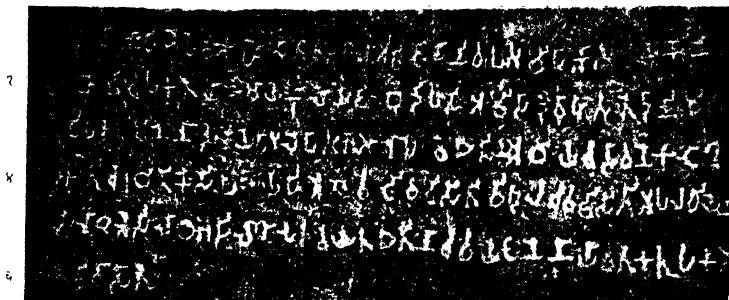
फलक—२७ : सहसराम लघु शिला अभिलेख
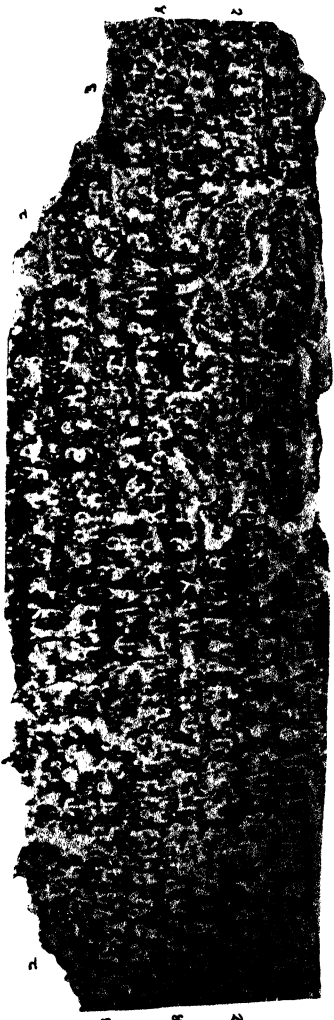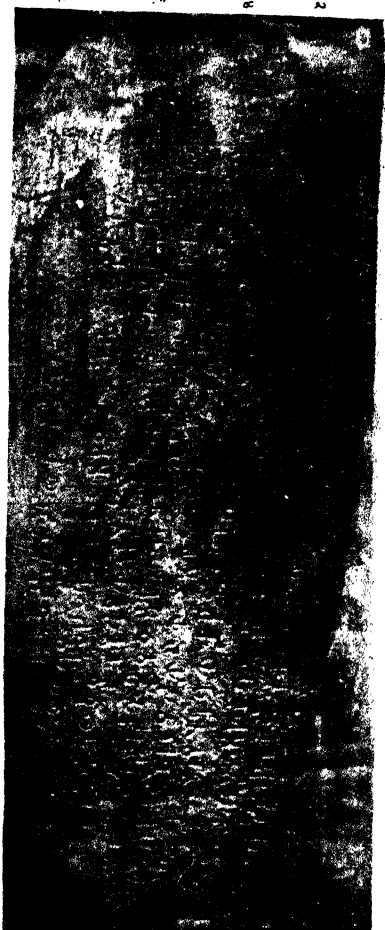
फलक—२८ : **वैराट लघु शिला अभिलेख**

कलकत्ता वैराट प्रस्तर अभिलेख
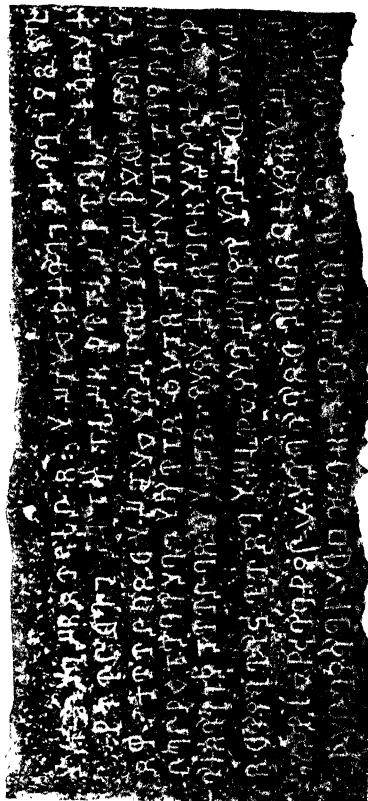
फलक—२९ : गुजर्रा लघु शिला अभिलेख

फलक—३० : मास्की लघु शिला अभिलेख

फलक—३१ : ब्रह्मगिरि लघु शिला अभिलेख (उपरार्द्ध)
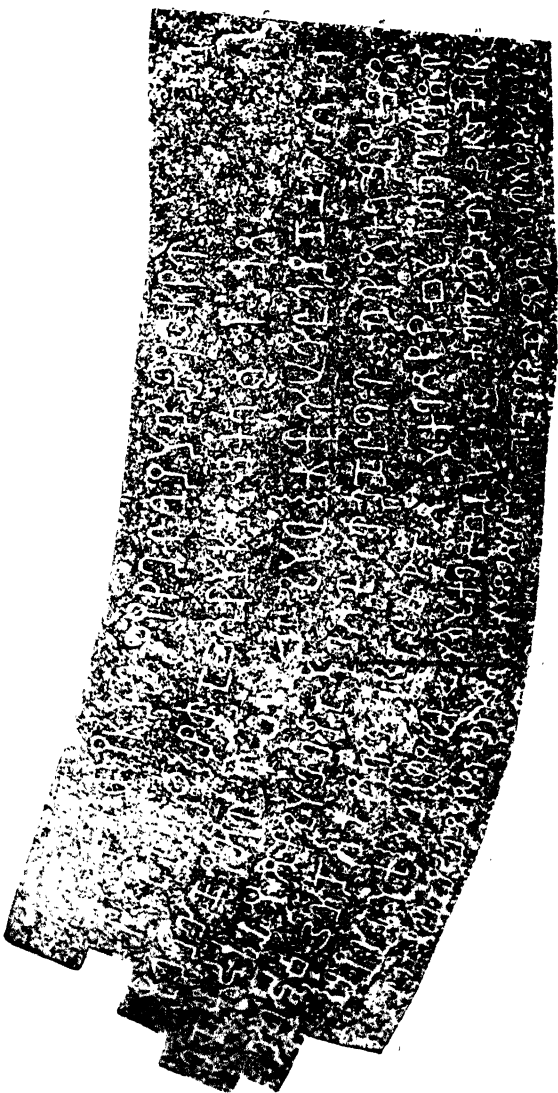
फलक—३२ : ब्रह्मगिरि लघु शिला अभिलेख (अवरार्द्ध)
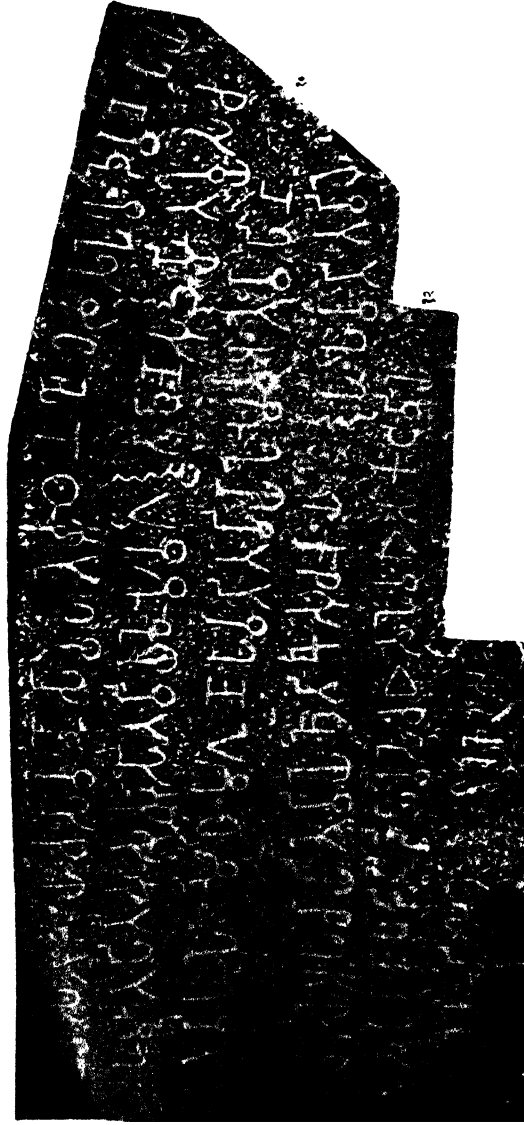
फलक—३३ : सिद्धपुर लघु शिला अभिलेख (उपरार्द्ध)
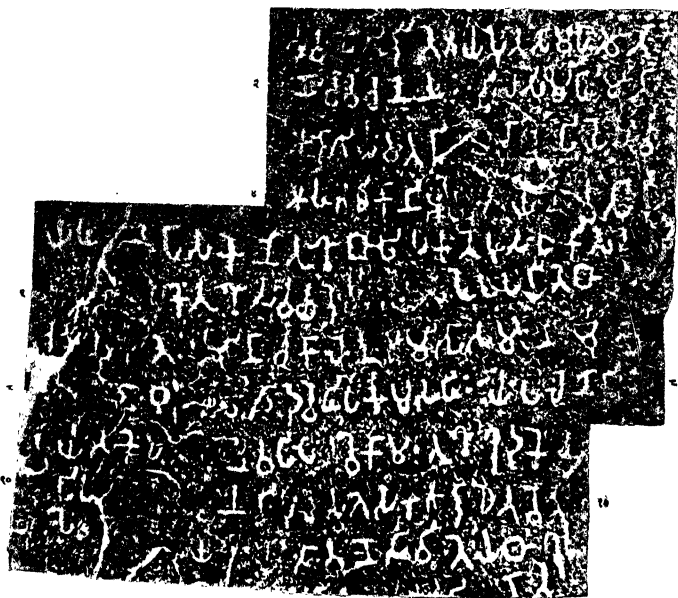
फलक—३४ : सिद्धपुर लघु शिला अभिलेख (अवरार्द्ध)
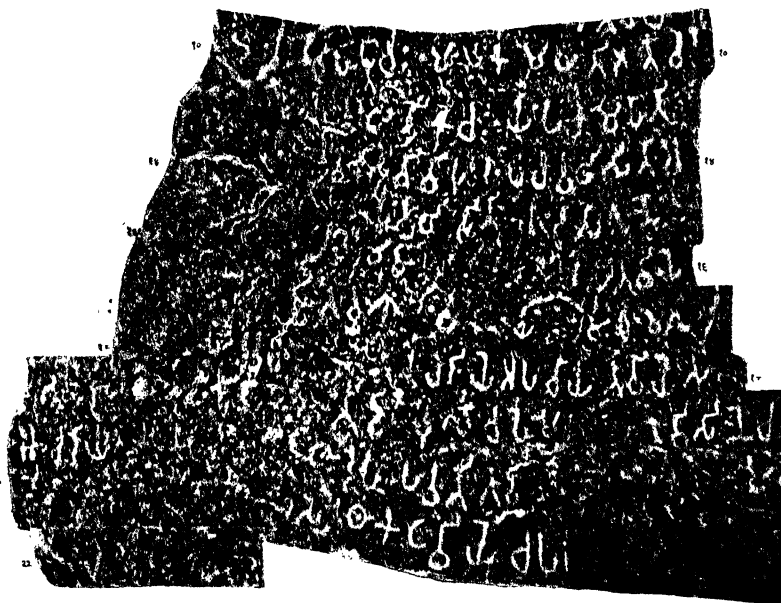
फलक—३९ : जाटिंग रामेश्वर लघु शिला अभिलेख (उपरार्द्ध)

फलक—३६ : जटिंग रामेश्वर लघु शिला अभिलेख (अवरार्द्ध)
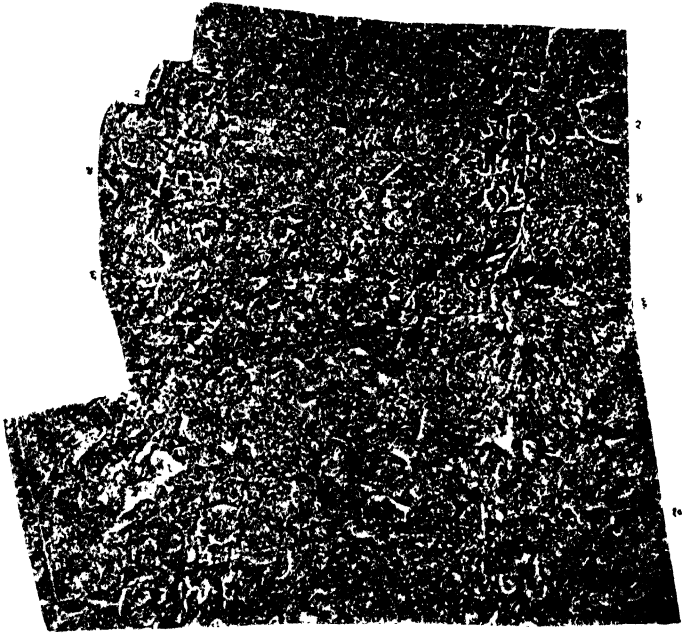
फलक—३७ : एर्रगुडि शिला अभिलेख (पूर्वमुख ; वाम अर्द्धांश) १-२
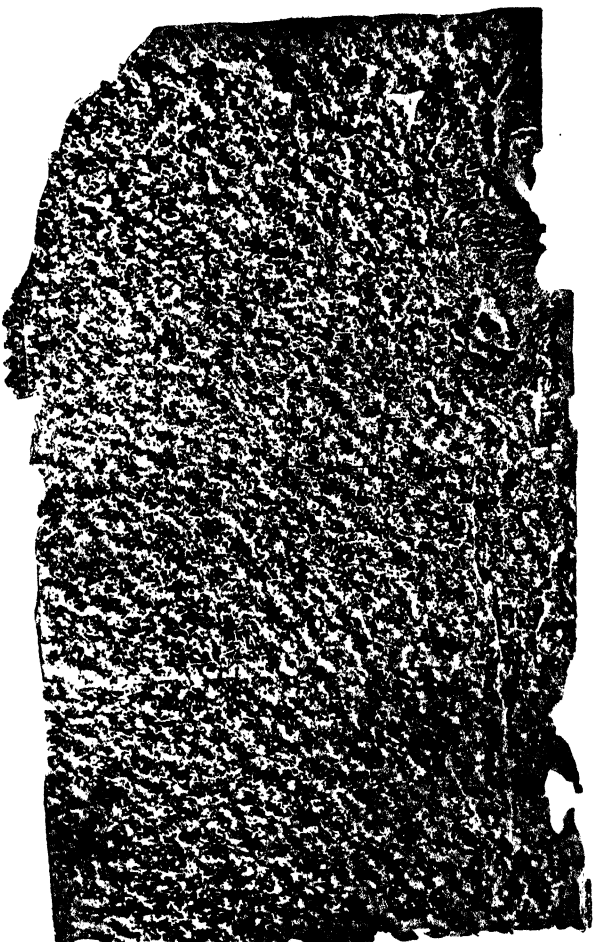
फलक—३८ : एर्रगुडि शिला अभिलेख (पूर्वमुख दक्षिण अर्द्धांश) ३-६-१४
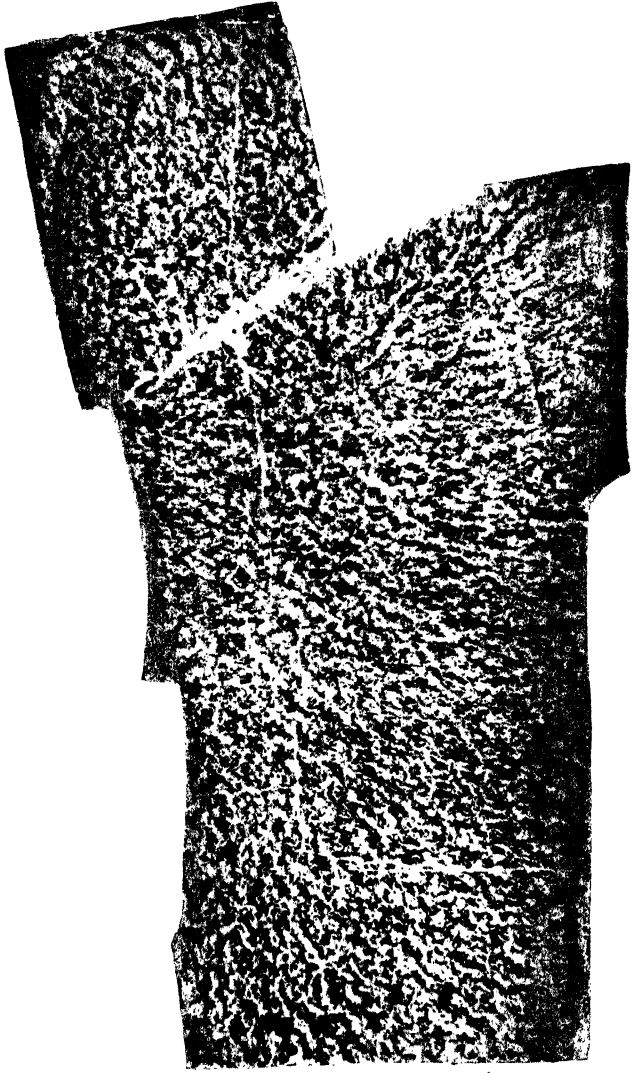
फलक—३०ः एर्रगुडि शिला अभिलेख ९

फलक—४० : एर्रगुडि शिला अभिलेख ११; ७; ५

फलक—४१ : एर्रगुडि लघु शिला अभिलेख १-२
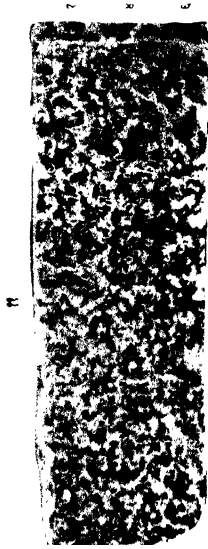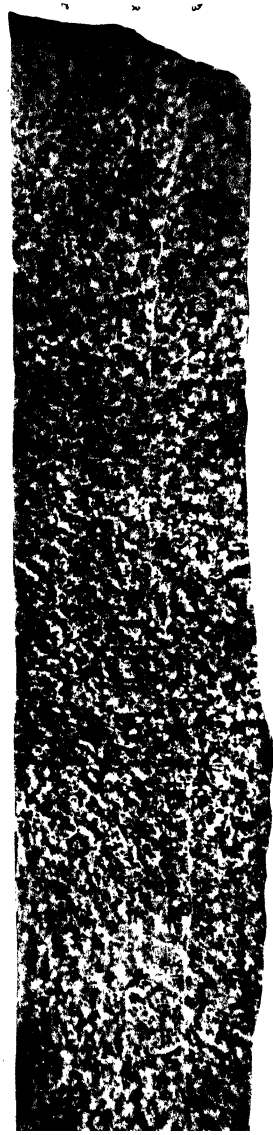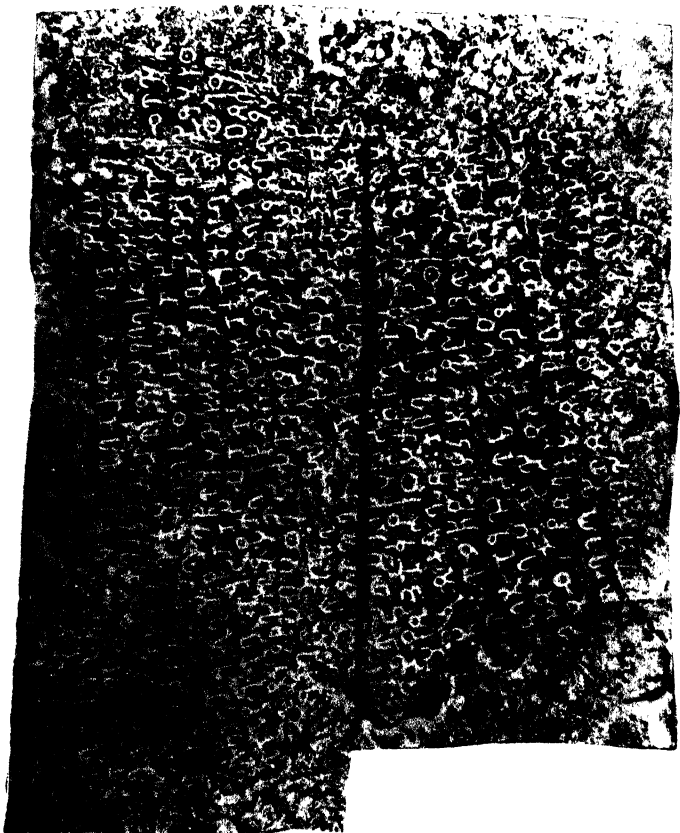
फलक—४२ : गोविमठ शिला अभिलेख
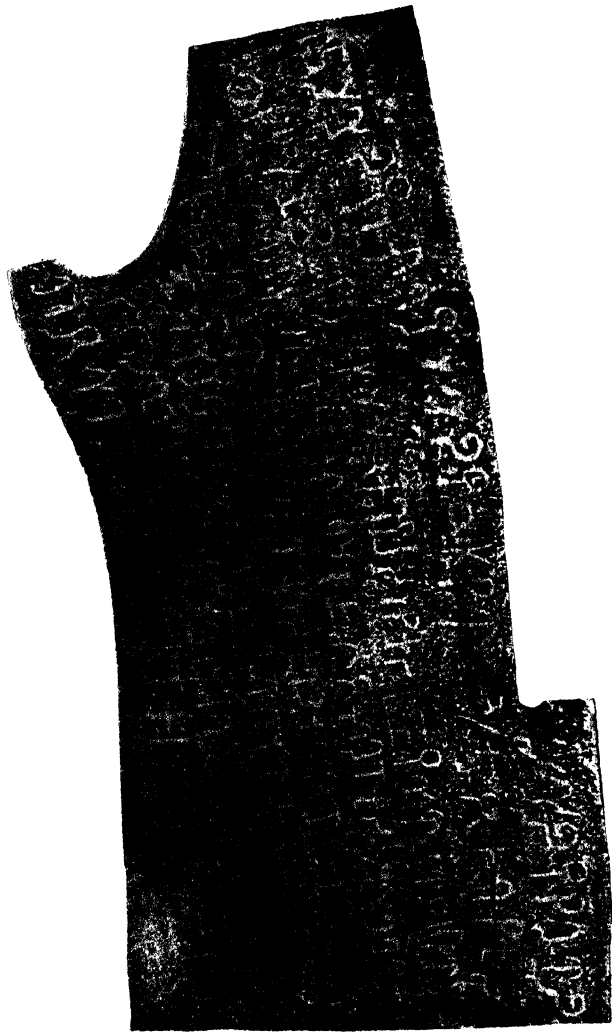
फलक—४३ : पालकिगुंडी लघु शिला अभिलेख

फलक—४४ : राजुल मंडगिरि लघु शिला अभिलेख
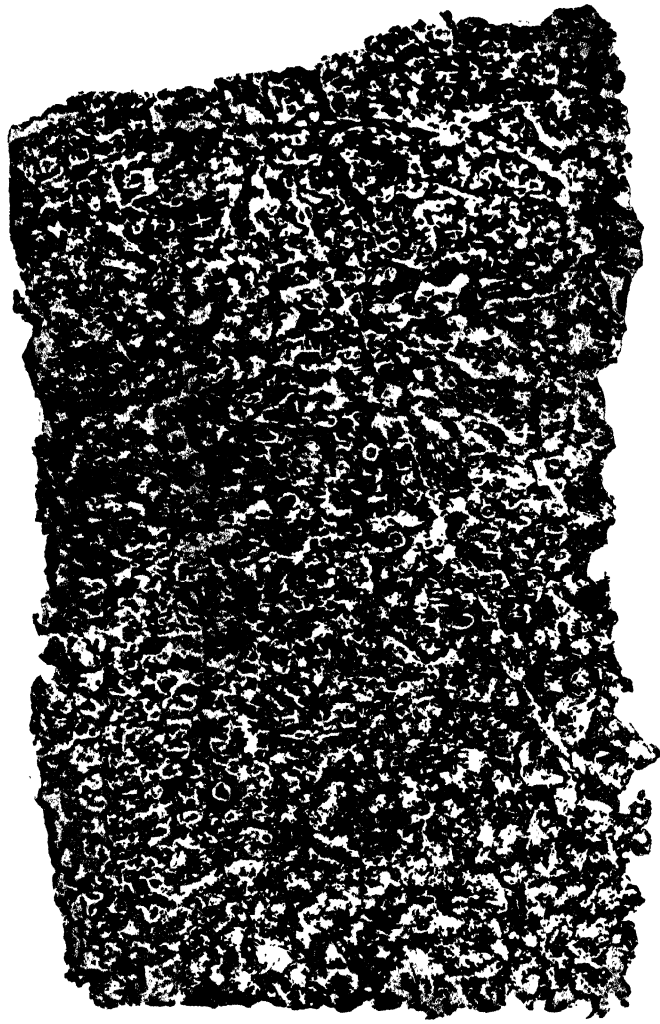
फलक—४५ : अहरौरा लघु शिला अभिलेख
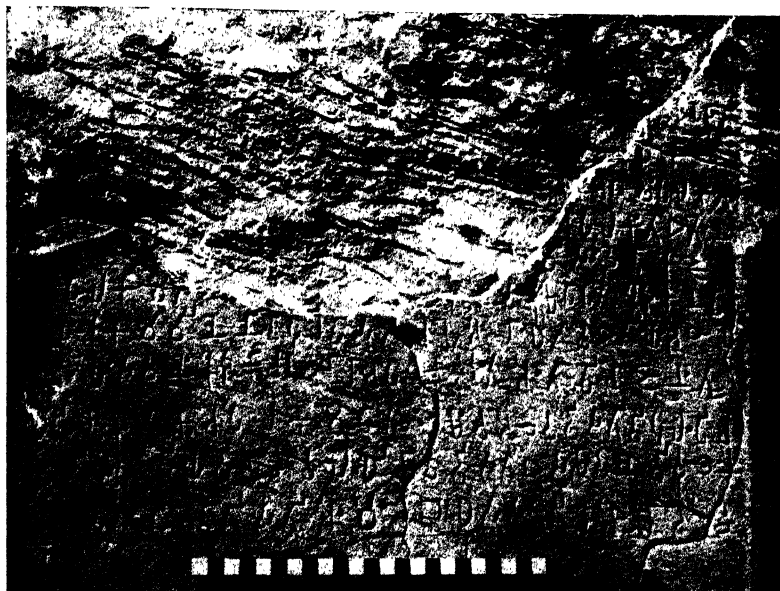
फलक—४६ : बराबर गुहा अभिलेख १-३
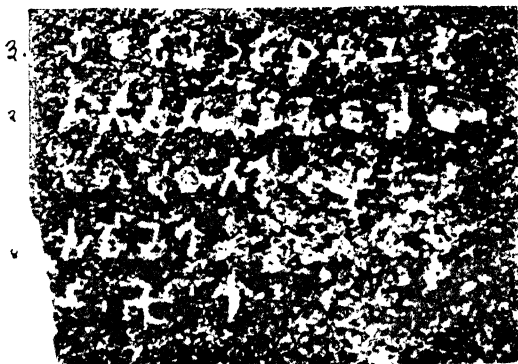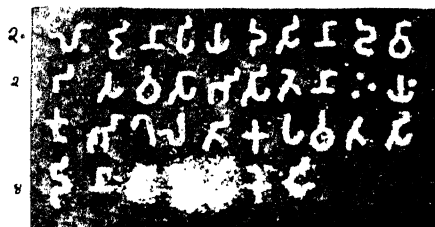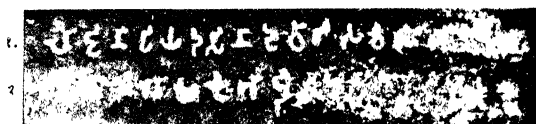
फलक—४७ : नागार्जुनी गुहा अभिलेख १-३

(दशरथ)

१

२

३

फलक—४८ : **देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख १-३**

१.१
२
३
४
५
६
७
८
९
२.१०
११
१२
१३
१४
१५
१६
३.१७
१८
१९
२०
२१
२२

फलक—४०, : देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ४

४.१
२
३
४
५
६
७
८
९
१०
११
१२
१३
१४
१५
१६
१७
१८
१९
२०

फलक—५० : देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ५

फलक—५१ : **देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ६-७ (पूर्व)**

६.१
२
३
४
५
६
७
८
९
१०
७.११
१२
१३
१४
१५
१६
१७
१८
१९
२०
२१

फलक—५२ : देहली-टोपरा स्तम्भ अभिलेख ७

फलक—१३ : देहली-मेरठ स्तम्भ अभिलेख

(उत्तर मुख) १-३
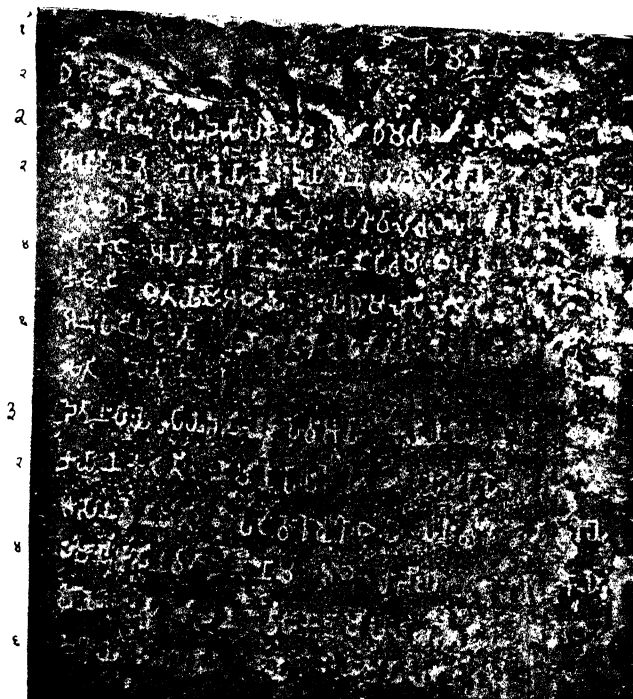
फलक—५४ : देहली-मेरठ स्तम्भ अभिलेख (पश्चिम मुख) ४
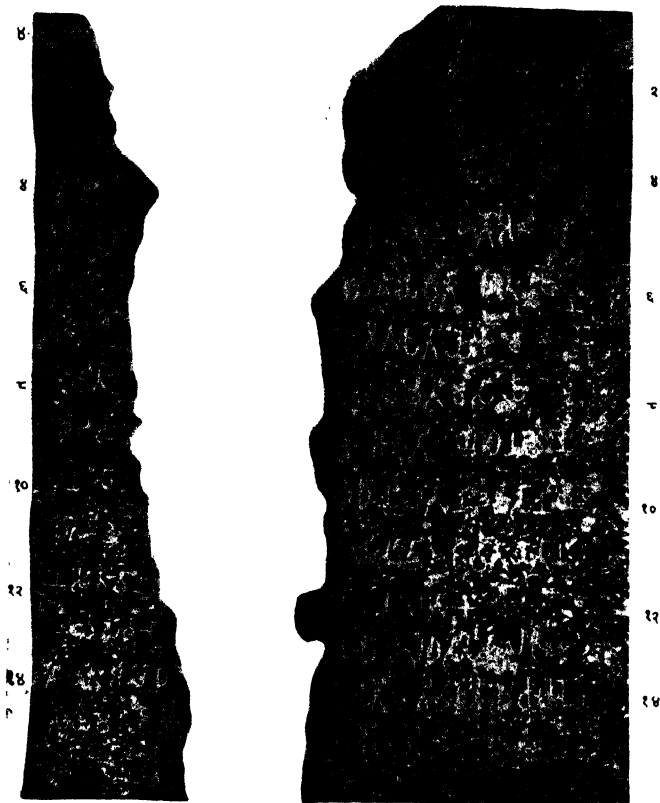
फलक—६९ : देहली-मेरठ स्तम्भ अभिलेख (दक्षिण मुख) ५-६
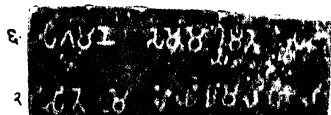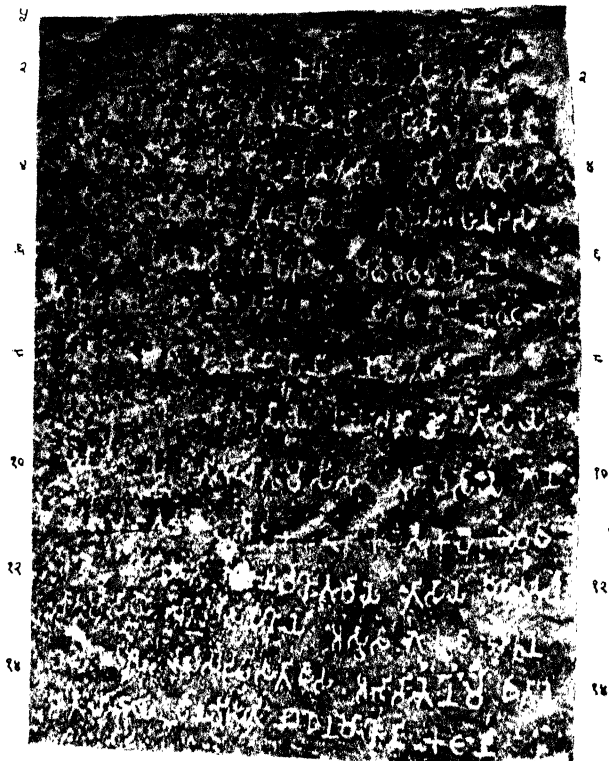
फलक—५६ : **लौरिया अरराज स्तम्भ अभिलेख**

(पूर्व मुख) १-४

फलक—५७ : **लौरिया अरराज स्तम्भ अभिलेख**

(पश्चिम मुख) ५-६

फलक—६८ : लौरिया नन्दनगढ़ स्तम्भ अभिलेख (पूर्व मुख) १-४

फलक—५० : **लौरिया नन्दनगढ़ स्तम्भ अभिलेख**

(पश्चिम मुख) ५-६

फलक—६० : **रामपुरवा स्तम्भ अभिलेख**

(उत्तर मुख) १-४

फलक—६१ : रामपुरवा स्तम्भ अभिलेख (दक्षिण मुख) ५-६

फलक—६७ : प्रयाग-कोसम स्तम्भ अभिलेख (उपरार्द्ध) १-३
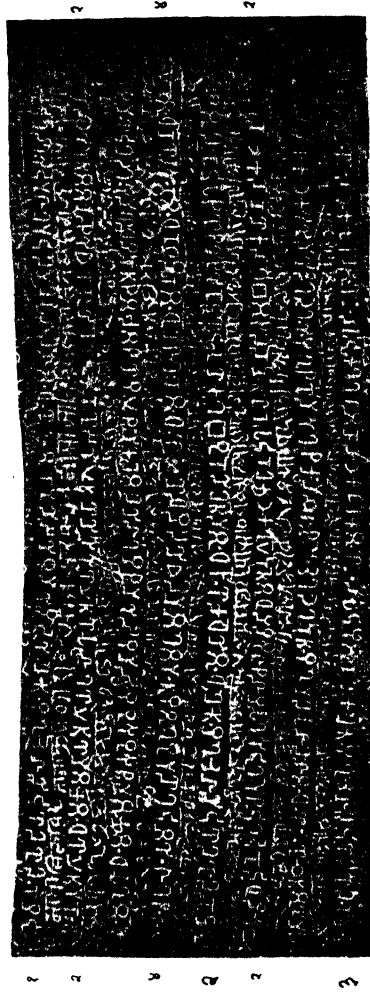
[इस फलकका शेषांश सामनेके पृष्ठपर]

[फलक ६२ का शेषांश]

(अवरार्द्ध) ४-६
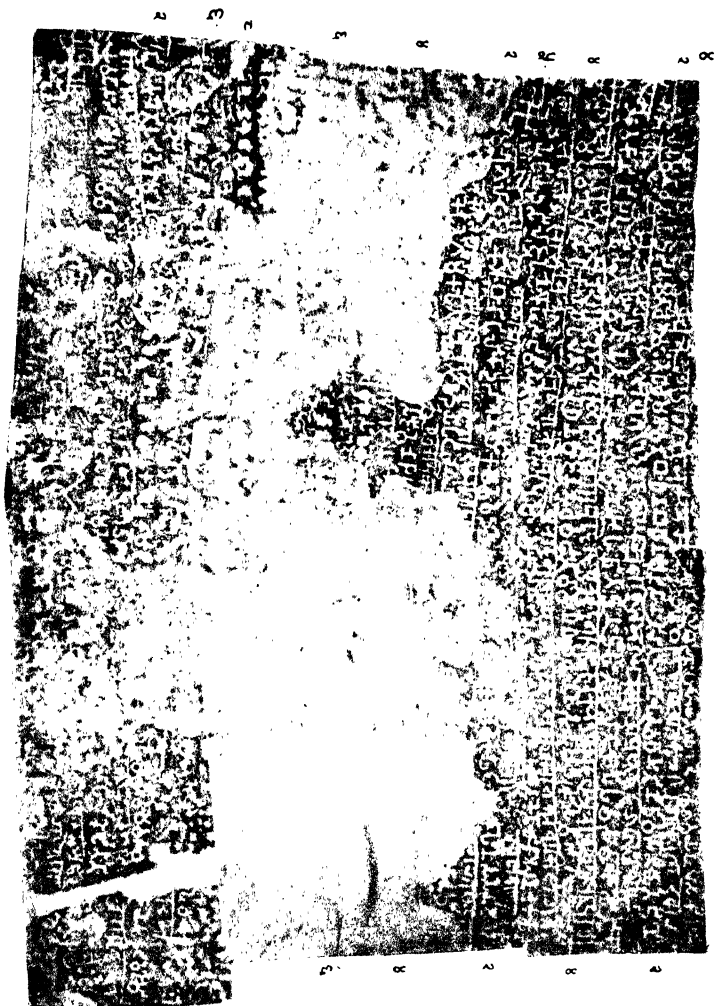
फलक—९३ : सांची लघु स्तम्भ अभिलेख

फलक—६४ : सारनाथ लघु स्तम्भ अभिलेख
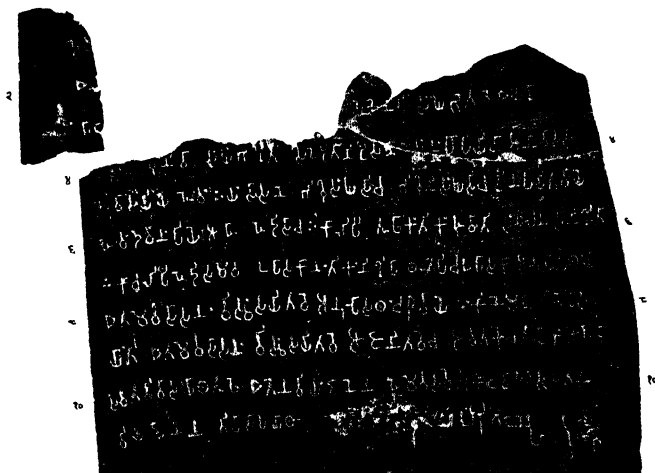
फलक—६५ : अ रुम्मिनदेई लघु स्तम्भ अभिलेख
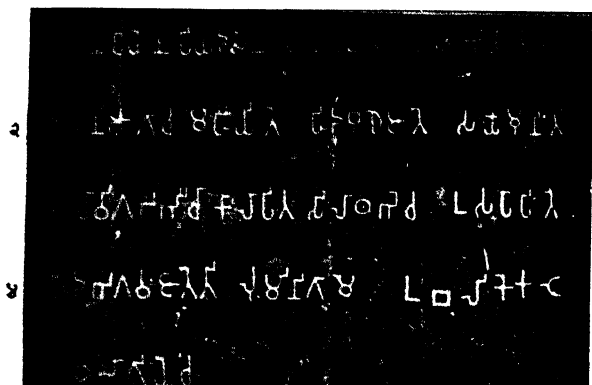
फलक—६५ : आ निगली सागर लघु स्तम्भ अभिलेख
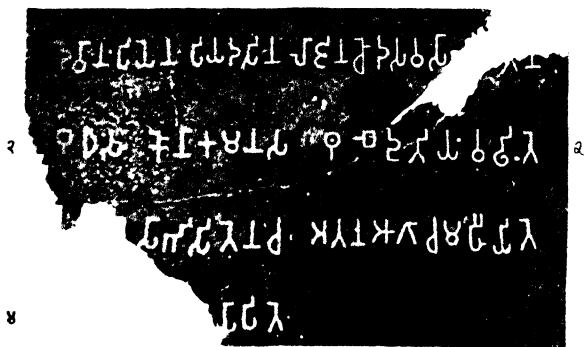
फलक—६६ : अ **रानी लघु स्तम्भ अभिलेख**
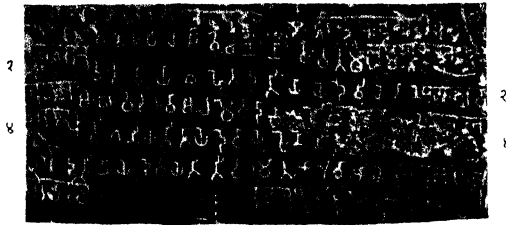
फलक—६६ : आ **कौशाम्बी स्तम्भ अभिलेख**
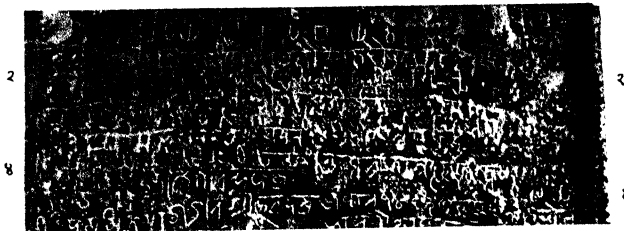
फलक—६७ : **तक्षशिला भग्न अरेमाई लघु शिला अभिलेख**

१

२

३

४

५

६

७

८

९

फलक—१८ : कन्दहार द्विभाषीय लघु शिला अभिलेख

अ : यमन

आ : अरेमाई